काशीखण्डोक्त

पंचक्रोशात्मक ज्योतिर्लिंङ्ग:

काशीमाहात्म्य

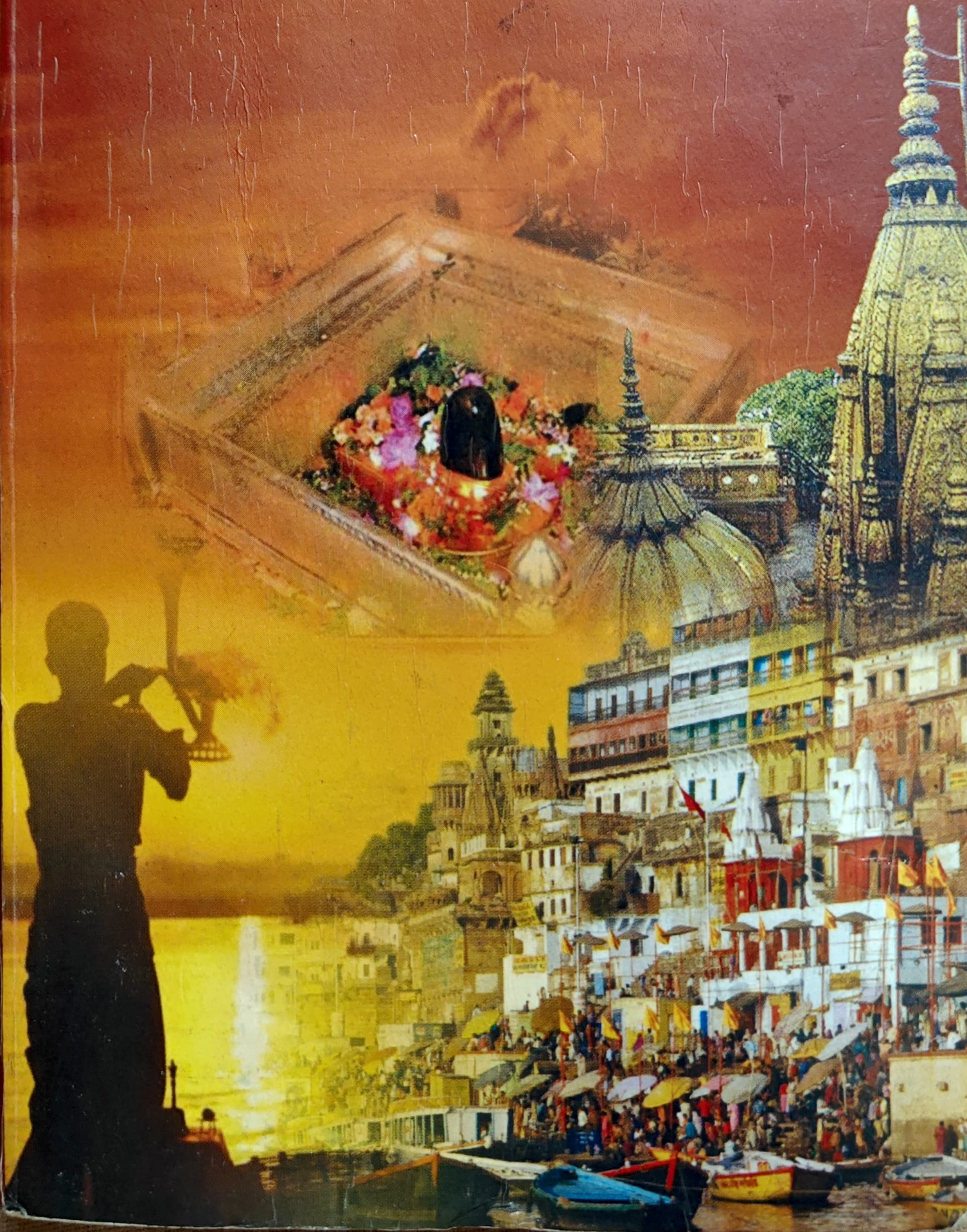

अखिल भारतीय विक्रम परिषद, काशी

श्री पंडित केदारनाथ व्यास ने अत्यन्त मनोयोग, निष्ठा, परिश्रम और अध्यवसाय के साथ पंचक्रोशात्मक ज्योतिर्लिंग काशी माहात्म्य एवं काशी का इतिहास लिखकर भारतीय धर्म-भावना-प्रधान जनता की अत्यन्त महत्वपूर्ण सेवा की है। ३२२ पृष्ठों की इस पुस्तक में विद्वान् लेखकने गागर में सागर भरने का अत्यन्त सराहनीय प्रयास किया है। अभीतक इतने व्यापक रूप से काशी के धार्मिक इतिहास और उसके महत्व पर कोई भी प्रामाणिक ग्रन्थ प्राप्त नहीं होता।

यद्यपि काशीखंड आदि ग्रन्थों में और पुराणों में काशी और वाराणसी के माहात्म्य के संबन्ध में बहुत सामग्री विद्यमान है किन्तु वह व्यवस्थित रूप से उपलब्ध नहीं है। इस ग्रन्थ से वह कमी पूरी हो जाती है और काशी के सम्बन्ध में सभी आवश्यक, उपादेय तथा ज्ञानवर्धक सामग्री समुपलब्ध हो जाती हैं।

श्री केदारनाथ व्यास को हृदय से साधुवाद और बधाई देते हुए विश्वास करता हूं कि उनके इस ग्रन्थ का व्यापक समादर होगा।

आचार्य सीताराम चतुर्वेदी
६२/४३, उत्तर बेनियाबाग
वाराणसी - २२१००१

दिनांक १८-६-१९८६
निर्जला एकादशी
सं० २०४३ वि. काशी

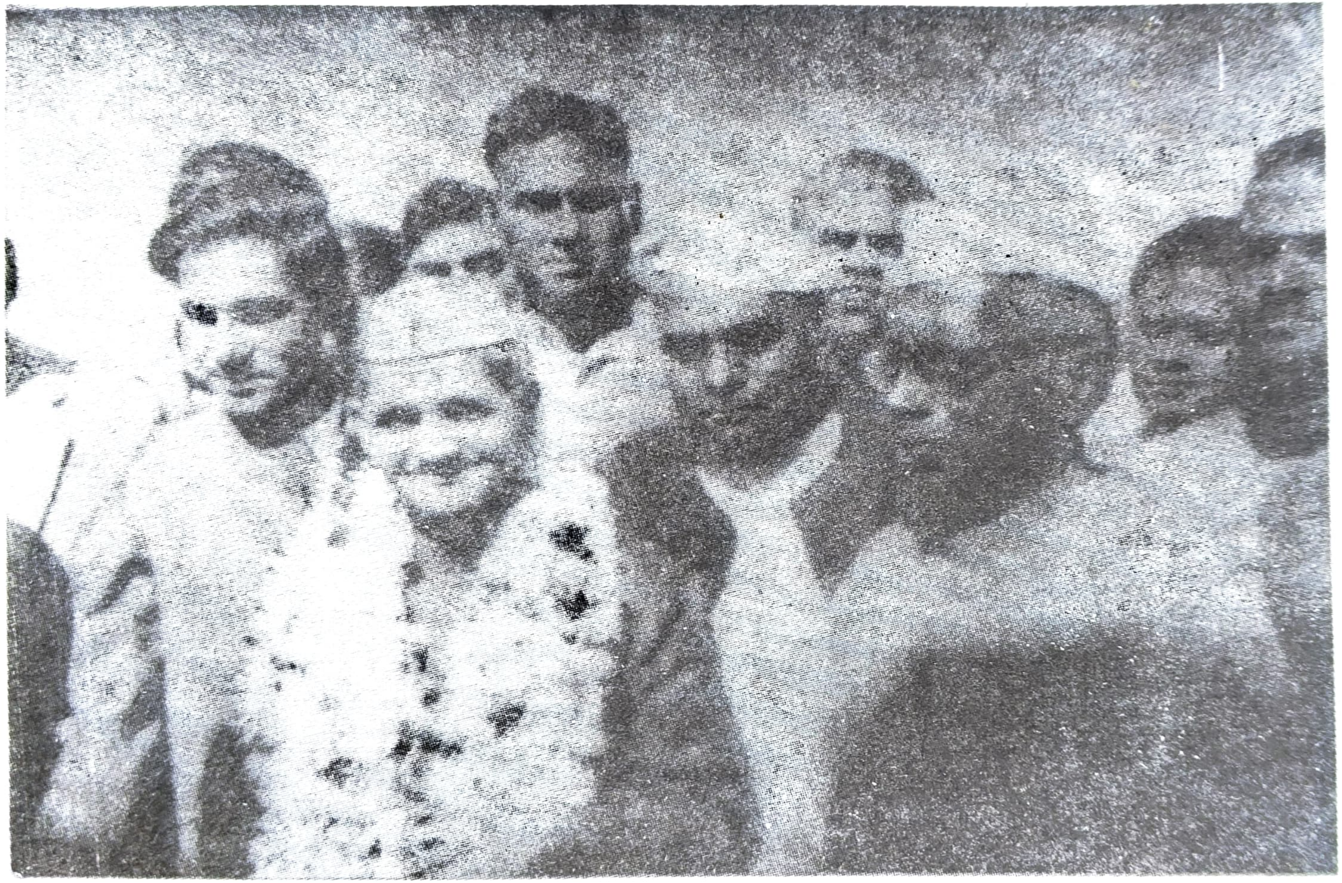

भारत के प्रधानमंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री के साथ पं० केदारनाथ व्यास

भारत के प्रधानमंत्री श्री मोरारजी देसाई के साथ पं० केदारनाथ व्यास

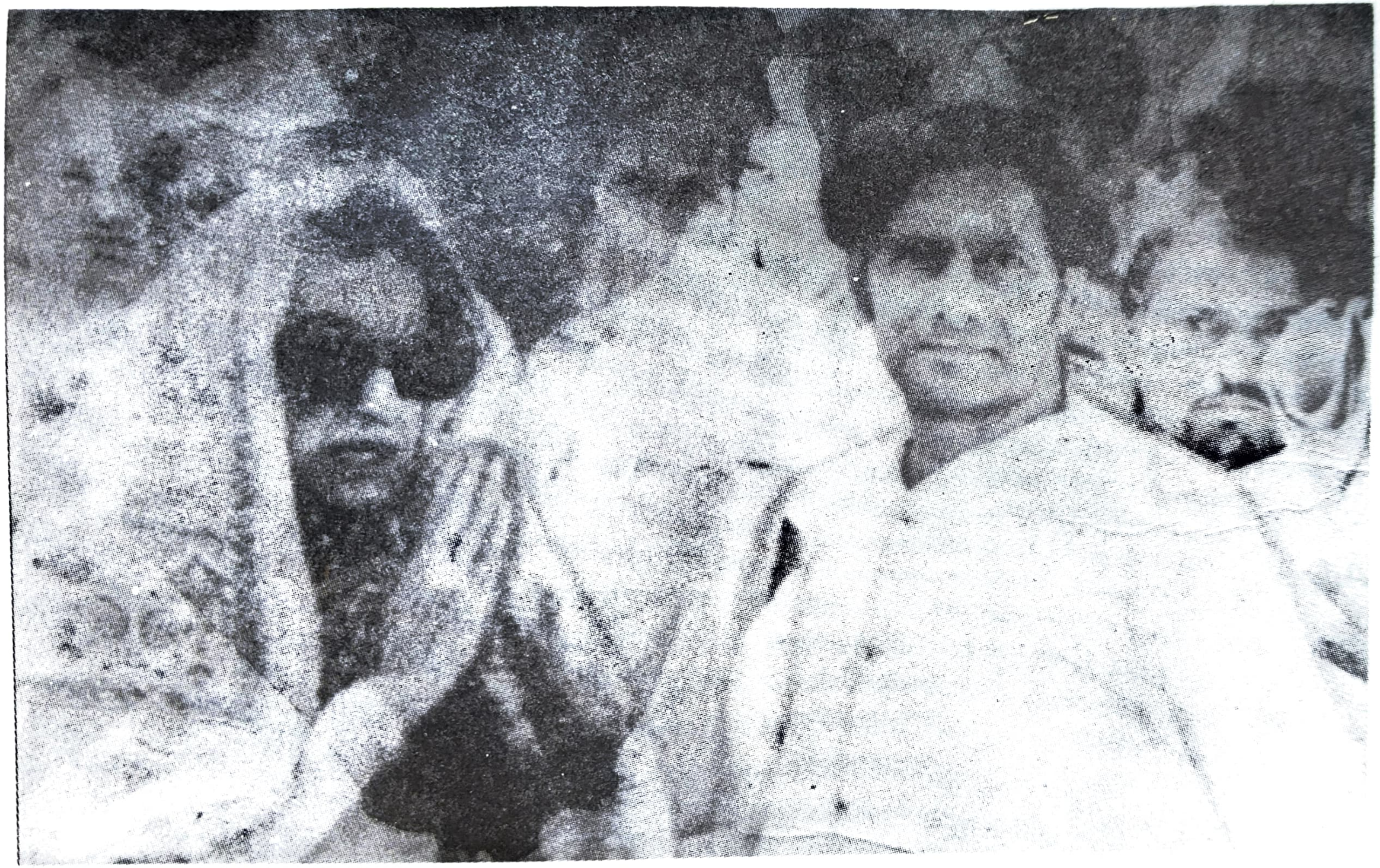

भारत की प्रथम महिला प्रधानमंत्री जी के साथ पं० केदारनाथ व्यास

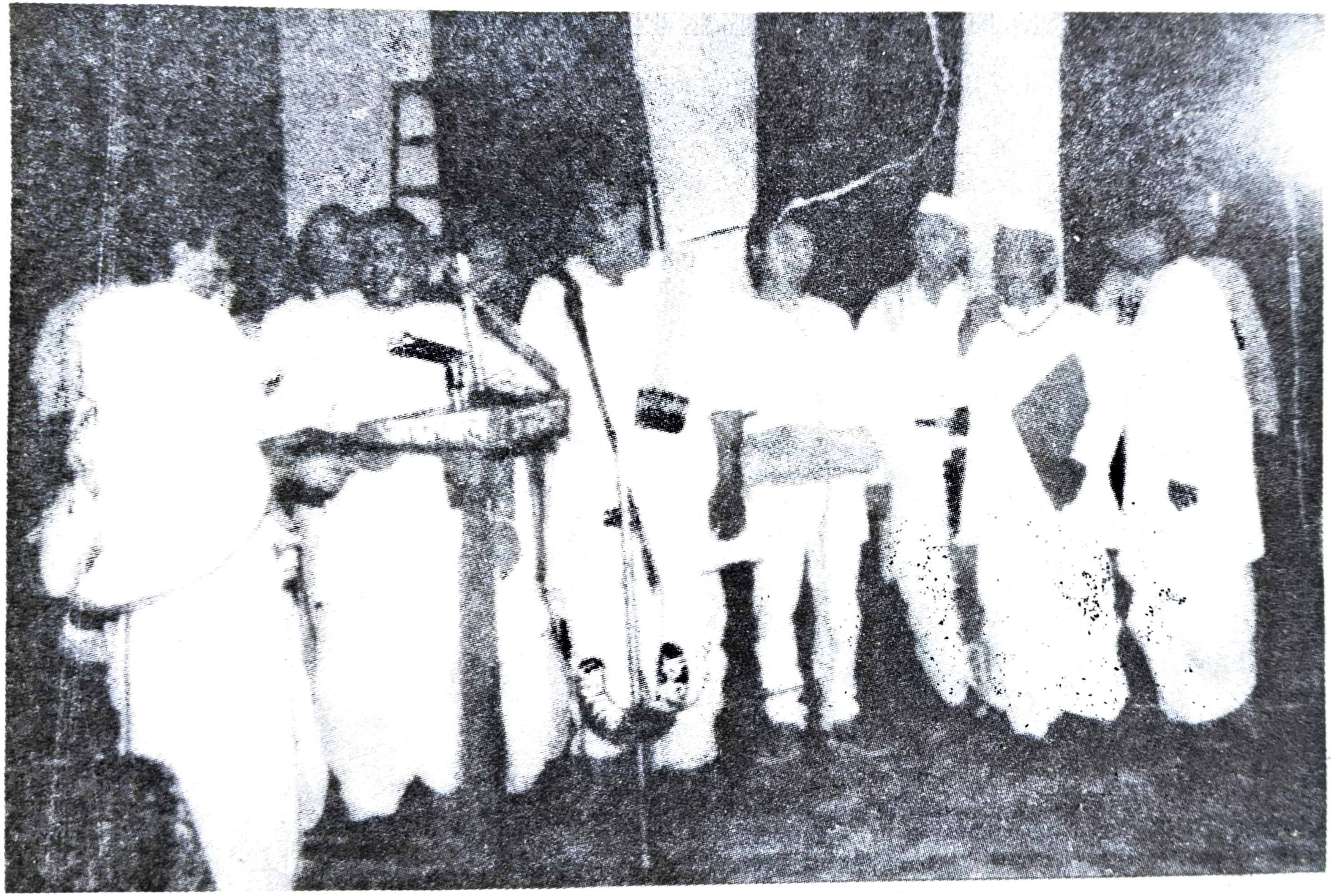

काशी के वैदिक ब्राह्मणों द्वारा रक्षा मंत्री का अभिनन्दन

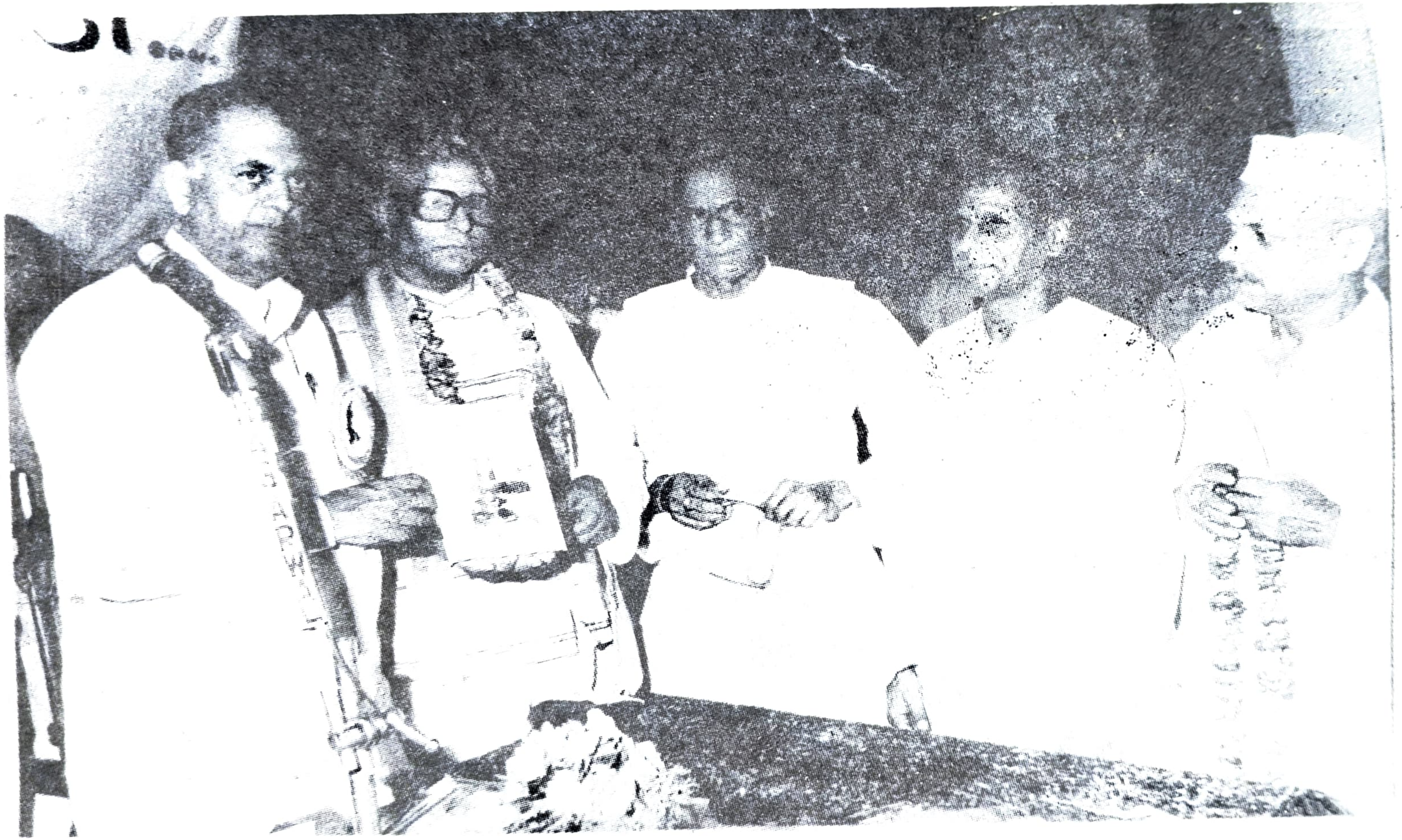

भारत के रक्षामंत्री के०सी० पन्त द्वारा पुस्तक का लोकार्पण

भारत के गृहमंत्री पं० कमलापति त्रिपाठी के साथ परामर्श करते हुए पं० केदारनाथ व्यास

काशीखण्डोक्त पंचक्रोशात्मक ज्योतिर्लिंग काशी महात्म्य
एवं काशी का प्राचीन इतिहास

विाय–सूची

मंगलाचरणम्	अ
वाङ्मयोपासनम्	अ
श्रद्धांजली	आ
समर्पितम्	ई
प्राक्कथनम्	क
आद्यमहर्षि व्यास	क
व्यास-सूत्र	ख
दिवोदास की कथा	ग
काशी की सीमा में गंगा का प्रवेश	ङ
काशी में राजाहरिचन्द्र की परीक्षा	ङ
पंचक्रोशात्मक ज्योतिर्लिंग	१
शिव स्वयं ही तीर्थरूप	१
सभी पुरियों के बाद मोक्ष काशीपुरी में	३
काशी में शरीर त्याग से मोक्ष	४
दिशासूचक अविमुक्त सीमाक्षेत्र	७
कलि में अन्नपूर्णा की पुरी काशी	९
सत्य-त्रेता-द्वापर युग में काशी महास्मशान	१०
स्मशान की व्याख्या	१०
प्रलयकाल में काशी का स्वरूप	१०
पुराणों में वाराणसी की सीमा	१२
वरुणा गंङ्गा संगम स्नान से पुनर्जन्म नहीं	१३
आनन्दकानन काशी	१३
युगो के अनुकूल काशी के आकार	१५
काशी के अनेक नाम	१५
प्रलयकाल में काशी की स्थिति	१५
शास्त्रों में काशी की सीमा	१८
तीर्थों का संकेत	१९
मुक्तिमंडप-कुक्कुटमंडप	२४
जलाशय निर्माण	२५
काशी में तारक मंत्र द्वारा मुक्ति	२६
काशी मोक्षभूमि	२६
काशी अलौकिक मूर्ति	२८
काशी में कोतवाल का दण्ड	३०
स्मृति और पुराणों में काशी	३०
वेदोपनिषदों में काशी	३१
काशीवर्णनातीत	३२
काशी त्याग का निषेध	३३
काशीवास विधि	३४
पापकर्मो से काशी को बचावे	३६
काशी में मलमूत्रादि का विचार	३७
मणिकर्णिकाघाट माहात्म्य	३७
विश्वेश्वर दर्शन माहात्म्य	३९
काशी के पशु भी देवतुल्य	४२
काशीकृत पापो से कैसे मुक्ति	४३
यात्रारम्भ विचार	४४
काशी प्रवेश विधि	४४
काशीवासियों के लिये आवश्यक नित्य यात्रा	४६
अन्तर्गृही यात्रा महत्फल	४७
पंचक्रोश माहात्म्य	५२
कूष्माण्डऋषि के पुत्र मण्डप जी की कथा	५३
पंचक्रोशी यात्रा	५४
क्षेत्रसंन्यासिनां विशेष	५५
यात्रा में सवारी का नियम	५५
यात्रा में वास विचार	५७
यात्रा में भोजन का नियम	५८
पंचक्रोशी यात्रा विधि	५८
प्रतिज्ञा मंत्र	५९
पहिला वास स्थान	६४
केदारखण्ड-काशी केदार अंतर्गृही यात्रा	७३
एकादश महारुद्रयात्रा	८२
अष्टभैरव यात्रा	८४
द्वादशादित्य यात्रा	८५
अनुक्रम यात्रा	८८
अष्टमहालिंग यात्रा	८९
अष्टषष्ट्यायतन यात्रा	९०
अष्टमहाकूप यात्रा	९३
मंडप यात्रा	९४
नवग्रह यात्रा	९४
सप्तऋषि यात्रा	९५
चतुर्विनायक यात्रा	९६
पंचामृत विनायक यात्रा	९६
अष्टप्रधान विनायक यात्रा	९६

छप्पन विनायक यात्रा	९७
पंचतीर्थ यात्रा	१००
दशाश्वमेध स्नान (प्रयागतीर्थ)	१०१
वरुणा स्नान (गंगासागर)	१०२
पंचगंङ्गा (धर्मनद-बिन्दु तीर्थ)	१०२
सिद्धलिंग यात्रा	१०४
पुराणोक्त ओंकारखण्ड सीमा	१०६
ओंकार अन्तर्गृही यात्रा मार्गक्रम	१११
ओंकार अन्तर्गृही देवता नाम	११२
प्रथम चतुर्दश लिंग यात्रा	११७
द्वितीय चतुर्दश लिंग यात्रा	११९
तृतीय चतुर्दश लिंग यात्रा	१२१
अविमुक्त प्रदक्षिणा यात्रा	१२२
नगरप्रदक्षिणा यात्रा	१२६
महापीठ यात्रा	१३०
प्रथम षडंग यात्रा	१३२
द्वितीय षडंग यात्रा	१३२
तृतीय षडंग यात्रा	१३४
श्रीविश्वेश्वरस्वरूप अंग यात्रा	१३४
द्वादश ज्योतिर्लिंग यात्रा	१३५
चित्रपटी यात्रा	१३६
महाविष्णु यात्रा	१४२
दक्षिण दिग्देव यात्रा	१४५
उत्तर दिग्देवयात्रा उत्तरमानसयात्रा	१५३
नवदुर्गा यात्रा	१६१
नवशक्ति यात्रा	१६२
नौगौरी यात्रा	१६३
महादेवी यात्रा	१६४
चण्डी यात्रा	१६५
चतुषष्ठि योगिनी यात्रा	१६७
विश्वभुजागौरी यात्रा	१७१
महाभगवती जगदम्बा यात्रा	१७१
वेताल यात्रा	१७३
काशी में चारो धाम यात्रा	१७४
काशी में सप्तपुरी यात्रा	१७५
सप्तम काशीपुरी यात्रा	१८१
पंचायतन यात्रा	१८२
द्विलिंग यात्रा	१८३
द्वितीय त्रिलिंग यात्रा	१८३
त्रिलिंग यात्रा	१८३
चतुर्थलिंग यात्रा	१८४
योग यात्रा	१८४
गण यात्रा	१८४
अन्यरक्षकगण यात्रा	१८५
शिवपूजा विधान	१८६
शिवनिर्माल्य	१९१
ब्रह्मेश्वर के ३ लिंग	१९२
भीष्मेश्वर के ४ लिंग	१९२
विजयेश्वर के २ लिंग	१९२
काशी में आषाढ़ेश्वर के २ स्थान	१९२
कृष्ण की विलक्षण २ मूर्तियां	१९२
रामेश्वर के ६ लिंग	१९३
केदारेश्वर के ४ लिंग	१९३
ताड़केश्वर के ४ लिंग	१९३
पंचमुखी गणेश के २ स्थान	१९३
वाल्मीकेश्वर के ४ स्थान	१९४
नीलकंठेश्वर के ४ स्थान	१९४
दत्तात्रैयेश्वर के ६ स्थान	१९४
शवशिवा काली के २ स्थान	१९४
बटुकभैरव के ३ स्थान	१९५
पंचमुखी हनुमान् के ३ स्थान	१९५
अविमुक्तेश्वर के ४ लिंग	१९५
बाणेश्वर के ४ लिंग	१९५
जमदग्नीश्वर के २ स्थान	१९५
हरिश्चन्द्रेश्वर के ३ स्थान	१९६
चिन्तामणि विनायक के ४ स्थान	१९६
यन्त्रेश्वर के ३ लिंग	१९६
सिद्धेश्वर के ६ स्थान	१९६
तारा के ४ स्थान	१९७
कुक्कुटेश्वर के ४ स्थान	१९७
पशुपतेश्वर के ३ स्थान	१९७
हाटकेश्वर के ५ स्थान	१९७

काशी में जगन्नाथ मंदिर के ८ स्थान १९८
राजराजेश्वर के २ स्थान १९८
बृहस्पति के २ स्थान १९८
मान्धातेश्वर के २ स्थान १९८
राल्फ फिचका काशी वर्णन १९९
पुराणों में देवविवेचन १९९
पंचायतन शिव २०६
चतुर्दश आयतन २११
काशीखण्डोक्त देव-तीर्थ २१८
काशी की विशेष महत्ता २३१
काशी के प्रति अंग्रेजों के विचार २३४
विश्वेश्वर दर्शन माहात्म्य २३४
जैनतीर्थ काशी २३७
सारनाथ बौद्धतीर्थ २४३
कच्चायन और उनका व्याकरण २५६
सिक्खों के गुरुद्वारे २६०
गुरुद्वारा बड़ी संगत नीचीबाग २६१
काशी संतमहात्माओं का साधना केन्द्र २६३
पण्डितराज जगन्नाथ २६५
आद्यशंकराचार्य का काशी आगमन २६६
संत श्रीगोस्वामी तुलसीदास २७१
स्वामी करपात्री जी २७५
संत कबीरदास २७८
समर्थ गुरु रामदास जी २८०
संत हरिहर बाबा २८०
काशी के संत तैलंग स्वामी २८२
बाबा नरहरि दास २८७
काशी के अघोर संत बाबा कीनाराम २८७
वैष्णवधर्मावलम्बियों का तीर्थस्थल काशी २९६
रामकृष्ण परमहंस काशी में २९६
काशी नगरी की
ऐतिहासिक पौराणिक पृष्ठभूमि २९७

परिशिष्ट

तारक मंत्र कौन है, शब्दार्थ क्या है ३१६
काशी मोक्षभूमि ३१६
चौरासीकोशी महापंचकोशी यात्रा विधि ३३६
आद्य महर्षि व्यास ३४४
औरंगजेब का फरमान ३४७
कालापहाड़ का इतिहास ३४८
सहायक ग्रंथसूची ३५१

समस्त काशी यात्रा धर्माध्यक्ष आचार्य पं० बैजनाथ जी व्यास

महर्षि व्यास

प्राक्कथन

नमस्ते भगवान् व्यास सर्व शास्त्रार्थ कोविद । ब्रह्मविष्णु महेशानमूर्ते सत्यवतीसुत ।।
व्यासयविष्णुरूपाय व्यासरूपाय विष्णवे । नमो वै ब्रह्म विधिये वसिष्ठाय नमो नमः ।।

अपान्तरतमा नामक वेदाचार्य का विष्णु के नियोग से व्यास होना पुराणान्तर में पाया जाता है । यथा अपान्तरतमा नाम वेदाचार्य्यः पुराणर्षि विष्णु नियोगात्कलि द्वापर योः सन्धौ कृष्णद्वैपायनः सम्बभूवे तिस्मरन्ति । इससे यह प्रमाणित होता है कि अपान्तरतमा वेदाचार्य विष्णु के नियोग से कृष्ण द्वैपायन रूप में पहले से ही वर्तमान थे और नियोग रूप से विष्णु का आवेश भी उनमें था । भगवती का शापानुग्रह यह हुआ कि उसी आवेसावतार में क्षेम कवि से उनका अपमान होकर शापचरितार्थ हो जाय, दूसरा शरीर व्यास होने के लिए उन्हें न धारण करना पड़े।

२८ चतुर्युगी के २८ व्यास हुए हैं । वर्तमान मे वैवस्वत मन्वन्तर के २८वें चतुर्युगी के कृष्ण द्वैपायन व्यास हुए हैं ।

वर्तमान में श्वेत वाराह कल्प चल रहा है । व्यास-(वि X अस् X ध ञ्) अर्थाते जो वेदादी सक्षिप्त विषयों को चार भागों में विस्तृत कर उसका व्याख्यान कर प्रचार करे वह व्यास है ।

अचतुर्वदनो ब्रह्मा द्विबाहुरपरो हरिः । अभालालोचनः शम्भुर्भगवान् बादरायणः ।।

ब्रह्मसूत्रों के रचयिता का नाम व्यास, बादरायण तथा कृष्णद्वैपायन है । ये एक ही व्यक्ति के तीन नाम है । वेदों को चार भाग करने के कारण उनका नाम व्यास हुआ । बदरीवन में निवास करने के कारण उनका नाम 'बादरायण' हुआ ।

(बदरीणां समूहो यत्र प्रदेशे स बादरः प्रदेशः, बादरः अयनं यस्य स बादरायणः) अर्थात् वे बदरीनाथ या बदरिकाश्रम में रहते थे ।

आघम महर्षि व्यास जिन्हे ईसा की दूसरी शती में गगरिया व्यास के नाम से जानते थे । इनका जन्म काल्पी से २ मील पश्चिम जमुना और जोन्हर(व्यासगंगा) के संगम पर एक प्राचीन टिला है उसे ही वेद व्यास का जन्म स्थान मानते है । वहीं पर व्यास पूर्णिमा पर मेला लगता है । व्यासजी के पूर्वज-वसिष्ठ हुए और वसिष्ठ के पुत्र शक्ति हुए । शक्ति के पुत्र पराशर हुए, पराशर के पुत्र वेदव्यास जी हुए, व्यास के पुत्र शुकदेव जी हुए है । व्यास की माता का नाम सत्यवती था । व्यासजी का वर्ण कृष्ण (काला) था, इसलिए वे कृष्णद्वैवायन कहलाए । व्यासजी की महिमा कौन गा सकता है ? सारे संसार का ज्ञान आज उन्हीं के ज्ञान से प्रकाशित है । व्यासजी ज्ञान के असीम और अगाध समुद्र थे । विद्वता की पराकाष्ठा थे । संसार के सारे पदार्थ मानो व्यास की कल्पना के अंश हैं । जो कुछ त्रैलोक्य में देखने, सुनने और समझने को मिलता है वह सब व्यास के हृदय में था । इससे परे जो कुछ है, वह भी व्यास के अन्तःकरण में था, व्यास के हृदय और वाणी का विकास ही समस्त जगत् का और उसके ज्ञान का प्रकाश और अवलम्बन है । व्यास सदृश अद्भुत महापुरुष जगत् के उपलब्ध इतिहास में दूसरा कोई नहीं मिलता । जगत की संस्कृति ने अब तक भगवान् व्यास की समकक्षता का व्यक्ति उत्पन्न नहीं

किया। व्यास-व्यास ही थे। भगवान् व्यास ने महाभारत सदृश अलौकिक ग्रन्थ का प्रणयन किया। अठारह पुराण और अनेक उपपुराण भगवान व्यास ने बनाये। भारत का इतिहास इस बात का साक्षी है।

पुराणों की मूल रचना बहुत ही पुरानी है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में पुराणों का उल्लेख मिलता है। इसामसीह से चार वर्ष पूर्व चन्द्रगुप्त के समसामयिक थे। इससे पुराने ग्रन्थों में भी पुराणों के प्रमाण मिलते हैं।

व्यास सूत्र

ब्रह्म सूत्रों के रचयिता का नाम व्यास, इनके सूत्रों को पाराशर्य-भिक्षुसूत्र तथा ब्रह्मसूत्र कहते हैं। इतिहास इस बात को सिद्ध करता है कि इन्होंने अरब, मिश्र, यूनानादि देशों में खूब भ्रमण किया। ब्रह्मसूत्रों के अभी तक ज्ञात व्याख्याकारों में सबसे प्राचीन 'बोधायन' हैं, रामानुज ने अपने श्री भाष्य के आरम्भ में इस बात को स्वीकार किया है।

इनके चार प्रधान शिष्य थे-पैल, वैशम्पायन, जैमिनि और सुमन्तु। इन्होंने अपने प्रधान शिष्य पैल को ऋग्वेद, वैशम्पायन को यजुर्वेद, जैमिनि को सामवेद और सुमन्तु को अथर्वेद पढ़ाया एवं सूतजातीय महान बुद्धिमान रोमहर्षण महामुनि को इतिहास और पुराण महाभारत पढ़ाये।

अट्ठाइस अवतार

एक बार व्यासजी अपने अनेक शिष्यों के साथ काशी पधारे। यहाँ कई दिन भ्रमण करने के पश्चात् उन्हें शिष्यों सहित भोजन नहीं मिला तब व्यासजी ने क्रुद्ध होकर काशीवासियों को श्राप दे डाला। भगवान् शिव को यह ज्ञात हुआ कि व्यासजी ने हमारे भक्तों को शाप दे दिया है तो उन्हें तत्काल काशी छोड़कर चले जाने को कहा। वेदव्यास काशी छोड़कर गंङ्गा के उस पार चले गये। कुछ दिन वहीं रहने के पश्चात् व्यासजी ने यह घोषणा किया कि मैं गंङ्गा के इस पार दूसरी काशी बसाऊँगा।

यह सुनकर भगवान् शंकर को चिन्ता हुई कि व्यासजी की काशी के सामने हमारी काशी का महत्व कम हो जायेगा। तब उन्होंने गणेशजी को बुलाकर समझाया और कहा व्यासजी को अपनी कुशाग्र बुद्धि द्वारा ऐसा न करने के लिए समझाओं। गणेशजी ने ऐसा ही किया। तत्पश्चात भगवान शंकर ने अपनी माया से व्यास को घोर ज्वर से पीड़ित किया। व्यास ने भगवान शंकर से क्षमा माँगा। तब भगवान् शिव ने व्यास को सोमवार के दिन दर्शनार्थ आने की अनुमति दी।

लोलार्कदिग् दक्षिणे कोणे व्यासो नारायणः स्वयम्।
स्थिोह्यद्यापि पश्येत काशी प्राशादराजिकाम् ॥ (स्कन्द पू.)

वेदव्यासजी काशीराज महल में स्वयम् स्थित होकर काशी की ओर देखा करते हैं। भगवान् शंकर ने व्यासजी की ऐसी आशक्ति देखकर कहा तुम्हारे अंसभूत काशी में व्यास होंगे। यहाँ व्यासपीठ के उत्तराधिकारियों का उल्लेख किया जा रहा है जो क्रमशः इस प्रकार हैं-

श्री विश्वनाथ व्यास, श्री शम्भूनाथ व्यास, श्रीमती रुक्मिणी देवी व्यास, श्री महादेव व्यास, श्री मातादयाल व्यास, श्री कालिका व्यास, श्री लक्ष्मीनारायण व्यास, श्री रामनारायण व्यास, श्री रघुनन्दन व्यास, श्री बैजनाथ व्यास, श्री सोमनाथ व्यास, श्री चन्द्रनाथ व्यास, श्री केदारनाथ व्यास और श्री राजनाथ व्यास। वर्तमान सन् १९६८ से ये ही चार उत्तराधिकारी कथा-पुराणादि वार्षिक यात्रा, पंचक्रोशी, अंतरग्रही, नगर प्रदक्षिणा अन्य अनेक यात्राओं का संकल्प और यज्ञ अनुष्ठान, धार्मिक आयोजन परंपरानुगत रूप से संपन्न करते चले आ रहे हैं।

शिवजी के वाराह कल्प में होने वाले अवतारों से लेकर २८ अवतार का वर्णन एवं आघ महर्षि व्यास

शिवजी ने कहा- ब्रह्मन् वाराह कल्प के सातवें मन्वन्तर में सम्पूर्ण लोकों को प्रकाशित करने वाले भगवान् कल्पेश्वर, जो तुम्हारे प्रपौत्र हैं, वह वैवस्वत मनु के पुत्र होंगे। तब उस मन्वनत्र की चतुर्युगियों के किसी द्वापर युग में लोकों पर अनुग्रह करने तथा ब्राह्मणों का हित करने के लिये मैं प्रकट होऊँगा। ब्रह्मन्! युग-प्रवृत्ति के अनुसार उस प्रथम चतुर्युगी के प्रथम द्वापर युग में जब प्रभु स्वयं ही व्यास होंगे, तब मैं उस कलियुग के अन्त में ब्राह्मणों के हितार्थ शिवासहित श्वेत नामक महामुनि होकर प्रकट होऊँगा।

उस हिमालय के रमणीय शिखर छागल नामक पर्वत श्रेष्ठ पर मेरे शिखाधारी चार शिष्य उत्पन्न होंगे, उनके नाम होंगे- श्वेत, श्वेतशिख, श्वेताश्व और श्वेतलोहित। ये ब्रह्म की समाधि में लीन रहेंगे।

दूसरे द्वापर में प्रजापति व्यास होंगे। उस समय कलियुग में सुतार नाम से उत्पन्न होऊँगा। तीसरे द्वापर में जब भार्गव नामक व्यास होंगे, तब मैं भी नगर के निकट ही दमन नाम से प्रकट होऊँगा। चौथे द्वापर में जब अगिंरा व्यास कहे जायेंगे, उस समय मैं सुहोत्र नाम से अवतार लूँगा। पाँचवे द्वापर में सविता व्यास नाम से कहे जायेंगे, तब मै कंक नामक महातपस्वी योगी होऊँगा।

छठे द्वापर के प्रवृत्त होने पर जब मृत्युलोक कारक व्यास होंगे और वेदों का विभाजन करेंगे, उस समय भी मैं लोकाक्षि नाम से प्रकट होऊँगा। सातवें द्वापर आरम्भ में जब शतक्रतु नामक व्यास होंगे, उस समय भी मैं जैगीषव्य नाम से प्रकट होऊँगा। आठवें द्वापर के आने पर मुनि वसिष्ठ वेदों का विभाजन करने वाले वेदव्यास होंगे। उस युग में भी मैं दधिवाहन नाम से अवतार लूँगा। नवीं चतुर्युगी के द्वापर युग में सारस्वत व्यास नाम से प्रसिद्ध होंगे, मैं ऋषभ नाम से अवतार लूँगा। (शतरुद्रसंहिता अध्याय ४)

शिवजी कहते हैं- ब्रह्मण ! दसवें द्वापर में त्रिधामा नाम के मुनि व्यास होंगे। ग्यारहवें द्वापर में जब त्रिवृत नामक व्यास होंगे, तब मै कलयुग में गंङ्गा द्वार में तप नाम से प्रकट होऊँगा। बारहवी चतुर्युगी के द्वापर युग में शततेजा नाम के व्यास होंगे। उस समय मैं द्वापर के समाप्त होने पर कलियुग में हुम कंचुक में जाकर अत्रि नाम से अवतार लूँगा। तेरहवे द्वापर में जब धर्मस्रूप नारायण व्यास होंगे तब मै पर्वतश्रेष्ठ गन्धमादन पर वालखिल्याश्रम आश्रम में महामुनि बलि नाम से उत्पन्न होऊँगा।

दौदहवीं चतुर्युगी के द्वापर युग में जब रक्ष नामक व्यास होंगे, उस समय मैं अंगिरा के वंश में गौतम नाम से प्रकट होऊँगा। पन्द्रहवें द्वापर में जब त्र्यारुणि व्यास होंगे, उस समय मैं हिमालय स्थित वेदशीर्ष नामक पर्वत पर वेदशिरा नाम से अवतार ग्रहण करूँगा। सोलहवें द्वापर युग में जब व्यास का नाम देव होगा, तब मैं गोकर्ण नाम से प्रकट होऊँगा।

सत्तरहवीं चतुर्युगी के द्वापर युग में देवकृत जय व्यास होंगे, उस समय मैं हिमालय के अत्यन्त ऊँचे पर्वत पर गुहावासी नाम से अवतार ग्रहण करूँगा। अठारहवी चतुर्युगी के द्वापर युग में जब ऋतंजय व्यास होंगे तब मैं हिमालय के शिखण्डी पर्वत पर शिखण्डी नाम से उत्पन्न होऊँगा। उन्नीसवें द्वापर में महामुनि भरद्वाज व्यास होंगे, उस समय भी मैं हिमालय के शिखर पर माली नाम से उत्पन्न होऊँगा। बीसवीं चतुर्युगी के द्वापर में होने वाले व्यास का नाम कोतम होगा, तब मैं श्रेष्ठ अट्टहास पर्वत पर अट्टहास नाम से अवतार धारण करूँगा। इक्कीसवें द्वापर युग में जब वाचःश्रवा नाम के व्यास होंगे तब मैं दारुक नाम से प्रकट होऊँगा। इसलिए उस स्थान का नाम दारुवन पड़ा।

बाइसवीं चतुर्युगी के द्वापर युग में शुष्मायण नामक व्यास होंगे तब मैं काशीपुरी लांगली भीम नामक महामुनि के रूप में अवतरित होऊँगा। तेइसवीं चतुर्युगी में जब तृणबिन्दु मुनि व्यास होंगे, तब मैं कालंजर गिरि पर श्वंतनाम से प्रकट होऊँगा। चौबीसवीं चतुर्युगी में जब ऐश्वर्यशाली यक्ष व्यास होंगे, तब उस युग में नैमिष क्षेत्र में शूली नामक महायोगी होकर उत्पन्न होऊँगा।

पचीसवें द्वापर में जब व्यास शक्ति नाम से प्रसिद्ध होंगे, तब मैं दण्डधारी महायोगी के रूप में प्रकट हूँगा। मेरा नाम मंडीश्वर होगा। छब्बीसवें द्वापर में जब व्यास का नाम पराशर होगा, तब मैं भद्रवट नामक नगरमें सहिष्णु नाम से अवतार लूँगा। सत्तइसवें द्वापर में जब जातुकर्ण व्यास होंगे, तब मै भी प्रभासतीर्थ में सोमशर्मा नाम से प्रकट होऊँगा। अट्ठाइसवें द्वापर में जब भगवान् श्री हरि पराशर के पुत्र के रूप में द्वैपायन नामक व्यास होंगे तब पुरुषोत्तम श्रीकृष्ण अपने छठे अंश से वसुदेव के श्रेष्ठ पुत्र के रूप में उत्पन्न होकर वासुदेव कहलायेंगे।

उसी समय योगात्मा मैं भी लोकों को आश्चर्य में डालने के लिये योगमाना के प्रभाव से ब्रह्मचारी का शरीर धारण करके प्रकट होऊँगा। फिर श्मशान भूमि में मृत के रूप में पड़े हुए अविच्छन्न शरीर को देखकर मैं ब्राह्मणों के हित साधन के लिये योगमाया के आश्रय से उसमें प्रवेश कर जाऊँगा फिर तुम्हारे तथा विष्णु के साथ मेरुगिरि की दिव्य गुहा में प्रवेश करूँगा। ब्रह्मण्! वहाँ मेरा नाम लकुली होगा।

इस प्रकार मेरा यह कायावतार उत्कृष्ट सिद्ध क्षेत्र कहलायेगा और यह जब तक पृथ्वी कायम रहेगी, तब तक लोक में परम विख्यात रहेगा।

इस तरह परमात्मा शिव ने वैवस्वत मन्वन्तर के सभी चतुर्युगियों के योगेश्वरावतारों का वर्णन किया। अट्ठाईस व्यास क्रमशः एक-एक करके प्रत्येक द्वापर में होंगे।
(शतरुद्रसंहिता अ.५)

काशी की सीमा में गङ्गा का प्रवेश

स्वच्छन्दरूप से प्रबल वेग के साथ गंङ्गा को काशी में प्रवेश करते देखकर सदाशिव भोलेनाथ को काशीवासियों के लिये चिन्ता हुई तो शिवजी त्रिशूल को सम्भाल कर वाराणसी के सीमा पर जाकर विराजमान हो गये और गंङ्गा के आने की प्रतीक्षा करने लगे।

कुछ ही समय बाद शिवजी ने गंङ्गा को आते देख आवेश में आगे जाकर अपने त्रिशूल पर गंङ्गा को टांग लिया और कहा- गंगे तू मेरी नगरी में प्रवेश के पूर्व प्रतिज्ञा कर कि मैं अपने काशीवासी भक्तों के लिये काशी में स्थिर रूप से निरन्तर बहा करूंगी और मेरे गर्भ में रहने वाले जलचर जीव स्नान करनेवाले स्नानार्थियों को कभी भी कष्ट नहीं देंगे और सदा काशी के तट को नहीं छोंड़ेंगी, शिव जी ने गंङ्गा से ऐसी प्रतिज्ञा कराकर काशी में उसे प्रवेश करने दिया ऐसी कथा प्रचलित है। वहाँ शूलटंकेश्वर नामक शिवलिंग रूप में अभी तक विराजमान है। यह स्थान काशी के दक्षिण भाग अस्सी संगम से २ मील पर स्थित है।

गंङ्गा तट पर सघन वृक्षों की वाटिका में सदाशिव आनन्दवन की शोभा बढ़ा रहे है। वहाँ की रमणीयता काशीवासियों को अपनी ओर आकर्षित करती रहती है।

काशीवासी उस आनन्द का लाभ उठाने के लिए सावन में सपरिवार भँग, बूटी, भोजन-पानी का प्रोग्राम अपने इष्टमित्रों के साथ निरन्तर करते रहते हैं। समीप के ग्रामवासी शिवजी की पूजा अर्चना कर कृत-कृत्य होते हैं।

काशी में सत्यवादी राजा हरिश्चन्द्र के सत्य की परीक्षा

तृणीकृत्य निजं देहं यत्र राजर्षिसत्तमः।
हरिश्चन्द्रः सपत्नीको व्यक्रीणाद् भूरियं हि सा ।।

महर्षि विश्वामित्र ने राजा हरिश्चन्द्र से सम्पूर्ण राज्य दान में लिया, तब राजा इसी काशीपुरी में आये। यही उन्होंने अपनी पत्नी को एक ब्राह्मण के घर दासी कर्म के लिए बेचा और स्वयम् चाण्डाल के हाथ बिक कर ऋषि को दक्षिणा दी। अयोध्या के राजा त्रिशंकु के पुत्र हरिश्चन्द्र अपनी पत्नी सुतारा और पुत्र रोहिताश्व के साथ सुख से कालयापन कर रहे थे। उनकी प्रशंसा सुनकर चन्द्रचूड़ और मणिप्रभ नाम के दो देवता पृथ्वी पर अवतरित हुए और जंगली सुअर का रूप धर कर अयोध्या के पास शक्रावतार नामक उपवन को नष्ट करने लगे। हरिश्चन्द्र ने इन सुअरों को तीर से मारा। एक सुअर के बदन से तीर निकलकर एक गर्भिणी हरिणी को लगा और वह चल बसी। अपने पाप का प्रायश्चित करने के लिए राजा कुलपति के पास गये। कुलपति और उनकी कन्या दोनों ही राजा पर बहुत रूष्ट हुए। उनको प्रसन्न करने के लिए राजा ने अपना पूरा राज्य तो उन्हें दे ही दिया, पर उसके साथ एक लाख सुवर्ण मुद्राएँ भी देने का वचन दिया। ऋषि कौटल्य के साथ राजा अपने नगर आये और कोषाध्यक्ष को मुहरें

लाने को कहा। इस पर ऋषि ने राजा को कहा कि अपना सब दान देने पर उन्हें उस द्रव्य पर कोई अधिकार नहीं है। जब राजा के मंत्री वसुभूति और उनके मित्र कुंतल ने बीच-बचाव करना चाहा तो ऋषि ने शाप देकर एक को तोता और दूसरे को सियार बना दिया। एक माह में कर्ज उतारने का वादा करके अपने पुत्र और पत्नी के साथ राजा काशी में आये और वहां उन्होने उन दोनों को वज्रहृदय नामक ब्राह्मण के हाथ ६ हजार मुहरों पर बेच डाला।

सुतारा को ब्राह्मण के यहां दासी का काम करना पड़ता था और रोहिताश्व को ब्राह्मण के लिए ईंधन और फल-फूल इकट्ठा करना पड़ता था।

इसी बीच में कुलपति अपना कर्ज राजा से वसुलने आ पहुँचे और राजा ने उन्हे ६ हजार मुहरें भेंट कर दीं। बाकी के लिए कुलपति ने हरिश्चन्द्र को काशीराज से भीख मांगने को कहा पर राजा ने उसे नहीं माना और अपने आपको एक चाण्डाल के हाथ बेच दिया। इस चाण्डाल ने राजा को श्मशान भूमि की देख-रेख पर नियुक्त किया।

देवताओं ने राजा के सत्य की कठिन परीक्षा के लिए नगर में महामारी का प्रकोप फैलाया। इसका दोष सुतारा के सिर मढ़ा गया और उसे गधे पर चढ़ा कर शहर से निकाल कर एक बरगद के पेड़ के साथ बांध दिया गया।

उस कष्ट से हरिश्चन्द्र ने उसका उद्धार किया। इसी बीच में फूल चुनते हुए रोहिताश्व को एक साँप ने डस लिया और इससे उसकी मृत्यु हो गयी।

जब वह शव दाह के लिए श्मशान में लाया गया तो हरिश्चन्द्र ने श्मशान का कर माँगा। इसी समय देवता प्रकट हुए और उन्होनें राजा हरिश्चन्द्र को उनकी पूर्वावस्था पर पहुँचा दिया।

(वही, पृ० ७३-७४)

।। ॐ ।।

पंचक्रोशात्मक ज्योतिर्लिङ्ग काशीमाहात्म्य

इस असार संसार के प्राणियों में उत्तम योनि मनुष्य को ही प्रदान की गई है। कारण यह है कि इसमें हानि-लाभ समझने की विशेष बुद्धि है, जिससे यह उत्तमोत्तम कार्यो को कर सकता है। परन्तु बहुधा मनुष्य इस योनि को प्राप्त कर कुटुम्ब और शरीर की रक्षा में ही रह जाते हैं, यद्यपि शरीर के द्वारा चारों फलों की प्राप्ति होती है। इस शरीर की रक्षा अवश्य होनी चाहिए। इसकी रक्षा के पश्चात इससे मुख्य कार्य क्या लेना चाहिए मनुष्य भूल गये हैं। मुख्य उद्देश्य गर्भवासादि आवागमन, जन्म-मरण से मुक्त होना है यदि मनुष्य यह कार्य न कर सका तो शरीर की रक्षा करना व्यर्थ है। ईश्वर ने अनेक रूप धारण करने की इच्छा से माया का आश्रय लेकर भिन्न-भिन्न जीव-जड़-चैतन्यमय अनेक प्रकार की सृष्टि रची है।

सम्पूर्ण प्राणियों के पूर्वकर्मानुसार पाप-पुण्य, सुख-दुःख, स्वर्ग-नरक से निवृत्त होने के लिए स्वयम् चारों वेदों की रचना की। ऋषियों द्वारा मानव-कल्याणार्थ अनेक सद् ग्रन्थ रचे गये है। जिनमें मुक्ति के अनेक उपाय भरे पड़े हैं।

इस युग में परलोक के लिए प्रयास करने वाले बहुत कम लोग हैं, यद्यपि अनेक प्रकार के पापों से जीवों का उद्धार कर के पुनः अपने में लीन करने के लिए इसी परम कृपालु ने वेदों द्वारा ब्रह्मज्ञान प्रकट कर दिया।

शिव स्वयं ही तीर्थरूप

"ऋते ज्ञानान्न मुक्तिः" "तरति शोकमात्मवित्'

इत्यादि वाक्यों से ज्ञान ही मुक्ति का हेतु बना और उस ब्रह्मज्ञान के साधन निमित्त जप-तप-योग-यज्ञादि कलियुग में आयु ज्ञान और द्रव्य व्यापार के अभाव में सर्व साधारण से नहीं हो सकेंगे यथा-

बहूपसर्गो योगोयं कृच्छ्रसाध्यं तपो हि यत्।
योगाद् भ्रष्टस्तपोभ्रष्टो गर्भक्लेशसहः पुनः ।।

(१४० ।। का० खं० अ० २६)

योग तो अनेक विघ्नों से भरा पड़ा है और तप बड़ा ही कष्ट साध्य है। (इसके बिना ज्ञान दुर्लभ है) अतः योग और तप से भ्रष्ट होकर बारम्बार गर्भवास का क्लेश सहना पड़ता है।

अत एव वह सर्वशक्तिमान् परम दयालु सर्वसाधारण जीवों के उपकारार्थ भी विशेषत्व युक्त स्वयं तीर्थरूप ग्रहण कर के जगत् में प्रकाशमान हुआ। यथा-

ब्रह्मैव तन्निर्गुणं निर्विकारं निरन्तरं क्षेत्ररूपेण नित्यम् ।
तिष्ठत्येवन्त्र्यम्बको यत्र नित्यं तद्रूपत्वात्सन्निहित एवास्ते ॥
विभूतिं स्वां दर्शयिष्यन् गिरीशः क्षेत्राकारं प्राप्य तीर्थाकृतिश्च ।

(पद्मपुराणे)

जो निर्विकार निर्गुण और नित्य ब्रह्म है, तद्रूपता से वही शंकर क्षेत्र (तीर्थ) रूप होकर अपने ऐश्वर्य को दिखलाता है। तीर्थ शब्द का अर्थ तारना है, अर्थात जिसमें भवसागर से तार देने की शक्ति हो वह तीर्थ है।

अन्य शास्त्रों में तीर्थों के (स्थावर, जंगम, मानस) वर्णन हैं। स्थावर भौम-तीर्थ, जंगम ब्राह्मणादि उपदेशक, मानस तीर्थ सत्यादि धर्म, यथा-

यथा शरीरस्योद्देशाः केचिन्मेध्यतमाः स्मृताः ।
तथा पृथिव्यामुद्देशाः केचित् पुण्यतमाः स्मृताः ॥

शास्त्रकारों ने लिखा है कि जिस प्रकार शरीर के विशेष विशेष भाग पवित्र है, उसी प्रकार पृथ्वी के भी कोई-कोई भाग अत्यंत पुण्यमय हैं। उसी को स्थावर भौमतीर्थ कहते है।

ब्रह्मणा जंगमं तीर्थ निर्मलं सर्वकामिकम् ।
येषां वाक्योदकेनैव शुध्यन्ति मलिना जनाः ॥

ब्राह्मण सर्व काम के दाता, निर्मल जंगमतीर्थ है, जिनके वाक्यरूपी जल से मनुष्यों का मलिन मन शुद्धता को प्राप्त होता है। ये जंगमतीर्थ हैं।

सत्यं तीर्थं तपो तीर्थं तीर्थमिन्द्रियनिग्रहः ।
सर्वभूतदयातीर्थ सर्वत्रार्जवमेव च ॥ इत्यादि ।

सत्य तीर्थ है, तप तीर्थ है और इन्द्रियों का जीतना तीर्थ है। सब प्राणियों पर दया करना तीर्थ है और कोमल स्वभाव तीर्थ है। ये मानसतीर्थ है। ये सभी शंख मुनि के वचन है। परन्तु यहाँ (स्थावर) भौमतीर्थ से अभिप्राय है।

इससे केवल भौमतीर्थ के विषय में लिखा जाता है, भूमि-के भी तीन विभाग किये गये है- भोगभूमि, कर्मभूमि, ज्ञानभूमि। भोगभूमि, जिसके सेवन से लौकिक सुख प्राप्त हो। जैसे- विदेश आदि माने गये है। कर्मभूमि जिसके सेवन से परलोक सुख (स्वर्गादि) की प्राप्ति हो, (यथा कुरुक्षेत्रादि) और जिसके सेवन से अन्त समय ज्ञान को प्राप्त होकर इस अनित्य, सदा चंचल, आध्यात्मिक त्रिविध दुःख के एकमात्र लीलास्थल संसार सागर से पार होकर परमानन्दमय

शान्ति-निकेतन नित्य धाम में पहुँच जाय, उसे ज्ञानभूमि कहते है। यथा श्री काशी, यहाँ अन्त समय साक्षात् शंकर ऐसे गुरु परम ज्ञानोपदेश करते हैं। भोगभूमि के अतिरिक्त कर्म और ज्ञानभूमि ही को तीर्थ या क्षेत्र कहते है, और कर्मभूमियों में प्रधान कुरुक्षेत्र है वह कुरुक्षेत्र स्वयं काशी का साधक है। यथा- महाभारत नीलकंठी टीका।

"सर्वेषां तीर्थाणां कुरुक्षेत्रप्रापकत्वम् ।
कुरुक्षेत्रस्य तु काशीप्रापकत्वम् ।।" (वनपर्व, अ० ८३ श्लोक २०३)

अर्थात् सर्वतीर्थ कुरुक्षेत्र के प्रापक हैं, और कुरुक्षेत्र स्वयम् काशी का साधक है। क्रियार्थक "कृ" धातु से कुरुपद की, निष्पत्ति और प्रकाशार्थक "काश" धातु से काशी पद की, सिद्धि की आलोचना करने से हमारे सिद्धान्त की समीचीनता प्रतिपन्न होगी। अब यहाँ यह शंका उत्पन्न होगी कि परम ज्ञानस्वरूप विश्वेश्वर भगवान् तो व्यापक रूप से सभी स्थानों पर हैं। इस प्रकार के तर्क की गणना कुतर्क में होगी, क्योंकि आदि सृष्टि ही से भूमि के तीन विभाग हो चुके हैं, तथा ईश्वरमय तथा ईश्वर रचित समस्त वस्तुएँ हैं।

परन्तु उसकी इच्छा से प्रत्येक वस्तु के मुख्य गुण होते है। यथा सूर्य में प्रकाश, अग्नि में उष्णता, चन्द्रमा में शीतलता, भोग में नशा, मिर्च में तीतापन, जमालगोटे में रेचन (दस्तावर) शक्ति इत्यादि देखी जाती हैं।

ईश्वर सबमें व्यापकरूप से समभाव है, अतएव, सबके गुण एक ही से होने चाहिए- तो ऐसे तर्क को कुतर्क कहा जायगा।

इसी प्रकार ईश्वरमय तथा ईश्वररचित भूमि के भिन्न-भिन्न भागों में भी भिन्न-भिन्न गुण हैं। प्रायः कहा जाता है कि अमुक स्थान की जलवायु अच्छी है, तथा अमुक स्थान की नहीं, इसका क्या कारण है। जलवायु का भूमि से सम्बन्ध है। जहाँ की भूमि उत्तम होगी, वहाँ की जलवायु भी उत्तम होगी। जहाँ की भूमि अच्छी न होगी, वहां की जलवायु भी अच्छी न होगी। कहा जाता है कि अल्मोड़ा की भूमि भुआली में रहने से असाध्यरोग (तपेदिक) भी ठीक हो जाता है। मोतिहारी में रहने वालों का देखा गया है बहुधा गला फूल जाता है। जिस जगह का समुद्र जल अच्छा है, वहाँ चित्त प्रसन्न होगा और जहाँ कालापानी पड़ता है वहाँ पहुँचते ही कय होने लगती हैं।

जब सब ही भूमि समान है तो गुण भी समान होने चाहिये, एक दूसरे से भिन्न क्यो ? मनुष्य के शरीर का कोई-कोई भाग पवित्र और कोई अपवित्र माना जाता है। उसी प्रकार भूमण्डलान्तर्गत तीर्थ की भूमि में पवित्रता और तारने की शक्ति विशेष रक्खी गयी हैं। समस्त तीर्थों की अपेक्षा काशी में विशेष तारणी (मुक्तिदायिनी) शक्ति मानी गयी हैं। ऐसा सनातनधर्म के सभी ग्रन्थों में वर्णन मिलता हैं।

सभी पुरियों के बाद मोक्ष काशीपुरी में

धर्मस्तु संपत्तिभरैः किलोह्यतेप्यर्थो हि कामैर्बहुदानभोगकैः ।
अन्यत्र सर्वत्र स मोक्ष एकः काश्यां न चान्यत्र तथा यथात्र ।।
(२३।। का० खं० अ० ५)

अयोध्यायामथावन्त्यां मथुरायामथापि वा ।
द्वारवत्यां च कांच्यां वा मायापुर्यामथो नृप ।। ६३ ।।
अपि पातकिनो ये च कालेन निधनं गताः ।
ते हि स्वर्गादिहागत्य काश्यां मोक्षमवाप्नुयुः ।। ६४ ।।
(का० खं० अ० २४)

अर्थात् किसी तीर्थ स्थान में विशेष धन व्यय करने से धर्म का लाभ होता है, और कहीं पर बहुत भोगो की सामग्री के दान द्वारा, अर्थ और काम की भी प्राप्ति हो सकती है, परन्तु एक मोक्षपद जैसा काशी में प्राप्त होता है, वैसा अन्यत्र कहीं प्राप्त नहीं हो सकता। हे नृप ! अयोध्या, अवन्तिका, मथुरा, द्वारावती, काँची अथवा मायापुरी (हरिद्वार) में जो पापी लोग यथाकाल वास कर मर जाते हैं वे सब स्वर्ग से होकर यहाँ काशी ही में मोक्ष को प्राप्त होते हैं।

प्रश्न उठता है कि तीर्थो में भी न्यूनाधिकभाव क्यों रक्खा गया। काशी में मोक्ष के कारण अनेक हैं, सद् ग्रन्थों के प्रमाण से काशी की सब तीर्थो से विशेषता पायी जाती हैं। संसार में जितने तीर्थ हैं, वे विश्वनाथ के अंश से प्रकाशित है।

शरीर-त्याग-मात्र से मोक्ष

और इस काशी में सच्चिदानन्द परब्रह्म विश्वनाथ ही मूर्तिमान् होकर स्वयं विराजमान हैं। इससे दूसरे तीर्थ इसकी समानता को नहीं पा सकते। यथा-

विश्वेश्वरो यत्र न तत्र चित्रं धर्मार्थकामामृतरूपरूपः ।
स्वरूपरूपः स हि विश्वरूपस्तस्मान्न काशी सदृशी त्रिलोकी ।।
(का० ख० अ० ३)

जहां पर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को देने के लिए मूर्तिमान् होकर भगवान् विश्वेश्वर स्वयम् निवास करते हैं, वहाँ पर (मुक्तिलाभ) यह कौन आश्चर्य की बात है। क्योकि त्रैलोक्य भी काशी के समान नहीं है।

और इसी से काशी सर्व तीर्थो से अधिक अपना प्रभाव दिखाती हैं, यथा-

निष्प्रत्यूहेन योगेन नानाजन्मार्जितेन च ।
यत्फलं लभतेऽन्यत्र तत्काश्यां त्यजतस्तनुम् ।।३३ ।।

तप्त्वा तपांसि सर्वाणि बहुकालं जितेन्द्रियैः ।
यत्फलं लभ्यतेऽन्यत्र तत्काश्यामेकरात्रतः ।।३४ ।।

(का० खं० अ० २६)

अन्य स्थानों में अनेक जन्मार्जित निर्विघ्न योग के द्वारा जो फल प्राप्त किया जाता है, काशी में वह फल केवल शरीर के त्याग मात्र से मिल जाता है ।।३३ ।।

अन्यत्र बहुत काल जितेन्द्रिय होकर सर्व प्रकार की तपस्या करने से जो फल प्राप्त होता है, काशी में वह फल एक रात्रि-जागरण मात्र से प्राप्त होता है ।।३४ ।।

विषयासक्तचित्तेऽपि त्यक्तधर्मरतिर्नरः ।
इह क्षेत्रे मृतः सोपि संसारे न पुनर्भवेत् ।।६३ ।।

(इति लिंगपुराणे पूर्वभागे अ० ६२ श्लो० ६३)

शिवजी पार्वती से कहते है कि विषयासक्त प्राणी सब धर्मो से रहित होने पर भी इस क्षेत्र में मरने पर पुनः जन्म नहीं पाता है ।

श्रीभगवानुवाच- इदं गुह्यतमं क्षेत्रं सदा वाराणसी मम ।
सर्वेषामेव जंतूनां हेतुर्मोक्षस्य सर्वदा ।।३८ ।।
अस्मिन्सिद्धा सदा देवि मदीयं व्रतमास्थिताः ।
अभ्यस्यन्ति परं योगं युक्तात्मानो जितेन्द्रियाः ।।३९ ।।
मम क्षेत्रमिदं तस्मादविमुक्तमितिस्मृमत् ।

(इति लिंगपुराणे)

यह काशी अत्यन्त गोपनीय क्षेत्र है, क्योकि सम्पूर्ण जन्तुओं के मोक्ष का हेतु है, इस काशीक्षेत्र में बहुत बड़े-बड़े सिद्ध व्रत लेकर मोक्ष की कामना से निवास करते हैं ।।३८ ।।

योग से युक्त होकर जितेन्द्रिय महापुरुष योग का अभ्यास करते हैं ।।३९ ।।

हे देवी, यहां पर जिस प्रकार से मोक्ष प्राप्त होता है वैसा दूसरी जगह नहीं, क्योकि यहां शरीर त्यागने मात्र से मुक्ति प्राप्त हो जाती है । यह पंचक्रोशात्मिका काशी नाम की भूमि यथार्थ में तेजोमय शिवलिंग (मूर्तिमान्) है ।

"भूमिष्ठापि न याऽत्र भूस्त्रिदिवतोऽप्युच्चैरधःस्थापि या ।
या बद्धा भुवि मुक्तिदा स्युरमृतं यस्यां मृता जन्तवः ।।
या नित्यं त्रिजगत्पवित्रतटिनीतीरे सुरैः सेव्यते ।
सा काशी त्रिपुराधिराजनगरी पायादपायाज्जगत् ।।"

(स्कन्दपुराण)

काशी का पृथ्वी से सम्बन्ध नहीं है। स्वर्गलोक से उच्चतर हैं। जागतिक सीमा से आबद्ध होने पर भी मोक्षदायिनी है। त्रैलोक्यपावनी भागीरथी के तट पर शोभित और सुसेवित है और काशी त्रिपुरारी-राज-नगरी हैं। सात मोक्षपुरियाँ कालान्तर में काशी प्राप्त कराकर ही मोक्ष प्रदान करती है, पर काशी स्वतः साक्षात् मोक्ष देती है। तारक मंत्र से जीव को तत्व-ज्ञान हो जाता है और अपना ब्रह्मस्वरूप प्रकाशित हो जाता है। "जहां ब्रह्म प्रकाशित हो, वह काशी"- यह काशी नाम कि विशेषता है।

"सर्वाणि पुण्यतीर्थानि सेव्यान्येव मुमक्षुभिः"

मोक्ष को चाहने वाले पुरुषो को भी पुण्य तीर्थो का सेवन करना चाहिये।

यल्लिङ्गदृष्टवन्तौ हि नारायणपितामहौ।
तदेव लोके वेदे च काशीति परिगीयते ॥५३॥

(५३॥ पद्मपुराणान्तर्गत काशी माहात्मये)

जिस तेजोमय लिंग को नारायण और ब्रह्मा ने देखा था, उसी लिंग को लोक और वेद में काशी के नाम से निर्देश किया गया है। अथर्ववेद ४।७।१ में पिप्पलादशाखा, बृहदा, शथपथ ब्राह्मण १४।५।१।१ वृ. २,१,१॥

यत्तच्छिवानन्दमनन्तमाद्यं यदावयोर्नित्यमभिन्नरूपम्।
दृश्यं समस्तोपनिषत्सु भक्तैर्जानीहि तेजस्तदहोविमुक्तम्॥
ज्योतिर्लिङ्गत्वमेवार्ये लिङ्गी चाहं महेश्वरः।
तद्तदविमुक्ताख्यं ज्योतिरालोक्यतां प्रिये॥

(सनत्कुमारसंहितायाम्)

श्रीशंकरजी पार्वती से कहते हैं कि हे प्रिये! जो शिव कल्याणरूप, आनन्दमय, अनंत, सबके आदि और उपनिषदों से जानने योग्य है और हम तुम दोनों का नित्य और अभिन्न रूप तेज है, वही अविमुक्त (काशी) है, ऐसा जानो। हे आर्ये! ज्योतिर्लिंग तुम हो और लिंगवान् महेश्वर मैं हूँ, वही यह ज्योतिरूप अविमुक्त काशी है।

किं मया वर्ण्यते देविं ह्यविमुक्तफलोदयः।
पापिनां यत्र मुक्तिःस्यान्मृतानामेकजन्मना ॥७५॥
अन्यत्र तु कृतं पापं वाराणस्यां विनश्यति।
वाराणस्यां कृतं पापं पैशाच्यपरकावहम् ॥७६॥
कृत्वा पापसहस्त्राणि पिशाचत्वं वरं नृणाम्।
न तु शक्रसहस्त्रत्वं स्वर्गे काशीपुरीं विना ॥७७॥

हे देवि ! अविमुक्त काशी के विषय में मैं क्या वर्णन करूँ । एक ही जन्म में बड़े से बड़े पापियों की काशी में मरने पर मुक्ति हो जाती है । दूसरी जगह के किये हुए पाप वाराणसी में नष्ट हो जाते है, और वाराणसी में किया हुआ पाप पिशाच योनि को प्राप्त कराते हैं । काशी में रहकर हजारों पाप करके पिशाच होना ठीक है, काशी के बिना हजारों बरस तक स्वर्ग में रहना ठीक नहीं ।

दिशासूचक

(अविमुक्त सीमा क्षेत्र)

पूर्वतो मणिकर्णेशो ब्रह्मेशो दक्षिणे स्थितः ।
पश्चिमे चैव गोकर्णो भारभूतस्तथोत्तरे ।।

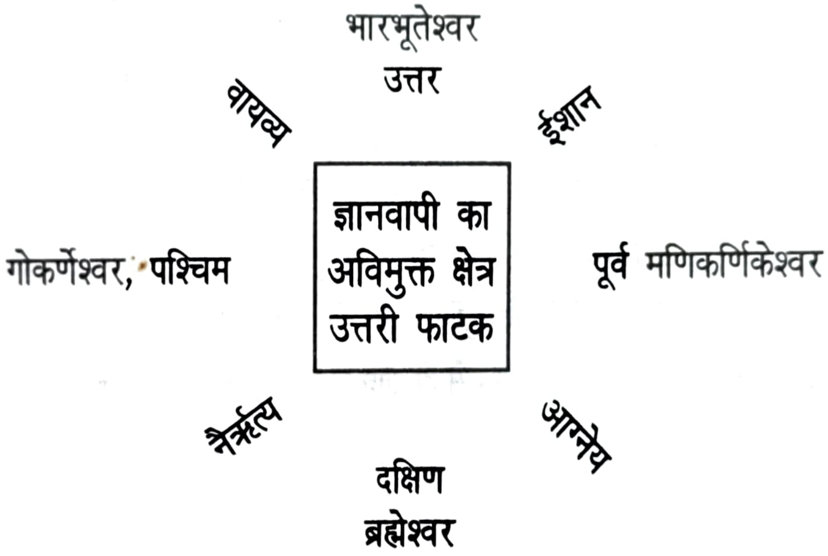

उत्तर पूरब है ईशान, पूर्व दक्षिण है अग्नि जान ।
उत्तर पश्चिम वायव्य होय, पश्चिम दक्षिण नैर्ऋत्य सोय ।।

अविमुक्तेश्वरे नित्यमवसच्च सदा तया ।
सर्वगत्वाच्च सर्वत्वात्सर्वात्मा सदसन्मयः ।।१४६

(इति लिंगपुराणे पूर्वभागे अ० ९२)

अविमुक्त भगवान शिव ने कैलाश से आकर अविमुक्तेश्वरलिंग में निवास किया, वे सब जगह सब रूप में होते हुए भी सदा पार्वती के साथ काशी में निवास करते हैं ।

अविशब्देन पापस्तु वेदोक्तः कथ्यते द्विजैः ।
तेन मुक्तं मया जुष्टमविमुक्तमतोच्यते ।।१४३ ।।

(लिंगपुराणे पूर्वभागे अ० ९२)

विद्वान ब्राह्मणों द्वारा अवि शब्द का अर्थ ऐसा कहा गया, (अवि) पाप को कहते हैं। जो पाप से मुक्त कर दे और जो पाप से रहित है, शिव ने कहा मै इसको कभी छोड़ता नहीं। इसी से इसका नाम 'अविमुक्त' है।

इत्युक्त्वा भगवान् रुद्रः सर्वलोकमहेश्वरः।
सुदृष्टं कुरु देवेशि अविमुक्तं गृहं मम ।।१४४ ।।

(इति लिंगपुराणे पूर्वभागे अ० ६२)

सम्पूर्ण लोक के स्वामी भगवान् सदाशिव पार्वती से बोले, हे देवि, हमारे इस अविमुक्त घर को देखों।

अविमुक्तं सदा लिङ्गंयोऽत्र द्रक्ष्यति मानवः।
न तस्य पुनरावृत्तिः कल्पकोटिशतैरपि ।।

(लिंग पु० कृ० पृ० १०६)

अविमुक्तलिंग की आराधना करने वाले को हमेशा यहां उनकी रक्षा करते और करोड़ो वर्षो तक उस मनुष्य को पुनः जन्म नहीं लेना पड़ता। शिवस्वरूप होकर वह मुक्त हो जाता है।

अविमुक्तेश्वरं लिङ्गमिदं दृष्ट्वेह मानवः।
सद्यः पापविनिर्मुक्तः पशुपाशैर्विमुच्यते ।।

इस अविमुक्तेश्वर लिंग को देखनेमात्र से ही शीघ्र पापों के बन्धन से छूट जाता है।

अविमुक्तेश्वरं लिङ्गं दृष्ट्वा क्षेत्रेऽविमुक्तके।
विमुक्त एव भवति सर्वस्मात्कर्मबन्धनात् ।।

अविमुक्तेश्वर और उनके स्थान का दर्शन करने मात्र से सब कर्मों के बन्धन से छूट कर मनुष्य मोक्षपद को प्राप्त हो जाता है।

अर्चन्ति विश्वे विश्वेशं विश्वेशोऽर्चति विश्वकृत्।
अविमुक्तेश्वरं लिङ्गं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ।।

(लि० पुराण १६६ का० खं०, ३६।८०)

जिसकी अर्चना विश्वेश्वर विश्वनाथ भी स्वयम् करते हैं। ऐसा अविमुक्तेश्वर लिंग (दर्शनार्थी को) भुक्ति तथा मुक्ति दोनों प्रदान करता है।

अविमुक्ते महाक्षेत्रे विश्वेशसमधिष्टिते।
यैर्न दृष्टं विमूढास्तेऽविमुक्तं लिङ्गमुत्तममम् ।।

(का० खं०, ३६।६३)

अविमुक्त क्षेत्र काशी में विश्वेश्वर के सान्निध्य में लिंगो में सर्वश्रेष्ठ अविमुक्तेश्वर लिंग का जिसने दर्शन नहीं किया, वह मूर्ख है।

अविमुक्तं समासाद्य तीर्थसेवी कुरूद्वह ।
दर्शनाद्देवदेवस्य मुच्यते ब्रह्महत्यया ।।

(महाभारत वनपर्व, ८४।१८)

कृष्णायां माघभूतायामविमुक्तेशजागरात् ।
सदा विगतनिद्रस्य योगिनी गतिरुत्तमा ।।८६ ।।

माघकृष्ण १४ को अविमुक्तलिंग का दर्शन पूजन और एक रात्रि जागरण मात्र से मनुष्य योगी जनों की परम गति को पाता हैं ।

किं बिभेति नरो धीरः कृतादघशिलोच्चयात् ।
अविमुक्तेशलिंगस्य भक्तिवज्रधरो यदि ।।६१ ।।

जिस मनुष्य ने अविमुक्तेश्वर की भक्तिरूप वज्रायुध को धारण किया, वह किये हुए पाप रूपी पर्वतों से क्यों डरेगा ।

द्रष्टारमविमुक्तस्य दृष्ट्वा दण्डधरो यमः ।
दूरादेव प्रणमति प्रबद्धकरसम्पुटः ।।६४ ।।

काशी क्षेत्र में अविमुक्तेश्वर लिंग के दर्शन पूजन करने वालों को देखकर यमराज दूर से प्रणाम करता है । (अविमुक्तेश्वर का आदि स्थान ज्ञानवापी के उत्तर फाटक के सामने का चबूतरा वाला स्थान माना जाता है । दूसरा अविमुक्तेश्वर का स्थान ब्रह्मनालमार्गपर मुर्दा चौकी के बगल में है । तीसरा अविमुक्तेश्वर का स्थान राधाकृष्ण धर्मशाला सी०के० ३५/१ में माना जाता है, जहाँ बड़ा लिंग अविमुक्तेश्वर का तथा छोटा लिंग अप्सरेश्वर का है । चौथा अविमुक्तेश्वर वर्तमान विश्वनाथ सी०के० ३५/१६ के दक्षिणी कोणपर स्थित है) ।

मम क्षेत्रमिदं तस्मादविमुक्तमिति स्मृतम् ।
नैमिषे च कुरुक्षेत्रे गंगाद्वारे च पुष्करे ।।४५ ।।
स्नानात्संसेवनाद्वापि न मोक्षः प्राप्यते यतः ।
इह संप्राप्यते येन तत एतद्विशिष्यते ।।४६ ।।

(लि० पु० पूर्वभाग अ० ९२)

यह मेरा क्षेत्र अविमुक्त कहा जाता है । इसलिए मुक्ति यहाँ जिस प्रकार प्राप्त होती है, उस तरह नैमिषारण्य, गंगा, पुष्कर, प्रयागादि क्षेत्र में भी नहीं प्राप्त होती है ।

कलि में अन्नपूर्णा की पुरी काशी

इस मन्वन्तर की अठारहवी चतुर्युगी में नीललोहित रुद्र ने पार्वती से विवाह किया और

कैलाश में रहे। परन्तु भगवती को मायके में रहना पसन्द न हुआ, अतः महादेवजी से कहा कि मुझे अपने घर ले चलो।

तब महादेवजी उन्हें अपने सनातन गृह अविमुक्त महाश्मशान काशी लें आये।

सतयुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग से काशी महाश्मशान

अयोध्याराज का महाश्मशान काशी ही था।

श्मशान की व्याख्या

'श्म' शब्देन शवः प्रोक्तः शानं शयनमुच्यते।
निर्वचन्ति श्मशानार्थमिति शब्दार्थकोविदः ।। का. ख. ।।
महान्त्यपि च भूतानि प्रलये समुपस्थिते।
शेरतेऽत्र शवा भूत्वा श्मशानं तु ततो महत् ।। ३।१०३।४ ।।

श्म= शव + शान = शयन शव शब्द का अर्थ मुर्दा और शान शब्द शयन, सोने को कहते हैं। अर्थात् जिसपर मुर्दा सोता है, उसे विद्वान् लोग श्मशान कहते हैं।

काशी के श्मशान में अन्य श्मशानों की अपेक्षा पंचमहाभूत, तीनों सूक्ष्म शरीर प्रलय में निर्मूल होकर पंचतत्व में विलीन हो जाते हैं। इसलिए इसे महाश्मशान कहा गया।

शंकर भगवान् कभी इसे छोड़ते नही। इसी से इसका नाम 'अविमुक्त' है। कभी लिंग रूप में प्रकट होकर रहते हैं और कभी अन्तर्हित होकर रहते हैं, पर कभी इसका त्याग नहीं करते हैं। अन्नपूर्णा जी को यह उजाड़ श्मशान पसन्द नहीं आया। वे कहने लगी कि मैं तो यहाँ नहीं रहूँगी। शंकर भगवान् ने कहा मैं तो घर में रहता नहीं, यह अविमुक्त ही मेरा घर है।

अन्त में यह निश्चय हुआ कि तीन युग में काशी श्मशान रहे और कलियुग में यह अन्नपूर्णा की पुरी होकर बसे। (इति केदारखण्डे)

शिवजी ने कहा हे आर्ये, पचास करोड़ योजन विस्तीर्ण पृथ्वी में काशी विलक्षण है।

हे महाभागे, पृथ्वी के सर्वक्षेत्रों में काशीक्षेत्र मेरा ही शरीर है।

इसका महाप्रलय में भी नाश नहीं है। काशी मेरे त्रिशूल के अग्रभाग पर सदा स्थिर है। यह महाप्रलयकाल में किस रूप में रहती है ? प्रलयकाल में ऊपर उठकर यह महाकैलाश में चली जाती है, फिर सृष्टिकाल में पृथ्वी पर आकर लोगों के उद्धार को स्थिर हो जाती है।

प्रलयकाल में काशी का स्वरूप

छत्राकारन्तु किं ज्योतिर्जलादूर्ध्वं प्रकाशते।
निमग्नायां धरण्यान्तु न निमज्जति तत्कथम् ।।

प्रलयकाल में काशी की स्थिति महाकैलाश के मानचित्र में

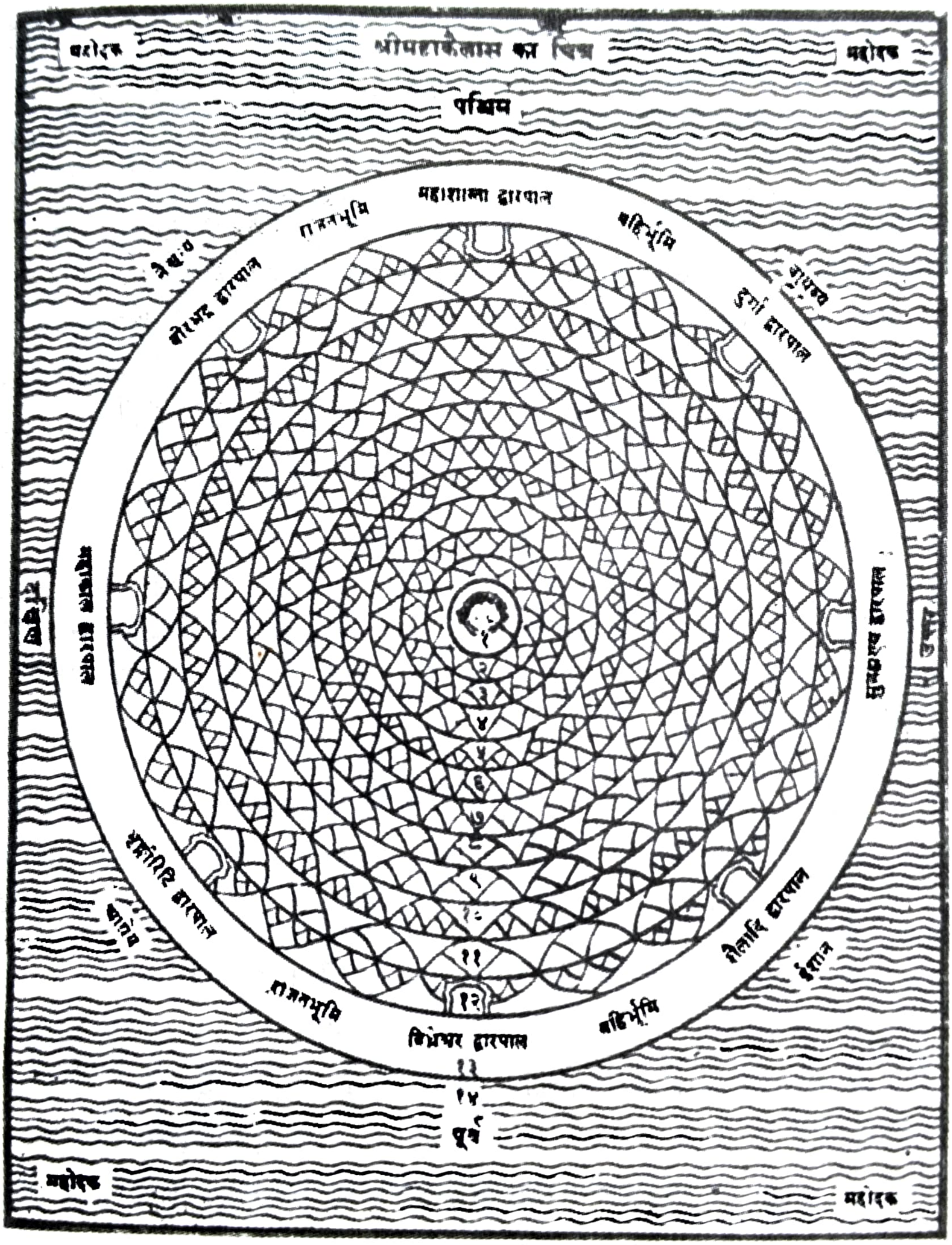

१. हीरक शिखर
२. स्फटिक शिखर
३. मुक्तामय शिखर
४. मरकतमय शिखर
५. गारुत्मक शिखर
६. इन्द्रनील शिखर
७. गोमेदक शिखर
८. पुष्पराग शिखर
९. वैडूर्यमणि शिखर
१०. पद्मराग शिखर
११. प्रवल शिर
१२. राजत साल
१३. स्वर्णभूमि
१४. महोदक

सदाशिवो महादेवो लिङ्गरूपधरः प्रभुः ।
मया स्मृतो लोकगुप्त्यै प्रादेशपरिमाणतः ।।
लिङ्गरूपधरः शम्भुर्हृदयाद् बहिरागतः ।
वृद्धिमासाद्य महतीं पंचक्रोशात्मकोऽभवत् ।।

(इति ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

अमर ऋषिगण प्रलय समय में श्री सनातन महाविष्णु से पूछते हैं- हे भगवन् ! छत्र के आकार की ज्योति जल के ऊपर क्या प्रकाशित हैं, जो प्रलयकाल में पृथ्वी के डूबने से भी नहीं डूबती । विष्णु ने कहा- हे ऋषियों ! लिंग रूपधारी सदाशिव महादेव का हमने लोकों के लिए (आदि में) स्मरण किया था तब वह लिंगरूप स्वयं प्रादेश (एक बित्ता) प्रमाण होकर हृदय से बहिर्गत हुए । पुनः अतिशय वृद्धि को पाकर पंचक्रोशात्मक (काशी) हो गये । यह वही है ।

अविमुक्तं महत्क्षेत्रं पंचक्रोशपरिस्थितम् ।
ज्योतिर्लिङ्गं तदेकं हि ज्ञेयं विश्वेश्वराभिधम् ।।१३१ ।।

(का० खं० अ० २६)

पंचक्रोश परिमाण अविमुक्त (काशी) नामक जो महाक्षेत्र है, उसे एक ही विश्वेश्वर नामक ज्योतिर्लिंग जानना चाहिए । (काशी) पृथ्वी से अलग चेतन रूप है, अतः प्रलयकाल में भी नाशको नहीं प्राप्त होती ।

पुराणों में वाराणसी की सीमा

द्वियोजनमथार्धं च तत् क्षेत्रं पूर्वपश्चिमम् ।।३९ ।।
अर्धयोजनविस्तीर्णं दक्षिणोत्तरतः स्मृतम् ।
वाराणसी नदी या च यावच्छुष्का नदी तु वै ।।४० ।।
भीमचण्डीशमारभ्य पर्वतेश्वरमन्तिके ।
एतत्क्षेत्रस्य विस्तारः प्रोक्तो देवेन धीमता ।।६२,६३ ।।

(मत्स्यपुराण अ० १८३)

वाराणसी पूर्वपश्चिम ढाई योजन (दसकोस) लम्बी तथा दक्षिणोत्तर आधा योजन (दो कोस) चौड़ी है । इसका विस्तार वरणा से शुष्क नदी असी तक बतलाया है ।

इसके अनुसार वाराणसी क्षेत्र के उत्तर और दक्षिण में वरणा तथा असी नदियां हैं ।

अयनं तूत्तरं ज्ञेयं तिमिचण्डेश्वरं तत् ।
दक्षिणं शङ्कुकरणं तु ॐकारं तदनन्तरम् ।।

इसके अनुसार उत्तर में अयन तथा तिमीचण्डेश्वर एवं दक्षिण में शङ्कुकर्ण एवं ॐकारेश्वर हैं ।

दक्षिणोत्तरयोर्नद्यौ वरणासिश्च पूर्वतः ।
जाह्नवी पश्चिमे चापि पाशपाणिर्गणेश्वरः ।। (पद्मपुराणे)

पूर्व में गंगा तथा पश्चिम में पाशपाणि गणेश। पाशपाणि गणेश सदर बाजार में है। वहाँ से पूर्व में वरुणा-संगम के आगे कोटवाँ गाँव के पास का गंगा तट २।। कोस पड़ता है।

असीवरुणयोर्नद्योरुत्पच्यादौ च सङ्गमम् । (वामनपुराणे)

प्रयाग में जो योगशायी भगवान विष्णु उपविष्ट है, उनके दक्षिण और वाम चरण सें वरुणा और असी नदियाँ उत्पन्न हुई, जो काशी क्षेत्र की सीमा से होकर गंगा में जा मिली हैं।

वरुणा-संगमस्नान से पुनः जन्म नहीं

शिव उवाच- वाराणस्यां नदी पुण्या सिद्धगन्धर्वसेविता ।
प्रविष्टा त्रिपथा गंगा तस्मिन् क्षेत्रे मम प्रिये ।।

सिद्ध गंधर्वो से सेवित पुण्य नदी वाराणसी जहाँ गंगा से मिलती है, हे प्रिये ! वह क्षेत्र मुझे प्रिय है। (मत्स्यपुराणे अ० ६-७, १८२, १८३)

वाराणसी-जाह्नवीभ्यां संगमे लोकविश्रुते ।
दत्वान्नं च विधानेन न स भूयोऽभिजायते ।।
(लिंगपुराण तीर्थचिन्तामणि चि० पृ० ३५१)

वरणा संगम पर अन्नदान करने से पुनर्जन्म नहीं होता।

सङ्गमे तत्र संस्नातः सङ्गमेशं समर्च्य च ।
नरो न जातु जननीगर्भसम्भवमाप्नुयात् ।।
(का० खं० त्रिस्थली सेतु पृ० १७३)

संगम में स्नान करने वाले मनुष्य को फिर कभी गर्भवास का दुःख नहीं सहना पड़ता है।

आनन्द-कानन, काशी

विविधतरुविशालं मत्तहृष्टान्यपुष्ट-
मुपवनतरुरम्यं दर्शयामास देव्या ।।

(मत्स्यपुराण, १८०-४४)

भगवान् शिव ने आनन्द वन में भगवती को अनेक वन दिखाये। अस्सी से भदैनी मुहल्ले में भद्रवन को दिखाया। जंगम बाड़ी से अगस्तकुण्ड तक हरिकेश वन को दिखाया।

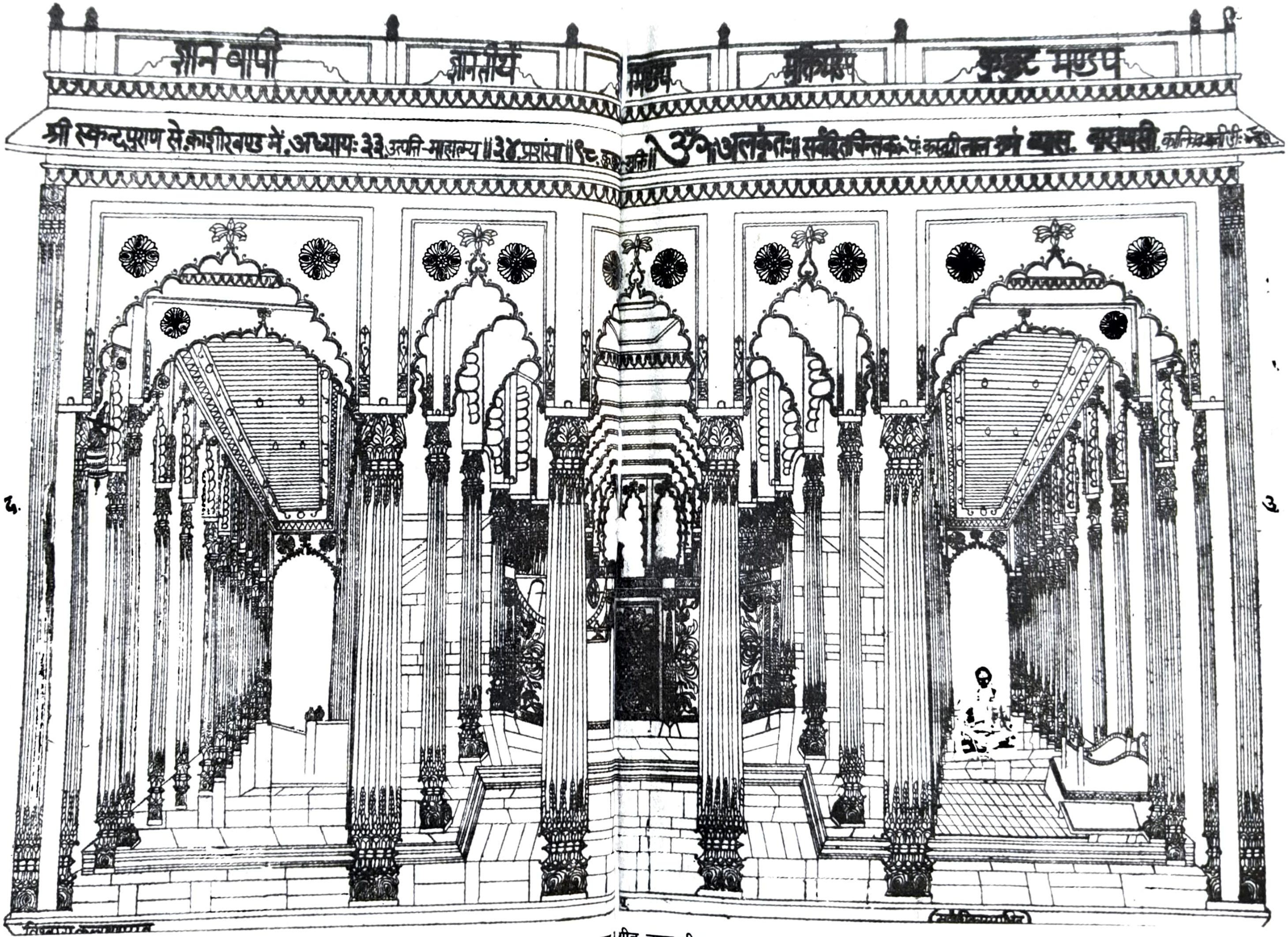

ज्ञान मण्डप।पीत व्यास पीठ

पृथ्वी जड़ है, अतः प्रलयकाल में जल में डूब जाती है और यह शिवलिंग रूप काशी जड़ नहीं, चेतन है, अतः जड़ पृथ्वी से सम्मिलित कदापि नहीं होती। छत्राकार होकर जलपर स्थित रहती है।

दैनंदिनेऽथ प्रलये त्रिशूलकोटौ समुत्क्षिप्य हरः स्वाम् ।
बिभर्ति संवर्तमहास्थिभूषणस्ततो हि काशीकलिकालवर्जिता ।।

(का० ख० अ० ३०)

फिर दैनंदिन (प्रलयकाल) में अस्थि माला (मुण्डमाला) से विभूषित भगवान् शिव काशी को अपने त्रिशूल के अग्रभाग पर उठा कर रक्षा करते है।

इसीलिए यहाँ पर कलिकाल का भी वश नहीं चलता।

काशीवासी जनो देवि मम गर्भे वसेत्सदा ।
अतस्तं मोचयाम्यन्ते प्रतिज्ञेयं यतो मम ।। १३२ ।।

(का० ख० अ० ३२)

काशी वासी जन सर्वदा मेरे ही गर्भ में निवास करते हैं। अतः मैं अन्त समय में उनका (अज्ञान) उड़ा देता हूँ, क्योकि यह मेरी प्रतिज्ञा है।

तामसीं प्रकृतिं प्राप्य कालो भूत्वा चराचरम् ।
ग्रसामि लीलया देवि काशीं रक्षामि यत्नतः ।।१३३ ।।

मैं प्रलय में तामसी प्रकृति धारण कर कालमूर्ति बनकर विश्व को लीलानुसार ग्रास कर लेता हूँ, परन्तु काशी की प्रयत्न से रक्षा करता हूँ।

शास्त्रों में काशी की सीमा

पार्वती ने शिव से प्रश्न किया कि काशी की सीमा कहाँ से आरम्भ होती है ?

शिव उवाच- मध्यमेश्वरमारभ्य यावद् देहलिविघ्नपम् ।
सूत्रं बद्ध्वा चतुर्दिक्षु भ्रामयेन्मण्डलाकृतिम् ।।
तत्र या जायते रेखा तन्मध्ये क्षेत्रमुत्तमम् ।
काशीति च विदुर्वेदास्तत्र मुक्तिः प्रतिष्ठता ।।

(पद्मपुराणे)

नगर के मध्य में मध्यमेश्वर नाम का शिव लिंग है। वही से देहली विनायक तक धागा बांध कर गोलाम्बर में परिक्रमा करें, जो क्षेत्र परिक्रमान्तर्गत आवे, वही काशी है।

वह तीन खण्डों मे विभाजित है, उत्तर में ॐकारखण्ड जहां अर्क कुण्ड जिसको वक्रार्क कुण्ड भी कहते हैं, जो अब बकरियाकुण्ड के नाम से अलईपुर में प्रसिद्ध हैं।

नगर के मध्य में हंसकुण्ड जो हरतीरथ के नाम से जाना जाता है। वहीं समीप में मत्स्यकुण्ड जो मच्छोदरी स्थित पार्क में है। मत्स्योदरी को बहिरन्तश्चर कहा है, मित्रमिश्र द्वारा उद्धृत का० खं० (पृ० २४) मे मत्स्याकार काशी के गर्भ में अवस्थित मत्स्योदरी और गंगा के संगम पर स्नान मोक्षदायक माना है (पृ० ५८) लक्ष्मीधर ने तीर्थ विवेचन खण्ड (पृ० ३४। ५८।६६ उल्लेख पृ० ३४,३५) में शुष्क नदी असी को पिंगलानाड़ी, वरुणा को इलानाड़ी तथा दोनो के बीच मत्स्योदरी को सुषुम्ना नाड़ी माना है। (मित्रमिश्र, तीर्थ प्रकाश, पृ० २४०)

मत्योदरी जले गङ्गा ओंकारेश्वर सन्निधौ ।
तदा तस्मिञ्जले स्नात्वा ब्रह्महत्यां व्यपोहति ।।

(लिगं पु० त्रिस्थलीसेतु पृ० १४१)

तीर्थों का संकेत

मध्यमेश्वर से संलग्न मन्दाकिनीकुण्ड है जो कम्पनीबाग पार्क में स्थित है। यहां से दक्षिण की ओर गोदावरीकुण्ड का वह स्थान है, जो अब गोदौलिया कहा जाता है। पश्चिम में गोकर्णकुण्ड अब गोकर्णकूप के नाम से प्रसिद्ध हैं। वही समीप में अस्थिक्षेत्र-तड़ागकुण्ड है जो बेनियाबाग और हड़हा के मध्य स्थित है, यहीं पहले अस्थि विसर्जन होता था।

दक्षिण में केदारखण्ड है जहाँ गौरीकुण्ड, लोलार्ककुण्ड, कुरुक्षेत्रकुण्ड, दुर्गाकुण्ड और मातृकुण्ड, पितृकुण्ड, समीप में विमलकुण्ड जो अब पिशाच मोचन के नाम से ख्यात हैं। इन्ही कुण्डों के मध्य अविमुक्त विश्वेश्वरखण्ड ज्ञान-खानि अघ-हानि कर जहं बस शम्भु भवानी ! यही ज्ञानकुण्ड ज्ञानवापीकूप के नाम से प्रसिद्ध है।

पार्वतीजी ने पूछा हे शिव ! कल्याणमय, सर्वज्ञ ज्ञानवापी की आदिकथा बतलाइये इसका नाम ज्ञानवापी क्यों पड़ा ? (शिवरहस्य, का० खं० अ० ३३) शिव ने ज्ञानवापी की आदिकथा कह सुनायी। कहा, हे प्रिये - पहले यह बावली मेरे त्रिशूल से खनी गयी थी।१।। इस बावली में निर्मल जल पाताल तक सदा रहता था।२।।

इस बावली के मनोरमतट रत्न और मणियों से सुशोभित थे।३।।

बावली के मध्य में कांचन सदृश प्रकाशवान् एक कमल उत्पन्न हुआ जो ४०० कोस विस्तार का था, यह सहस्रदल पंखुड़ियों वाला कमल केशर, अगर आदि उत्तम सुगंधियों से युक्त था।४।।

सुगन्ध के प्रभाव से तटवर्ती सभी वृक्ष सुगन्धित थे।५,६ ।। उस सहस्रदल कमल से सुशोभित जल देवताओं को भी दुर्लभ तथा अमृत से भी बढ़कर है।७।।

सोने सी चमकती कमलनाल से प्रकाशित अति उत्तम तथा कभी मलिन न होने वाला यह जल है ।८ ।।

हे सुभगे, इसके प्रभाव से काशी स्वर्ण की तरह दीखती है ।९ ।।

उस सुन्दर कमल दल के बीच लीला की इच्छा से मैं वास करता हूँ ।१० ।।

उसी जल से लक्ष्मी-सी सुन्दर कमल नेत्रवाली एक कन्या स्तुति करती हाथ जोड़े खड़ी हो गयी ।११ ।। इस कन्या के तेज को देख कर मैने पूछा "तुम कौन हो ?" बोली, हे शिव, मैं सबका कल्याण चाहने वाली इस तीर्थ की देवी हूँ आप प्रसन्न हो मुझे वर दें ।१२-१४ ।।

इस जल को जो भी प्राणी ग्रहण करेगा, उसको आपके प्रति तत्काल अटल भक्ति उत्पन्न होगी ।१५ ।। यह वापी मेरे नाम से प्रसिद्ध होगी और यह जल सदा पापों का नाश करने वाला होगा ।१६ ।। उस तीर्थ कन्या की आराधना सभी सिद्धियों के लिए थी । मैं वर देकर उसी कमल में वास करता हूँ ।१७ ।।

हे शिवे ! सुगन्धियों से भरे इस कमल में वास मुझे निरन्तर आनन्ददायक लगता है।१८।। वैसे यह तीर्थ अन्यत्र दुर्लभ है ।

नोट - इस ज्ञानकुण्ड को पाटकर बैजाबाईने सन् १८२८ ई० में बारहदरी बनवा दी ।

सतयुग में ईशानदेव ने संसार के प्राणियों को जल के बिना दुखी देखकर शिव की नगरी काशी में दक्षिण दिशा की ओर अपने त्रिशूल से खनकर अथाह अमृत-सा निर्मल जल पाया । उस जल से हजारों कलश भरकर विश्वनाथ का अभिषेक किया । उससे प्रसन्न हो भगवान् शिव ने इस वापी का नाम ईशानतीर्थ और ज्ञानतीर्थ, शिवतीर्थ, मोक्षतीर्थ, तारकतीर्थ रक्खा ।

इस तीर्थ में स्नान, स्पर्श आचमन करने से पाप नष्ट होते है । (स्कन्दपुराणे अ० ३३) ज्ञानवापी के महात्म्य को मलयकेतु की पुत्र-वधू कलावती ने अपनी सखियों को सुनाते हुए कहा कि मै पूर्वजन्म में ब्राह्मण कन्या थी । काशी विश्वनाथ के पास ज्ञानवापी पर प्रसन्नता से रहते हुए तीर्थ की सेवा करती थी ।

मेरा नाम सुशीला था, मेरे पिता का नाम हरिस्वामी और माता का नाम प्रियंवदा था ।

एक विद्याधर ने हमारा अपहरण कर लिया । रास्ते में आधीरात के समय मलयाचल के पास विद्याधर की एक राक्षस से लड़ाई हुई, जिसमें विद्याधर मारा गया और राक्षस सुशीला के दर्शन से मुक्त हो बैकुण्ठ को चला गया । बाद में विद्याधर इस जन्म में मेरे स्वामी मलयकेतु के पुत्र हुए और मैं कर्णाटकदेश के राजा की बेटी कलावती हूँ ।६२-६९ ।।

ज्ञानवापी का माहात्म्य सखियों ने आश्चर्य से सुना, फिर कहा कि इस मृत्युलोक में जिस मनुष्य ने इसे नहीं देखा, उसका जन्म **निष्फल है** । ७२ ।। अ० ३४ ।।

देवस्य दक्षिणे भागे वापी तिष्ठति शोभना ।
तस्यास्तथोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ।।

(लिगंपुराण पृष्ठ १०६)

अविमुक्तेश्वर की दक्षिण दिशा में एक सुन्दरवापी (कूप) है, जिसका जल पीने से मनुष्य का पुनर्जन्म नही होता अर्थात वह मुक्त हो जाता है ।

यैस्तु तत्र जलं पीतं कृतार्थास्ते हि मानवाः ।
तेषां तु तारकं ज्ञानमुत्पत्स्यति न संशयः ।।

(तीर्थचिन्तामणि पृ० ३५६)

जो मनुष्य उस वापी का जल पीते है, उनके सभी मनोरथ सिद्ध हो जाते हैं । उन मनुष्यों को तारक अर्थात मुक्तिप्रद ज्ञान अवश्य उत्पन्न होगा, इस विषय में लेशमात्र भी संशय नहीं है ।

उपास्य सन्ध्यां ज्ञानोदे यत्पापं काललोपजम् ।
क्षणेन तदपाकृत्य ज्ञानवान् जायते नरः ।।

(स्कन्दपुराण पृ० १६२)

कर्म करने के लिये विहित काल के लोप होने के कारण उत्पन्न पाप ज्ञानवापी में सन्ध्या करने से एक क्षण में ही दूर हो जाते हैं, और मनुष्य ज्ञानवान् हो जाता हैं ।

वापीजलं तु तत्रस्थं देवदेवस्य सन्निधौ ।
दर्शनात् स्पर्शनात् स्नानात् कृतार्थो मानवो भुवि ।।

देवदेव के समीप स्थित वापी (कूप) के जल के दर्शन, स्पर्श और स्नान से मनुष्य के सभी मनोरथ सिद्ध हो जाते हैं ।

दुर्लभं तु कलौ देवैस्तज्जलं ह्यमृतोपमम् ।
तारणं सर्वजन्तूनां पानात्पापस्य नाशनम् ।।

(शि० पु० पृ० १६३)

सभी प्राणियों को मुक्ति देने वाला तथा अमृत के सदृश उस वापी का जल कलियुग में देवताओं को दुर्लभ है । उसके पीने से मनुष्य के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं ।

वापी तत्रास्ति वैदेह चिन्मयी देवदक्षिणे ।
तदपां सेवनादेव भासते ब्रह्म केवलम् ।।

विश्वनाथ के दक्षिण ज्ञानमयी बावली है, जिसके जल के सेवन से ही ब्रह्म का बोध होने लगता है।

ज्ञानोदतीर्थसंस्पर्शादश्चमेधफलं लभेत्।
स्पर्शनाचमनाभ्यां च राजसूयाश्वमेधयोः ।।

(पद्मपुराणे)

ज्ञानवापी तीर्थ से अश्वमेध यज्ञजन्य फल की प्राप्ति होती है, और उसके स्पर्श और आचमन से राजसूय तथा अश्वमेध यज्ञजन्य फल प्राप्त होता है।

यत्फलं समवाप्नोति पित्हन्सन्तर्प्य पुष्करे।
तत्फलं कोटिगुणितं ज्ञानतीर्थतिलोदकैः ।।

(का० ख० ३३।३४)

पुष्करतीर्थ में पितरों का तर्पण करने से जो फल प्राप्त होता है, उससे करोड़ गुना फल ज्ञानवापी तीर्थ में तिल और उदक से तर्पण करने से प्राप्त होता है।

संनिहत्यां कुरुक्षेत्रे राहुग्रस्ते दिवाकरे ।
यत्फलं पिण्डदानेन तज्ज्ञानोदे दिने दिने ।।

(का० ख० अ० ३३।३७।३८)

कुरुक्षेत्र में जब सूर्यग्रहण लगता है, उस समय पिण्डदान करने से जो फल प्राप्त होता है वही फल, प्रति दिन ज्ञानवापी में पिण्डदान देने से प्राप्त होता है।

ज्ञानोदतीर्थपानीयैर्लिङ्गं यः स्नापयेत् सुधीः ।
सर्वतीर्थोदकैस्तेन ध्रुवं संस्नापितं भवेत् ।।

जो विद्वान ज्ञानवापी के जल से लिंग को स्नान कराता हैं, वह संपूर्ण तीर्थो के जल से स्नान कराने का फल प्राप्त कर लेता है।

ज्ञानरूपोऽहमेवात्र द्रवमूर्तिं विधाय च ।
जाड्यविध्वंसनं कुर्यां नित्यं ज्ञानोपदेशनात् ।।

(का० ख० अ० ३३।४६।५०)

(शिव जी कहते हैं) मैं जलरूपी मूर्ति धारण करके और ज्ञानोपदेश के द्वारा अज्ञानता को नष्ट करता हूँ।

सर्वेभ्यस्तीर्थमुख्येभ्यः प्रत्यक्षज्ञानदा मुने ।
सर्वज्ञानमयी चैषा सर्वलिङ्गमयी शुभा ।।
साक्षाच्छिवमयी मूर्तिर्ज्ञानकृज्ज्ञानवापिका ।

(का० ख० अ० ३५।१२३-१)

यह ज्ञानवापी संपूर्ण तीर्थो में मुख्य, प्रत्यक्ष ज्ञान देनेवाली और सम्पूर्ण ज्ञानरूप पवित्र सम्पूर्ण लिंगमयी साक्षात् शिवरूप मूर्ति को धारण करनेवाली, ज्ञान करानेवाली ज्ञानवापी नाम से प्रसिद्ध है।

योऽष्टमूर्तिर्महादेवः पुराणे परिपठ्यते ।
तस्यैवाम्बुमयीमूर्तिर्ज्ञानदा ज्ञानवापिका ।।

(स्कं० पु० पृ० १६३)

पुराण मे जो अष्टमूर्तियाँ महादेव की वर्णित हैं, उन्ही की जलमयी मूर्ति ज्ञान देनेवाली ज्ञानवापी है।

ईशानतीर्थे यः स्नात्वा विशेषात्सोमवासरे ।
देवर्षिपितृन् सन्तर्प्य दत्वा दानं स्वशक्तितः ।।
ततःसमर्च्य श्रीलिङ्गं महीं सम्भारविस्तरैः ।
अत्रापि दत्वा नानार्थान्कृतकृत्यो भवेन्नरः ।।

(काशीखण्ड अ० ३३ श्लो० ४२-४३)

प्रति सोमवार को ज्ञानवापी में स्नान तर्पण करके श्रीलिंग (विश्वेश्वर, ईशानेश्वर व ज्ञानेश्वर) की पूजा करने से मनुष्य कृतकृत्य हो जाता है।

एकादश्यामुपोष्यात्र प्राश्नाति चुलुकत्रयम् ।
जायन्ते हृदि तस्यैव त्रीणि लिङ्गान्यसंशयम् ।।

(का० ख० अ० ३३)

एकादशी का व्रत किया हुआ मनुष्य ज्ञानवापी की प्रदक्षिणा करके तीन चिल्लू उसका जल पिये, उस जल के पीने मात्र से प्राणी निर्मल हो जाता है। तब उसके हृदय में उत्तम शुद्ध भूत-भविष्य-वर्तमान के दोषों के नाशक तीन शिवलिंग बन जाते हैं।

गुरुपुष्यासिताष्टम्यां व्यतीपातो यदा भवेत् ।
तदात्र श्राद्धकरणाद् गयाकोटिगुणं भवेत् ।।३६ ।।
यत्फलं समवाप्रोति पितृन्सन्तर्प्य पुष्करे ।
यत्फलं कोटिगुणितं ज्ञानतीर्थे तिलोदकैः ।।३७ ।।

(का० ख० अ० ३३)

गुरुवार को पुष्य नक्षत्र, कृष्णाष्टमी, व्यतीपात योग इन सबके एकत्र होने पर, ज्ञानवापी कूप पर स्नान व तर्पण, पिण्डदानादि करने से गया श्राद्ध से कोटि गुणा फल होता है, ऐसा ही लिंगपुराण में भी लिखा है।

पीतमात्रेण तैनेव उदकेन यशस्विनि ।
त्रीणि लिङ्गानि वर्धन्ते हृदये पुरुषस्य तु ।।

हे पार्वती, ज्ञानवापी का जल पीने मात्र से मनुष्य के हृदयस्थित ३ लिंगो की वृद्धि होती है।

दण्डपाणिस्तु तत्रस्थो रक्षते तज्जलं सदा ।
पश्चिमं तीरमासाद्य देवदेवस्य शासनात् ।।

विश्वेश्वर की आज्ञा से दण्डपाणिभैरव हमेशा पश्चिम तीरपर स्थित होकर ज्ञानवापी के जल की रक्षा करते हैं।

पूर्वेण तारको देवो जलं रक्षति सर्वदा ।
नन्दीशश्चोत्तरेणैव महाकालस्तु दक्षिणे ।।
रक्षते तज्जलं नित्यं मद्भक्तानां तु मोहनम् ।

(लिंगपुराण पृ० १०६-११०)

पूर्व तीर पर तारकेश्वर, उत्तर में नन्दीश्वर तथा दक्षिण में महाकालेश्वर हमारे भक्तों को मोहित करने वाले ज्ञानवापी के जल की सर्वदा रक्षा करते हैं।

देवस्य दक्षिणे भागे तत्र वापी शुभोदका ।
तदम्बुप्राशनं न्हणामपुनर्भवहेतवे ।।

काशी में विश्वेश्वर के दशिण भाग में अच्छे जलवाली ज्ञानवापी है, जिसका जल मनुष्य के मुख में स्पर्शमात्र से पुनर्जन्म नहीं होता अर्थात मोक्ष हो जाता है।

तज्जलात्पश्चिमे भागे दण्डपाणिः सदाऽवति ।
तत्प्राच्यवाच्युत्तरस्यां तारकाख्या शिला मता ।।

ज्ञानवापी के पश्चिम भाग में सदा रहते हुए दण्डपाणि रक्षा करते हैं। उसके पूरब-पश्चिम-उत्तर भाग में तारक नाम की शिला है।

लिङ्गंत्रयं हृदब्जे यच्छ्रद्धयापीतमर्पयेत् ।
यैस्तत्र तज्जलं पीतं कृतार्थास्ते नरोत्तमाः ।।

(का० ख० ६०।२२०-२२२)

इन तीनों लिंगो को कपट छोड़कर हृदयस्थित कमल को समर्पण करना चाहिये। वहां पर ठहर कर जलपान करने से मनुष्य नरोत्तम हो जाता है।

मुक्ति मण्डप - कुक्कुट मण्डप

शिवजी ने कहा- हे सुभगे, इस मुक्ति मण्डप में रहकर जो आनन्द मुझे प्राप्त होता है, वह कैलाश और भक्तों के हृदय में भी नही मिलता ।।३२ ।।

जो मनुष्य क्षणमात्र इस मुक्ति मण्डप पर जप-ध्यान, दान करते हैं, उन्हे अनन्त गोदान का फल प्राप्त होता है और वह मोक्ष का अधिकारी होता है ।।३७ ।।

द्वापर युग में इस मंडप का नाम कुक्कुट मंडप भी होगा, ऐसा शिव ने विष्णु से कहा ।।३८।।

काशी भूमि पर द्वापर में एक वेदपाठी ब्राह्मण हुआ । वह एक स्त्री के सम्पर्क में आकर भ्रष्ट हो गया और उससे ब्राह्मण समाज घृणा करने लगा ।

एक समय काशी नगरी में दान करने के लिए चाण्डाल अपने साथ अत्यधिक धन लेकर आया, मगर काशी के सभी ब्राह्मणों ने उस चाण्डाल का दान लेने से इनकार कर दिया तो महानन्द ने उस चाण्डाल का दान ले लिया जिससे ब्राह्मणों ने उसका बहिष्कार कर दिया । इस तिरस्कार से महानन्द अपने दो पुत्रों और पत्नी के साथ गया की ओर चला । रास्ते में जंगल पड़ा वहां डाकुओं ने उसे सपरिवार मार कर सम्पूर्ण धन ले लिया ।

मरने के बाद वे चारों कुक्कुट (मयूर) हो गये, संस्कृत शब्दकोश तथा आप्टे के कोष में कुक्कुट को मयूर भी कहा गया है । वाराह पुराण में भी कुक्कुट को मयूर कहा गया है । उसी ओर से कुछ यात्री काशी सम्बन्धी वार्ता करते हुये काशी आ रहे थे । पूर्व स्मृति के कारण वे कुक्कुट उन यात्रियों के साथ काशी आकर विश्वनाथ मंदिर में बड़े नियम से रहने लगे । अंत में वे मुक्त हो गये । तभी से मुक्ति मंडप को कुक्कुट मंडप भी कहते है । (का० खं० अ० ९८) सन् १८२८ ई० में बावली पाटकर वैजाबाईने मंडप बनवाया ।

जलाशयनिर्माण

पार्वती ने शंकर से कहा- हे विभो, आपने यह कहा कि वाराणसी में कूप तड़ाग, बावली इनका जीर्णोद्धार करने वालों के काशी कृत महापाप नष्ट होते है ।

शिव उवाच- वापीकूपतडागादिजीर्णोद्धारं प्रकल्पयेत् ।।
क्षेत्रे कृतानां पापानां प्रायश्चित्तं गतं मम ।।७२ ।।

क्योंकि हरि ने जलाशय कर्त्ताओं को और जीर्णोद्धार करने वालों को ऐसा वर प्रदान किया है । "नार" नाम जल का है । "अयन" कहते है निवास स्थान को तो नार और अयन को मिलाने से "नारायण" होता है ।

अर्थात जल ही में जिनका घर है, उनको नारायण कहते हैं । उन्ही जलाशयी भगवान् ने जलाशयकर्ताओं का पापनाश किया है ।

जो नर काशी में जहाँ-जहाँ जलोद्धार करता है, वहाँ-वहाँ प्रसन्न पितृगण उपासना करते हैं । काशी में सब रुद्रमय है, ऐसा श्रुति में कहा है ।

जीव जहाँ प्यास से व्याकुल होकर जल पीते हैं, वह पुण्य सौ वर्ष में भी नष्ट नहीं होता । महादेव जी बोले- काशी में थोड़ा भी जल संपादन करने से पाप लेश मात्र भी नहीं रह जाता । इससे जलाशय का जीर्णोद्धार अवश्य करावें । इससे क्षेत्र में किये पाप नष्ट होते है ।

काशी में तारक मन्त्र द्वारा मुक्ति

ब्रह्मज्ञानं कुतो देवि कलिनोपहतात्मनाम् ।
स्वभावचञ्चलाक्षाणां ब्रह्मेह प्रदिशाम्यहम् ।।११८ ।।

(का० खं० अ० ३२)

हे देवी, कलि के द्वारा मंदबुद्धि और स्वभावतः चंचलेन्द्रिय मनुष्यों को ब्रह्मज्ञान कहां हो सकता है ? इसी कारण मैं इस काशी में अन्त समय पर ब्रह्मज्ञान का उपदेश करता हूँ।

ब्रह्मज्ञानेन मुच्यन्ते नान्यथा जन्तवः क्वचित् ।
ब्रह्मज्ञानमये क्षेत्रे प्रयागे वा तनुत्यजः ।।११५ ।।

(का० खं० अ० ३२)

अर्थात जीवमात्र ब्रह्मज्ञान होने से मुक्त होते हैं। प्रयाग तीर्थ हो, चाहे यह ब्रह्मज्ञान क्षेत्र काशी हो, बिना ब्रह्मज्ञान के कहीं भी मुक्ति नही हो सकती।

ब्रह्मज्ञानं तदेवाहं काशीसंस्थितिभागिनाम् ।
दिशामि तारकं प्रान्ते मुच्यन्ते ते तु तत्क्षणात् ।।११६ ।।

(का० खं० अ० ३२)

काशीवासी अन्त समय उसी ब्रह्मज्ञान रूप तारक (मन्त्र) उपदेश से उसी क्षण मुक्त हो जाते हैं। सबसे बड़ी विशेषता तो यह हैं कि काशी में मरने वाला कैसा भी कोई भी हो, सबकी एक ही गति है।

अर्थात् पुण्यात्मा हो अथवा पापी, सबको एक ही प्रकार की मुक्ति मिलती है। श्री तुलसी दास जी भी लिखते हैं-

''देत सब हि सम गति अविनासी'' - यथा तारकमंत्र से जीव को तत्वज्ञान हो जाता है और अपना ब्रह्मरूप प्रकाशित हो जाता है।

''जहाँ ब्रह्म प्रकाशित हो, वह काशी'' यह काशी नाम का अर्थ है।

काशी मोक्षभूमि

ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः शूद्रा वै वर्णसंकराः ।
कृमि-म्लेच्छाश्च ये चान्ये संकीर्णाः पापयोनयः ।।१९ ।।
कीटाः पिपीलिकाश्चैव ये चान्ये मृगपक्षिणः ।
कालेन निधनं प्राप्ता अविमुक्ते श्रृणु प्रिये ।।२० ।।
चन्द्रार्द्धमौलिनः सर्वे ललाटाक्षा वृषध्यजाः ।
शिवे मम पुरे देवि जायन्ते नात्र संशयः ।।२१ ।।

(मत्स्यपुराणे अ० १०८)

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, वर्णसंकर (दोगला), स्त्री, म्लेच्छ, संकीर्ण (हिन्दू और म्लेच्छ से उत्पन्न) पापयोनी वाले (चाण्डालादि) और कीट, चींटी, पक्षी, मृग अर्थात जीवमात्र जो इस अविमुक्त क्षेत्र में काल के वश देह त्याग करते हैं, सब मस्तक में अर्धचन्द्रधारी, ललाट में त्रिनेत्र और वृषवाहन का ध्यान कर शिवरूप हो जाते हैं। (सारूप मुक्ति पाते हैं) अतएव यह निश्चय हैं कि काशी में सबको अवश्य मुक्ति मिलती है, यथा -

अष्टाङ्गादिभिरन्यैश्च तपोयज्ञव्रतादिभिः ।
साधितैः पाक्षिकी सिद्धिरविमुक्ते निरर्गला ।।

(ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

अष्टांगादि योग, तप, यज्ञादि तथा अन्य यत्नों से मोक्ष प्राप्त हो अथवा न हो, सन्देह ही रहता है, परन्तु काशी में तो मोक्ष की सिद्धि निश्चित है। अपर विधि में सन्देह रहने का कारण यह है कि किसी प्रकार मोक्ष का कारण ज्ञान मनुष्य प्राप्त भी कर ले, परन्तु वह ज्ञान अन्त समय में स्थिर रहे या न रहे, जैसे, राजर्षि भरत देह त्याग के समय मृगशिशु की चिन्ता करने से जन्मान्तर में मृगत्व को प्राप्त हुए यह प्रकट हैं। परन्तु परम कारुणिक शरणागतवत्सल श्री विश्वनाथ की कृपा से यहाँ यह सब शंका नही है।

क्योकि यहाँ ऐसे समय तारक मन्त्र, जो ब्रह्मज्ञान का मूल है, उपदेश किया जाता है जिसके पश्चात किसी प्रकार की वासना नहीं हो सकती। इसके अतिरिक्त और भी जिस उपाय या जिस स्थान पर मोक्ष की प्राप्ति हो, वह विश्वनाथ या काशी के ही द्वारा होगी।

अनाराध्य महेशानमनवाप्य च काशिकाम् ।
योगाद्युपायविज्ञोपि न निर्वाणमवाप्नुयात् ।।३३ ।।

(का० ख० अ० २६)

योगादि उपायों के जानने वाले भी यदि चाहें कि बिना महेश्वर की आराधना तथा काशीलाभ किये मोक्ष पावें तो यह कदापि नहीं हो सकता। यदि किसी विशेष कारण से प्रत्यक्ष काशी न प्राप्त कर सकें, तो ध्यान ही करना होगा कि यह आनन्दमय सबकी आदि और उपनिषदों से जानने योग्य विशेष माहात्म्य युक्त परब्रह्म रूप काशी है।

सनत्कुमार संहितादि से पूर्व में यह सिद्ध हो चुका है। पर ब्रह्म का निराकार साकार दो रूप होना प्रसिद्ध ही है।

अब साकार तथा निराकार रूप काशी की उपासना किस प्रकार होनी चाहिये, इस विषय में वैदिकी आज्ञा है। यथा -

अथ हैनमत्रिः पप्रच्छ याज्ञवल्क्यं य एषोऽनन्तोऽव्यक्त आत्मा तं कथमहं विजानीयामिति।

सहोवाच याज्ञवल्क्यः सोऽविमुक्त उपास्यो य एषोऽनन्तोऽव्यक्त आत्मा सोऽविमुक्ते प्रतिष्ठित इति ।। (जाबालोपनिषद्)

याज्ञवलक्यमुनि से अत्रिमुनि ने प्रश्न किया जो अनन्त अव्यक्तस्वरूप आत्मा है, उसको मैं किस प्रकार जान सकता हूँ ?

याज्ञवलक्य मुनि बोलें, उसके ज्ञान के निमित्त अविमुक्त काशी की उपासना करने योग्य है।

क्योकि जो अनंत अव्यक्त आत्मा है, सो अविमुक्त में प्रतिष्ठित (विराजमान) है।

सोऽविमुक्तः कस्मिन्प्रतिष्ठित इति ।
वरणायां नास्यां च मध्ये प्रतिष्ठित इति ।।

का वै वरणा का च नाशीति सर्वानिन्द्रियकृतान्दोषान्वास्यतीति तेन वरणा भवति सर्वानिन्द्रियकृतान्पापान्नाशयतीति तेन नाशी भवतीति ।।

(जाबालोपनिषद्)

जो सर्वेन्द्रिय कृत दोषों को वारण करती है, उस नदी का नाम वरणा और सर्वेन्द्रिय कृत दोषों का नाश करती है, उस नदी का नाम नाशी है ।।

और कर्म को कर्षण करती है वह काशी है। यह साकार ब्रह्म उपासकों के लिए कहा गया है। अब ज्ञानी-योगी आदि निराकार ब्रह्मोपासकों के या जो किसी विशेष कारण से, साक्षात काशी सेवन असमर्थ हों उनके निमित्त कहा गया है।

काशी अलौकिक मूर्ति

भ्रुवोर्घ्राणस्य च यः सन्धिः स एष द्योर्लोकस्य परस्य च ।
सन्धिर्भवतीति एतद्वै सन्धिं सन्ध्यां ब्रह्मविद् उपासते इति ।
सोऽविमुक्त उपास्य इति । सोऽविमुक्तं ज्ञानमाचष्टे ।
यौ वै तदेवं वेदेति । इति । (जाबालोपनिषद्)

भृकुटि और नासिका की सन्धि जो उत्तम स्वर्गलोक की सन्धि है, जिस संधिरूप सन्ध्या की ब्रह्मज्ञानी उपासना करते है, वह अविमुक्त काशी की उपासना ध्यान करने योग्य है। उस अविमुक्त का ध्यान उपासकों का ज्ञानदाता हैं। इस वैदिक महावाक्य से स्पष्ट हो जाता है कि

साकार अथवा निराकारवादी ज्ञानी, योगी, द्वैत, अद्वैत तथा अन्य समस्त मुमक्षुजनों को मुक्ति काशी द्वारा ही मिलती है, किसी को प्रत्यक्ष काशी की उपासना से, किसी को ध्यान से, परन्तु बिना काशी के किसी का कल्याण नहीं है।

अन्यानि मुक्तिक्षेत्राणि काशीप्राप्तिकराणि हि ।
काशीं प्राप्य विमुच्यन्ते नान्यथा तीर्थकोटिभिः ।। (स्कन्दपुराणे)

अतः यही सिद्ध हुआ कि सात पुरियों में साक्षात मुक्तिदायिका काशीपुरी है, और इसी से जगत में इसकी इतनी महिमा है। (काशी अलौकिक मूर्ति है)

सात मोक्ष पुरियाँ कालान्तर में काशी प्राप्ति करा के ही मोक्ष प्रदान करती हैं, पर काशी स्वतः साक्षात् मोक्ष देती है। तारक मंत्र से जीव को तत्वज्ञान हो जाता है और अपना ब्रह्मज्ञान प्रकाशित हो जाता है। "जहां ब्रह्म प्रकाशित हो, वह काशी" यह काशी नाम का अर्थ है।

"सर्वाणि पुण्यतीर्थानि सेव्यान्येव मुमुक्षुभिः ।"
वाराणसीह करुणामयदिव्यमूर्ति-
रुत्सृज्य यत्र तु तनुं तनुभृत्सुखेन ।।
विश्वेशदृङ्महसि यत्सहसा प्रविश्य-
रूपेण तां वितनुतां पदवीं दधाति ।।७१ ।। क० ३० ।

इस संसार में वाराणसी साक्षात् करुणामयी अलौकिक मूर्ति है, क्योकि यहाँ प्राणिमात्र सुखपूर्वक देह त्याग कर उसी समय विश्वेश्वर के ज्ञानरूप ज्योति में प्रवेश कर तद्रूप कैवल्यपद को धारण कर लेते है।

अब इससे विशेष यही कहा जा सकता है कि -

येषां क्वापि गतिर्नास्ति तेषां वाराणसी गतिः ।।७४ ।।
(का० खं० अ० ३२)

जिनकी कहीं भी गति नहीं हो, उनकी गति वाराणसी में ही है। परन्तु धर्मात्मा और पापियों की गति में इतना अन्तर अवश्य है कि धार्मिक की गति, बिना प्रयास तत्काल होती है और पापियों को पाप कर्म के भोग को, शीघ्र ही भोगने पर मोक्ष प्रदान किया जाता है।

परन्तु अन्य तीर्थों मे पापी अनेक योनि में जनमते-मरते, यमयातना, दुःख भोगते हुए जिस प्रकार कुछ काल में मुक्ति के अधिकारी होते हैं, उस तरह यहाँ नहीं। यहाँ पर मरने वाले पापी भी यमयातना अथवा पुनर्जन्म नहीं पाते।

जब तक उस मनुष्य के पाप नहीं समाप्त होते, तब तक तीस हजार वर्ष तक कालभैरवी यातना (पीड़ा) प्रतिदिन प्राप्त होती है।

काशी में कालभैरव कोतवाल का दण्ड

सततं निर्दयो भूत्वा यावत्पापं समाप्यते ।
महापातकसंयुक्तास्त्रिंशदब्दसहस्रकम् ।।
प्रत्येकं प्राप्नुवन्त्येव यातनां कालभैरवीम् ।।६४ ।।

काशी माहात्म्य में ऐसा कहा गया है कि पापरत मनुष्यों को कालभैरव स्वयं मारते हैं।

तस्मात्काशीगुणान्सर्वे तत्र तत्र वदन्ति हि ।
श्रुत्वापि पापनिरतास्तान् हन्यात्कालभैरवः ।।६३ ।।

अतएव काशीवासी जनों को चाहिए कि यदि थोड़े ही परिश्रम में मुक्ति चाहते हो, तो यथा शक्ति विधि से कालभैरव की आराधना पूजा करते रहें।

स्मृति और पुराणों में काशी

आधुनिक काल के शिक्षितों के मन में यह शंका होती है कि यह बात किम्बदन्ती है जो केवल काशीखण्ड या दो-एक ग्रंथ जो काशी ही के माहात्म्य में लिखे गये हैं, उन्ही में वर्णित है। यह कैसे मान लिया जाय कि काशी माहात्म्य निःसंदेह ऐसा ही है। जटिल विषय पर शंका समाधान विद्वानों के मत तथा विभिन्न ग्रन्थों के प्रमाण से ही दूर होते हैं। इस काशी का अक्षुण्ण माहात्म्य विविध ग्रन्थों में पाया जाता है। यहाँ उनके नाम क्रम से दिये जा रहे है, जिस महानुभाव को संदेह होवे, देख लेवें। (अतः रात रु० अ० २) आनंदाश्रम सं० आदिखण्ड ३२ से ३७ अध्याय तक; वेंकटेश्वर सं० स्वर्गखण्ड ३२ से ३७ तक, काशीखण्ड ८५१५ श्लोक ११२, स्कन्द पु० १, सौ. काशीमाहात्म्य, काशीरहस्य, काशीप्रकाश, काशीदर्पण, काशीकुतूहल, काशीविनोद।

शिवपुराण, सौरपुराण, वायुपुराण, लिंगपुराण (पूर्वार्ध, अ० ९२) श्लो. १६०, नंदीश्वरपुराण, नारदीयपुराण उत्तर अ० ४८ से ५३; श्लोक १५०००, भविष्यपुराण अध्या. १३०, ब्रह्मवैवर्तपुराण, ब्रह्मपुराण (अध्याय ११), कूर्मपुराण (पूर्वार्ध ३१ अध्याय से ३५) श्लो. २२६ मत्स्यपुराण (अध्याय १८० से १८५ तक श्लो. ४११), पद्मपुराण (आदिखण्ड अ० ३३ से ३७ तक) श्लो. १७०, वामनपुराण (अध्याय ३), अग्निपुराण श्लो. ११२, गरुड़पुराण प्रेतखण्ड २४।५ मारकण्डेयपुराण, (अध्या. ८) यजुर्वेद लिखित स्मृति, जाबालोपनिषद्, श्रृंगिस्मृति, रामतापिनीय, पाराशरस्मृति, महाभारत (वनपर्व अ. ८४), भीष्मपर्व अ. २४, कर्णपर्व अ. ५,

अनुशासनपर्व अध्या. ३०।१६, (उत्तरखण्ड, अध्या. २३, २६, ४८, ४६, ५०, ५१), आदि ब्रह्मसंहिता (अ. ३१ से ३५ तक), सृष्टिखण्ड (अ. १४) तथा स्वर्गखण्ड (अ. ३३ से ३७ तक) और भूमिखण्ड (अध्या. ६१), वाल्मीकीय रामायण, देवीभागवत्, शिवरहस्य, श्रीमद्भागवत, त्रिस्थलीसेतु, सनत्कुमार संहिता, गोस्वामी तुलसीदास जी कृत रामायण।

इसी प्रकार के प्रमाण अनेक धार्मिक ग्रन्थों में पाये जाते हैं। वाचस्पतिमिश्र की तीर्थचिन्तामणि (सन् १४६० ई०), नारायणभट्ट की त्रिस्थलीसेतु (सन् १५८० ई०), मित्रमिश्र की तीर्थप्रकाश (सन् १६२० ई०), प्रिंसेप की, न्यूज ऑफ बनारस (१६ शताब्दी की), पं० भाऊशास्त्री वझे का काशीतिहास सम्वत् २०११, वृजविहारी लाल का वाराणसी आदर्श सन् १६१४, विश्वनाथ शर्मा की पंचक्रोशी यात्रा संवत् १६६२, नारायणपति शर्मा की काशीयात्रा संवत् १६६५ शक १८३० काशी यात्राप्रकाश, सं. १६३१, शेरिंग की बनारस दि सैक्रेड सिटी आफ हिन्दूज। काशीतत्वभास्कर, सं. १६७४।

वेदोपनिषदों में काशी

यो मा पाकेन मनसा चरंतमभिचष्टेऽअनृतेभिर्वचोभिः आपऽइव काशिनासंगृभीताऽअसन्नस्त्वासतऽइन्द्रवक्ता ।। (अध्या. ७ अष्टक, ५ मंडल, ७ वर्ग, ६ ऋचा, ३ ऋगुवेदसंहिता)

वशिष्ठ ने कहा, हे इन्द्र, मैं सबके साथ पवित्र मन से व्यवहार करता हूं। फिर भी जो मुझे झूठा दोष लगाता है, वह झूठा दोष लगाने वाला दुष्टवक्ता उसी तरह सम्पूर्ण समाप्त हो जाय, जैसे काशी प्राप्त जीवों के पाप कर्म समूल नष्ट हो जाते हैं।

'योमा पाकेन मनसा चरन्तमभिचष्टे अनृतेभिर्वचोभिः ।
आप इव काशिना संगृभीता असन्नस्त्वसत इन्द्र वक्ता ।।'

(अथर्ववेदसंहिता ८।४।८)

वशिष्ठ ने कहा, हे इन्द्र, मैं सबके साथ पवित्र मन से व्यवहार करता हूं। फिर भी जो मुझे झूठा दोष लगाता है, वह झूठा दोष लगाने वाला दुष्टवक्ता उसी तरह सम्पूर्ण समाप्त हो जाय, जैसे काशी प्राप्त जीवों के पाप कर्म समूल नष्ट हो जाते हैं।

दृप्तबालाकिर्हा नू चानो गार्ग्य आस सहोवाचाजात शत्रुं, काश्यं ब्रह्मते ब्रवाणीति । (बृहदारण्य उपनिषद) श. १४।५।१।१ बृ. उ. २।१।१

गर्गगोत्रोत्पन्न वलाका का पुत्र अविद्या के विषय (घटपटादि) को ही ब्रह्म समझने वाला शुद्ध ब्रह्मज्ञान विहीन बहुत घमण्डी विद्वान दृप्तवाला कि काशिराज अजातशत्रु के पास जाकर उनसे बोला कि हम तुम्हें ब्रह्म का उपदेश करने आये हैं।

'तदेवद् गाथयाभिगीतं शतानीकः समन्तासुमेध्यं सात्राजितोध्यम्
आदत्त यज्ञं काशीनां भरतः सत्यताभिवेति ।'

(श. १३।५।४।१६,२१)

सत्राजित के पुत्र शतानीकने काशी पुत्र काश्य के द्वारा अपने अश्वमेधयज्ञ के लिए कल्पित अश्व को संग्राम में जीता, तब से लेकर आज तक काशी के नरेश अग्न्याधान नहीं करते। अग्न्याधान कर के क्या करें, यज्ञकर्म करके हम सोमपाथी बनेंगे। कोई बलवान् राजा अश्व छीन लेगा और हम लोगों का सारा सोमपान नष्ट हो जायगा तथा ''अपाम सोभममृता अभूय'' श्रुति चरितार्थ न हो पायेगी।

विचारीहवैकाबन्धिःकबन्धस्याथर्वणस्य पुत्रो ।
मेधावी मीमांसको अनूचान आस ।।
सहस्वेनातिमानेन मानुषं वित्तं नेयाय ।
तं मातोवाच-त एवै तदन्नमवोचंस्त इममेषु ।।
कुरुपञ्चालेष्वङ्ग मगधेषु काशी कौशल्येषु ।
शाल्वमत्स्येषु शवस उशीनरेषु उदीच्येषवन्न मदन्दि ।।

(गो. ब्रा. पूर्वभाग २।६)

न वै तत्रेति तद्भूयाज्जित्वरी यदुपाचरेत् ।
तद्यथा वणिजो वाराणसीं जित्वरीत्युपाचरन्ति ।।

पातंजल महाभाष्य ४।३।८४ कीलहार्न ३१३

ई० पू० दूसरी शताब्दी में व्यापारी लोग वाराणसी को ''जित्वरी'' कहते थे, इसका अर्थ है जयनशील अर्थात वाराणसी स्मरणमात्र से ही सभी प्रकार के अमंगलों का निष्पादन करती है। व्यापार में पूरा लाभ अर्थात पूरी जय मिलती है इसलिये इसका नाम जित्वरी है। स्मरणमात्र से सभी अमंगलों को दूर कर देने के करण समस्त संसार में यह सबसे बढ़कर है। इसलिये इसका नाम जित्वरी विजय देने वाली है।

योमावाकेन मनसा चरन्तममि चष्टेऽअनृतेभिर्वखेभिः
आपऽइवकाशिना संगृभीताऽ असन्नस्त्वासतऽइन्द्रवक्ता ।।
(ऋग्वेद संहिता) अं.७ अष्टक५, मंडल७, वर्ग६, ऋचा३ योमापाकेन ।

काशी वर्णनातीत

अविमुक्तगुणान् वक्तुं देव-दानव-मानवैः ।
न शक्यतेऽप्रमेयत्वात् स्वयंयत्रभवः स्थितः ।।

(मत्स्यपुराणे)

जिस अविमुक्त क्षेत्र काशी में स्वयम् श्री विश्वेश्वर ही वास करते हैं, उसके गुण देवता, दानव एवं मनुष्य नहीं कह सकते। काशी के गुण अप्रमेय तथा गणना रहित हैं। तथा-

अविमुक्तस्य माहात्म्यं षट्भिर्वक्त्रैः कथं मया ।
वक्तुं शक्यं न शक्नोति सहस्त्रास्योपि यत्परम् ।।

(का० खं० अ० २५ ७८)

षडानन कहते है कि जिस अविमुक्त क्षेत्र काशी का माहात्म्य सहस्रमुख से अनन्त शेषजी भी नहीं कह सकते, तो उसे इन छ मुखों से मै कैसे कह सकता हूं अथार्त् नहीं कह सकता। अतः काशी वर्णनातीत है।

एवं ज्ञात्वा तु मेधावी नाविमुक्तं त्यजेन्नरः ।
अविमुक्तप्रसादेन विमुक्तो जायते यतः ।।७७ ।।

(का० खं० अ० २५)

यह विचार कर बुद्धिमान मनुष्य को कभी काशी नहीं छोड़नी चाहिए, क्योकि इस काशी के प्रसाद से महादुर्लभ मुक्ति मिलती है।

काशी का त्याग यहाँ तक माना है कि तीर्थ या देवता के दर्शनार्थ भी बाहर न जाना चाहिए।

तीर्थार्थी न बहिर्गच्छेन्न देवार्थी कदाचन ।
सर्वतीर्थानि देवाश्च वसन्त्यत्राविमुक्तके ।।
अविमुक्तं समासाद्य न त्यजेन्मोक्षकामुकः ।।

(ब्रह्मवैवर्त पुराण)

काशी त्याग का निषेध

मरणं मङ्गलं यत्र विभूतिश्च विभूषणम् ।
कोपीनं यत्र कौशेयं सा काशी किन्न सेव्यते ।।

जिस काशी में मरण ही मंगल है, विभूति ही भूषण हैं, जहाँ पर कौपीन वस्त्र धारण करना ही रेशमी वस्त्र के समान है, ऐसी काशी को क्यों नहीं सेवन करते।

तीर्थ या देवता के अर्थ भी काशी के बाहर न जाना चाहिये क्योकि सब तीर्थ और सब देवता काशी में ही वास करते है। अतएव अविमुक्त काशी को प्राप्त होकर मोक्षाभिलाषी पुरुष कदापि काशी का त्याग न करें, क्योकि देवता लोग स्वतीर्थ में एक अंश से वास करते हैं और काशी में पन्द्रह अंशों से।

तस्मात्काश्यां देवगेहे स्थितानां पुण्यकारिणाम् ।
अपराधसहस्राणि क्षमते धूर्जटिर्घृणी ॥ (अग्निपुराणे)

काशी का त्याग क्षणमात्र के लिए भी वर्जित है। इस काशी में वास करने वाले पुरुषों के हजार अपराध दयावान् विश्वनाथ क्षमा करते हैं।

वाराणसी निविशते न वसुन्धरायां तत्र स्थितिर्मखभुजां भुवने निवासः ।
तत्तीर्थयुक्तवपुषामत एव मुक्तिः स्वर्गात् परं पदमुदेतु मुदेतु कीदृक् ॥
(नैषध)

वाराणसी में निवास करने से पृथ्वी पर वहां उसकी स्थिति होती है जहां यज्ञकर्ता निवास करता है। यदि काशी में शरीर छूट गया तो स्वर्ग से भी श्रेष्ठ मोक्षपद प्राप्त होता है।

"भूमिष्ठापि न यात्र भूस्त्रिदिवतोऽप्युच्चैरधः स्थापिया ।
या बद्धा भुवि मुक्तिदास्युरमृतं यस्यं मृता जन्तवः ॥
या नित्यं त्रिजगत्पवित्रतटिनीतीरे सुरैः सेव्यते ।
सा काशी त्रिपुराररिराजनगरी पायादपायाज्जगत् ॥ (स्कन्द पु.)

काशी का पृथ्वी से सम्बन्ध नहीं है। यह स्वर्ग लोक से उच्चतर है। जागतिक सीमा से आबद्ध होने पर भी मोक्षदायिनी है, त्रैलोक्यपावनी भागीरथी के तट पर शोभित और सुसेवित है और काशी त्रिपुराररिराजनगरी है।

काशीवासविधि

स्वस्वजात्यनुसारेण यो धर्मो यस्य कीर्तितः ।
तत्तद्धर्मपरैरेव सेव्या वाराणसी पुरी ॥
अन्यैः संसेव्यमाना सा कीकटान्नातिरिच्यते ॥ (पद्मपुराणे)

अपनी-अपनी जाति के अनुसार शास्त्र में जो धर्म जिसके कहे गये हैं, उसी धर्म में जो जाति तत्पर रहती हैं, उसी का वाराणसी सेवन सफल होता है और जो लोग अपने धर्म को छोड़कर अन्य धर्म में रत रहते है, उनके लिए काशी कीकट देश के समान है।

क्व मांसं क्व शिवे भक्तिः क्व मद्यं क्व शिवार्चनम् ।
मद्यमांसरतानां च दूरे तिष्ठति शंकरः ॥६०॥
(का० खं० अ० ३)

कहां मांस भोजन और कहां शिव की भक्ति व कहां मद्यपान और कहां शिव का पूजन ? अर्थात् महादेव जी मद्य और मांस सेवन करने वाले से दूर रहते हैं, ऐसी शिव भक्ति या काशीवास से क्या लाभ होगा अर्थात् कुछ नहीं।

अत्रोषित्वापीशभक्तान्विरुणद्धि तु यः कुधीः ।
पुयै द्रुह्यति वा मूढ़स्तस्यान्यत्रात्र नो गतिः ।। १३७ ।।

कालभैरवभक्तानां सदा काशीनिवासिनाम् ।
विघ्नं यः कुरुते मूढ़ः स दुर्गतिमवाप्नुयात् ।। १४८ ।।

विश्वेश्वरेऽपि ये भक्ताः नोभक्ताः कालभैरवे ।
काश्यां ते विघ्नसङ्घात लभन्ते तु पदे पदे ।। १४६ ।।
(का० खं० अ० ३१)

सूतजी ने कहा विशेषरूप से काशी में निवास सदैव पाप शून्य है इसके साथ सदा ही जो धन और स्त्री-पुत्र में विरक्त होकर रहता है उसका कहना ही क्या ।

शिवनिन्दारतो मूढः शिवशास्त्रविनिन्दकः ।
तस्य नो निष्कृतिर्दृष्टा क्वापि शास्त्रेऽपि केनचित् ।। ३६ ।।

शिवनिन्दारता ये च शिवभक्तजनेष्वपि ।
ते यान्ति नरके घोरे यावच्चन्द्रदिवाकरौ ।। ४१ ।।
(का० खं० अ० ७५)

शिव भक्तों को पीड़ित करना तथा काशी या शिव-शास्त्र की निन्दा, कालभैरव तथा कालभैरव के भक्तों से विरोध न करना चाहिए । इसके विपरीत करने से मुक्ति नहीं प्राप्त हो सकती, किन्तु अनेक विघ्न प्राप्त होते है और अन्त में नरक की प्राप्ति होती हैं । इस काशी में वास करके भी जो शिवभक्तों को पीड़ा देता है, अथवा काशीपुरी की निन्दा करता है, उस मूर्ख को न यहां गति मिलती है और न किसी दूसरे स्थान पर मिल सकती है । जो मूढ़ जन सदा काशी निवासी कालभैरव के भक्तों के लिए विघ्न करता है, उसे दुर्गति प्राप्त होती हैं ।

जो कोई विश्वनाथ का भक्त होने पर भी कालभैरव पर भक्ति न रखता हो उसे काशी में पद-पद पर विघ्न मिलता है, और जो मूढ़ जन शिव के निन्दक हों अथवा शिवशास्त्र के निन्दा में तत्पर रहें, उनका निस्तार शास्त्र में कही पर नहीं देखा है ।

जो लोग शिव की निन्दा अथवा शिवभक्तों की निन्दा करते हैं, वे जब तक चन्द्र सूर्य है घोर नरक में पड़ते हैं । धर्माचरण, गुरु एवं शास्त्रसेवा और काशी के निवास के लिये सदाचार सम्पन्नता, भगवान् विश्वनाथ और माता अन्नपूर्णा की भक्ति में विशेष संरभ से साधक को प्रवृत्त करती है जो उसका एकमात्र इष्ट है । माता सदृश काशीपुरी में जो धर्मविरुद्ध रहता है वह महानरकगामी है यह कहा गया है । सज्जन लोगों के साथ सत्संग और यज्ञ दान करता रहे । भगवद्-गुणानुवाद श्रवण संकीर्तन अन्य व्यक्तियों के प्रति द्वेषबुद्धि निन्दा और विवाद न करने,

व्रतोपवास, इन्द्रियों पर संयम रखने और दान लेने लिवाने के विषय से दूर रहने से साधु पुरुष सदैव भगवत्सन्मुखीलाभ प्राप्तकर विराग द्वारा मोक्ष प्राप्त करते हैं। शिव और विष्णु, पार्वती और लक्ष्मी में भेद नहीं मानना चाहिये।प्रायः मत-मतान्तर के भेद तथा अल्पबुद्धि के कारण शिव तथा विष्णु में लोग भेद मानते है, पर भेद इस ज्ञानभूमि काशी में न होना चाहिये और जो यहां भेद मानते है, वे मूढ़ समझे जाते हैं।

विष्णुरुद्रान्तरं चैव श्रीगौर्योरन्तरं तथा।
गङ्गागौर्यन्तरं चैव यो ब्रूते मूढधीस्तु सः ॥८४॥

(का० खं० अ० ८७)

विष्णु और महादेव तथा पार्वती तथा गंगा में जो भेद मानते है वे मूढ़ बुद्धि हैं और अपने हानि-लाभ को नहीं समझते। ऐसे भेद-बुद्धि वालों को भी यहाँ मुक्ति नहीं मिलती। सूतजी से शिष्यने पूछा- हे गुरो! जब जितेन्द्रिय, पाप से रहित, शान्त महान्त भगवान् विष्णु शिव के चरणों का आश्रय लेने वाले सभी तीर्थों में मुक्ति लाभ कर लेते हैं तो काशी की क्या विशेषता हुई। गुरू ने तप, इन्द्रियनिग्रह, मनः संयम द्वारा सम्पूर्णता आत्मसाक्षात्कार का साधन बनानेवाले व्यक्तियों का वर्णन कर कहा कि कभी-कभी काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मात्सर्य आदि पूर्व जन्म के संस्कार प्रबुद्ध होकर व्यक्ति को प्रतिक्षण आगे बढ़ने से रोकते हैं। धीर पुरुषों को भी मोह प्राप्त होता हैं। केवल काशीक्षेत्र ऐसा हैं जहां साधन के लिए कुछ करने से अत्यधिक लाभ मिलता हैं। अन्य तीर्थों में मनुष्य के बुरे संस्कारों द्वारा पतन का मार्ग उपस्थित होने का भय रहता है परन्तु काशी में भोगेच्छा सम्पूर्णरूप से निवृत्त होती है। साधन की विकलता अन्य तीर्थो मे पूर्ण नहीं हो सकती। यहाँ सुगमता से अन्य साधारण साधनों से विष्णुपद की प्राप्ति होती हैं।

बस यही इस काशी की महत्वपूर्ण विशेषता है। यहां तो निष्पाप होकर भगवती काशी की शरण में रहकर साधन करो, बस सब परमपद का मार्ग प्रशस्त मिलता हैं।

पापकर्मों से काशी को बचायें

पापमेवहि कर्तव्यं मतिरस्ति यदीदृशी।
सुखेनान्यत्र कर्तव्यं मही ह्यस्ति महीयसी ॥९५॥

अपि कामातुरो जन्तुरेकां रक्षति मातरम्।
अपि पापकृता काशी रक्ष्या मोक्षार्थिनैकिका ॥९६॥

(का० खं० अ० २२)

यदि किसी का पाप ही कर्तव्य है, उसकी ऐसी ही बुद्धि है तो काशी छोड़कर अन्यत्र प्रसन्नतापूर्वक मन की शान्ति करें। परन्तु कामातुर होने पर भी प्राणी जैसे माता को बचाते हैं, उसी प्रकार पाप बुद्धि आने पर मोक्षार्थी पुरुष काशी को बचा देवें।

काशी में मल-मूत्रादि का विचार

काशी शंकर का उदर है और काशीवासी उसमें गर्भ के बालक सदृश निवास करते हैं। जैसे बालक माता के उदर में मल-मूत्रादि त्याग कर दोष का भागी नहीं होता, उसी तरह काशीवासी मनुष्य भी (पंचक्रोशी यात्रा के अतिरिक्त) काशी में मल-मूत्र त्याग कर दोष-भागी नहीं होता।

काशीवासियों को अन्य जल न प्राप्त होने पर गंगाजल से मल-मूत्र की शुद्धि करने में भी दोष नहीं है। यथा-

सर्वाणि येषां गाङ्गेयैस्तोयैः कृत्यानि देहिनाम्।
भूमिष्ठा अपि ते मर्त्या अमर्त्या एव वै हरे ॥ (का० खं०)

काशीवासी मनुष्यों के सभी शरीर सम्बन्धी कृत्य गंगाजल से होते है। वह मर्त्य (मनुष्य) पृथ्वी में स्थित होकर भी अमर्त्य (देवता ही) के समान है। अन्यत्र जन्मभर योगाभ्यास करने से जो फल प्राप्त होता है, वह फल वाराणसी में एक ही प्राणायम से मिलता है।

मणिकर्णिका घाट माहात्म्य

सर्वतीर्थावगाहाच्च यावज्जन्म यदर्च्यते।
तदानन्दवने प्राप्य मर्णिकर्ण्येकमज्जनात् ॥२६॥

इस आनन्दवन काशी में मणिकर्णिका पर केवल एक डुबकी से जो पुण्य होता है, वह पुण्य जन्मभर सब तीर्थो में स्नान करने पर भी नहीं मिल सकता है।

कुरुक्षेत्रसमा गङ्गा यत्र कुत्रावगाहिता।
कुरुक्षेत्राद्दशगुणा यत्र विन्ध्येन सङ्गता ॥
ततः शतगुणा प्रोक्ता यत्र पश्चिमवाहिनी।
तस्मात्सहस्रगुणिता काश्यामुत्तरवाहिनी ॥ (भविष्यपुराणे)

काशी में उत्तरवाहिनी गंगा मणिकर्णिका घाट का माहात्म्य, कुरुक्षेत्र से कई गुना अधिक है, अर्थात गंगोत्री से समुद्र पर्यन्त कही भी गंगा में स्नान किया जाता है, तो उसका कुरुक्षेत्र के समान फल प्राप्त होता है। जहाँ विन्ध्याचल से मिली है, वहां कुरुक्षेत्र से दसगुना अधिक फल

प्राप्त होता है। जहां से पश्चिमवाहिनी होगई है, वहां विन्ध्याचल संगम से सौगुना अधिक और काशी में जो उत्तरवाहिनी है वह पश्चिम वाहिनी से भी हजारगुणा अधिक फलदायिनी कही गयी है।

स्नात्वा मुमुक्षुर्मणिकर्णिकायां मृडानि गङ्गाहृदये तवास्ये ।
विश्वेश्वरं पश्यति योऽपि कोऽपि शिवत्वमायाति पुनर्न जन्म ।।

(सनत्कुमारसंहिता, काशीदर्पण)

मोक्षार्थी मनुष्य मणिकर्णिका घाट पर मुण्डन स्नान करके जो सदा हृदय में निवास करने वाले श्रीविश्वेश्वर का दर्शन करे। ऐसा करने वाला प्राणी पुनः जन्म नहीं लेता। जन्म मरण के चक्कर से छूट जाता हैं।

सर्वतीर्थावगाहाच्च यत्पुण्यं स्यान्नृणामिह ।
तत्पुण्यं कोटिगुणितं मणिकर्ण्येकमज्जनात् ।।

(ब्रह्मपुराण त्रिस्थलीसेतु पृ. १४३)

दुनिया भर के तीर्थो मे हम गये परन्तु मणिकर्णिका तीर्थ में मैने सब तीर्थों से करोड़ो गुना फल पाया।

पादोदकासिसंभेदज्ञानोदमणिकर्णिकाः ।
षडङ्गोऽयं महायोगो ब्रह्मधर्महृदावपि ।।

काशी शिव-चरण का जल है। यह मणिकर्णिका अज्ञान को दूर करके शुद्ध ज्ञान का प्रकाश कर देता है। छः प्रकार के योगो को देता हुआ ब्रह्म के धर्म का यह हृदय है।

विपाशयामि तत्राहं कर्मभिः पाशितान्पशून् (का०ख० ७६।८१)
दीक्षितो वा दिवाकीर्त्तिः पण्डितो वाप्यपण्डितः । (का०ख० ७६।८६)
तुल्यास्ते मोक्षदीक्षायां सम्प्राप्य मणिकर्णिकाम् ।।
सत्यलोकोऽपि लोकोस्तेऽर्थयन्ते निरन्तरम् ।
यमहो दीर्घनिद्रायै सैषा श्रीमणिकर्णिका ।। (का० ३३।११३)

सत्य लोक के लोग भी जिसकी निरन्तर कामना करते है और जहां जीवन तो सफल होता ही है, मरण भी मंगलमय माना जाता है।

मरणं मङ्गलं यत्र सफलं यत्र जीवितम् ।
स्वर्गस्तृणायते यत्र सैषा श्रीमणिकर्णिका ।।

(त्रिस्थली सेतु पृ० ११४ का० ख० ३३।१०३)

ऐसी मणिकर्णिका के आगे स्वर्ग भी तृण तुल्य है।

विश्वेश्वर दर्शन माहात्म्य

सर्वलिङ्गार्चनात्पुण्यं यावज्जन्म यदर्च्यते ।
सकृद्विश्वेशमभ्यर्च्य श्रद्धया तदवाप्यते ।।३० ।।
(का० खं० अ० ६६)

जीवनपर्यन्त समस्त शिवलिंगों की आराधना से जो पुण्य मिलना कठिन है, वह पुण्य श्रद्धापूर्वक केवल एक ही बार विश्वेश्वर के पूजन से शीघ्र ही मिल जाता है।

आलस्येनापि यो यायाद्गृहाद्विश्वेश्वरालयम् ।
अश्वमेघाधिको धर्मस्तस्य तत् स्यात् पदे पदे ।।८६ ।।
यः स्नात्वोत्तरवाहिन्यां याति विश्वेशदर्शने ।
श्रद्धया परया तस्य श्रेयसोऽन्तो न विद्यते ।।८७ ।।
(का० खं० अ० ३)

आलस्य करके भी जो कोई अपने घर से श्री विश्वनाथजी के मंदिर तक जाता है, उसको पद-पद मे अश्वमेघ यज्ञ से अधिक पुण्य प्राप्त होता है और जो मनुष्य उत्तरवाहिनी गंगा में स्नान करके बड़ी श्रद्धा से विश्वनाथ दर्शन को जाता है, उसके पुण्य का तो पार ही नहीं है।

स्वयम्भुवोऽस्यलिङ्गस्य मम विश्वेशितुः सुराः ।
राजसूयसहस्रस्य फलं स्यात्स्पर्शमात्रतः ।।
(का० खं० ६६।२६)

इस स्वयम्भूलिंग को देवता लोग विशेष करके आराधना करते हैं, इसके स्पर्शमात्र से राजसूय यज्ञ का फल प्राप्त होता है।

अस्मिन्ममानन्दवने यदेतल्लिङ्गं । (का० ख० ६६।४४)
सुधाधामसुधामधाम आसप्तपातालतलात्स्वयम्भुसमुप-
स्थितं भक्तकृपावशेन ।।

आनन्द वन में जो यह लिंग है, भक्तों के वश में होकर पाताल आदि लोकों में भी प्रकट होता रहता है।

तस्य दर्शनमात्रेण तत्त्वज्ञानविधायकम् ।
पापक्षयमवाप्नोति सर्वथा नात्र संशयः ।।
(त्रि. सेतु पृ. १८३)

विश्वेश्वरलिंग के दर्शन मात्र से तत्वज्ञान का प्रकाश होता है और उससे सदा के पापों का क्षय होता है। इसमें कोई सन्देह नहीं।

यज्जन्मनां सहस्त्रेण निर्मलं पुण्यमर्जितम् ।
तत्पुण्यं परिवर्त्तेत भवेद्विश्वेशदर्शनम् ।।

विश्वेश्वर के दर्शन करने से उसके सहस्र जन्मों के दोषों का विनाश होकर वह पुण्य का भागी बन जाता है।

गवां कोटिप्रदानेन सम्यग्दत्तेन यत्फलम् ।
तत्फलं सम्यगाप्येत विश्वेश्वरविलोकनात् ।।

(का० खं० त्रि० पृ० १८५)

सहस्रकोटि गौओं को दान करने का जो फल है वह फल विश्वेश्वर के दर्शन मात्र से प्राप्त होता हैं।

यस्तु विश्वेश्वरं दृष्ट्वा ह्यन्यत्रापि विपद्यते ।
तस्य जन्मान्तरे मोक्षो भवत्येव न संशयः ।।

(का० खं० अ० ६६ श्लो. ४२)

और विश्वेश्वर के दर्शन के बाद प्राणी कही पर भी शरीर छोड़े तो अगले जन्म में मोक्ष का भागी हो जाता है, इसमें कोई सन्देह नहीं।

काशीविश्वेश्वरं लिङ्गं ज्योतिर्लिङ्गं तदुच्यते ।
तद्दृष्टवा परमं ज्योतिराप्नोति मनुजोत्तमः ।।

(त्रि. से. पृ. १८७)

श्री काशी विश्वेश्वर लिंग को ज्योतिर्लिंग कहते हैं। श्रेष्ठ पुरूष इनका दर्शन करने से परम ज्योति को प्राप्त हो जाता हैं।

मन्मना मम भक्तश्च मयि सर्वार्पितक्रियः ।
यथा मोक्षमिहाप्नोति ह्यन्यत्र न तथा क्वचित् ।।

(मत्स्य पुरा० १८०।५१)

भगवान् शंकर ने कहा है कि अपने सभी कर्म हमको अर्पण कर देने पर हमारे भक्तों को जैसा मोक्ष यहाँ मिलता है, वैसा अन्यत्र नहीं।

परो हि नियमश्चैव मां विलोक्य यदश्नुते ।
मामनालोक्य यद्भुक्तं तद्द्भुक्तं केवलं त्वधम् ।।१६।।

(का० ख० अ० ६३)

शंकर जी पार्वती जी से कहते हैं कि मेरा दर्शन करके तभी भोजन करना, यह बहुत ही उत्तम नियम है। क्योकि मेरे दर्शन किये बिना जो कुछ भोजन किया जाता है, वह केवल पाप और हीन भोजन होता है।

नोट - विश्वेश्वरादि लिंगों का किसी दिन दर्शन न हो सके तो घर ही पर मार्जन कर किसी शिवलिंग का दर्शन करके तब भोजन करना चाहिए। शिवलिंग के दर्शन किये बिना भोजन करना काशीवासियों को अत्यन्त निषेध है।

ये काश्यां धर्मभूमिष्ठा निवसन्ति मुनीश्वराः ।
ते तारयन्ति चात्मानं शतपूर्वान् शतापरान् ।।८ ।।

(का० माहात्म्य अ० २)

जो महात्मा सद्धर्म काशी में निवास करते है, वे अपने साथ पिछली सौ पीढ़ियों को भी लेकर इस संसार से पार उतर जाते है ।

संवत्सरं वसंस्तत्र जितक्रोधो जितेन्द्रियः ।
अपरस्वाद्विपुष्टांगः परान्नपरिवर्जकः ।।६२ ।।

परापवादरहितः किञ्चिद्दानपरायणः ।
समाः सहस्रमन्यत्र तेन तप्तं महत्तपः ।।६३ ।।

(का० ख० अ० २५)

जो मनुष्य क्रोध एवं इन्द्रियों को जीतकर स्वयम् के धन से अपना पालन पोषण करता हुआ पराये अन्न तथा निन्दा को त्याग कर, कुछ दान देता हुआ एक वर्ष तक काशी वास करे तो उसे अन्यत्र सहस्रवर्ष तप करने का फल प्राप्त होता है ।

अत्रत्यः प्राणिमात्रोऽपि रक्षणीयः प्रयत्नतः ।
एकस्मिन्रक्षिते जन्तावत्र काश्यां प्रयत्नतः ।
त्रैलोक्यरक्षणात्पुण्यं यत्स्यात्तत्स्यान्न संशयः ।।१६ ।।

(का० ख० अ० ६६)

प्रयत्नपूर्वक काशी में प्राणिमात्र की रक्षा करनी चाहिये । यदि काशी में प्रयत्नपूर्वक एक भी जन्तु की रक्षा हो सके तो निःसन्देह त्रैलोक्य भर के रक्षण का पुण्य मिलता है ।

उपर्युक्त सर्वधर्म पालन से भी अधिक फलदायक काशीवासियों के लिए अंतर्गृह यात्रा का बड़ा भारी माहात्म्य लिखा है । कुछ हो सके अथवा न हो सके, यह यात्रा तो अवश्य होनी चाहिये।

काशीयात्रा के प्रति श्रद्धा उत्पन्न होना पूर्व कोटि पुण्यों के प्रभाव से होता है । वह विश्वनाथ की कृपा के आधीन है ।

विश्वेशानुगृहीतानां विच्छिन्नाखिलकर्मणाम् ।
भवेत्काशीं प्रति मतिर्नेतरेषां कदाचन ।।१३० ।।

काशीं प्रति मनो येषां निःशेषक्षालितैनसाम् ।
त एव मानवा लोके सत्यं नृपशवो परे ।।१३१ ।।

(का० ख० अ० पू०)

काशी यात्रा की ओर उन्हीं की बुद्धि जा सकती है , जिन पर बाबा की पूरी कृपा होती है और जो अपने समस्त कर्म-बन्धनों को काट चुके है, अथवा जो लोग अपने समस्त पापों को धो चुके हैं ।

श्रेयसां भाजनं चैतन्नृजन्म न वृथा नयेत् ।
देवानामपि दुष्प्राप्यं काशीसन्दर्शनादृते ।।१३३ ।।

(का० ख० अ० ५०)

समस्त कल्याणों का आधार और देवताओं को भी दुर्लभ इस मनुष्य जन्म को काशी यात्रा के बिना वृथा नहीं खोना चाहिए ।

काशी के पशु भी देवतुल्य

काशी की यात्रा करने वाले मनुष्यों की क्या प्रशंसा की जाय, जब कि काशी की गलियों में विचरने वाले पशु भी देवताओं से उत्तम माने जाते हैं ।

वरमेतेऽपि पशवः आनन्दवनचारिणः ।
सदानन्दाः पुनर्देवा न नन्दनवनाश्रिताः ।।१४ ।।

(का० ख० अ० ८५)

आनन्दवन काशी में विचरने वाले पशुगण नन्दनवनविहारी देवताओं की अपेक्षा बहुत ही अच्छे हैं, जीवन्न मुक्त हो गये हैं ।

मनुष्य मात्र को चाहिए कि प्रयत्नपूर्वक काशी में वास कर काशी की सदा यात्रा करता रहे! यथा -

न वन्ध्यं दिवसं कुर्याद्विना यात्रां क्वचित्कृती ।।१०१ ।। (का०ख०अ० १००)

पुण्यवान् जन बिना काशी की यात्रा के कभी दिन को व्यर्थ न जाने दें ।

श्रद्धापूर्वमिमा यात्राः कर्तव्याः क्षेत्रवासिभिः ।
पर्वस्वपि विशेषेण कार्या यात्राश्च सर्वतः ।।१०० ।।

(का० ख० अ० १००)

काशीवासियों को काशी की यात्रा श्रद्धापूर्वक करनी चाहिए और जिस दिन कोई पर्व हो, उस दिन पर्व की यात्रा अवश्य होनी ही चाहिए ।

यस्य वन्ध्यं दिनं याति काश्यां निवसतः सतः ।
निराशाः पितरस्तस्य तस्मिन्नेव दिनेऽभवन् ।।

(का० ख० अ० १००)

काशीवास करने वाले जिस सज्जन का कोई दिन व्यर्थ बीत जाता है, उस दिन उनके पितृगण निराश हो जाते है ।

काशी कृत पापों से कैसे मुक्ति हो ?

पार्वतीजी ने हाथ जोड़ कर शिवजी से प्रश्न किया कि हे काशीनाथ ! ममनाथ ! त्रिपुरारी ! मैने आपके मुख से सुना है कि काशीकृत पाप का बड़ा भारी दुःख होता है ।

इस दुःख से मुक्ति के लिए कोई सुगम उपाय बताइये, जिसमें कलिकाल के मनुष्यों का उद्धार हो । यह प्रश्न सुनकर श्री विश्वनाथजी महाराज प्रसन्न होकर बोले - हे सुन्दरी ! तुमने इस कलिकाल के जीवों के उपकारार्थ बहुत ही अच्छा प्रश्न किया है । हे प्रिये ! अब ध्यान देकर सुनो, मैं कहता हूँ -

अन्यक्षेत्रे कृतं पापं पुण्यक्षेत्रे विनश्यति ।
पुण्यक्षेत्रे कृतं पापं गङ्गातीरे विनश्यति ।।
गङ्गातीरे कृतं पापं काशीं प्राप्य विनश्यति ।
काश्यां तु यत्कृतं पापं वाराणस्यां विनश्यति ।।
वाराणस्यां कृतं पापमविमुक्ते विनश्यति ।
अविमुक्ते कृतं पापमन्तर्गेहे विनश्यति ।।
अन्तर्गेहे कृतं पापं वज्रलेपो भविष्यति ।
वज्रलेपच्छिदं ह्येतत्पञ्चक्रोशप्रदक्षिणम् ।।
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन कुर्यात् क्षेत्रप्रदक्षिणाम् ।

(ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

मनुष्य ने किसी स्थान में पाप किये हों, वह पाप पुण्यक्षेत्र में छूट जाता है ।

पुण्यक्षेत्र का पाप गंगा प्राप्त होने पर छूट जाता हैं । गंगातीर का पाप काशीपुरी में नष्ट हो जाता है । काशी का पाप उसके भीतर वाराणसी में नष्ट होता है । वाराणसी का पाप उसके भीतर अविमुक्त में नष्ट होता है । अविमुक्त का पाप उसके भीतर अन्तर्गृही यात्रा में छूटता है, अन्तर्गृही का पाप वज्रलेप होता है अर्थात पाप कर्ता को नहीं छोड़ता, लिप्त ही रहता है । इस वज्रलेप पाप को छेदन करने वाली पंचक्रोशी प्रदक्षिणा है । इसलिए सबको प्रयत्न से पंचक्रोशी प्रदक्षिणा करनी आवश्यक है ।

दक्षिणे चोत्तरे चैव ह्ययने सर्वदा मया ।
क्रियते क्षेत्रदाक्षिण्यं भैरवस्य भयादपि ।।

(सनत्कुमार संहितायाम्)

अतएव हे सुन्दरी ! मै भी भैरव के भय से सदा सर्वदा दक्षिणायन तथा उत्तरायण दोनो अयनों में प्रदक्षिणा अर्थात पंचक्रोशी यात्रा करता हूँ ।

कलावत्यन्तगोप्यानि भविष्यन्ति गिरीन्द्रजे ।
परं तेषां प्रभावो यः स स्वस्थानं न हास्यति ।। (काशीखण्डे)

शंकरजी पार्वतीजी से कहते है हे पार्वती ! कलियुग में लिंग या तीर्थ प्रायः अत्यन्त गुप्त हो जायेंगे, परन्तु उनका जो विशेष प्रभाव है, वह अपने स्थान को नहीं छोड़ेंगे।

और अन्य शास्त्रों में भी कहा है कि "कलौ स्थानानि पूज्यन्ते" अतएव गुप्त हुई मूर्ति या तीर्थ के स्थान ही का दर्शन और पूजन करना चाहिए।

यात्रारम्भविचार

काशीजी की यात्रा आरम्भ करने के लिए शुभदिन या शुभमुहूर्त के विचार की कोई भी आवश्यकता नहीं है। जिस दिन इच्छा हो आरम्भ कर देवें। इसके लिए वही शुभदिन, वही शुभमुहूर्त है, जिस दिन इस यात्रा का विचार मन में आ जाय। यथा–

काशीमुद्दिश्य यात्रानां सर्वः स्यात्समयः शुभः ।
मंगलं सकलं वस्तु न किञ्चिद्विचारयेत् ।। (ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

सदा कृतयुगं चास्तु सदा चैवोत्तरायणम् ।
न ग्रहास्तोदयकृतो दोषो विश्वेश्वरालये ।। (का० ख०)

काशी के उद्देश्य से यात्रा करने वालों को सभी काल शुभ है और सभी वस्तु मंगल है। इसका विचार किंचित् भी न करना चाहिए तथा काशी में सदा कृतयुग (सत्ययुग) और उत्तरायण हैं और ग्रहों के उदय तथा अस्त का दोष भी विश्वेश्वर के आलय में नहीं है, जब इच्छा हो यात्रारम्भ कर दें।

यथा कथचिद्देवेशि पञ्चक्रोशप्रदक्षिणम् ।
कुर्यादेव न मासादि चिन्तयेद्धर्मकोविदः ।।७ ।।

(ब्रह्मवैवर्ते दशमोऽध्यायः)

हे पार्वती, जिस प्रकार हो पंचक्रोश की प्रदक्षिणा करनी चाहिये। धर्मात्मा पुरुष महीने आदि का विशेष विचार न करते रह जांय।

काशीप्रवेश विधि

तीर्थयात्रां चिकीर्षुः प्राग्विधायोपोषणं गृहे ।
गणेशं च पितृन्विप्रान्साधूञ्छक्तया प्रपूज्य च ।।५६ ।।
कृतपारणकोत्हृ दृष्टो गच्छेन्नियमधृक् पुनः ।
आगत्याभ्यर्च्य पितृन्यथोक्तफलभाग्भवेत् ।।५७ ।।

(का० खं० अ० ६)

जो प्राणी अपने देश, नगर, ग्राम से काशीपुरी की यात्रा करने की श्रद्धा करे, उसको उचित है कि यात्रा करने के लिए जिस दिन प्रस्थान करना हो, उसके पहले दिन उपवास (व्रत) पूर्वक यात्रा का संकल्प करके श्री गणेशजी का यथोपचार पूजन, पितरों के निमित्त विधिवत् श्राद्ध के उपरान्त यथाशक्ति ब्राह्मण साधु अभ्यागतों को भोजन से तृप्त करें, यही उनकी पूजा है। पश्चात् आनन्द से रात्रि व्यतीत कर दूसरे दिन घृत श्राद्ध करके श्राद्धशेष घृत लेकर श्री गणेश-पितृ तथा ब्राह्मणों को प्रणाम करके प्रस्थान करना चाहिए।

प्रस्थान के समय श्रीविष्णु भगवान् से इस प्रकार प्रर्थना करे-

जय केशव देवेश जय काशीप्रियाच्युत ।
काशीं प्रापय देवेश देहि वासं जनार्दन ।। (ब्रह्मवैवर्त पुराणे)

इस प्रकार प्रार्थना करके उस दिन एक ही कोस चले। यदि कोस के भीतर नदी हो तो पार नहीं जाना चाहिए। वही रात्रि-वास करें। श्राद्धशेष घृत को भक्षण करने के उपरान्त भोजन करे। पूर्वोक्त नियमानुसार मार्ग चलने के पहलें कुटुम्बी जनों के साथ गणेश-पूजन कर नदी पार कर प्रस्थान करे।

प्रवेश एव संवीक्ष्य स देहलिविनायकम् ।
अन्वलिंपत्ततोभक्त्या साज्यसिंदूरकर्दमैः ।।७० ।।

निवेद्य मोदकान्पंच वंचयंतं निजं जनम् ।
महोपसर्गवर्गेभ्यस्ततोऽन्तः क्षेत्रमाविशत् ।।७१ ।।

आगत्य दृष्ट्वा मणिकर्णिकायामुदग्वहां स्वर्गतरंगिणीं सः ।
संक्षीय पुण्येतर पुण्यकर्मणां नृणां गणैः स्थाणु गणैरिवावृताम् ।।७२ ।।

सचैलमाप्लुत्य जलेऽमलेमले बिलंब मलं वितशुद्धबुद्धिः ।
संतर्प्य देवर्षिमनुष्यदिव्यपितृन्पितृन्स्वाहिकर्मकांडवित् ।।७३ ।।

विधायचद्राकसहिपंचतीर्थी कां विश्वेशमाराध्यततो यथा स्वयम् ।
पुनः पुनर्वीक्ष्य पुरीं पुरारेरिद भयाऽलोकि नवेति विस्मितः ।।७४ ।।
(का० खं० अ० ७)

जब काशी-प्राप्ति का दिन मालूम हो, तो उसके पहले दिन उपवास करना चाहिए। यदि प्राप्ति का दिन निश्चय न हो, तब जब पहुँचे, उसी दिन तीर्थोपवास कर, काशी के पश्चिम द्वार पर श्रीदेहली विनायक हैं, उनको घृत सिन्दूर फेंटकर के लेपन पूर्वक यथोपचार पूजन करना तथा पाँचलड्डू अवश्य चढ़ाना चाहिए। वहां से क्षेत्र को साष्टांग दण्डवत् करके काशी में प्रवेश करना चाहिए। श्रीमणिकर्णिका उत्तर वाहिनी, स्वर्गतरंगिणी पातक को नाश करनेवाली श्री गंगाजी का दर्शन करके साष्टांग दण्डवत् के उपरान्त भक्तिपूर्वक चक्रपुष्करिणी में तथा गंगा में

सचैलस्नान व विधिपूर्वक मुंडन कराना चाहिए। स्त्रियों को तीन अंगुल केश कतरवाना उचित है। उसके बाद विधिपूर्वक (समंत्रक) मणिकर्णिका में स्नान करने के उपरान्त कर्मकाण्ड के अनुसार देवऋषि पितृ तर्पण पितरों के लिए श्राद्ध करना चाहिए।

काशीवासियों के लिए आवश्यक नित्य यात्रा

दैनंदिनी विधातव्या महाफलमभीप्सुभिः। (ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

पद्मपुराण, ब्रह्मवैवर्त तथा काशीखण्ड के अनुसार नित्य यात्रा करना उचित है।

ज्ञानवापी में स्नान करके श्री ढुंढिराज गणेश का यथोपचार पूजन, मोदक नैवेद्य लगाकर दण्डपाणी और मोद-प्रमोद-दुर्मुख-सुमुख-गणनाथ का पूजन करने के उपरांत श्री विश्वेश्वरजी और अन्नपूर्णाजी की तथा कालभैरव की पूजा करके मुक्तिमंडप में व्यासासन से संकल्प लेकर यात्रा आरम्भ करनी चाहिये।

१- आदित्याय नमः	हनुमानजी के मन्दिर में अक्षयवट के नीचे म.नं. सी०के० ३५/२१ में।
२- द्रौपद्यै नमः	उसी जगह, बगल में म.नं. सी०के० ३५/२१ में।
३- विष्णवे नमः	श्री विश्वनाथजी के दालान दण्डपाणि में मं.न. सी०के० ३५/१६ में।
४- दण्डपाण्यै नमः	ज्ञानवापी के पश्चिम बाजार में मं.नं. सी०के० ३६/१० में।
५- महेश्वराय नमः	ज्ञानवापी के पश्चिम दक्षिण के कोणपर पीपल के नीचे।
६- ढुंढिराजाय नमः	प्रसिद्ध अन्नपूर्णा मन्दिर के मार्ग पर।
७- ज्ञानवाप्यै नमः	प्रसिद्ध
८- नन्दिकेश्वराय नमः	ज्ञानवापी कूप के पूर्व नन्दी बैल की पूजा, मुर्ति गुप्त हैं।
९- ताड़केश्वराय नमः	उसी जगह नन्दी के पूर्व गौरीशंकर के नीचे मढ़ी में।
१०- महाकालेश्वराय नमः	ज्ञानवापी के दक्षिण पूर्व कोणपर पीपल के नीचे।
११- पुनः दण्डपाण्यै नमः	ज्ञानवापी के पश्चिम बाजार में म.नं. सी०के० ३६/१० में।
१२- श्री विश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध मं.नं. सी०के० ३५/१६ में।

इस यात्रा को नित्य करने से धर्म, अर्थ, काम, मोक्षादि संपूर्ण काम फलते है और यह सर्वार्थ सिद्धि को देती है। जो नित्य यात्रा न कर सकें, वह मणिकर्णिका का स्नान, विश्वनाथ-अन्नपूर्णा तथा कालभैरव के नित्य दर्शन करें।

अन्तर्गृहीयात्रा महत्फला कोटिजन्म तथा क्षेत्रकृतपापनिवारणार्थ

अंतर्गृहस्य वै यात्रा कर्तव्या प्रतिवासरम् ।।७६ ।।
प्रातःस्नानं विधायादौ नत्वा पंचविनायकान् ।।
नमस्कृत्वाथ विश्वेशं स्थित्वा निर्वाणमण्डपे ।।७७ ।।
अंतर्गृहस्य यात्रां वै करिष्येघौघशान्तये ।।
गृहीत्वा नियमं चेति गत्वा च मणिकर्णिकाम् ।।७८ ।।
स्नात्वा मौनेन चागत्य मणिकर्णीशमर्चयेत् ।।७६ ।।
(का० खं० अ० १००

अतंर्गृही यात्रा प्रतिदिन करना उचित है। यदि ऐसा न बन सके, तो प्रति वर्ष पंचक्रोशी के आदि में अवश्य करे। प्रातःकाल विधानपूर्वक गंगा में स्नान कर के विश्वनाथ, अन्नपूर्णा, ढुंढिराज, दण्डपाणि, मोद, प्रमोद, दुर्मुख, सुमुख, गणनाथादि विनायकों का पूजन करके श्री विश्वनाथजी का दर्शन कर निर्वाणमंडप व्यासपीठ के समक्ष बैठकर आचार्य से अंतर्गृहीयात्रा का संकल्प लेकर मौन धारण कर मणिकर्णिका में स्नान या मार्जन करके पुनः मणिकर्णिकेश्वर का पूजन करने के पश्चात् यात्रा आरम्भ करें।

मंत्र- अंतर्गृहस्य यात्रां वै करिष्ये विधिपूर्वकम् । प्रीत्यर्थं तव देवेश विश्वनाथ कृपानिधे इति संकल्प्य मौनेन गंतव्यं मणिकर्णिकाम् ।।

१- मणिकर्णिकायै नमः इनकी मूर्ति संकठा जी के पश्चिम म.नं. ६०/१३० में।
२- मणिकर्णिकेश्वराय नमः गोमठ अभयसन्यासाश्रम म.नं. सी०के० ८/१२ में।

मंत्र- कंबलाश्वतरौ नत्वा वासुकीशं प्रणम्य च ।।७६।।

३- कंबलाश्वतराभ्यां नमः गोमठ काकाराम की गली म.नं. सी०के० ८/१४-ए में।
४- वासुकीश्वराय नमः सिंधियाघाट के उपर म.नं. सी०के० ७/१५५ में।

मंत्र- पर्वतेशं ततो दृष्ट्वा गंगाकेशवमप्यथ।

५- पर्वतेश्वराय नमः सिंधियाघाट, वहीं पर म.नं. सी०के० ७/१५६ में।
६- गंगाकेशवाय नमः ललिताघाट के उपर म.नं. डी० १/६८ में।

मंत्र- ततस्तु ललितां दृष्ट्वा जरासंधेश्वरं ततः ।।८०।।

७- ललितादेव्यै नमः ललिताघाट पर मढ़ी में म.नं. डी० १/६७ में।
८- जरासन्धेश्वराय नमः त्रिपुराभैरवी घाट के ऊपर म.नं. ५/१० में।

मंत्र- ततो वै सोमनाथं च वाराहं च ततो व्रजेत्।

६- सोमेश्वराय नमः मानमन्दिर घाट के उपर म.नं. डी० १६/३४ में।
१०- दालभेश्वराय नमः मानमन्दिर।
११- शूलटंकेश्वराय नमः प्रयागघाट के उपर (दशाश्वमेध)।

नोट :- दालभेश्वर और शूलटंकेश्दर का काशीखण्ड में पूजन का उल्लेख नहीं, परन्तु काशी रहस्य में दालभेश्वर और शूलटंकेश्वर के पूजन का उल्लेख है।

१२- वाराहेश्वराय नमः	दशाश्वमेध घाट, म.नं. डी० १७/१११, राम मन्दिर सट्टी के पीछे है।

मंत्र- ब्रह्मेश्वरं ततो नत्वा नत्वागस्तीश्वरं ततः ।।८१।।

१३- ब्रह्मेश्वराय नमः	बालमुकन्द का चौहट्टा, बंगालीटोला म.नं. डी० ३३/६६ में।
१४- अगस्तीश्वराय नमः	अगस्तकुण्डा म.नं. डी० ३६/११ में।

मंत्र- कश्यपेशं नमस्कृत्य हरिकेशवनं ततः।

१५- कश्यपेश्वराय नमः	जंगमबाड़ी सड़क पर सीड़ी से म.नं. डी० ३५/७६ में उपर जाकर।
१६- हरिकेशेश्वराय नमः	जंगमबाड़ी, खारीकुँआ के पीछे म.नं. डी० ३५/२७३ के चौतरे पर।

मंत्र- वैद्यनाथं ततो दृष्ट्वा ध्रुवेशमथ वीक्ष्य च ।।८२।।

१७- वैद्यनाथेश्वराय नमः	कोदई की चौकी म.नं. डी० ५०/२०-ए में।
१८- ध्रुवेश्वराय नमः	नई सड़क, सनातनधर्म स्कूल के कोने में म.नं. डी० ४६/१० में।

मंत्र- गोकर्णेश्वरमभ्यर्च्य हाटकेशमथो व्रजेत्।

१९- गोकर्णेश्वराय नमः	कोदई की चौकी के पास दयलु की गली म.नं. डी० ५०/३३ में।
२०- हाटकेश्वराय नमः	हड़हासरॉय, म.नं. सी०के० ४३/१८६ में।

मंत्र- अस्थिक्षेपतड़ागे च दृष्ट्वा वै कीकसेश्वरम् ।।८३।।

२१- अस्थिक्षेपतड़ागेश्वराय नमः	बेनियाबाग से मिलकर हड़हा बड़ालिंग, म.नं. सी०के० ४८/४५ में।
२२- कीकसेश्वराय नमः	राजादरवाजा, नारायणदास का कटरा, म.नं. सी०के० ५२/१५ में।

मंत्र- भारभूतं ततो नत्वा चित्रगुप्तेश्वरं ततः।

२३- भारभूतेश्वराय नमः	गोविन्दपुरा, शिवकुमार शास्त्री के घर के पास म.नं. सी०के० ५४/४४ में।
२४- चित्रगुप्तेश्वराय नमः	मछरहट्टा फाटक के अन्दर, म.नं. सी०के० ५७/७७ में।

मंत्र- चित्रघंटां प्रणम्याथ ततः पशुपतीश्वरम् ।।८४।।

२५- चित्रघंटादेव्यै नमः	चन्दूनाऊ की गली, चौक के पीछे म.नं. सी०के० २३/३४ में।
२६- पशुपतीश्वराय नमः	पाशुपतेश्वर की गली म.नं. सी०के० १३/६६ में।

मंत्र- पितामहेश्वरं गत्वा ततस्तु कलशेश्वरम्।

२७- पितामहेश्वराय नमः — किशनलाल याज्ञिक, शीतलागली, म.नं. सी०के० ७/६२ में।

२८- कलशेश्वराय नमः — उसी जगह आगे, कलशेश्वर की ब्रह्मपुरी के फाटक पर म. नं. ७/१०० में।

मंत्र- चन्द्रेशस्त्वथ वीरेशो विद्येशोग्नीश एव च ।।८५।।

२६- चन्द्रेश्वराय नमः — सिद्धेश्वरी मन्दिर के अन्दर, म.नं. सी०के० ७/१२४ में।

३०- वीरेश्वराय नमः — आत्मावीरेश्वर प्रसिद्ध, म.नं. सी०के० ७/१५८ में।

३१- विद्येश्वराय नमः — नीमवाली ब्रह्मपुरी, म.नं. सी०के०ए० २/४१ में।

३२- अग्नीश्वराय नमः — पटनी टोला, म.नं. सी०के० १/२१ में।

मंत्र- नागेश्वरो हरिश्चंद्रश्चिंतामणिविनायकः।

३३- नागेश्वराय नमः — भोसलाघाट, म.नं. सी०के० २/१ में।

३४- हरिश्चन्द्रेश्वराय नमः — संकठाघाट, म.नं. सी०के० ७/१६६ में।

हरिश्चन्द्रे महातीर्थे तर्पयेयुः पितामहान्। (का०ख०अ० ६१ श्लोक ७५-७६)

३५- चिन्तामणिविनायकाय नमः — उसी जगह आगे वसिष्ठेश्वर के द्वार पर, म.नं. सी०के० ७/१६१ में।

मंत्र- सेनाविनायकश्चाथ द्रष्टव्यः सर्वविघ्नहृत् ।।८६।।

३६- सेनाविनायकाय नमः — उसी जगह संकठा जी के परिक्रमा-मार्ग पर।

मंत्र- वशिष्ठवामदेवौ च मूर्तिरूपधरावुभौ । द्रष्टव्यौ यत्नतः काश्यां महाविघ्नविनाशिनौ ।।८७।।

३७- वशिष्ठवामदेवाय नमः — उसी जगह म.नं. सी०के० ७/१६१ में।

मंत्र- सीमाविनायकं चाथ करुणेशं ततोव्रजेत्।

नोट :- इनका दर्शन प्रयत्न से काशीवासियों को करना चाहिए क्योकि ये महाविघ्नों का नाश करते है।

३८- सीमाविनायकाय नमः — संकठा के परिक्रमा मार्ग में, दूसरे मणिकर्णिका कुण्ड के उपर मढ़ी में।

३६- करुणेश्वराय नमः — लाहौरीटोला, फूटे गणेश के सामने, म.नं. सी०के० ३४/१० में।

मंत्र- त्रिसंध्येशो विशालाक्षी धर्मेशो विश्वबाहुका । आशाविनायकश्चाथ वृद्धादित्यस्ततः पुनः ।।८८।।

४०- त्रिसंध्येश्वराय नमः — वहीं, बगल में, म.नं. सी०के० ३४/१० में।

४१- विशालाक्षिगौर्य्यै नमः — मीरघाट, म.नं. डी० ३/८५ में।

४२- धर्मेश्वराय नमः — धर्मकूप के समीप म.नं. डी० २/२१ में धर्मपीठ।

४३- विश्वबाहुकायै नमः — धर्मकूप से दक्षिण दीवाल में म.नं. डी० २/१५ में।

४४- आशाविनायकाय नमः — मीरघाट धर्मकूप विश्वभुजा गौरी में।

४५- वृद्धादित्याय नमः — उसी जगह, मार्ग पर, म.नं. डी० ३/१५ में।

मंत्र- चर्तुर्वक्त्रेश्चं लिगं वरं ब्राह्मीशस्तु ततः परः।

४६- चतुर्वक्त्रेश्वराय नमः — शकरकन्द गली, म.नं. डी० ७/१६ में।

४७- ब्राह्मीश्वराय नमः — शकरकन्द गली में ही आगे, म.नं. डी० ७/६ में।

मंत्र- ततो मनःप्रकामेश ईशानेशस्ततः परम् ।।८६।।

४८- मनःप्रकामेश्वराय नमः — साक्षीविनायक के आगे, म.नं. डी० १०/५० में।

४९- ईशानेश्वराय नमः — कोतवालपुरा, सिनेमा के बगल की गली, म.नं. सी०के० ३७/४३ में।

मंत्र- चण्डी-चण्डीश्वरौ दृश्यौ भवानीशंकरौ ततः।

५०- चण्डी-चण्डीश्वराय नमः — कालिकागली, म.नं. डी० ८/२६ में।

५१- भवानीशंकराय नमः — अन्नपूर्णा के बगल, राममन्दिर जगरनाथ के बगल में।

मंत्र- ढुंढिं प्रणम्य च ततो राजराजेशमर्चयेत् ।।६०।।

५२- ढुंढिराजाय नमः — प्रसिद्ध अन्नपूर्णा मार्ग पर।

५३- राजराजेश्वराय नमः — ज्ञानवापी के पश्चिम बाजार, म.नं. सी०के० ३५/३३ में।

मंत्र- लांगलीशस्ततोभ्यर्च्यस्ततस्तु नकुलीश्वरः।

५४- लांगलीश्वराय नमः — खोवाबाजार, म.नं. सी०के० २८/४ में।

५५- नकुलीश्वराय नमः — अक्षयवट, हनुमान जी में, म.नं. सी०के० ३५/२१ में।

मंत्र- परान्नेशमथो नत्वा परद्रव्येश्वरं ततः ।।६१।।

५६- परान्नेश्वराय नमः — ज्ञानवापी के पश्चिम बाजार में, म.नं. सी०के० ३५/३४ में।

५७- परद्रव्येश्वराय नमः — उसी मकान में, म.नं. सी०के० ३५/३४ में।

मंत्र- प्रतिग्रहेश्वरं चापि निष्कलंकेशमेव च।

५८- प्रतिग्रहेश्वराय नमः — उसी मकान में, म.नं. सी०के० ३५/३४ में।

५९- निष्कलंकेश्वराय नमः — उसी मकान में, म.नं. सी०के० ३५/३४ में।

मंत्र- मार्कण्डेयेशमभ्यर्च्य तत अप्सरसेश्वरम् ।।६२।।

६०- मार्कण्डेयेश्वराय नमः — ज्ञानवापी के पश्चिम बाजार में, म.नं. सी०के० ३६/१० में।

६१- अप्सरसेश्वराय नमः — राधाकृष्ण की धर्मशाला में, म.नं. सी०के० ३०/१ में।

मंत्र- गंगेशोर्च्यस्ततो ज्ञानवाप्यां स्नानं समाचरेत्।

६२- गंगेश्वराय नमः — मस्जिद से पूर्व पीपल नीचे गुप्त। स्थान की पूजा करे।

६३- ज्ञानवाप्यै नमः — प्रसिद्धवापी यहाँ मार्जन और जल की पूजा करनी चाहिए।

मंत्र- नन्दिकेशं तारकेशं महाकालेश्वरं ततः ।।६३।।

६४-नन्दिकेश्वराय नमः ज्ञानवापी से पूर्व लिंग लुप्त, नन्दीबैल की पूजा करें।
६५-तारकेश्वराय नमः उसी जगह गौरीशंकर मढ़ी के नीचे।
६६-महाकालेश्वराय नमः ज्ञानवापी के पूरब दक्षिण कोण पर।

मंत्र- दण्डपाणिं महेशं च मोक्षेशं प्रणमेत्ततः।

६७-**दण्डपाणये नमः** विश्वनाथगली बाजार में, म.नं. सी०के० ३६/१० में।
६८-**महेश्वराय नमः** ज्ञानवापी से पश्चिम दक्षिण कोण पर पीपल के नीचे मढ़ी में।
६९-**मोक्षेश्वराय नमः** मस्जिद के पीछे, गुप्त स्थान की पूजा करें।

मंत्र- वीरभद्रेश्वरं नत्वा अविमुक्तेश्वरं ततः ।।६४।।

७०-वीरभद्रेश्वराय नमः मस्जिद के पीछे, उत्तर वायव्य कोण पर गुप्त स्थान की पूजा करें।
७१-अविमुक्तेश्वराय नमः ज्ञानवापी के उत्तर फाटक पर, गुप्त स्थान, पु. दूसरा धर्मशाला में।

मंत्र- विनायकांस्ततः पंच विश्वनाथं ततो व्रजेत्।

७२-मोदविनायकाय नमः नेपालीखपड़ा, काशी करवट, म.नं. सी०के० ३१/१२ में।
७३-प्रमोदविनायकाय नमः वहीं बगल में, म.नं. सी०के० ३६/१६ में।
७४-सुमुखविनायकाय नमः वहीं मार्ग पर म.नं. सी०के० ३४/६० में।
७५-दुर्मुखविनायकाय नमः वहीं आगे गली में, म.नं. सी०के० ३५/७ में।
७६-गणनाथविनायकाय नमः विश्वनाथगली बाजार, म.नं. सी०के० ३७/१ में।
७७-श्री काशीविश्वेश्वराय नमः प्रसिद्ध, म.नं. सी०के० ३५/११ में।

मंत्र- ततो मौनं विसृज्याथ मंत्रमेतमुदीरयेत् ।।६५।।

यात्रा सम्पूर्ण कर के व्यासासन के समीप बैठकर आचार्य द्वारा सम्पूर्ण यात्रा के देवताओं के नाम से सुपाड़ी रखकर शिवलिंग बनाकर अक्षत छोड़ना चाहिए।

फिर यह प्रार्थना करें -

अंतर्गृहस्य यात्रेयं यथावद्या मया कृता ।
न्यूनातिरिक्तया शम्भुः प्रीयतामनया विभुः ।।

तत्पश्चात् यात्रा का संकल्प पूर्ण कर के अपनी शक्ति के अनुसार आचार्य को दक्षिणा-भोजन देकर यात्रा पूर्ण करें। इस प्रकार यात्रा करने वाला मनुष्य कोटी जन्म तथा क्षेत्र कृत पापों से निष्पाप होकर पुण्यवान् होता है।

तत्पश्चात् विधिवत् पंचक्रोशी यात्रा करनी चाहिए। ऐसा शास्त्रसम्मत वाक्य है।

स एव शुभदः कालो यस्मिन् श्रद्धोदयो भवेत् ।
श्रद्धा हि दुर्लभा लोके कलौ खलु विशेषतः ।।८ ।।

वही सुन्दर महीना है, जब श्रद्धा उत्पन्न हो। संसार में श्रद्धा ही दुर्लभ है, विशेष कर कलि में।

श्रद्धैव तीर्थं देवश्च श्रद्धास्वर्गापवर्गकौ ।
श्रद्धया यत्कृतं सर्वमनन्तफलदं भवेत् ।।९ ।।

श्रद्धा ही तीर्थ है, श्रद्धा ही देवता है, श्रद्धा ही स्वर्ग और अपवर्ग है। श्रद्धा से जो कुछ किया जाता है, वह अनन्तफलदायक होता है।

काश्यां तिष्ठति यो नित्यं स्नाति भागीरथीजले।
कुर्यात् सांवत्सरीं यात्रां पञ्चक्रोशस्य सुन्दरि ।। (ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

जो काशी में रहता है और नित्य गंगाजी में स्नान करता है, उसको भी प्रति वर्ष काशी की पंचक्रोशी यात्रा करना उचित है क्यो कि ?

वाराणसीं समासाद्य प्रमादाद्यो बहिर्गतः।
स दैवात्पुनरागत्य प्रदक्षिणेन शुद्ध्यति ।। (ब्रह्मवैवर्तपुराणे)

हे सुन्दरी, काशीवासी प्रमादवश या किसी कारण से काशी के बाहर जाता है और पुनः लौटकर आता है तो पंचक्रोशी प्रदक्षिणा करने से उसकी शुद्धि होती है।

पंचक्रोश-माहात्म्य

प्रमादाद्यदि सूक्ष्मं वा स्थूलं वा पातकं नृभिः।
कृतं काश्यां तारकारे कथं तस्याऽऽशु निष्कृतिः ।।१ ।।

हे कार्तिकेय, लोगों ने काशी में छोटा या बड़ा जो भी पाप किया हो, वह सभी बहुत जल्दी कैसे छूट जायेंगे ।।१ ।। जैगीषव्य के प्रश्न के उत्तर में कार्तिकेय ने वही बताया कि-

भगवानुवाच - प्रायश्चित्तविहीनानां, न शान्तिः कुत्रचिद्भवेत्।
किं पुनः काशिकामध्ये पापं कृत्वा सुखं लभेत् ।।२ ।।

कहीं भी प्रायश्चित्त के बिना पाप की शान्ति नहीं हो सकती। फिर काशी में पाप करके प्रायश्चित्त नहीं करने पर कैसे सुखी रहेगा ?

ब्रह्महत्यादि पापानां, प्रायश्चित्तं हि काशिका।
काशिकायां कृते पापे प्रायश्चित्तं न विद्यते ।।३ ।।

ब्रह्महत्यादि पापों का प्रायश्चित्त काशी में होता है। काशी में किये हुए पाप का प्रायश्चित्त नहीं है।

प्रायश्चित्तविहीनानां, यातनास्ति सुदारुणा।
ज्ञानस्वरूपा काशीयं, पञ्चक्रोशे परिस्थिता ।।४ ।।
तस्याः प्रदक्षिणां कृत्वा, सर्वपापैः प्रमुच्यते।

पाप करके प्रायश्चित्त नहीं करने पर घोर यातना (पीड़ा) होती है, लेकिन ज्ञानस्वरूपा पंचक्रोश मात्र काशी की प्रदक्षिणा करने से सब पाप छूट जाता है।

मम ब्रह्ममयं लिङ्गमापातालात् समुत्थितम् ।।५ ।।
शिवलोकोपरिगतमत्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम् ।

पाताल से निकला हुआ हमारा ब्रह्ममय यह लिंग शिवलोक के ऊपर तक दशांगुल स्थित है (इस प्रदेश में सर्वत्र है)।

आजन्म सञ्चितैः पापैर्मुच्यते तत्प्रदक्षिणात् ।।६ ।।
क्षेत्रे कृतानां पापानां, प्रायश्चित्तं न चेतरम् ।

उसकी प्रदक्षिणा करने से जन्मभर का संचित पाप छूट जाता है । इस क्षेत्र में किये हुए पापों का दूसरा प्रायश्चित नहीं है ।

प्रदक्षिणाद्वयं कृत्वा, दशजन्मकृतादघात् ।।७ ।।
मुक्तो भवति पापात्मा, सद्यो मोक्षमवाप्नुयात् ।

दो प्रदक्षिणा करने से दश जन्म का पाप छूट जाता है और पापी का मोक्ष हो जाता है ।

प्रदक्षिणात्रयं कृत्वा, पापं जन्मशतार्जितम् ।।८ ।।
विलयं प्रापयति नो, नात्र कार्या विचारणा ।

तीन प्रदक्षिणा करने से सौ जन्म का पाप अवश्य छूट जाता है इसमें सन्देह नहीं करना चाहिए ।

शुभकृद्यदि कुर्याद्धि मोहात्पापं न तस्य तत् ।।६ ।।
क्षेत्रं प्रदक्षिणीकृत्य, भवेत्पापो हि विज्वरः ।

शुभ कार्य करने वाले व्यक्ति से यदि अज्ञानता से पाप हो जाता है, तो भी वह प्राणी पाप का भागी नहीं होता है । काशीक्षेत्र की परिक्रमा करके पापी प्राणी पापरहित हो जाता है ।

यावज्जीवं वसेत् काश्यां, प्रत्यब्दं सुप्रदक्षिणम् ।।१० ।।
कुर्यादेव निरालस्या, आनन्दसदनस्य हि ।

जन्मभर जब तक काशी में वास करे तब तक आनन्द सदन काशी की वार्षिक प्रदक्षिणा आलस्य छोड़कर अवश्य करनी चाहिए ।

प्रत्यब्दं ये प्रकुर्वन्ति, पञ्चक्रोशप्रदक्षिणाम् ।।११ ।।
जीवन्मुक्तास्तु ते ज्ञेया, निष्पापाः काशिवासिनः ।

जो प्रतिवर्ष पंचक्रोशी की प्रदक्षिणा करते है वे जीवन्मुक्त हैं और वही काशीवासी निष्पाप हैं ।

कूष्माण्डऋषि के पुत्र मण्डपजी की कथा

एतदनन्तरं नवमे अध्याये-अत्रैवोदाहरन्तीमितिहासं पुरातनमित्यादिना कूष्माण्डतनयस्याख्यानं पञ्चक्रोश-प्रदक्षिणाप्रशंसार्थम् अयमाशयः । मद्यप वेश्यारतः दुष्टसंसर्गी, सुवर्णस्तेयीत्यादिपापरतोऽपि मण्डपः सकृदज्ञानात् प्रसङ्गतोऽविधिनाऽपि यात्रां पापेभ्यो मुक्तोऽभूत् । किं पुनर्विधिना ज्ञानत आवृत्त्या यथाकालं कुर्वता ।

इसके बाद नवम अध्याय में - पंचक्रोश महात्म्य के विषय में कूष्माण्डऋषि के पुत्र मण्डय की कथा लिखी हुई है। काशी में एक बहुत बड़े विद्वान कूष्माण्डऋषि रहा करते थे। उनके पुत्र का नाम मण्डप था। मण्डप एक दिन तीन बालकों के साथ सुवर्ण चुरा लाये। सबेरा होने के कारण एक वेश्या के घर छिपा दिया। वेश्या ने प्रसन्न होकर इनको पानी के बहाने खूब मद्य पिला दिया और सब सुवर्ण ले लिया। बालकों के सुवर्ण मांगने पर वेश्या ने जब सुवर्ण देने से इन्कार किया, तब बालकों ने इनके पिता से जाकर सब वृत्तान्त कहा। मण्डप भागकर यात्रियों के साथ पंचक्रोश करने चले गये। लौटने पर कुष्माण्ड जी ने सुवर्ण चुराने का, वेंश्या द्वारा मद्य पिलाने आदि का प्रायश्चित्त कराना चाहा, तब देवताओं ने कहा कि उनका सब पाप छूट गया। एक बार की विधिहीन यात्रा से मण्डप का सब पाप छूट गया।

काशीप्रदक्षिणा येन कृता त्रैलोक्यपावनी।
सप्तद्वीपा साब्धिशैला भूः परिक्रामिताऽमुना ।।५२ ।।

(नारदीय पु०अ० ६)

हे भवानी जिसने काशी की त्रैलोक्य पावनी प्रदक्षिणा की, सात द्वीप, सात समुद्र, सम्पूर्ण पर्वतों के सहित पृथ्वी प्रदक्षिणा कर चुका। वह पुरूष निष्पाप हुआ, पुण्यवान हुआ, कृतार्थ हुआ और लक्षचौरासी योनी से छूटकर शिव सायुज्य को प्राप्त हुआ।

पञ्चक्रोशीयात्रा

महादेव उवाच-

आश्विन्यादिषु मासेषु त्रिषु पार्वति सर्वदा।
प्रदक्षिणा प्रकर्तव्या, क्षेत्रस्यापापकांक्षिभिः ।।६ ।।
माघादि चतुरो मासाः प्रोक्ता यात्राविधौ नृणाम्।

(ब्रह्म-काशीरहस्य, अध्या० १०)

महादेव जी कहते है- हे पार्वति, आश्विन से तीन महीना तक 'कुवार, कार्तिक, अगहन' और माघ से चार महीने तक 'माघ, फाल्गुन, चैत्र, वैशाख' इन महीनों में पापों से छुटकारा पाने के लिए यात्रा करनी चाहिए।

यात्रा कहाँ से आरम्भ करें ? काशीरहस्य में इस प्रकार लिखा है- पंचक्रोशीयात्रा मुक्तिमण्डप व्यासासन से आरम्भ होकर वहीं पर समाप्त होती है।

जो सज्जन यात्रा का संकल्प मणिकर्णिका ही पर लेकर यात्रारम्भ कर देते है, उनकी यात्रा विधिहीन हो जाती है। क्योकि यात्रा का संकल्प ज्ञानवापी स्थित व्यासासन से होना चाहिए। **ज्ञानवापी से कर्दमेश्वर-** पहिला निवास स्थान ३ कोस है। **भीमचण्डी-** दूसरा निवास स्थान ५ कोस है। कुल ८ कोस हुआ। **रामेश्वर-** तीसरा निवास स्थान ७ कोस, कुल १५ कोस हुआ। **शिवपुर-** चौथा निवास स्थान ४ कोस, कुल १६ कोस हुआ। **कपिलधारा-** पांचवा निवास स्थान ३ कोस, कुल २२ कोस हुआ। **मणिकर्णिका** ३ कोस, कुल २५ कोस की इस रीति से यह पंचक्रोशी यात्रा होती है।

इसमें मणिकर्णिका से अस्सी संगम और वरुणा संगम से मणिकर्णिका तक गंगा के तीरे-तीरे जाना पड़ता है। बरसात में लोग नाव से जाते है। बाकी सब कच्ची सड़क है, जिसपर दाहिनी ओर दर्शनीय देवताओं के सुन्दर मन्दिर प्रत्येक निवास स्थान की जगह पर विशाल धर्मशालाएं, मनोहर जलवाले सरोवर तथा अगाध जलराशि वाले कूप दोनो तरफ सघन पल्लवित वृक्षों की पंक्तियों से सड़क सुशोभित हैं। बड़े बड़े विद्वान, राजा-महाराजा, धर्मात्मा, साहूकार, विद्यार्थि, स्त्री-पुरुष अपने-अपने किये पापों के प्रायश्चित्त के निमित्त यात्रा करते है।

अथ क्षेत्रसन्यासिनां विशेषः

भगवन् सर्वभूतेश कृपापूरितविग्रह ।
कृतार्थानां वद विभो क्षेत्रसंन्यासिनामपि ।।१ ।।
प्रदक्षिणाक्रमं क्षेत्राद्बहिर्वा मध्यतोऽपि वा ।
नियमस्य न भङ्गः स्याद् यथा पापं च नश्यतु ।।२ ।।

(काशीरहस्य, अ० ११)

हे भगवान्, हे कृपालो, क्षेत्र में रहने वाले संन्यासियों के लिए प्रदक्षिणा का क्रम क्षेत्र के बाहर से या भीतर से है ? हे भूतेश, जिसमें पाप का नाश हो जाय और नियम भंग न हो, यह कृपापूर्वक बताइए।

श्री भगवानुवाच-

सम्यक् पृष्टं त्वया देवि महाऽहंकारनाशनम् ।
प्रायश्चित्तं न्यासिनां हि क्षेत्राघौघविनाशनम् ।।३ ।।

क्षेत्र के पाप का तथा महाहंकार का नाश करने वाला संन्यासियों का प्रायश्चित तुमने बहुत अच्छा पूछा।

विधिस्तु पूर्वमेवोक्तो नियमादियुतस्तव ।
प्रदक्षिणात्रयं तेषामवधारय सुव्रते ।।४ ।।

विधि तो नियम के साथ पहिले ही कह चुके। तीन प्रदक्षिणा उनको अवश्य करनी चाहिए। अधिक करें तो और अच्छा। लेकिन तीन से कम न हों।

यात्रा में सवारी का नियम

कथयिष्यामि ते राजन् तीर्थयात्राविधिक्रमम् ।
आर्षेणैव विधानेन, यथा दृष्टं यथा श्रुतम् ।।३ ।।

(मत्स्यपुराणे, अ० १०५)

मत्स्य पुराण में- मारकण्डेय जी का वचन है कि ऋषियों से जैसा सुना है और देखा है वह तीर्थ यात्रा को विधिक्रम कहता हूँ।

पंचक्रोश्याश्च सीमानं प्राप्य देवो जनार्दनः ।
वैनतेयादवारुह्य करे धृत्त्वा ध्रुवं ततः ।।११२ ।।

(का० ख० अ० २१)

जब विष्णु भगवान् काशी की यात्रा में आते है, तब गरुड़ को काशी की सीमा के बाहर ही छोड़ दिया करते हैं। अर्थात् जनार्दन देवपंचक्रोशी की सीमा पर पहुँचकर गरुड़ से उतर ध्रुव को हाथ से पकड़ कर चलते हैं।

वलीवर्दं समारूढ़ा श्रृणु तस्याऽपि यत्फलम् ।
नरके वसते घोरे समाः कल्पशतायुतम् ।।३ ।।

जो पुरुष बैलगाड़ी पर यात्रा करता है, वह घोर नरक में पड़ता है। क्योकि गौवों का क्रोध बड़ा भयानक होता है।

सलिलं च न गृह्वन्ति पितरस्तस्य देहिनः ।।४ ।।
ऐश्वर्याल्लोभमोहाद्वा, गच्छेद्यानेन यो नरः ।।५ ।।

घन के लोभ में मोहवश साथवश हम सवारी से चलते हैं तुम भी सवारी से चलो ऐसे यात्रा करने वाले के हाथ का जल पितर लोग ग्रहण नहीं करते।

निष्फलं तस्य तत्तीर्थं तस्माद्यानं विवर्जयेत् ।।६ ।।

(कूर्मपुराण अ० ३७)

उसकी वह पंचक्रोश यात्रा निष्फल हो जायेगी, इसलिए सवारी से यात्रा नहीं करना चाहिए।

नरयानं चाश्वतरी, हयादिसहितो रथः ।
तीर्थयात्रा ह्यशक्तानां, यानदोषकरी नहि ।।५ ।। (कूर्मपुराणे)

जो यात्रा करने में असमर्थ है, उनको घोड़ा-गाड़ी से अथवा पालकी से जाने में दोष नही होता। शक्ति रहते हुए नहीं।

गोयाने गोवधः प्रोक्तो, हययाने तु निष्फलम् ।
नरयाने तदर्धस्यात् पद्भ्यां तच्च चतुर्गुणम् ।।६ ।।

बैलबाड़ी से चलने में गोवध का पाप होता है और घोड़ा गाड़ी से यात्रा निष्फल होती है। पालकी से आधा और पैदल चौगुनाफल होता है।

पद्भ्याम् पादुका शून्याभ्याम् । (विष्णुपुराणे)

पैदल यानी बिना जूता के यात्रा करना चाहिये।

यानमर्धफलं हन्ति, तदर्धं छत्रपादुके ।
वाणिज्यं त्रींस्तत्भागान् सर्वं हन्ति प्रतिग्रहः ।।

सवारी आधा फल ले लेती है । उससे आधा छाता और जूता, वाणिज्य तीन भाग, प्रतिग्रह यानी (दान) का सब फल ले लेता है ।

नोट :- जो बिना जूता के नहीं चल सकते, वे कपड़े का पहने जो शक्ति रहते मोटर आदि सवारियों से चलते है, उनका जाना निष्फल हैं । क्योकि प्रायश्चित्त शारीरिक कष्ट के द्वारा होता है । शक्ति रहते मोटर आदि सवारियों से कभी नहीं जाना चाहिए । इससे तीर्थ की मर्यादा भंग होती है और दूसरे यात्रियों के चलने में उद्विग्न होने का दोष होता है । ऐसी स्थिति में अपने नाम गोत्र के द्वारा यात्रा करने के लिए बाह्य प्रतिनिधिस्वरूप भेज सकते है । ऐसे ही नियमानुसार स्वर्गवासियों के निमित्त भेजा जा सकता है ।

यात्रा में वास विचार

फाल्गुन मास की यात्रा शिवरहस्य के मत से ७ रात्रि निवास का रक्खा गया है और काशी रहस्य के अनुसार चार रात्रि निवास का रक्खा गया है ।

सेतुलिंग पुराण का मत है यात्रा करने वालों को एक रात्रि वास पाशपाणि विनायक पर करना चाहिये । काशीरहस्य के मतानुसार पाशपाणि विनायक का पूजन ही लिखा है ।

सूतसूत महाबुद्धे वेदविद्याविशारद ।
यथा प्रदक्षिणा कार्या मनुजैर्विधिपूर्वकम् ।।१ ।।
स्थानंवासस्य वद नो, भक्ष्यं वाऽभक्ष्यमेवच ।
पूजां सीम्नि स्थितानां च देवानां दानमेव च ।।२ ।।
यथा सम्पूर्णतामेति, यात्राक्षेत्रस्य सत्तम ।।३ ।।

ऋषियों ने पूछा है कि, हे सूत ! जैसे लोगो को विधिपूर्वक प्रदक्षिणा करनी चाहिए ।।१ ।। जहां वास करना चाहिए, यह विस्तार से कहिये ।।३ ।।

(सूत उवाच)

सूतजी बोले इसी प्रकार पहले पार्वती ने शिवजी से पूछा था । शिवजी ने पार्वतीजी को जो विधि बतायी है, वही उत्तम विधि कहता हूँ ।

जो यात्री दो रात्रि-वास करके यात्रा करना चाहे तो भीमचण्डी, रामेश्वर में वास करें । तीन रात्रिवास करके यात्रा करने वाला दुर्गाकुण्ड, भीमचण्डी, रामेश्वर में वास करे और चार रात्रि में यात्रा करने की इच्छा वाला कर्दमेश्वर, भीमचण्डी, रामेश्वर और कपिलधारा में वास करे। सात दिन का वास करने की इच्छा वाला दुर्गाकुण्ड, कर्दमेश्वर, भीमचण्डी, देहली विनायक,

रामेश्वर, पाशपाणि विनायक और कपिलधारा में वास करें। वरुणा नदी का सर्वथा उल्लघंन नहीं लिखा है। राजा, वृद्ध, सुकुमार बालकों के लिए जहां मर्जी हो वहां वास करें।

यात्रा में भोजन का नियम

परान्न- दूसरे का अन्न नहीं ग्रहण करना चाहिए। तैल मांसादि सेवन नहीं करना, मांसान्नादि-मसूरी, उरद, चना, कोदो यह सब अन्न और पान नहीं खाना। रात्रि-जागरण, कीर्तन, भजन, पुराणपाठ, भूमिशयन आदि करना। पर-स्त्री भाषण नहीं करना चाहिए। पर-धन ग्रहण नहीं करना, असत्य भाषण नहीं करना चाहिए। दुर्जन पापियों का संग नहीं करना, किसी प्रकार की पापबुद्धि नहीं करनी चाहिए।

पंचक्रोशी यात्रा-विधि

प्रथम दिन मणिकर्णिका स्नान कर मच्छोदरी मत्स्यतीर्थ में मार्जन कर तारक तीर्थ में मार्जन, ओंकारेश्वर महादेव का दर्शन कर ओंकार और मकार का पूजन और मणिकर्णिका कुण्ड में मार्जन और पूजन के पश्चात् आत्मावीश्रेश्वर का पूजन, संकठा जी का दर्शन पूजन कर घर जाय। रात्रि में हविष्य भोजन करे। दूसरे दिन प्रातः मणिकर्णिका स्नान कर नित्य यात्रा करे। नित्य यात्रा की विधि आगे लिखा है।

ज्ञानवापी व्यासासन से आचार्य द्वारा नियम लेकर प्रथम दिन अन्तरगृही यात्रा पापों के शान्त्यर्थ करना चाहिये। यात्रा से लौट कर यात्रा के सभी देवताओं के नाम से अक्षत छोड़ना चाहिये। फिर यात्रा का संकल्प पूर्ण कर आचार्य को यथाशक्ति दक्षिणा देकर आशीर्वाद लेकर घर जाना चाहिये। उसी दिन सायंकाल ढुंढिराज गणेश को लड्डू और सुपाड़ी दक्षिणा चढ़ा कर यह प्रार्थना मंत्र पढ़े, या आचार्य द्वारा सुने और आज्ञा ले।

ढुंढिराजगणेशान महाविघ्नौघनाशन।
पञ्चक्रोशस्य यात्रार्थं देह्याज्ञां कृपया विभो ।।१७ ।।

दूसरे दिन प्रातःकाल मणिकर्णिका घाट पर स्नान करे और चक्रपुष्करिणी में स्नान या मार्जन कर ज्ञानवापी कूप में स्नान या मार्जन के बाद विश्वनाथ जी की विधिवत् पूजा करें।

विश्वेशं त्रिःपरिक्रम्य, दण्डवत् प्रणिपत्य च।
मोदं प्रमोदं सुमुखं, दुर्मुखं गणनायकम् ।।१८ ।।

अन्नपूर्णा जी की पूजा के बाद आदित्य, द्रौपदी की पूजा करे। विष्णु की पूजा के बाद फिर ढुंढिराज गणेश की पूजा करे। तत्पश्चात् दण्डपाणि का दर्शन-पूजन करे। फिर गंगेश्वर महादेव का पूजन करे, जो ज्ञानवापी से उत्तर पीपल के नीचे गुप्त हैं, स्थान की पूजा कर वहीं समीप में म०न० ३५/१ में गंगेश्वर लिंग की पूजा करे। फिर ज्ञानवापी की पूजा करे। वही पूर्व में नन्दिकेश्वर बगल में ताड़केश्वर की पूजा करें। दक्षिण पीपल के नीचे महाकालेश्वर, फिर महेश्वर, जो ज्ञानवापी से पश्चिम-दक्षिण कोण पर पीपल के नीचे मढ़ी में है पूजा करें। मस्जिद के पीछे मोक्षेश्वर नाम से स्थान की पूजा करे। आगे उत्तर पश्चिम कोण पर वीर भद्रेश्वर गुप्त है, उस स्थान की पूजा करे। फिर उत्तर फाटक के सामने कब्र के चौतरे पर गुप्त है उसी स्थान पर अविमुक्तेश्वर की पूजा करे। फिर मोद, प्रमोद, दुर्मुख, सुमुख, गणनाथ, पंचविनायकों का पूजन करना चाहिए।

प्रणम्य पूजयित्वादौ, दण्डपाणिं ततोऽर्चयेत्।
कालराजं च पुरतो, विश्वेशस्य जगद्गुरोः ।।१९ ।।

तत्पश्चात् दण्डपाणि भैरव और कालभैरव का दर्शन पूजन करे।

पूजयित्वा ततो गच्छेन्मणिकर्णिं विधानतः।
तत्र स्नात्वा महादेवं, मणिकर्णेशमर्चयेत् ।।२० ।।

कालभैरव से लौट कर पुनः मणिकर्णिका स्नान कर, ज्ञानवापी स्थित व्यासासन से आज्ञा-संकल्प प्रतिज्ञा मंत्र आचार्य से लें।

प्रतिज्ञा मंत्र (अथ शिवरहस्ये)

श्रृणुष्वात्र विधिं सम्यक् पंचक्रोशी प्रदक्षिणे ।
यत् प्रदक्षिणमात्रेण नश्येत्पापकुलं शतम् ।।
उपवासः प्रयत्नेन कार्यो मुंडनपूर्वकम् ।
पंचगव्यं ततो ग्राह्यं स्नात्वा ज्ञानेशसंनिधौ ।
ततोऽन्तर्गृहयात्रापि कर्तव्या विधिपूर्वकम् ।।
मुक्तिमंडपमासाद्य ततः संकल्पमाचरेत् ।
करिष्ये विश्वनाथोऽहम् पंचक्रोशीप्रदक्षिणाम् ।।
आज्ञां देहि महादेव सर्वपापविमुक्तये ।
निष्ठीवनं कृतं काश्यां दत्तौ च चरणौ मया ।।
लिंगेष्वेव सदा शम्भो तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
काश्यां जलचराः केचित् पादाघातेन संहताः ।।
शिवरूप महादेव तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
काश्यां स्थलचराः कीटाः पादाघातेन संहताः ।।

करेण निहताः केचित् तत्पापं शान्तिमेष्यतु ।
प्रसक्तेन कदा सम्यक् अंतर्गेहे प्रदक्षिणम् ।।
मया न कृतमीशान तत्पापं शान्तिमेष्यतु ।
कदाचिदनृता वाणी निःसृता मन्मुखाच्छिव ।।
सर्वपापहरःशम्भो तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
कदाचिन्नकृतं दैवाच्छैववर्यस्य वंदनम् ।
सर्वपापहरः शम्भो तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।।
कदाचिदुदकं पीतं न कृत्वा भस्मधारणम् ।।
प्रमादेन महादेव तत् पापं शांतिमेष्यतु ।
मयापि शिवलिंगस्य निर्णेजनजलं शुभम् ।।
न पीतं पार्वतीनाथ तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
कदाचिद् बिल्वपत्रेण भ्रमादेव हि सर्वथा ।।
लिंगं न चार्चितं शम्भो तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
ज्ञानवापीजले रम्ये भ्रमेणैव कदाचन ।।
स्नानं न कृतमीशान तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
कदाचित् न कृतं शम्भो दण्डपाण्यर्चनं मया ।।
नार्चितो ढुंढिराजोऽपि तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
वीरेश्वरो भ्रमेणैव कदाचित् नार्चितो मया ।।
सर्वार्थदः कृपासिन्धो तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
श्रीमान् पशुपतीशोपि पशुपाशविमोचकः ।।
कदाचित् नार्चितः शम्भो तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
श्रीकालभैरवेशोपि भ्रमेणैव कदाचन ।।
नाराधितो महादेव तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
शिवगंगाजले स्नानं कदाचित् न कृतं मया ।।
आलस्येन विरूपाक्ष ! तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
प्रचण्डविघ्नसंहर्ता वक्रतुण्डेश्वरो मया ।।
कदाचित् नार्चितः शम्भो तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
ओंकारस्य महालिंगं भ्रमेणैव कदाचन ।।
मया नाभ्यर्चितं शम्भो तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
केदारेश्वरमासाद्य अनाराध्यैव संस्थितः ।।
कदाचिदपि विश्वेश तत् पापं शान्तिमेष्यतु ।
एवमुच्चार्य सकलानपराधान्यथाक्रमम् ।।

ततः स्नात्वा ज्ञानवाप्यां पुनः संपूज्य शान्तितः ।
वीरेश्वरादि स्थानेषु गत्वा संपूज्य सादरम् ।।
पुनरभ्यर्चनं कार्यमपि भक्तिपुरःसरम् ।
ततो मौनेन नियमैः कृतांजलिपुटो नरः ।।
दण्डपाणिं प्रणम्यैव गन्तव्यं मुक्तिमण्डपात् ।
दिनाष्टकेन विधिवत् पंचक्रोशीप्रदक्षिणम् ।।
कर्तव्यमपि यत्नेन श्रद्धाभक्तिसमन्वितः ।
मध्ये सर्वेषु तीर्थेषु स्नात्वा संम्यग् यथाविधि ।।
श्राद्धं कार्यं प्रयत्नेन स्वान्नैरपि च शोभने ।
पूजनीयाः प्रयत्नेन पंचक्रोशस्य रक्षकाः ।।
यात्राविघ्नहराः सर्वे वंदनीयाः प्रयत्नतः ।
सहस्नकोटिलिङ्गानि व्याख्यातान्ययुतानि च ।।
पंचक्रोशीमहामार्गे तिष्ठन्ति कमलानने ।
पत्रपुष्पादिनैवेद्यैः श्रद्धया परयायुतः ।।
पूजनीयानि लिङ्गानि यथाशक्ति यथाक्रमम् ।।
भैरवानां गणाः पूज्याः शोभनाङ्गा वरानने ।
संख्याऽनेन न वर्तन्ते दर्शनं चापि दुर्लभम् ।।
निराहारेण कुर्वन्ति देवगंधर्वदानवाः ।
केचिन् मुनीश्वरा दिव्याः पंचक्रोशीप्रदक्षिणाम् ।।
पंचक्रोशस्य यात्रायां तिलमात्रमपि प्रिये ।
नातिक्रमेऽत्ययान्मार्गे गन्तव्यमतियत्नतः ।।
करसंचयऽयुक्तैश्च कृतांजलिपुटैः सदा ।
मौनेनैव हि कर्तव्या पंचक्रोशीप्रदक्षिणा ।।
मामेव सर्वदा ध्यात्वा शिवमद्वयमव्ययम् ।
अकृतश्रवणासक्तेस्तत् कर्तव्यं प्रयत्नतः ।।
रात्रौ जागरणं कार्यं आदिनाष्टकमादरात् ।
भोजनीयाः प्रयत्नेन सेव्या ब्राह्मणपुंगवाः ।।
ततो ममांऽतिकं प्राप्य मामभ्यर्च्य शिवप्रिये ।
यात्रां निवेद्य शुभदां ततःस्वगृहमाविशेत् ।।
प्रतिपक्षं प्रकर्तव्यं पंचक्रोशीप्रदक्षिणम् ।
एवमेवातियत्नेन काशीवासरतैर्जनैः ।।
एवं तु स्थूलमार्गेण पंचक्रोशीप्रदक्षिणा ।
यथाकथंचित् कर्तुं स्याद्देवैरपि न शक्यते ।।

यथाशास्त्रं कृता चेत् स्यान्मोक्षः स्यादेव तत् क्षणात् ।
पंचक्रोशस्य यात्रां वै करिष्ये विधिपूर्वकम् ।।
प्रीत्यर्थं तव देवेश विश्वनाथकृपानिधे ।
इति संकल्प्य मौनेन गन्तव्यं मणिकार्णिकाम् ।।

ज्ञानवापी से कन्दवाँ पहला वास स्थान (३ कोस), मणिकर्णिका से कन्दवाँ तक के देवताओं के नाम, मणिकर्णिका जाकर वहां गंगा में स्नान अथवा मार्जन (आचमन करें), मौन विसर्जन कर, तत्पश्चात् मन्दिरों में दर्शन पूजन करते हुए यात्रारम्भ करें।

मणिकर्णितटे छन्नं, गंगाकेशवमप्युत ।
ललितां च ततः पूज्य, जरासंध्येश्वरं विभुम् ।।

मणिकर्णिका महादेव का दर्शन पूजन कर ललिताघाट के ऊपर ललितादेवी की पूजा करे फिर मीरघाट आवें। यहां पर जरासन्धेश्वर की पूजा करें त्रिपुराभैरवी घाट के ऊपर म.नं. ५/१० में।

१-	मणिकर्णिकायै नमः	गंगा की पूजा करें।
२-	मणिकर्णिकेश्वराय नमः	गोमठ सन्यासाश्रम, म० नं० सी.के. ८/१२ में।
३-	सिद्धिविनायकाय नमः	उसी मार्ग में अमेठी के मन्दिर पर म०नं० सी.के. ६/१ में।
४-	गंगा केशवाय नमः	ललिताघाट के ऊपर, म० नं० सी.के. १/६८ में।
५-	ललिता देव्यै नमः	ललिताघाट के ऊपर मढ़ी में।
६-	जरासंन्धेश्वराय नमः	त्रिपुरा भैरवी घाट के ऊपर, म०नं० डी. ५/१० में।

सोमनाथं ततः पूज्यमदाल्भेश्वरमेव च ।
शूलटंकमहादेवं, वराहं च प्रपूजयेत् ।।

आगे फिर सोमनाथ का दर्शन करें। पुनः अदालभेश्वर का पूजन कर दशाश्वमेध पर शूलटंकेश्वर का दर्शन कर ऊपर राममन्दिर मे वाराहेश्वर का पूजन करें।

७-	सोमेश्वराय नमः	मानमन्दिर घाट पर म०नं० डी. १६/३४ में।
८-	अदाल्भेश्वराय नमः	मानमन्दिर घाट पर म०नं० डी. १६/३२ में।
६-	शूलटंकेश्वराय नमः	दशाश्वमेध घाट पर प्रसिद्ध।
१०-	वाराहेश्वराय नमः	राममन्दिर, म०नं० डी. १७/१११ में।

दशाश्वमेधिकं लिङ्गं बन्दीं तत्रैव पूजयेत् ।
सर्वेश्वरं च केदारं ततो हनुमदीश्वरम् ।।

११- दशाश्वमेधेश्वराय नमः — दशाश्वमेध शीतला मन्दिर में, म०नं० डी. १८/१६ में।

१२- वन्दीदेव्यै नमः — दशाश्वमेध विश्वनाथ पण्डा के घर में, म०नं० डी. १७/१०० में।

१३- सर्वेश्वराय नमः — पाण्डेयघाट पाण्डे जी की बैठक के पीछे, म०नं० डी. २५/३२ में।

१४- केदारेश्वराय नमः — केदारघाट प्रसिद्ध, म०नं० बी. ६/१०२ में।

१५- हनुमदीश्वराय नमः — हनुमान घाट, हनुमान मन्दिर के नीचे, घाट पर मढ़ी में।

दशाश्वमेध पर ही शीतला जी के मंदिर में दशाश्वमेधेश्वर की पूजा कर विश्वनाथ पंडा के घर में वन्दीदेवी का पूजन करे। फिर सर्वेश्वर का दर्शन पूजन करे। फिर केदारेश्वर की पूजा कर हनुमान जी के मन्दिर के नीचे मढ़ी में हनुमदीश्वर का पूजन दर्शन करे।

संगमेशंततः पूज्य, लोलार्कं पूजयेत्ततः ।
अर्कसञ्ज्ञं गणाध्यक्षमसेस्तीरं पुनर्व्रजेत् ।।

फिर भदैनी में लोलार्ककुण्ड में मार्जन कर लोलार्केश्वर का पूजन करें। वहीं से दाहिने गंगा तीर पर अर्क विनायक का पूजन कर, फिर अस्सी भदैनी के बीच सुरसरि के नये मन्दिर के पास संगमेश्वर का पूजन करे। आगे नगवा के पास जो पत्थर लगा है, वहां से रास्ता छोड़कर-

१६- लोलार्काय नमः — भदैनी लोलार्ककुण्ड के ऊपर, उन्ही की पूजा करे, पुरानी मूर्ति गुप्त।

१७- अर्कविनायकाय नमः — गंगातीर पर, म०नं० बी. २/१७ के सामने मन्दिर में।

१८- संगमेश्वराय नमः — सुरसरि के नये मन्दिर के पास, हरिहर आश्रम वा.नं. १/१६६ में।

दुर्गाजी जॉय। दुर्गाजी से लौट कर फिर उसी पत्थर के पास आयें जहां से रास्ता छोड़ा गया था।

क्षेत्रं प्रदक्षिणीकुर्वन्, तिलमात्रं न संत्यजेत् ।
दुर्गाकुण्डे ततः स्नात्वा, यजेद्दुर्गविनायकम् ।।

क्षेत्र की प्रदक्षिणा करता हुआ तिल भर भी भूमि नहीं छोड़े। दुर्गाकुण्ड में स्नान या मार्जन कर दुर्गविनायक का पूजन करें।

१९- दुर्गाकुण्डाय नमः — प्रसिद्ध, स्नान या मार्जन, कुण्ड की पूजा करें कु.नं. बी. २७/१ में।

२०- दुर्गविनायकाय नमः — दुर्गा मन्दिर से पूर्व कोने पर म०नं० बी. २७/१ में।

२१- दुर्गादिव्यै नमः — प्रसिद्ध, प्रथम वास स्थान, म०नं० बी. २७/१ में।

दुर्गां सम्पूज्य विधिवद् वसेत्तत्र सुखाप्तये ।

दुर्गाजी की विधिवत् पूजा करें और पाँच सात दिन वाली यात्रा करने वाले यात्री पहली रात वहीं वास करें। दुर्गा जी को चुनरी, लड्डू, नारियल, माला, गन्ध, अक्षत, नैवेद्य, धूप, कपूर, दीप, दक्षिणा आदि से पूजन कर प्रदक्षिणा करें।

पहिला वास स्थान

ब्राह्मणान् भोजयेत्तत्र मधुपायसलड्डुकैः ।
रात्रौ जागरणं तत्र पुराणश्रवणादिकम् ।।२६ ।।

यहाँ ब्राह्मणों को लड्डू खिलाना चाहिए। रात्री-निवास, जागरण करना चाहिए। प्रातः कुण्ड में स्नान कर दुर्गाजी की पूजा करें। चलते समय यह प्रार्थना मंत्र पढ़े।

जय दुर्गे महादेवी जय काशीनिवासिनि ।
क्षेत्रविघ्नहरे देवि पुनः दर्शनमस्तु ते ।।

जहां से रास्ता छोड़ा गया था, फिर लौट कर वहीं से आगे यात्रा को चलना चाहिये।

पूजयित्वा कर्दमेशं पंचव्रीहितिलैर्नमेत् ।
आदौ कर्दमतीर्थेषु स्नानं कूपावलोकनम् ।।२९ ।।

कर्दमेश्वर महादेव को पंचामृत से स्नान कराकर गंगाजल, चन्दन, यज्ञोपवीत, श्वेतवस्त्र, माला, पुष्प, बेलपत्र, धूप-दीप, कपूर-नैवेद्य, ताम्बूल, पूगीफल, दक्षिणा, सातप्रकार का अनाज जिसे सतनजा कहते हैं, सवासेर एक कांसे की कटोरी, छाया दान के लिए कटोरी में घृतभर कर मुख देखकर वहां ब्राह्मण को दान करें।

२२- विश्वकसेनेश्वराय नमः — हिन्दूविश्वविद्यालय के आगे करमेतापुर गाँव में।

२३- कर्दमतीर्थाय नमः — कदवाँ ग्राम में, सरोवर मार्जन व पूजन करे।

२४- कर्दमेश्वराय नमः — कदवाँ ग्राम में।

२५- कर्दमकूपाय नमः — कदवाँ ग्राम में।

कर्दमकूप में मुख देखें रात्रि वहाँ निवास करें। प्रातः बायें हाथ शौचक्रिया व स्नान कर कर्दमेश्वर पूजन के पश्चात प्रार्थना करें।

कर्दमेश महादेव काशीवासिजनप्रिय ।
त्वत्पूजनान्महादेव पुनः दर्शनमस्तु ते ।।

कर्दमेश्वर से भीमचण्डी दूसरा वास स्थान ५ कोस ।

सोमनाथं विरूपाक्षं नीलकण्ठं ततोऽर्चयेत् ।
तत्र वासं विधायाग्नौ, किञ्चिद्धोमं द्विजार्चनम् ।।

२६- सोमनाथाय नमः
२७- विरूपाक्षाय नमः
२८- नीलकण्ठेश्वराय नमः
२९- नागनाथाय नमः अमरा गाँव में ।
३०- चामुण्डादेव्यै नमः अमरा गाँव में ।
३१- मोक्षेश्वराय नमः अमरा गाँव में ।

नागनाथं च चामुण्डां, मोक्षेशं करुणेश्वरम् ।
वीरभद्रं ततो दुर्गां, विकटाख्यां प्रपूजयेत् ।।
उन्मत्तभैरवं नीलं, कालकूटं ततोऽर्चयेत् ।
दुर्गां च विमलां नत्वा, महादेवं प्रपूजयेत् ।।
नन्दिकेशं भृङ्गिरिटिं, तत्रैव च गणेश्वरम् ।
विरूपाक्षंच यक्षेशं, विमलेश्वरमेव च ।।
मोक्षदं ज्ञानदं चैवामृतेशं तत्रपूजयेत् ।
गान्धर्वसागरं तीर्त्वा, भीमचण्डीं ततो व्रजेत् ।।
तत्र वासं प्रयत्नेन, कुर्याच्चण्डविनायकम् ।
रविरक्ताक्षगन्धर्वं नरकार्णवतारकम् ।।
शिवं प्रपूज्य यत्नेन, रात्रौ पूर्ववदाचरेत् ।
प्रातरुत्थाय सुस्नातः प्रार्थयेद् भीमचण्डिकाम् ।।

३२- करुणेश्वराय नमः देल्हना गाँव में ।
३३- वीरभद्र शिवावताराय नमः देल्हना गाँव में ।
३४- विकटाक्षदुर्गायै नमः देल्हना गाँव में ।
३५- उन्मत्तभैरवाय नमः देउरा गाँव में ।
३६- नीलगणाय नमः देउरा गाँव में ।
३७- कालकूटगणाय नमः देउरा गाँव में ।
३८- विमलादुर्गायै नमः देउरा गाँव में ।
३९- महादेवेश्वराय नमः देउरा गाँव में ।
४०- नन्दिकेशगणाय नमः देउरा गाँव में ।
४१- भृंङ्गिरीटगणाय नमः देउरा गाँव में ।

४२-	गणप्रियाय नमः	गौरा गाँव में।
४३-	विरूपाक्षाय नमः	मातलदई चक में।
४४-	यक्षेश्वराय नमः	मातलदई चक में।
४५-	विमलेश्वराय नमः	प्रयागपुर गाँव में।
४६-	मोक्षदेश्वराय नमः	असवारी गाँव में।
४७-	ज्ञानदेश्वराय नमः	असवारी गाँव में।
४८-	अमृतेश्वराय नमः	असवारी गाँव में।
४६-	गंधर्वसागराय नमः	भीमचण्डी गाँव में।
५०-	भीमचण्डीदेव्यै नमः	भीमचण्डी गाँव में प्रसिद्ध।

तत्रस्नात्वा भीमचण्डीं पयसा स्नापयेत्सुधीः ।
पंचोपचारैः संपूज्य ब्राह्मणान् परितोषयेत् ।।३७ ।।

भीमचण्डी देवी को कच्चा दूध से स्नान करा, लाल वस्त्र, चुनरी, रोली, नारा, माला, धूप, दीप, नैवेद्य, नारियल, कपूर की आरती कर परिक्रमा करे, भोजन ब्राह्मणों को करावे।

५१-	चण्डविनायकाय नमः	भीमचण्डी गाँव में।
५२-	रविरक्ताक्षगन्धर्वाय नमः	जखनी तालुका में।
५३-	नरकार्णवतारकशिवाय नमः	जखनी तालुका में।
५४-	एकपादगणाय नमः	कचनार गाँव में।

ततो गच्छेदेकपादं गणं नत्वाऽथ तण्डुलान् ।
तिलां श्चविकिरेत्तत्र धनधान्यादिसम्पदे ।।१ ।।

फिर एकपाद गण की पंचोपचार पूजा करे। अक्षत और तिल चढ़ावे।

रात्रि-वास करें। प्रातः बायें हाथ शौचक्रिया कर स्नान के बाद भीमचण्डी पूजन के बाद प्रर्थना करें-

भीमचण्डी प्रचण्डानि मम विघ्नानि नाशय ।
नमस्तेऽस्तु गमिष्यामि पुनर्दर्शनमस्तु ते ।।

भीमचण्डी से रामेश्वर तीसरा वास स्थान (७ कोस) रामेश्वर तक के देवताओं का नाम और स्थान।

ततो गच्छेन्महाभीमं भैरवं भैरवीं शुभाम् ।
भूतनाथं च सोमेशं पूजयेत्सिन्धुरोधसि ।।२ ।।
कालनाथं कपर्दीशं कामेशं च गणेश्वरम् ।
वीरभद्रं चारुमुखं गणनाथं प्रपूजयेत् ।।३ ।।

५५-	महाभीमाय नमः	हरिपुर गाँव, हरि का तालाब।
५६-	भैरवाय नमः	हरसोत गाँव में।
५७-	भैरव्यै नमः	हरसोत गाँव में।
५८-	भूतनाथेश्वराय नमः	दीनदासपुर गाँव में।
५९-	सोमनाथेश्वराय नमः	लंगोटिया हनुमान के पहले, पोखरे के पास।
६०-	सिन्धुसरोधनतीर्थाय नमः	सिन्धुसागर वाला पोखरा।
६१-	कालनाथेश्वराय नमः	जनसा गाँव में।
६२-	कपर्दीश्वराय नमः	जनसा गाँव में।
६३-	कामेश्वराय नमः	चौखण्डी गाँव में।
६४-	गणेश्वराय नमः	चौखण्डी गाँव में।
६५-	वीरभद्रगणाय नमः	चौखण्डी गाँव में।
६६-	चारुमुखगणाय नमः	चौखण्डी गाँव में।
६७-	गणनाथेश्वराय नमः	भटौली गाँव में।

ततो गच्छेद्देहलीशं विघ्नपूगनिवारणम्।
मोदकैः पृथुकैर्लाजैः सक्तुभिश्चेक्षुपर्वभिः ।।४ ।।
पूजयेच्छ्रद्धया देवं तं देहलिविनायकम्।
तत्पार्श्वे षोडशपुनर्विघ्ननाथान् प्रपूजयेत् ।।५ ।।
उद्दण्डगणपं पूज्यमुत्कलेश्वरमेव च।
रुद्राण्यास्तु तपोभूमिः दृष्ट्वा रामेश्वरं व्रजेत् ।।६ ।।
वरणायां ततः स्नात्वा तर्पणादि विधाय च।
रामेश्वरं श्वेततिलैर्बिल्वपत्रादिभिर्यजेत् ।।७ ।।

६८-	देहलीविनायकाय नमः	(प्रसिद्ध) पंचोपचार पूजन करें। लड्डू, लावा, ऊख, सत्तू इनकी प्रधान पूजा है और चिउड़ा भी चढ़ावें।
६९-	षोडशविनायकाय नमः	देहली विनायक के पीछे दीवाल में।
७०-	उदण्डविनायकाय नमः	भुईली गाँव में।
७१-	उत्कलेश्वराय नमः	हीरमपुर गाँव में।
७२-	रुद्राणीदेव्यै नमः	आगे मार्ग में।
७३-	तपोभूम्यै नमः	यह रुद्राणी की तपोभूमि है।
७४-	वरुणातीर्थाय नमः	करौना गाँव में।
७५-	रामेश्वराय नमः	प्रसिद्ध करौना गाँव में।

वरणानदी में स्नान पितृतर्पण करें। रामेश्वर को पंचामृतस्नान कराकर गंगाजल से शुद्धोदक स्नान करावें। चंदन, श्वेतिल, माला, पुष्प, बेलपत्र, वस्त्र, यज्ञोपवीत, धूप, दीप, नैवेद्य,

पान, सुपाड़ी, दक्षिणा, कपूर की आरती करे। आगे इस प्रकार दर्शन करे।

सोमनाथं च तत्रैव पूजयेदिन्द्रदिग्गतम् ।
भरतेशं लक्ष्मणेशं शत्रुघ्नेश्वरमेव च ।।८ ।।
द्यावाभूमीश्वरं तत्र पूजयेन्नहुषेश्वरम् ।
तत्र वासं प्रकल्प्याथ तत्र जागरणादिकम् ।।६ ।।

७६-	सोमेश्वराय नमः	प्रसिद्ध करौना गाँव में।
७७-	भरतेश्वराय नमः	प्रसिद्ध करौना गाँव में।
७८-	लक्ष्मणेश्वराय नमः	प्रसिद्ध करौना गाँव में।
७६-	शत्रुघ्नेश्वराय नमः	प्रसिद्ध करौना गाँव में।
८०-	द्यावाभूमीश्वराय नमः	प्रसिद्ध करौना गाँव में।
८१-	नहुषेश्वराय नमः	प्रसिद्ध करौना गाँव में।

द्यावाभूमीश्वर और नहुषेश्वर की पूजाकर वहीं वास करे और रात्रि जागरण करे, कथाश्रवण करे। प्रातःकाल उठकर शौचक्रिया से निवृत्त हो स्नानादि करके रामेश्वर की पूजाकर प्रार्थना करे।

श्रीरामेश्वर रामेण पूजितस्त्वं तपोधन ।
आज्ञां देहि महादेव पुनर्दर्शनमस्तु ते ।।१२ ।।

रामेश्वर से शिवपुर की ६ दिन की यात्रा करने वाले यहां ठहरते हैं। यह रामेश्वर से ४ कोस है, रामेश्वर से कपिलधारा तक के देवताओं के नामस्थान यहां दिये जाते हैं। पाँचदिन की यात्रा करने वाले सीधे कपिलधारा चले जाते है। रामेश्वर से कपिलधारा ७ कोस पड़ता है।

पूजयित्वा ततो गच्छेद्देवसंघनिषेवितम् ।
देवसंघेश्वरं किंचिद्दत्वा स्थित्वा ततो व्रजेत् ।।१३ ।।

८२-	असंख्याततीर्थेभ्यो नमः	वरणा तीर में, भुलनी वारी।
८३-	असंख्यातलिंगेभ्यो नमः	वरणा तीर में, भुलनी वारी।
८४-	देवसंघेश्वराय नमः	करोमा गाँव में। देवसंघेश्वर की विधिवत् पंचोपचार पूजा कर यहां थोड़ा विश्राम करना चाहिए और यथाशक्ति सुवर्ण का संकल्प कर ब्राह्मण को दान करना चाहिए।
८४/१	पंचपाण्डवेश्वराय नमः	शिवपुर बाजार में।
८४/२	द्रौपदीकूपाय नमः	शिवपुर बाजार में।

द्रौपदीकुण्ड में स्नान कर पांचों पाण्डव का पूजन कर द्रौपदीजी का पूजन कर कुण्ड का जलभर लोटे में डोरी के साथ वहीं ब्राह्मण को दान करना चाहिए। रात्रि विश्राम कर प्रातः स्नान दर्शन पूजन कर आगे चलना।

लिङ्गानि सुबहून्यादौ वरणापारगारण्यथ ।
पाशपााणिगणेशं च क्षेत्रमध्ये व्यवस्थितम् ।।१४ ।।
पूजयित्वा बहिश्चैव पृथ्वीश्वरमथो व्रजेत् ।
एकोश्वमेधः पृथुना कृतः क्षेत्राद्वहिः पुरा ।।१५ ।।
स्वर्गभूमिस्तु सो ज्ञेया मोक्षभूमिस्तु मध्यतः ।
काश्याश्चतुर्दिशं देवि योजनं स्वर्गभूमिका ।।१६ ।।
मृतास्तत्र हि गच्छन्ति स्वर्गं सुकृतिनां पदम् ।
ततःसुयूपं हि सरःस्पृष्ट्वा गच्छेच्छनैःशनैः ।।१७ ।।
महाक्षेत्रं कापिलं तु यत्र श्रीवृषभध्वजः ।
तत्र स्नात्वाविधानेन तर्पयित्वा पितृनथ ।।१८ ।।
श्राद्धं विधाय तच्छ्राद्धे पूजयेद् वृषभध्वजम् ।
निवसेत्ततु दिवसं श्रवणादि प्रकल्पयेत् ।।१६ ।।

८५-	पाशपाणि विनायकाय नमः	सदर बाजार, लाइन के पास ।
८६-	पृथ्वीश्वराय नमः	खजुरी गाँव, पिसनहरिया कूप ।
८७-	स्वर्गभूम्यै नमः	सारंग तालाब, यहां ठाकुर जी का पंचम निवास ।
८८-	यूपसरोवरतीर्थाय नमः	सोनातालाब, दीनदयालपुर ।
८६-	वृषभध्वजतीर्थाय नमः	कपिलधारा प्रसिद्ध ।
६०-	वृषभध्वजेश्वराय नमः	कपिलधारा गाँव ।

कपिलाह्नदतीर्थेऽस्मिन्स्नात्वा संयतमानसः ।
वृषध्वजमिमं दृष्टवा सर्वयज्ञ फलं लभेत् ।।
(का० ख० पृ० १७३)

जो संयमी मनुष्य कपिलधारातीर्थ में स्नान कर वृषभध्वजेश्वर का दर्शन करते हैं, उन्हे सभी यज्ञों का फल मिलता है ।

कपिलधारा तीर्थ में स्नान कर वृषभध्वजेश्वर को पंचामृत से स्नान कराकर गंगाजल से शुद्धोदक स्नान कराकर चंदन, माला, बिल्वपत्र, अक्षत्, पुष्प, यज्ञोपवीत, वस्त्र, धूप, दीप, नैवेद्य, फल, पान, सुपारी, दक्षिणा कपूर की आरती के पश्चात् तीर्थश्राद्ध गोदान यथाशक्ति ब्राह्मण भोजन करना चाहिए । क्योकि यह शिव गया हैं ।

यहां रात्रि विश्राम कर प्रातः नित्यक्रिया से निवृत्त हो वृषभध्वजेश्वर पूजन के पश्चात यह प्रार्थना करें ।

वृषभध्वजदेवेश पितृणां मुक्तिदायक ।
आज्ञां देहि महादेव पुनर्दर्शनमस्तु ते ।।

शिवपुर से कपिलधारा यह पंचम विश्रामस्थान (३ कोस) है । कपिलधारा से मणिकर्णिका तक के देवताओं के नाम -

ततः प्रदक्षिणीकृत्य गच्छेज्ज्वालानृसिहकम् ।
एवं प्रदक्षिणीकृत्यागच्छेज्ज्वालानृसिंहकम् ।।५८ ।।
वरणां च ततस्तीर्त्वा स्नात्वा वै संगमेश्वरम् ।
आदिकेशवमभ्यर्च्य संगमेश्वरमेव च ।।२ ।।
विनायकं खर्वसंज्ञं पूजयित्वा ततो व्रजेत् ।
क्रोड़ीकृत्य यवान् शुद्धान् विकिरन् विष्णुमुच्चरन् ।।३ ।।
प्रह्लादेश्वरमभ्यर्च्य त्रिलोचनमतः परम् ।
बिन्दुमाधवमभ्यर्च्य हृदेपांचनदे शुभे ।।४ ।।

६१- ज्वालानृसिंहाय नमः कोटवा गाँव ।
६२- वरणासंगमाय नमः वरणा संगम प्रसिद्ध ।
६३- आदिकेशवाय नमः प्रसिद्ध वहिं, म०नं० ए. ३७/५१ में ।
६४- संगमेश्वराय नमः इसी मंदिर के नीचे, म०नं० ए. ३७/५१ में ।
६५- खर्वविनायकाय नमः बाहर सड़क के किनारे यहाँ से जौ छींटते चलने की विधि है ।
६६- प्रह्लादेश्वराय नमः प्रह्लादघाट म०नं० ए. १०/८० में ।
६७- त्रिलोचनेश्वराय नमः त्रिलोचनघाट म०नं० ए. २/८० में ।
६८- पंचगंगायै नमः पंचगंगाघाट, गंगा की पूजा करे ।
६९- बिन्दु माधवाय नमः पंचगंगा के ऊपर, म०नं० के. २२/३७ में ।

गभस्तीशं मंगलां च गौरीं दृष्ट्वा ततो व्रजेत् ।
वशिष्ठवामदेवौ च पर्वतेश्वरमेव च ।।५ ।।
महेश्वरं समभ्र्यच्य ततः सिद्धिविनायकम् ।
सप्तावरणगान् दिव्यान् पूजयेग्दणनायकान् ।।६ ।।
मणिकर्ण्यन्तिके स्नात्वा गच्छेद्विश्वेश्वरं प्रति ।
नमस्कृत्य महेशानं प्रविशेद्देवसन्निधौ ।।७ ।।
पंचोपचारैः सम्पूज्य स्तुत्वा नत्वा पुनः पुनः ।
मुक्तिमण्डपमागत्य कृतार्थस्तत्र संविशेत् ।।८ ।।
विष्णुं च दण्डपाणिं च ढुण्ढिं भैरवमेव च ।
आदित्यगणपांश्चैव पूजयेत्पुनरेव च ।।९ ।।
प्रदक्षिणी कृतान् देवान् स्मरेत् तत्र क्रमात्सुधीः ।

१००-	गभस्तीश्वराय नमः	पंचगंगा मंगलागौरी में, म०नं० के. २४/३४ में।
१०१-	मंगलागौर्यै नमः	पंचगंगा प्रसिद्ध म०नं० के. २४/३४ में।
१०२-	वशिष्ठेश्वराय नमः	संकठाघाट पर, म०नं० के. ७/१६१ में
१०३-	वामदेवेश्वराय नमः	उसी मंदिर में गड़हे में, म०नं० के. ७/१६१ में
१०४-	पर्वतेश्वराय नमः	सिंधियाघाट के ऊपर म०नं० के. ७/१५६ में।
१०५-	महेश्वराय नमः	मणिकर्णिका, गंगातीर की मढ़ी में।
१०६-	सिद्धविनायकाय नमः	कुण्ड के बगल से ऊपर मार्ग पर म० नं० सी.के. ८/१ में।
१०७-	सप्तावरण विनायकाय नमः	जौविनायक प्रसिद्ध, यहाँ ५६ गणेश के नाम से जौ छोड़ने के पश्चात यहां स्नान करे पुनः।
१०८-	मणिकर्णिकाय नमः	म०नं० सी.के. ३३/३६ में।
१०९-	श्रीविश्वेश्वराय नमः	पंचामृत से स्नान, फिर पंचोपचार पूजा करे। म०नं० सी.के. ३५/१९ में।
११०-	श्री अन्नपूर्णायै नमः	प्रसिद्ध, म०नं० डी. ८/१ में।
१११-	श्री ढुंढीराजाय नमः	वहीं, मंदिर के मार्ग पर, प्रसिद्ध।
११२-	श्री दण्डपाणये नमः	ज्ञानवापी के पीछे, बाजार म०नं० सी.के. ३६/१० में।
११३-	श्री विष्णवे नमः	विश्वनाथमंदिर, दण्डपाणी के घेरे में। म०नं० सी.के. ३५/१९ में।
११४-	श्री मोदविनायकाय नमः	काशीकरवट, म०नं० सी.के. ३१/१२, नैपाली खपड़ा।
११५-	श्रीप्रमोदविनायकाय नमः	वहीं बगल में म०नं० सी.के. ३१/१६ में।
११६-	श्रीसुमुखविनायकाय नमः	थोड़ा आगे, पतली गली म०नं० सी.के. ३५/७ में।
११७-	श्री दुर्मुखविनायकाय नमः	वहीं मार्ग पर, घर में म०नं० सी.के. ३४/६० में।
११८-	श्रीगणनाथविनायकाय नमः	ज्ञानवापी के पीछे, बाजार म०नं० सी.के. ३७/१ में।
११९-	ज्ञानवाप्यै नमः	प्रसिद्ध।
१२०-	नन्दिकेश्वराय नमः	ज्ञानवापी से पूरब बड़ानन्दि मूर्ति लुप्त है।

१२१-	ताड़केश्वराय नमः	नन्दिकेश्वर से पूरब, गौरी शंकर के मढ़ी में।
१२२-	महाकालेश्वराय नमः	नन्दि के दक्षिण पूरब कोणपर, पीपल के नीचे।
१२३-	महेश्वराय नमः	ज्ञानवापी से पश्चिम, दक्षिण कोणपर पीपलतले मढ़ी में।
१२४-	मोक्षेश्वराय नमः	मस्जिद के पीछे, स्थान की पूजा, मुगल आक्रमण में नष्ट।
१२५-	वीरभद्रेश्वराय नमः	मस्जिद से पश्ख्मि उत्तर कोने में, लुप्त स्थान की पूजा करें।
१२६-	अविमुक्तेश्वराय नमः	मस्जिद के उत्तर, फाटक पर, गुप्तस्थान पूजा, मूर्ति धर्मशाल में, म०नं० सी.के. ३०/१ में।
१२७-	गंगेश्वराय नमः	मस्जिद से पूरब, पीपलतले गुप्त।
१२८-	कालभैरवाय नमः	कालभैरव मोहाल, प्रसिद्ध, म०नं० के. ३२/२२ में।

पंचक्रोशी यात्रा से लौटकर क्रमानुसार दर्शन-पूजन कर मुक्तिमण्डपस्थित व्यासासन के सन्मुख बैठकर आचार्य द्वारा प्रदक्षिणा के समस्त देवताओं के नाम से अक्षत छोड़े, जो भूल-चूक से छूट गये हैं। वे सभी आवाहन में आ जाय। पुनः प्रार्थना आचार्य द्वारा सुने या खुद बोलें।

जय विश्वेश्वर विश्वात्मन् काशीनाथ जगद्गुरो।
त्वत्प्रसादात् महादेव कृता क्षेत्रप्रदक्षिणा।
अनेकजन्मपापानि कृतानि मम शङ्कर।
गतानि पञ्चक्रोशात्मन्सर्वलिङ्गप्रदक्षिणात् ॥
त्वद्भक्तिः काशिवासश्च राहित्यं पापकर्मणाम्।
सत्सङ्गश्रवणाद्यैश्च कालो गच्छतु नः सदा ॥
हर शम्भो महादेव सर्वज्ञ सुखदायक।
प्रायश्चित्तं सुनिर्वृत्तं पापानां त्वत्प्रसादतः ॥
पुनः पापरतिर्मास्तु धर्मबुद्धिः सदाऽऽस्तु मे।
पञ्चक्रोशस्य यात्रेयं यथाबुध्या मया कृता ॥
न्यूनं सम्पूर्णतां यातु त्वत्प्रसादादुमापते।

तत्-पश्चात् संकल्प पूर्ण कर आचार्य को विविध वस्तुओं का यथाशक्ति दान करें। पुनः आशिर्वाद ले, फिर अपने अपने घर जाये।

इति नत्वा यथा शक्त्या दत्वा दानं द्विजन्मनाम् ।।७२ ।।

मार्गकृतदोषों को दूर करने के लिए अपने घर जाकर यथा हवन, ब्राह्मण भोजन करा कर सकुटुम्ब आप भोजन करें । इस क्रम से पंचक्रोशात्मक ज्योतिर्लिंग भूमि की त्रैलोक्यपावनी प्रदक्षिणा करने वाला निष्पाप हुआ, पुण्यवान हुआ और कृतार्थ होकर लक्षचौरासी योनि से छूट कर शिव सायुज्य मोक्ष प्राप्त होने का अधिकारी हुआ ।

काश्यां केदारभूमौ तु न तथा देहयातना ।
अनायासेन देहत्यागमात्रेण च तारकम् ।।
उपदिश्य महादेवः करोति स्वात्मवत्क्षणात् ।
श्रीकालभैरवाद्यास्तुकाशीस्था देवतागणाः ।।
केदारान्तग्रृहेऽस्माकं नैवाज्ञा संप्रवर्तते ।
शिवप्रसादो बलवान् केन शक्यो निवारितुम् ।।

जैसे विश्वेश्वरखण्ड में पातकी के मरने पर भैरवीयातना होती है वैसी केदारखण्ड में भैरवीयातना नहीं होती । जिस किसी तरह से केदारखण्ड में शरीर त्याग हो जाने पर तारकमंत्र का उपदेश प्राप्त हो जाता है, भगवान शंकर अपने समान बना देते है । भैरवादि समस्त देवतागण कह रहे है कि, हमलोगों का आदेश केदारखण्ड में मरने वालों के ऊपर नहीं चलता, इसमें भगवान शिव की कृपा ही मुख्य है, इसको कोई टाल नहीं सकता ।

केदारखण्ड काशी केदार माहात्म्य अंतर्गृहयात्रा

पुरा केदारनाथस्य क्षेत्रमन्तर्गृहस्थितम् ।
पूर्वस्यां दिशि गंगार्धभागं तीर्थ समन्वितम् ।।
अर्धक्रोशं चाग्निदिशि लोलार्के शांतदक्षिणम् ।
सर्वपाप प्रशमनं शंखोद्धारान्त नैर्ऋतम् ।।
पश्चिमे वैद्यनाथांतं रमातीर्थन्तु वायुदिक् ।
उत्तरे शूलटङ्कान्तमीशान्यां क्रोशमर्धकम् ।।
एतन्मध्ये शुभं लिङ्गं सर्वपापविनाशकम् ।
श्रीबिश्वनाथकेदारे काश्यांकेदारनामतः ।।
सद्यस्तारयते लोकान् भैरवीं यातनां विना ।

(ब्रह्म वैवर्तपुराणे, अ० ३, ३।६१-६३)

केदारखण्ड केदारनाथ के अन्तर्गृह के भीतर स्थित हैं। पूर्व की ओर आधी गंगातक, अग्निकोण में आधकोस तक, दक्षिण में लोलार्क नैऋत्य कोण में शंखोद्धार तक, पश्चिम में वैद्यनाथ तक और वायव्य कोण में लक्ष्मीकुण्ड तक, उत्तर में शूलटंकेश्वर तक, ईशान में आधे कोस तक।

केदारेशं महालिङ्गं देह केदारनाशनम्।
केदाराणित्तपुत्राद्याभवन्ति ध्यान्तभूमयः॥

(ब्रह्म वैवर्तपुराणे, त्रिस्थलीसेतु, पृष्ठ १६२)

आदि मणिकर्णिका स्नान कर केदारघाट पर केदारेश्वर पूजन करे। पश्चात् यात्रा प्रारम्भ करे।

नोट– मंदिर से गौरीकुण्डवाले फाटक से निकलने में बाँयी तरफ जो कोठरी में बड़ा लिंग है वह शितिकण्ठेश्वर का है छोटा वाला लिंग श्रीकण्ठेश्वर का है। इनकी आद्यकथा को देखने से यह ज्ञात होता है।

१–	आदि मणिकर्णिकाय नमः	केदारघाट, गंगा की पूजा।
२–	केदारेश्वराय नमः	केदारघाट प्रसिद्ध, म०नं० बी. ६/१०२ में।
३–	गणपतये नमः	केदारघाट मंदिर में, म०नं० बी. ६/१०२ में।
४–	दण्डपाणये नमः	केदारघाट मंदिर में, म०नं० बी. ६/१०२ में।
५–	भैरवाय नमः	केदारघाट मंदिर में, म०नं० बी. ६/१०२ में।
६–	स्कन्दाय नमः (कार्तिकेय)	केदारघाट मंदिर में, म०नं० बी. ६/१०२ में।
७–	अन्नपूर्णायै नमः	केदारघाट मंदिर में, म०नं० बी. ६/१०२ में।
८–	पार्वत्यै नमः	केदारघाट मंदिर में, म०नं० बी. ६/१०२ में।
९–	दक्षिणामूर्तये नमः	केदारघाट मंदिर में, म०नं० बी. ६/१०२ में।
१०–	चण्डगणाय नमः	केदारघाट मंदिर में, म०नं० बी. ६/१०२ में।
११–	इन्द्रद्युम्नेश्वराय नमः	कूचविहार, काली बाड़ी के पीछे, म०नं० बी. १३/९८ में।
१२–	कालंजरेश्वराय नमः	केदारेश्वर के उत्तर क्षेमेश्वरघाट, कुमारस्वामी मठ म०नं० बी. १४/१० में। सीढ़ी के नीचे चुन दिया है।
१३–	नन्दिकेश्वराय नमः	केदारेश्वर में नन्दि, म०नं० बी. ६/१०२ में।
१४–	दधिचीश्वराय नमः	केदारघाट, करपात्रीजी के आश्रम के नीचे बड़ा लिंग।
१५–	गौरीकुण्डाय नमः	केदारघाट पर, मंदिर के नीचे।
१६–	हरंपापतीर्थाय नमः	केदारघाट पर, मंदिर के नीचे।

१८- हरंपापेश्वराय नमः	(निष्पापेश्वर भी) नीचे मढ़ी में, घाटपर।
१९- किरातेश्वराय नमः	केदारजी से आगे, लालीघाट पर, जयन्तेश्वर के पास।
२०- लम्बोदरविनायकाय नमः	लालीघाट पर, दूसरे चिन्तामणि वि. को भी क. म०नं० बी. ७/२०८ में।
२१- शत्रुघ्नेश्वराय नमः	हनुमानघाट, लल्लूधर्मशाला के पास, म०नं० बी. ४/४४ में।
२२- भरतेश्वराय नमः	हनुमानघाट बोधायन, सुब्रमण्यमशास्त्री का घर, म०नं० बी. ४/६ में।
२३- लक्ष्मणेश्वराय नमः	हनुमानघाट, आनन्यानन्द शास्त्री का घर, म०नं० बी. ४/४७ में।
२४- रामेश्वराय नमः	हनुमानघाट, हनुमान जी के मंदिर में, म०नं० बी. ४/४२ में।
२५- सीतेश्वराय नमः	हनुमानघाट दक्षिण कोठारी में, म०नं० बी. ४/४२ में। दूसरे रामकुण्ड में।
२६- हनुमदीश्वराय नमः	हनुमानघाट नीचे, म०नं० बी. ४/४२ में।
२७- रुरुभैरवाय नमः	हनुमानघाट पर किनारे, म०नं० बी. ४/१६ में।
२८- स्वप्नेश्वराय नमः	बादशाहगंज, शिवाला के पास, हनुमान जी, म०नं० बी. ३/१५० में।
२९- स्वप्नेश्वरीदेव्यै नमः	वहीं, हनुमानजी में, म०नं० बी. ३/१५० में ही।
३०- अक्रूरेश्वराय नमः	अक्रूरघाट, भदैनी, आनन्दमयी के पीछें, घाट के ऊपर।
३१- चामुण्डादेव्यै नमः	लोलार्ककुण्ड के पास, म०नं० बी. २/१८ के सामने।
३२- चर्ममुण्डायै नमः	लोलार्ककुण्ड से पश्चिम, मुन्नर पण्डा का मकान, म०नं० बी. २/६२ में।
३३- महारण्डायै नमः	लोलार्ककुण्ड से पश्चिम, उसी मकान में, म०नं० बी. २/६२ में।
३४- कर्दमेश्वराय नमः	महिषासुरमर्दिनी के बगल में, म०नं० बी. २/१७ के सामने।
३५- अर्कविनायकाय नमः	महिषासुरमर्दिनी घाट के ऊपर, म०नं० बी. २/१७ के सामने।
३६- पराशरेश्वराय नमः	लोलार्ककुण्ड के पास, म०नं० बी. २/२१ में।

३७- उद्दालकेश्वराय नमः	लोलार्ककुण्ड के समीप, म०नं० बी. २/२० में।
३८- अमरेश्वराय नमः	लोलार्ककुण्ड वहीं, सीढ़ी पर, म०नं० बी. २/२० में।
३९- कुण्डोदरेश्वराय नमः	अस्सीघाट पर, गुप्त, देसरे लोलार्ककुण्ड के ऊपर छोटी मूर्ति, भदैनी पर, प्रसिद्ध लोलार्ककुण्ड।
४०- लोलार्कतीर्थाय नमः	भदैनी पर, प्रसिद्ध लोलार्ककुण्ड।
४१- लोलार्काय नमः	भदैनी पर, प्रसिद्ध लोलार्ककुण्ड, प्राचीन मूर्ति लुप्त, दूसरी कुण्ड पर।
४२- शुष्केश्वराय नमः	अस्सीघाट पर म०नं० १/१८५ काशी आश्रम के अन्दर पूजा, पुरानी मूर्ति लुप्त।
४३- जनकेश्वराय नमः	तुलसी घाट पर लुप्त, ऊपर पूजा करें।
४४- असीसंगमतीर्थाय नमः	अस्सी घाट, गंगा की पूजा करें।
४५- असीसंगमेश्वराय नमः	प्राचीन म०नं० १/७५, दूसरे हरिहर आश्रम के दरवाजेपर, म०नं० १/१६९ में।
४६- सिद्धेश्वराय नमः	गोयनका कालेज, कुरुक्षेत्र मार्ग पर, म०नं० २/२८२ में।
४७- सिद्धेश्वरीदेव्यै नमः	लुप्त सिद्धेश्वर में, पार्वती की पूजा करें। म०नं० २/२८२ में ही।
४८- स्थाणुलिंगेश्वराय नमः	म०नं० २/२४७ दूसरे तालाब के ऊपर।
४९- कुरुक्षेत्रतीर्थाय नमः	कुरुक्षेत्र का तालाब नं० बी. २/२८३ में।
५०- दुर्गाकुण्डाय नमः	दुर्गाकुण्ड प्रसिद्ध, म०नं० बी. २७/१ में।
५१- दुर्गविनायकाय नमः	दुर्गाकुण्ड के कोने पर म०नं० २७/१ में।
५२- दुर्गादेव्यै नमः	प्रसिद्ध, म०नं० बी. २७/२ में।
५३- कालरात्रिदेव्यै नमः	दुर्गाजी के मन्दिर में, दुर्गाकुण्ड म०नं० बी. २७/२ में।
५४- चण्डभैरवाय नमः	भद्रकाली में, म०नं० बी. २७/२ में।
५५- द्वारेश्वराय नमः	दुर्गाकुण्ड, दुर्गविनायक के दक्षिण मन्दिर में, म०नं० बी. २७/१ में।
५६- शूर्पकर्णेश्वराय नमः	दुर्गा मन्दिर के फाटक पर बलि स्थान के पास, म०नं० बी. २७/१ में।
५७- कुक्कुटेश्वराय नमः	दुर्गाजी के दक्षिण फाटक पर, म०नं० बी. २७/२ में।

५८- जागलीश्वराय नमः	दुर्गा मंदिर में लुप्त, दूसरे मुकटेश्वर में, तिलभाण्डेश्वर पार्क, म०नं० बी. १७/६६ में।
५९- तिलपर्णेश्वराय नमः	दुर्गा मंदिर बलिदानस्थान से दक्षिण, म०नं० बी. २७/२ में।
६०- मुकटेश्वराय नमः	तिलभाण्डेश्वर पार्क के बगल में, म०नं० बी. १७/१६ में।
६१- वराटिकादेव्यै नमः	दुर्गाजी से पश्चिम, पंचकौड़ी देवी के नाम से प्रसिद्ध, म०नं० बी. २७/२० में।
६२- शंखोद्धारतीर्थाय नमः	शंकुधारा का तालाब, खोजवां के पीछें, म०नं० बी. २२/१६४ में।
६३- द्वारकानाथाय नमः	शंकुधारा तालाब के ऊपर, म०नं० बी. २२/१६५ में।
६४- द्वारिकेश्वराय नमः	शंकुधारा मन्दिर, खोजवां के पीछे, म०नं० बी. २२/१६५ में।
६५- शंकुकर्णेश्वराय नमः	शंकुधारा, म०नं० बी. २२/१६६ के सामने।
६६- वैद्यनाथेश्वराय नमः	वैजनत्था, कमच्छा के पास, म०नं० बी. ३७/१ में।
६७- कहलेश्वराय नमः	कामाक्षा मन्दिर के उत्तर।
६८- कामाक्षादेव्यै नमः	कामाक्षामंदिर प्रसिद्ध, म०नं० बी. २१/१२३ में।
६९- क्रोधनभैरवाय नमः	कामाक्षामंदिर बटुकभैरव में, आदि भैरव, म०नं० बी. १२/१२६, दूसरे कामाक्षा में म०नं० बी. २१/१२३ में।
७०- बटुकभैरवाय नमः	प्रसिद्ध कमच्छा पर, म०नं० बी. २१/१२६ में।
७१- धुश्रृणीश्वराय नमः	कामाक्षादेवी के पीछे, दालान में, म०नं० बी. २१/१२३ में।
७२- ब्रह्मपदपदेश्वराय नमः	बटुकभैरव के बाहर, उत्तर तरफ।
७३- लवेश्वराय नमः	लक्सा कौड़िया अस्पताल के घेरे में, फाटक के दाहिने, म०नं० डी. ४५/५ में।
७४- कुशेश्वराय नमः	लक्सा कौड़िया अस्पताल के सामने गली में, म०नं० डी. ५३/४८ में।
७५- रामकुण्डाय नमः	कौड़िया अस्पताल के पीछे, रामकुण्ड का पोखरा।
७६- रामेश्वराय नमः	रामकुण्ड, म०नं० डी. ५४/४५ में।
७७- लक्ष्मीकुण्डाय नमः	लक्सा, लक्ष्मी जी का पोखरा (कुण्ड)।

७८- करवीरेश्वराय नमः	लक्ष्मीजी के मंदिर के बाहर मार्ग पर दाहिने, म०नं० डी. ५२/४१ में।
७९- महालक्ष्मीश्वराय नमः	लक्ष्मीकुण्ड, गोपालचंदशाह बंगाली, म०नं० डी. ५२/५४ में सोरहिया।
८०- कुणिताक्ष विनायकाय नमः	पुरानी महालक्ष्मी के मंदिर, म०नं० डी. ५२/३८ में।
८१- महालक्ष्मीदेव्यै नमः	लक्सा प्रसिद्ध कुण्ड के ऊपर, म०नं० डी. ५२/४० में।
८२- महाकालीदेव्यै नमः	लक्सा कुण्ड से पूरब, म०नं० डी. ५२/४० में, कालीमठ प्रसिद्ध।
८३- महासरस्वतीदेव्यै नमः	लक्ष्मी मंदिर में।
८४- शिखिचण्डीदेव्यै नमः	लक्ष्मी मंदिर में फाटक घुसते ही दाहिनी ओर, म०नं० डी. ५२/४० में।
८५- उग्रेश्वराय नमः	लक्ष्मी मंदिर की परिक्रमा में, म०नं० डी. ५२/४० में।
८६- रुद्रसरोवरतीर्थाय नमः	दशाश्वमेध गंगा की पूजा, सरोवर लुप्त।
८७- शूलटंकेश्वराय नमः	दशाश्वमेध घाट पर बड़ा लिंग।
८८- दशाश्वमेधतीर्थाय नमः	दशाश्वमेध घाट गंगा में पूजा करें।
८९- दशाश्वमेधेश्वराय नमः	दशाश्वमेध घाट शीतला मन्दिर, म०नं० डी. १८/१९ में।
९०- बन्दीदेव्यै नमः	दशाश्वमेध घाट के ऊपर फाटक के म०नं० डी. १७/१०० में।
९१- गोव्याघ्रेश्वराय नमः	दशाश्वमेध घाट शीतला मन्दिर सीढ़ी से दाहिने ओर मढ़ी में म०नं० १८/१९ में।
९२- मान्धातेश्वराय नमः	दशाश्वमेध घाट शीतला मन्दिर से पूर्व उत्तर, दूसरे लाहौरीटोला फूटे गणेश म०नं० सी.के. ३४/१४ में।
९३- चतुःषष्टिदेव्यै नमः	चौसट्टी घाट के ऊपर, म०नं० डी. २२/१७ में।
९४- वक्रतुण्डविनायकाय नमः	राणामहल घाट (सरस्वती विनायक ही) म०नं० डी. २१/२२ में।
९५- पातालेश्वराय नमः	बंगालीटोला म०नं० डी. ३२/११८ के बाहर गली में।
९६- सिद्धीश्वराय नमः	बंगालीटोला, पातालेश्वर के बगल में म०नं० डी. ३२/११८ के बाहर।
९७- हरिश्चन्द्रेश्वराय नमः	बंगालीटोला, पातालेश्वर के बगल में म०नं० डी. ३२/११८ के बाहर तीनों ही।

९८-	नैर्ऋतेश्वराय नमः	बंगालीटोला, पुष्पदन्तेश्वर से पश्चिम, म०नं० डी. ३२/१०७ में बड़ा लिंग।
९९-	अंगिरसेश्वराय नमः	जंगमबाड़ी, तेलियाना, म०नं० डी. ३७/७७ के बाहर कोने में।
१००-	पुष्पदन्तेश्वराय नमः	बंगालीटोला, पातालेश्वर, के समीप म०नं० डी. ३२/१०२ में।
१०१-	एकदन्तविनायकाय नमः	बंगालीटोला, पुष्पदन्तेश्वर में छोटी मूर्ति म०नं० डी. ३२/१०२ में।
१०२-	गरुड़ाय नमः	जंगमबाड़ी, तेलियाना, म०नं० डी. ३२/४३ में।
१०३-	गरुड़ेश्वराय नमः	जंगमबाड़ी, तेलियाना, म०नं० डी. ३२/४३ में।
१०४-	सर्वेश्वराय नमः	पाण्डेयघाट, पाण्डेयजी की बैठक के पीछे, म०नं० डी. २५/३२ में।
१०५-	सोमेश्वराय नमः	पाण्डेयघाट, म०नं० डी. २५/३४ में ऊपर जाने के बगल में सीढ़ी पर छोटी मूर्ति।
१०६-	नारदेश्वराय नमः	नारदघाट, दत्तात्रयमठ, म०नं० डी. २५/१२ में।
१०७-	ब्रभ्राटकेश्वराय नमः	(अभ्रातकेश्वर) नारदघाट, दत्तात्रयमठ, म०नं०डी. २५/११ में।
१०८-	अत्रीश्वराय नमः	नारदघाट, दत्तात्रयमठ, म०नं० डी. २५/११ में।
१०९-	अनसूइयादेव्यै नमः	नारदघाट, दत्तात्रयमठ, म०नं० डी. २५/११ में।
११०-	अनसूयेश्वराय नमः	नारदघाट, दत्तात्रयमठ, म०नं० डी. २५/११ में।
१११-	मानसरोवरतीर्थाय नमः	मानसरोवर आंध्राआश्रम में कुण्ड, म०नं०डी. १४/६२ में।
११२-	मानसरोवरेश्वराय नमः	मानसरोवर गली के मोड़पर, म०नं० डी. १४/२० में।
११३-	सुशभाण्डेश्वराय नमः	उपनाम तिलभाण्डेश्वर प्रसिद्ध, म०नं० बी. १७/४२ में।
११४-	विभाण्डेश्वराय नमः	तिलभाण्डेश्वर के ही मंदिर में, कुएँ के अन्दर, म०नं० बी. १७/४२ में।
११५-	कहोलेश्वराय नमः	भेलूपुर, बाबू मंगलाप्रसाद के पहले कुएँ के चबूतरे पर, म०नं० बी. १९/५० में।
११६-	नर्मदेश्वराय नमः	राणामहल, चौसट्टी मंदिर से पूर्व, म०नं० डी. २१/८ घर के अन्दर, दरवाजे के सामने।
११७-	सुरेश्वराय नमः	मानसरोवर, भजनू सरदार का घर, गली के अन्दर, म०नं० डी. १४/१५१ में।

काशी-केदारखण्ड का मानचित्र।

प्रमाण

पूर्वस्यां दिशि गङ्गार्धभागं तीर्थसमन्वितम्।
अर्धकोशं चाग्निदिशि लोलार्केशान्तदक्षिणम्॥
सर्वपापप्रशमनं शङ्खोद्धारान्तनैर्ऋतम्।
पश्चिमे वैद्यनाथान्तं रमातीर्थन्तु वायुदिक्॥
उत्तरे शूलटङ्कान्तमीशान्यां क्रोशमर्धकम्।

अ० २ का० के० मा०॥

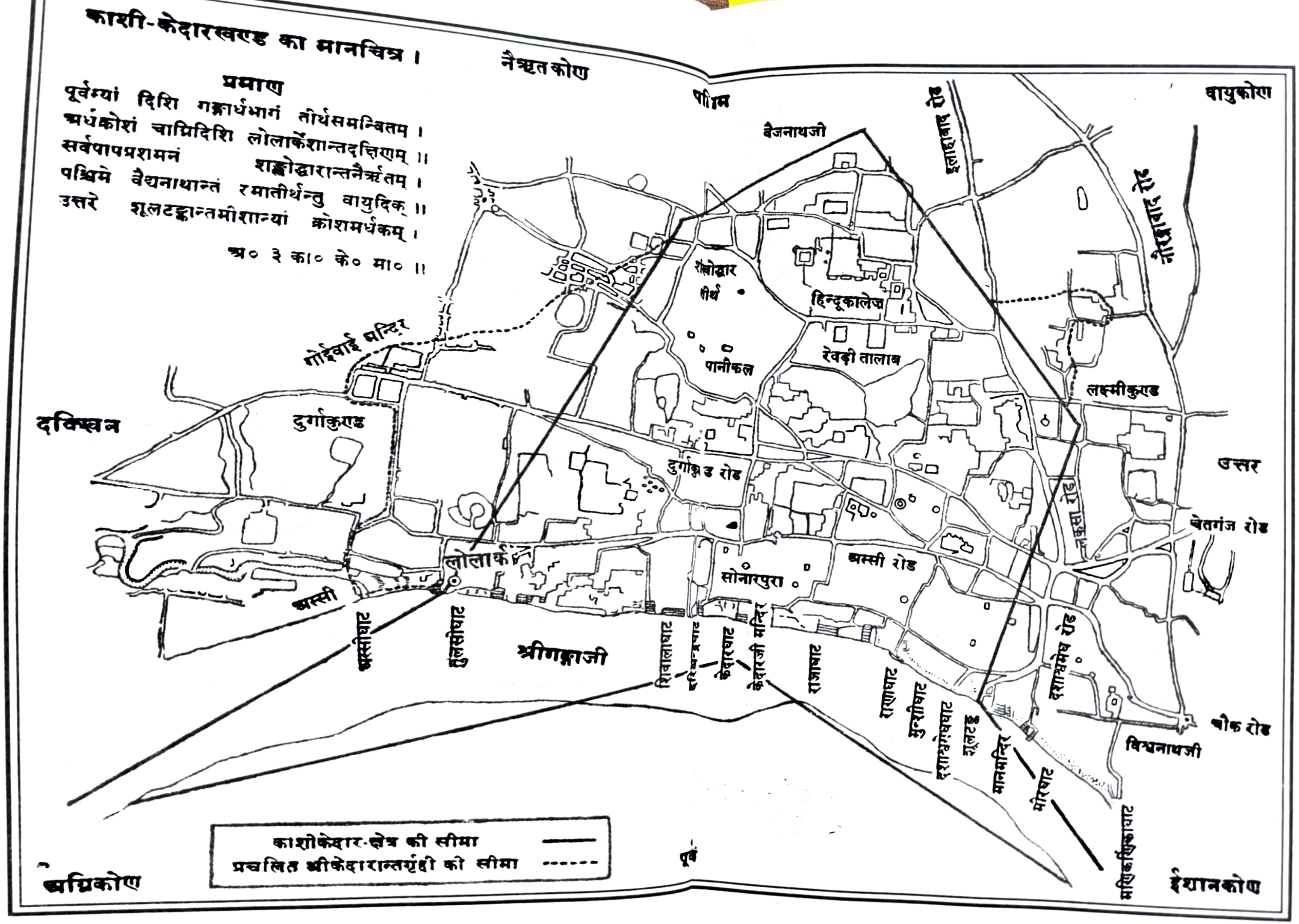

११८-	पद्मसुरेश्वराय नमः	मानसरोवर सुरेश्वराय से पहले, हनुमान जी के बगल, म०नं० बी. १३/१४ में।
११९-	क्षेमेश्वराय नमः	क्षेमेश्वरघाट, कुमारस्वामी मठ, म०नं० बी. १४/१४ में।
१२०-	चित्रांगदेश्वराय नमः	क्षेमेश्वरघाट, कुमारस्वामी मठ, म०नं० बी. १४/११८ में।
१२१-	चित्रांगदेश्वरीदेव्यै नमः	क्षेमेश्वरघाट, कुमारस्वामी मठ, म०नं० बी. १४/११८ में।
१२२-	रुक्मांगदेश्वराय नमः	चौकीघाट पीपल तरे, हनुमानजी में, म०नं० बी. १४/१ में।
१२३-	अम्बरीषेश्वराय नमः	सोनारपुरा, कूचबिहार कालीबाड़ी के पीछे गली, म०नं० बी. १३/६५ में।
१२४-	तारकेश्वराय नमः	केदारघाट पर बुर्जी के नीचे।
१२५-	आदिमणिकर्णिकायै नमः	केदारघाट पर प्रसिद्ध।
१२६-	श्री केदारेश्वराय नमः	केदारघाट पर प्रसिद्ध, म०नं० बी. ६/१०२ में।

उत्तर संकल्प करके अपने अपने घर जाना चाहिए। इस यात्रा करने वाले प्राणी को भैरवी यातना नहीं भोगनी पड़ती, तथा इस क्षेत्र में शरीर त्यागने मात्र से भैरवी यातना से वह प्राणी मुक्त हो जाता है।

एकादश महारुद्र यात्रा-वैशाखकृष्ण त्रयोदशी

अग्नीध्रकुण्डे सुस्नातः पश्येदाग्नीध्रमीश्वरम्।
उर्वशीशं ततो गच्छेत्ततस्तु नकुलीश्वरम् ॥६३॥
आषाढ़ीशं ततो दृष्ट्वा भारभूतेश्वरं ततः।
लाङ्गलीशमथालोक्य ततस्तु त्रिपुरान्तकम् ॥६४॥
ततोमनःप्रकामेशं प्रीतिकेशमथो व्रजेत्।
मदालसेश्वरं तस्मात्तिलपर्णेश्वरं ततः ॥६५॥
यात्रैकादशलिङ्गानामेषा कार्या प्रयत्नतः।
इमां यात्रां प्रकुर्वाणो रुद्रत्वं प्राप्नुयान्नरः ॥६६॥

(का० ख० अ० १००)

इस यात्रा के करने से मनुष्य रुद्रत्वशिव पद को प्राप्त होता है। अतः इसे प्रयत्नपूर्वक करना चाहिए। प्रथम त्रिलोचनघाट या ईश्वरगंगी कुण्ड में स्नान करके यात्रा को आरम्भ करे।

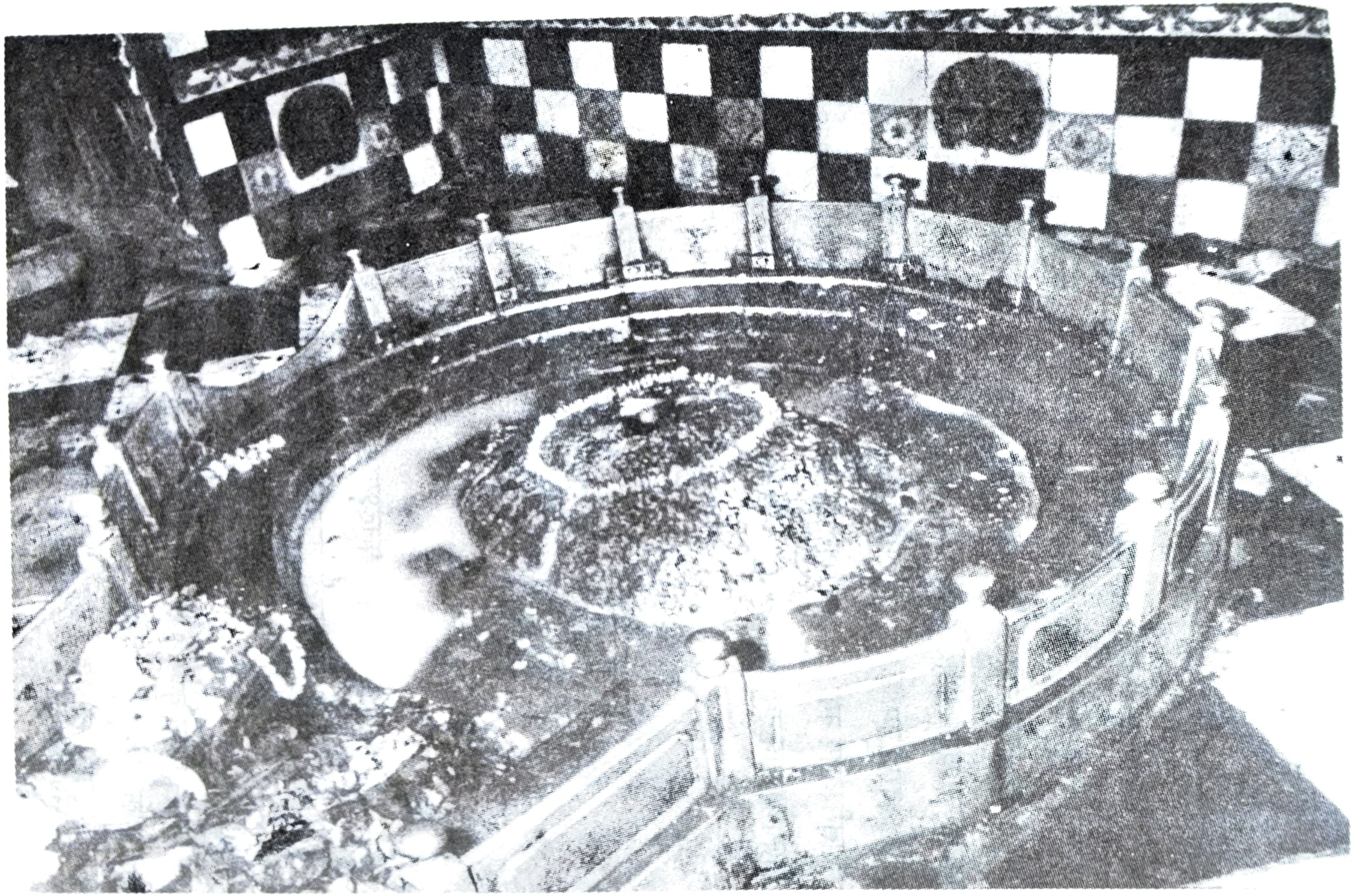

केदारघाट-स्थित श्री केदारेश्वर महादेव का शिवलिंग

१-	अग्नीध्रेवश्वराय नमः	ईश्वरगंगी जागेश्वर प्रसिद्ध, म०नं० जे. ६६/४ में।
२-	उर्वशीश्वराय नमः	औसानगंज गोलाबाग, उत्तर की ओर, म०नं० जे. ५६/१०८ में।
३-	नकुलेश्वराय नमः	अक्षयवट हनुमानजी में शनि के पास, म०नं० सी.के. ३५/२१ में।
४-	आषाढ़ेश्वराय नमः	काशीपुरा रानीबेतिया का शिवाला, म०नं० के. ६३/५३ में।
५-	भारभूतेश्वराय नमः	राजादरवाजा गली में, म०नं० सी.के. ५४/४४ में।
६-	लांगलीश्वराय नमः	खोवा बाजार, म०नं० सी.के. २८/४ में।
७-	त्रिपुरान्तकेश्वराय नमः	सिगरा का टीला, म०नं० डी. ५६/६५ में।
८-	मनःप्रकामेश्वराय नमः	साक्षीविनायक के पास, म०नं० डी. १०/५० में।
९-	प्रीतिकेश्वराय नमः	साक्षीविनायक के पीछे, म०नं० डी. १०/८ में।
१०-	मदालसेश्वराय नमः	कालिकागली पूरब सड़क पर, म०नं० डी. ५/१३३ में।
११-	तिलपर्णेश्वराय नमः	दुर्गाकुण्ड दुर्गाजी, बलिस्थान पर, म०नं० बी. २७/२ में।

अष्टभैरव यात्रा

भैरवा रुरुमुख्याश्च महाभयनिवारकाः ।
संपूज्याः सर्वदा काश्यां सर्वसंपत्तिहेतवः ।।

(का० ख० अ० ७२, श्लो० १०३)

अष्टम्यां च चतुर्दश्यां रविभूमिजवासरे ।
यात्रां च भैरवी कृत्वा कृतैः पापैः प्रमुच्यते ।।

(का० ख० अ० ३१, श्लो० १४७)

जो प्राणी अगहन कृष्ण १ या चतुर्दशी रविवार या मंगलवार अथवा अष्टमी पूर्वोक्त तिथि को इन वारो के होने पर यह यात्रा करता है, इस महाभय क्षेत्र में उसके काशीकृत पापों की शान्ति होती है और भैरवीदण्ड से वह मुक्त हो जाता हैं।

१-	रुरुभैरवाय नमः	हनुमानघाट, म०नं० बी. ४/१६ में।
२-	चण्डभैरवाय नमः	दुर्गाजी कालीजी के मंदिर, म०नं० बी. २७/२ में।
३-	असितांगभैरवाय नमः	वृद्धाकाल के घेरे में, म०नं० के. ५२/३६ में।
४-	कपालभैरवाय नमः	अलईपुर लाटभैरव प्रसिद्ध, म०नं० बी. १/१२३ में।

५- क्रोधनभैरवाय नमः — बटुकभैरव में आदि भैरव, म०नं० बी. ३१/१२६ में, दूसरा कमच्छा देवी में।

६- उन्मत्तभैरवाय नमः — पंचक्रोशी मार्ग में, देउरागाँव में।

७- संहारभैरवाय नमः — गायघाट के पास, पाटन दरवाजा, म०नं० ए. १/८२ में।

८- भीषणभैरवाय नमः — भूतभैरव प्रसिद्ध, म०नं० के. ६३/२८ में।

द्वादशादित्य यात्रा

रविवारे रवेर्यात्रा षष्टयां वा रविसंयुजि ।
तथैव रविसप्तम्यां सर्वविघ्नोपशान्तये ।।

(का० ख० अ० १००)

यह यात्रा चैत्र रविवार के दिन जब षष्ठी या सप्तमी हो, जिसको पद्मक योग कहते है, (यह पद्मक योग सहस्त्र सूर्यग्रहण के समान माना जाता है), ऐसे दिन सर्वविघ्नों के शान्त्यर्थ अवश्य करना चाहिए।

१- द्रौपदादित्याय नमः — विश्वनाथ के बगल में अक्षयवट के नीचे, म०नं० सी.के. ३५/२१ में।

विश्वेशाद्दक्षिणे भागे यो मां त्वत्पुरतःस्थितम् ।
आराधयिष्यति नरः क्षुब्दाधा तस्य नश्यति ।।१५ ।।
प्राग्रवेत्वां समाराध्या यो मां द्रक्ष्यति मानवः ।
तस्य त्वं दुःखतिमिरमपानुद निजैः करैः ।।१७ ।।

(का० ख० अ० ४६)

द्रौपदादित्य की आराधना से मनुष्य कभी क्षुधा से पीड़ित नहीं होता। जो प्रथम इनकी पूजाकर विश्वनाथ का दर्शन करता है, उसके दुःखरूपी अन्धकार को विश्वेश्वर अपने वरदान से अपनी किरणों द्वारा दूर करते हैं।

२- गंगादित्याय नमः — ललिताघाट नेपाली मंदिर के नीचे, म०नं० डी. १/६८ में।

गंगादित्यं समाराध्य वाराणस्यां नरोत्तमः ।
न जातु दुर्गतिं क्वापी लभते न च रोगभाक् ।।१०४ ।।

(का० ख० अ० ५१)

गंगादित्य की आराधना से मनुष्य न तो कभी कोई दुर्गति ही भोगता है, न रोगी होता है।

३- वृद्धादित्याय नमः — मीरघाट, हनुमानजी के दक्षिण, म०नं० डी. ३/१५ में।

वृद्धादित्यं नमस्कृत्य वाराणस्यां रवौ नरः ।
लभेदभीप्सितां सिद्धिं न कचिद् दुर्गतिं लभेत् ।।४३ ।।
(का० ख० अ० ५१)

वृद्धादित्य की पूजा आराधना से मनुष्य कभी दुर्गति को नहीं भोगता, किन्तु अपने अभीष्ट सिद्धि को प्राप्त करता है ।

४- लौलार्कादित्याय नमः लोलार्ककुण्ड की सीढ़ी पर, नीचे मढ़ी में ।

लोलार्कस्त्यसिसंभेदे दक्षिणस्यां दिशिस्थितः ।
योगक्षेमं सदा कुर्यात्काशीवासिजनस्य च ।।४१ ।।
लोलार्क संगमे स्नात्वा दानं होमं सुरार्चनम् ।
यत्किंचित्क्रियते कर्म तदनन्त्याय कल्पते ।।५३ ।।

लोलार्कादित्य के दर्शन से काशीवासियों का सदा योगक्षेम होता है । गंगा के संगम में लोलार्क कूप है, इसमें स्नान दान होम करने से अनन्त फलदायक होता है ।

५- विमलादित्याय नमः जंगमबाड़ी खारीकुआँ के पीछे गली, म०नं० डी. ३५/२७३ में ।

इत्थं सविमलादित्यो वाराणस्यां शुभप्रदः ।
तस्य दर्शनमात्रेण कुष्ठरोगः प्रणश्यति ।।६६ ।।
(का० ख० अ० ५१)

विमलादित्य के केवल दर्शन मात्र ही से कुष्ठ रोग नष्ट हो जाता है ।

६- साम्बादित्याय नमः सूर्यकुण्ड प्रसिद्ध, म०नं० डी. ५१/९० में ।

सम्बाकुण्डे नरः स्नात्वा रविवारेऽरुणोदये ।
साम्बादित्यं च संपूज्य व्याधिभिर्नाभिभूयते ।।४८ ।।
विश्वेशात्पश्चिमाशायां साम्बेनात्र महात्मना ।
सम्यगाराधिता मूर्तिरादित्यस्य शुभप्रदा ।।५५ ।।
तामभ्यर्च्य नमस्कृत्य कृत्वाष्टौ च प्रदक्षिणाः ।
नरो भवति निष्पापः काशीवासफलं लभेत् ।।५६ ।।
(का० ख० अ० ४८)

साम्बादित्य सूर्यकुण्ड में जो मनुष्य रविवार के अरुणोदयकाल में भक्तिपूर्वक स्नान कर साम्बादित्य की पूजा करे तो वह प्राणी रोगों से पीड़ित नही होता । पूजन व आठ परिक्रमा से मनुष्य पाप रहित हो जाता है और काशीवास करने का फल प्राप्त होता है ।

७- उत्तरर्कादित्याय नमः अलईपुर, बकरियाकुण्ड (वक्रार्ककुण्ड)।

अथोत्तरस्यामाशायां कुण्डमर्काख्यमुत्तमम् ।
तत्र नाम्नोत्तरार्केण रश्मिमाली व्यवस्थितः ।।१ ।।
तापयन्दुःख संघातं साधूनाप्याययन् रविः ।
उत्तरार्को महातेजाः काशी रक्षति सर्वदा ।।२ ।।

(का० ख० अ० ४७)

उत्तर दिशा में उत्तम अर्कनाम का कुण्ड है, वही उत्तरार्क नाम के सूर्य भी है। यह अपनी यात्रा करने वाले के दुःख संघात को दूर हटाकर परमानन्द देते हुए सर्वदा काशी की रक्षा करते है।

८- केशवादित्याय नमः वरणा आदिकेशव का मंदिर, म०नं० ए. ३७/५१ में।

अतः स केशवादित्यः काश्यां भक्ततमोनुदः ।
समर्चितः सदा देयान्मनसो वाञ्छितं फलम् ।।७३ ।।
केशवादित्यमाराध्य वाराणस्यां नरोत्तमः ।
परं ज्ञानमवाप्नोति येन निर्वाणभाग्भवेत् ।।७४ ।।

(का० ख० अ० ५१)

इनके दर्शन से भक्तों का अज्ञान रूप अन्धकार दूर होता है और मनोवांछित फल प्राप्त होता है। अन्त में निर्वाण पद का भागी होता है।

९- खखोल्कादित्याय नमः मच्छोदरी से पूर्व कामेश्वर के द्वार पर, म०नं० ए. २/६ में।

तस्य दर्शनमात्रेण सर्वपापैः प्रमुच्यते ।
काश्यां पैशंगिलेतीर्थे खखोल्कस्य विलोकनात् ।।
नरश्चिन्तितमाप्नोतिं नीरोगो जायते क्षणात् ।।१५० ।।

(का० ख० अ० ५०)

इनके दर्शन से मनुष्य समस्त पापों से छूट जाता है, अपने अभीष्ट फल को पाता है, तथा तुरन्त रोगों से निरोग हो जाता है।

१०- अरुणादित्याय नमः त्रिलोचन महादेव की परिक्रमा में, म०नं० ए. २/८० में।

व्याधिभिर्नाभिभूयन्ते नोपसर्गैश्च कश्चन ।
शोकाग्निना न दह्यन्ते ह्यरुणादित्यसेवनात् ।।२३ ।।

(का० ख० अ० ५१)

अरुणादित्य के दर्शन पूजन से किसी भाँति की व्याधि तथा कोई उपसर्ग बाधा नहीं पहुँच सकती और न कभी शोकाग्नि ही दहन कर सकती है।

११- मयूखादित्याय नमः पंचगंगा घाट के ऊपर मंगलागौरी में खम्बे पर, म०नं० के. २४/३४ में।

मयूखादित्यइत्याख्या ततस्ते दितिनन्दन ।।६३ ।।
त्वदर्चनान्नृणां कश्चिन्न व्याधिः प्रभविष्यति ।
भविष्यति न दारिद्र्य रविवारे त्वदीक्षणात् ।।६४ ।।

(का० ख० अ० ४६)

श्री शंकर वाक्य नित्य इनके दर्शन से कोई व्यधि नहीं होती और रविवार के दर्शन से कभी मनुष्य दरिद्र नहीं होता।

१२- यमादित्याय नमः संकटाघाट की सीढ़ी पर, म०नं० के. ७/१६४ में चौतरे पर बाहर।

यमेन स्थापितो यस्मादादित्यस्तत्रकुम्भज ।
अतः स हि यमादित्यो यामी हरति यातनाम् ।।१०६ ।।

(का० ख० अ० ५१)

यम के द्वारा स्थापित यमादित्य पूजा करने से यामी भैरवी यातना दूर करते है।

अनुक्रमयात्रा

विश्वेशं माधवं ढुंढिं, दण्डपाणिं च भैरवम् ।
वन्दे काशीं गुहां गंगां, भवानीं मणिकर्णिकाम् ।।

यदि काशी की विशेष यात्रा न कर सके तो निम्नलिखित १० देव यात्रा अवश्य करें।

१- विश्वेश्वराय नमः प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।

२- बिन्दुमाधवाय नमः पंचगंगा घाट के ऊपर, म०नं० के. २२/३७ में।

३- ढुँढिराजाय नमः अन्नपूर्णा मंदिर के मार्ग पर, प्रसिद्ध।

४- दण्डपाणिभैरवाय नमः ढुँढिराज गली में, म०नं० ३६/१०, दण्डपाणि लिंग, विश्वनाथ के घेरे में म०नं० ३५/१६ में।

५- कालभैरवाय नमः भैरोनाथ, प्रसिद्ध, म०नं० के. ३२/२२ में।

६- काशीदेव्यै नमः ललिताघाट पर, मढ़ी मे।

७- गुहायै नमः ईश्वरगंगी, वधवा पर, प्रसिद्ध।

८- गंगायै नमः	ईश्वरगंगी का तालाब, शिवगंगा।
६- भवानीदेव्यै नमः	अन्नपूर्णा को कहते है, म०नं० डी. ६/१ में।
१०- मणिकर्णिकायै नमः	सिंधियाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१३० में।

अष्टमहालिङ्गं यात्रा-अष्टवसु यात्रा

१- दक्षेश्वराय नमः	आषाढ़ शुक्ल ८	वृद्धकाल कूप के सामने, म०नं० के. ५२/३६ में।
२- पार्वतीश्वराय नमः	आषाढ़ शुक्ल ६	त्रिलोचनघाट आदि महादेव में, म०नं० के. ३/६२ में।
३- पशुपतीश्वराय नमः	आषाढ़ शुक्ल १०	पशुपतेश्वर गली, म०नं० सी.के. १३/६६ में।
४- गंगेश्वराय नमः	आषाढ़ शुक्ल ११	ज्ञानवापी पीपल तरे लुप्त, स्थान की पूजा करें।
५- नर्मदेश्वराय नमः	आषाढ़ शुक्ल १२	त्रिलोचन के पीछे, म०नं० ए. २/७६ में।
६- गभस्तीश्वराय नमः	आषाढ़ शुक्ल १३	पंचगंगा मंगलागौरी, म०नं० के. २४/३४ में।
७- सतीश्वराय नमः	आषाढ़ शुक्ल १४	वृद्धकाल की सड़क रत्नेश्वर , म०नं० के. ४६/३२ में।
८- तारकेश्वराय नमः	आषाढ़ शुक्ल १५	ज्ञानवापी के पूर्व, गौरी शंकर के नीचे मढ़ी में।

इस महालिंगायतनो की यात्रा करने से महाविघ्नों की शान्ति और महापापों का नाश होता है।

अष्टायतनयात्रान्या कर्तव्या विघ्नशान्तये ।
दक्षेशः पार्वतीशश्च तथा पशुपतीश्वरः ।।४६ ।।
गङ्गेशो नर्मदेशश्च गभस्तीशः सतीश्वरः ।
अष्टमस्तारकेशश्च प्रत्यक्षमविशेषत् ।।५० ।।
दृश्यान्येतानि लिङ्गानि महापापोपशान्तये ।।५१ ।।

(का० ख० अ० १०० श्लो० ४६ से ५०-१/२ तक)

अष्टषष्ठ्यायतन यात्रा

श्रुत्वापि नाम चैतेषां लिङ्गानां सुरसत्तम ।
अपि जन्मसहस्त्रोत्थाः क्षीयंते पापराशयः ।।१७३ ।।
श्रुत्वाष्टषष्टिमेतां वै महायतनसंश्रयाम्
न जातु प्रविशेन्मर्त्यो जनन्याजाठरीं दरीम् ।।१८२ ।।

(का. ख. अ. ६६)

देवों में श्रेष्ठ इन सब लिंगो का नाम सुन लेने पर हजारो जन्म की एकत्रित पापराशियाँ नष्ट हो जाती हैं । अड़सठ महायतनों का नाम श्रवण कर लेने पर मनुष्य माता की उदरदरी में जन्म नहीं लेता ।

१-	स्थाणुलिंगाय नमः	अस्सी-कुरुक्षेत्र, तालाब के ऊपर ।
२-	देवदेवेश्वराय नमः	ढुंढिराजगली, अपारनाथमठ, म०नं० सी.के. ३७/१२ में ।
३-	महाबललिंगाय नमः	बरणा, आदि केशव के पास ।
४-	शशिभूषणाय नमः	नौआपोखर के ऊपर, पापमोचनेश्वर नाम से ।
५-	महाकालेश्वराय नमः	वृद्धकाल में पश्चिम, म०नं० के. ५३/३६ में ।
६-	प्रणवेश्वराय नमः	ओंकारेश्वर ही का नाम है, पठानी टोला, म०नं० ३३/२३ में।
७-	अयोगंधेश्वराय नमः	ओंकारेश्वर ही का नाम है, अस्सी पर ।
८-	महानादेश्वराय नमः	आदि महादेव के पीछे, त्रिलोचन म०नं० ए. ३/६२ में ।
९-	महोत्कटेश्वराय नमः	कामेश्वर महादेव के घेरे में, म०नं० ए. २/९ में ।
१०-	विमलेश्वराय नमः	प्रहलादघाट, नयामहादेव, मु. नीलकंठ नाम से, प्रसिद्ध म०नं० ए. १०/४७ में ।
११-	महावृद्धेश्वराय नमः	वृद्धकाल, म०नं० के. ५२/३९ में ।
१२-	आदिमहादेवाय नमः	त्रिलोचन के पीछे, म०नं० ए. ३/६२ में ।
१३-	पितामहेश्वराय नमः	मोहाल कश्मीरी मल की हवेली, म०नं० सी.के. ७/६२ में ।
१४-	शूलटंकेश्वराय नमः	दशाश्वमेधघाट पर, म०नं० डी. १७/१११ के नीचे ।
१५-	निधिलिंगाय नमः	लुप्त ।
१६-	महायोगीश्वराय नमः	त्रिलोचन के पीछे, आदि महादेव, म०नं० ए. ३/६२ में ।

१७- कृत्तिवासेश्वराय नमः	रत्नेश्वर के पूर्व, म०नं० के. ४६/२३ में।
१८- चण्डीश्वराय नमः	सदरबाजार चण्डी देवी के मंदिर में।
१९- नीलकंठेश्वराय नमः	नीलकंठ मुहाल, म०नं० सी.के. ३३/२३ में।
२०- विजयलिंगाय नमः	ककरमत्ता सालकंट विनायक के पास दूसरे मोतीझील के सामने।
२१- ऊर्ध्वरेतेशलिंगाय नमः	फुलवरियागांव, कूषमाण्ड विनायक के पास।
२२- श्रीकंठाय नमः	ज्येष्ठेश्वरमें, म०नं० के. ६२/१४४, काशीपुरा में।
२३- कपर्दीश्वराय नमः	पिशाचमोचन, म०नं० सी. २१/४० में।
२४- सूक्ष्मेश्वराय नमः	धूपचण्डी, विकटद्विज के सामने, म०नं० १२/१३४ में।
२५- जयन्तेश्वराय नमः	अवध केदार के पास, दूसरे भूतभैरव पर, तीसरे वृद्धकाल उत्तरी वरन्दा में, म०नं० के. ५२/३९ में।
२६- त्रिपुरांतकेश्वराय नमः	सिगरा का टीला, म०नं० डी. ५९/९५ में।
२७- कुक्कुटेश्वराय नमः	दुर्गा मंदिर के दक्षिण फाटक, दुर्गाकुण्ड, म०नं० बी. २७/२ के बाहर।
२८- त्रिशूलीश्वराय नमः	किनाराम का स्थल, भदैनी, कृमिकुण्ड पर।
२९- जटीश्वराय नमः	बंगालीटोला, पातालेश्वर नाम से प्रसिद्ध, डी. ३२/११८ के बाहर।
३०- त्र्यंबकेश्वराय नमः	हौजकटोरा, त्रिलोकनाथ के नाम से प्रसिद्ध, म०नं० डी. ३८/११ में।
३१- हरेश्वराय नमः	बरणा आदिकेशव मंदिर, ज्ञानकेशव में म०नं०ए.३७/५१ में।
३२- सर्वलिंगाय नमः	त्रिलोचन के समीप।
३३- महालिंगाय नमः	त्रिलोचन के समीप।
३४- सहस्त्राक्षेश्वराय नमः	शैलपुत्री शैलेश्वर समीप, म०नं० ए. ४०/११ में।
३५- हर्षितलिंगाय नमः	अन्नपूर्णा के बगल में राममंदिर, नरसिंह जी के पीछे, म०नं० डी. १०/५६ में।
३६- रुद्रेश्वराय नमः	त्रिपुरा भैरवी, म०नं० डी. ५/२५ में।
३७- वृषेश्वराय नमः	मैदागिन गोरखनाथ का टीला, म०नं० के. ५८/७८ में।

३८- ईशानेश्वराय नमः	बांसफाटक, मॉल के बगल की गली में म०नं० ३७/४३ में।
३९- संहारभैरवाय नमः	त्रिलोचन, पाटनदरवाजा के पास, म०नं० ए. १/८२ में।
४०- उग्रलिंगाय नमः	लोलार्क के पास, आदिलिंगो में।
४१- भवेश्वराय नमः	भीमचण्डी के समीप।
४२- दंडी विनायकाय नमः	देहली विनायक के पीछे, षोडष विनायक के पास।
४३- भद्रकर्णेश्वराय नमः	भुईली गांव, पंचक्रोशी उदंड विनायक रामेश्वर के निकट।
४४- शंकराय नमः	सिंधियाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१६५ में।
४५- काललिंगाय नमः	सिद्धेश्वरी कलशेश्वर के सामने, कुमार स्वामी मठ, म०नं० सी.के. ७/२४ में।
४६- पशुपतीश्वराय नमः	पाशपतेश्वर की गली, म०नं० सी.के. १३/६६ में।
४७- कपालीश्वराय नमः	लाटभैरव पर गुप्त, दूसरे पाशपाणी के समीप।
४८- उमापतीश्वराय नमः	लुप्त।
४९- दीप्तेश्वराय नमः	सूर्यकुण्डपर, म०नं० डी. ५१/५५ में।
५०- नकुलीश्वराय नमः	विश्वनाथ के बगल, अक्षयवट, म०नं० सी.के. ३५/२१ में।
५१- अमरेश्वराय नमः	भदैनी, लोलार्क के पास, म०नं० बी. २/२० में।
५२- भीमेश्वराय नमः	सदरबाजार चण्डिका में।
५३- भस्मगात्रलिंगाय नमः	कालिकागली, मदालसेश्वर के सामने, बड़ा शिवाला, म०नं० ५/७ में।
५४- स्वयम्भूलिंगाय नमः	लक्सा, रामकुण्ड के पास, म०नं० डी. ५४/११४ में।
५५- धरणीवाराहाय नमः	दशाश्वमेध, म०नं० डी. १७/१११ के बाहर, वाराह की मूर्ति।
५६- गणाध्यक्षाय नमः	लाहौरीटोला, फूटेगणेश के समीप, बगल में।
५७- विरूपाक्षाय नमः	विश्वनाथजी में दण्डपाणि के बगल में, फटालिंग, म०नं० सी. के. ३५/१९ में।
५८- हीमस्थेशाय नमः	मणिकर्णिका, भागीरथेश्वर के पास।
५९- भूर्भुवःस्वर्लिंगाय नमः	भूतभैरवपर, म०नं० के. ६३/२६ में।
६०- हाटकेश्वराय नमः	हड़हासराय, म०नं० के. ४३/१९९ में।

६१-	तारकेश्वराय नमः	ज्ञानवापी के पूर्व गौरीशंकर मढ़ी के नीचे।
६२-	किरातेश्वराय नमः	लाली घाट पर जयन्तेश्वर के पास।
६३-	कोटिलिंगाय नमः	पापमोचन के पश्चिमतीर में, दूसरे साक्षी विनायक के आगे मार्ग पर, म०नं० डी. १०/४६ में।
६४-	त्रिलोचनेश्वराय नमः	त्रिलोचनघाट, प्रसिद्ध, म०नं० ए. २/८० में।

ओंङ्कारादपि सल्लिगान्मोक्षवर्त्मप्रकाशकात् ।
अतिश्रेष्ठतरं लिङ्गं श्रेयो रूपं त्रिलोचनम् ।।
तेजस्विषु यथा भानुर्दृश्येषु च यथा शशी ।
तथा लिङ्गेषु सर्वेषु परं लिङ्गं त्रिलोचनम् ।।

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, वीर० मित्रमिश्र, पृष्ठ २६७-२६८)

मोक्षमार्ग का प्रकाशक सत्यलिंग रूप ओंकार से भी कल्याणरूप अत्यन्त श्रेष्ठ त्रिलोचन लिंग है। तेजस्वियों में जैसे सूर्य, दृश्यवस्तुओं में जैसे चंद्रमा, वैसे ही सम्पूर्ण लिंगों में त्रिलोचन लिंग श्रेष्ठ है।

६५-	ओंकारेश्वराय नमः	पठानीटोला, मच्छोदरी से उत्तर, म०नं० ए. ३३/२३ में।
६६-	जलप्रियलिंगाय नमः	मणिकर्णिका, जल में श्मशान के पास।

म० यहां यात्रा समाप्त करें। चिता से बचा रुद्रांश शव का भाग इन्हे ही गंगा में छोड़ा जाता है। इस यात्रा को करने वाला प्राणी पुनः माता के उदर में नहीं जन्म लेता, अतः उसका मोक्ष हो जाता है।

अष्टमहाकूप यात्रा

१-	वृद्धकालकूपाय नमः	वृद्धकाल म०नं० के. ५२/३९ में।
२-	कालकूपाय नमः	दण्डपाणि की गली म०नं० ३१/४६ में।
३-	चन्द्रकूपाय नमः	सिद्धेश्वरी, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।
४-	कलशकूपाय नमः	कलशेश्वर की ब्रह्मपुरी, कश्मारी-हवेली, म०नं० सी.के. ७/१०२ में।
५-	धर्मकूपाय नमः	मीरघाट, म०नं० डी. २/२१ में।
६-	शुक्रकूपाय नमः	कालिकागली, म०नं० डी. ८/३० के समीप।
७-	गोकर्णकूपाय नमः	कोदई की चौकी, दैलु की गली, म०नं० ५०/१३ में।
८-	कर्दमकूपाय नमः	कंदवा पंचक्रोशी में।

मंडपयात्रा

१-	ज्ञानमंडपाय नमः	ज्ञानवापी मंडप।
२-	वैराग्यमंडपाय नमः	लुप्त।
३-	मोक्षमंडपाय नमः	लुप्त।
४-	सिद्धमंडपाय नमः	लुप्त।
५-	श्रृंगारमंडपाय नमः	लुप्त।
६-	कैलाशमंडपाय नमः	लुप्त।
७-	लक्ष्मीविलासमंडपाय नमः	लुप्त।
८-	मुक्तिमंडपाय नमः	ज्ञानवापी मंडप को कहते है।
९-	सभामंडपाय नमः	विश्वनाथ कचहरी म०न० ३५/२१ में।
१०-	ऐश्वर्यमंडपाय नमः	विश्वनाथ कचहरी म०न० ३५/२१ में।
११-	रंगमंडपाय नमः	विश्वनाथ कचहरी म०न० ३५/२१ में।
१२-	कुक्कुटमंडपाय नमः	मुक्तिमंडप को कहते है।
१३-	विलासमंडपाय नमः	लुप्त।
१४-	मोक्षविलासमंडपाय नमः	लुप्त।

नवग्रह यात्रा

१-	गभस्तीश्वराय नमः	बालाघाट, मंगलागौरी के मंदिर में, म०नं० के. २४/३४ में।
२-	चन्द्रेश्वराय नमः	सिद्धेश्वरी के मंदिर में, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।
३-	मंगलेश्वराय नमः	सिंधियाघाट के ऊपर, आत्मावीरेश्वर मंदिर में, म०नं० सी. के. ७/१५८ में।
४-	बुधेश्वराय नमः	उसी जगह बगल में, म०नं० सी.के ७/१५८ में।
५-	बृहस्पतीश्वराय नमः	वहीं, सामने मंदिर, म०नं० सी.के. ७/१३३ में।
६-	शुक्रेश्वराय नमः	कालिका गली, म०नं० डी. ८/३० में।
७-	शनिश्चरेश्वराय नमः	विश्वनाथ में पश्चिम दरवाजे पर, म०नं० सी.के. ३५/१९ में।
८-	कमलेश्वराय नमः	गोमठ काकाराम की गली, म०नं० सी.के. ८/१३ में।
९-	अश्वतरेश्वराय नमः	उसी जगह, म०नं० सी.के. ८/१३ में।

इस यात्रा को करने से नवों ग्रह की बाधा की शान्ति होती है। यह नव ग्रह लिंग प्रधान है।

सप्तऋषि यात्रा

(का० खं०, अ० १८ श्लो-१४ से २१ तक)

इस यात्रा को प्रतिमास की शुक्लपक्ष की पंचमी को करें या ऋषिपंचमी को करना सबके लिये उचित है।

१-	मरीचीश्वराय नमः	(संभूत्यै नमः) नागकूआँ, वहीं मरीची कुण्ड, दूसरे मीरासागर पर, म०नं० डी. २५/११ में।
२-	अत्रीश्वराय नमः	(अनसूयायै नमः) कोदई की चौकी, गोकर्ण तीर्थ के पूर्व, गुप्त, डी. ५०/३३, दूसरे नारदघाट।
३-	पुलहेश्वराय नमः	(क्षमायैनमः) जौ विनायक, ठाकुरदास सुरेका भवन, म०नं० सी.के. ३३/४३ में।
४-	पुलस्त्येश्वराय नमः	(प्रीत्यै नमः) जौ विनायक, ठाकुरदास सुरेका भवन के सामने राममंदिर के बाहर छोटे शिवाला के नीचे।
५-	कृत्वीश्वराय नमः	(सन्मत्यै नमः) जौ विनायक की सीढ़ी पर, म०नं० सी.के. ३३/३६ में, दूसरे वरनापार।
६-	अंगिरसेश्वराय नमः	(स्मृत्यै नमः) जंगमबाड़ी, म०नं० डी. ३५/७७ में हरीकेश्वर के पास खारीकुँआ।
७-	वाशिष्ठेश्वराय नमः	(अरुंधत्यै नमः) संकठा घाट पर म०नं० के.७/१६१ में।

काश्यामेतानि लिंगानि सेवितानि शुभैषिभिः ।
मनोभिवांछितं दद्युरिह लोके परत्र च ॥

जो शुभ की कामना करने वाले इन लिंगों की पूजा करते हैं, उनको मनोवांछित फल इस लोक-परलोक में प्राप्त होते है।

जो प्राणी इस यात्रा को करते है उनको धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति होती है।

१-	कश्यपेश्वराय नमः	जंगमबाड़ी, म०नं० डी. ३५/७६ में।
२-	अत्रीश्वराय नमः	नारदघाट, म०नं० डी. २५/११, दूसरे गोकर्ण के पूर्व गुप्त।
३-	भरद्वाजेश्वराय नमः	राजघाट, गुप्त।
४-	विश्वामित्रेश्वराय नमः	जंगमबाड़ी के पास, म०नं० डी. ३५/२०२ में, दूसरे गोलगड्डा में।
५-	गौतमेश्वराय नमः	गोदौलिया, काशीराज के शिवाले में, म०नं० डी. ३७/३३ में।

६- जमदग्नीश्वराय नमः दारानगर, मध्यमेश्वर के समीप, म०नं० के. ५३/६३ में।
८- वशिष्ठेश्वराय नमः संकठाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१६१ में।

चतुर्थ विनायक यात्रा

१- भागीरथगणाध्यक्षाय नमः लाहौरीटोला, फूटेगणेश के बगल में, म०नं० १/४० में।
२- हरिश्चंद्रविनायकाय नमः संकठाघाट, म०नं० सी.के. ७/१६६ में।
३- कपर्दीश्वरगणपतये नमः पिशाचमोचन पर, म०नं० सी. २१/४० में।
४- बिन्दुविनायकाय नमः पंचगंगाघाट, बिन्दुमाधव मंदिर में, म०नं० के. २२/३७ में।

पंचामृत विनायक यात्रा

१- दुग्धविनायकाय नमः दूधविनायक मोहाल, म०नं० के. २३/६६ में।
२- दधिविनायकाय नमः दूधविनायक मोहाल, म०नं० के. २३/६५ में।
३- घृतविनायकाय नमः दूधविनायक मोहाल, म०नं० के. २३/५७ में।
४- मधुविनायकाय नमः दूधविनायक मोहाल, म०नं० के. २३/६३ में।
५- शर्कराविनायकाय नमः दूधविनायक मोहाल, म०नं० के. २३/५३ में।

अष्टप्रधान विनायक यात्रा

१- सिद्धिविनायकाय नमः मणिकर्णिका, अमेठी मंदिर, म०नं० सी.के. ८/१ में।
२- त्रिसंध्यविनायकाय नमः लाहौरीटोला, फुटेगणेश नाम से, म०नं० सी.के. १/४० में।
३- आशाविनायकाय नमः मीरघाट, धर्मकूप के दक्षिण, म०नं० डी. २/१५ में।
४- क्षिप्रप्रसादविनायकाय नमः पितरकुण्डा, तालाब के पास, पित्रीश्वर में, म०नं० १८/४७ में।
५- ढुँढिराजविनायकाय नमः अन्नपूर्णा मार्ग पर, प्रदिद्ध।
६- अविमुक्तविनायकाय नमः विश्वनाथ मन्दिर, नैऋत्यकोण में, म०नं० सी.के. ३५/१६ में। दूसरे ज्ञानवापी मस्जिद के पीछे दिवाल में लेटी मूर्ति।
७- वक्रतुण्डविनायकाय नमः लोहटिया बड़ेगणेश, म०नं० के. ५८/१०१ में।
८- ज्ञानविनायकाय नमः ज्ञानवापी कूप के बगल में गणनाथ के नाम से।

छप्पनविनायक यात्रा

कुर्यात्प्रतिचतुर्थीह यात्रां विघ्नेशितुः सदा ।
ब्राह्मणेभ्यस्तदुद्देशाद्देया वै मोदका मुदे ।।(का० खं० अ० ५७)

प्रति चतुर्थी को छप्पनविनायकों की यात्रा करनी चाहिये । यदि मंगलवार को चतुर्थी हो तो उस दिन यात्रा करने का विशेष माहात्म्य है । ब्राह्मणों को मोदक दान दें ।

इस रीति से यात्रा करने वालों के उद्देश्य की पूर्ति होती है और सभी मनोरथ सिद्ध होते है।

१-	अर्कविनायकाय नमः	लोलार्ककुण्ड के पास, म०नं० २/१७ के सामने ।
२-	दुर्गविनायकाय नमः	दुर्गाकुण्ड के पूर्व कोने पर, म०नं० २७/१ में ।
३-	भीमचण्डविनायकाय नमः	पंचक्रोशी भीमचण्डी के मंदिर में ।
४-	देहलीविनायकाय नमः	पंचक्रोशी भटौली गाँव में, डेहरियाविनायक ।
५-	उद्दंडविनायकाय नमः	पंचक्रोशी रामेश्वर के पास, भुइली गाँव में ।
६-	पाशपाणिविनायकाय नमः	सदरबाजार से पश्चिम, प्रसिद्ध ।
७-	खर्वविनायकाय नमः	राजघाट किला में, आदिकेशव मार्ग पर ।
८-	सिद्धविनायकाय नमः	मणिकर्णिका, कुण्ड के बगल से ऊपर सीढ़ी के, म०नं० सी. के. ८/१ में ।

बाह्यावरणगाश्चैते काश्यामष्टौ विनायकाः ।
उच्चाटयन्त्यभक्तांश्च भक्तानां सर्वसिद्धिदाः ।।६७ ।।

बाह्य आवरण में स्थित आठ विनायक हैं । ये अभक्तो को उच्चाटन करते है और भक्तों को सिद्धि प्रदान करते हैं ।

९-	लम्बोदरविनायकाय नमः	केदारघाट के बगल में, लालीघाट पर । दूसरे अवधगर्बी पर चिन्तामणि विनायक म०नं० बी. ७/२०८ में ।
१०-	कूटदन्तविनायकाय नमः	कीनाराम का स्थल, कृमिकुण्ड पर, म०नं० बी. ३/३३५ में।
११-	शालकंटविनायकाय नमः	मडुआडीह तालाब के उत्तर, प्रसिद्ध ।
१२-	कूष्माण्डविनायकाय नमः	फुलवरिया गाँव में ।
१३-	मुण्डविनायकाय नमः	सदरबाजार, चंडीदेवी में, चंडीश्वर के पास ।
१४-	विकटद्विजविनायकाय नमः	धूपचण्डी मुहाल, धूपचण्डी देवी में ।
१५-	राजपुत्रविनायकाय नमः	राजघाट किला में, सड़क के बगल, म०नं० ए. ३७/४८ में।
१६-	प्रणवविनायकाय नमः	त्रिलोचनघाट हिरण्यगर्भेश्वर में ।

द्वितीयावरणे चैव ये रक्षन्ति विनायकाः ।
अविमुक्तमिदं क्षेत्रं तानहं कथयाम्यतः ।।६८ ।।

द्वितीय आवरण में ये गणेश रक्षा करते है। इसलिए इनको अविमुक्त क्षेत्र कहता हूँ।

१७- वक्रतुण्डविनायकाय नमः	लोहटिया बड़ेगणेशजी, मं०नं० के. ५८/१०१, दूसरे राणामहल सरस्वतीविनायक नाम से।
१८- एकदंतविनायकाय नमः	पिताम्बर पुरा केदार मार्ग, म०नं० ७/२०८, दूसरे बंगालीटोला, पुष्पदंतेश्वर म०नं० डी. ३२/१०२ में।
१९- त्रिमुखविनायकाय नमः	सिगरा का टीला, त्रिपुरांतकेश्वर, म०नं० डी. ५६/६५ में।
२०- पंचास्यविनायकाय नमः	पिशाचमोचन पर, म०नं० सी. २१/४० में।
२१- हेरम्बविनायकाय नमः	उसी जगह, मलदहिया बाल्मीकि के टीलापर, म०नं० सी. २१/१४ में। दूसरे त्रिलोचन आदि महादेव के पार्वतीश्वर में।
२२- विघ्नराजविनायकाय नमः	चित्रकूट के तालाब पर, म०नं० जे. १२/३२ में।
२३- वरदविनायकाय नमः	राजघाट पुरानी सड़क, प्रह्लादघाट म०नं० ए. १३/१६ में।
२४- मोदकप्रियविनायकाय नमः	त्रिलोचन, आदिमहादेव के मंदिर में, म०नं० ए. ३/६२ में।

क्षेत्रे तृतीयावरणे क्षेत्ररक्षाकृतः सदा ।
ये विघ्नराजाः सन्तीह ते वक्तव्या मयाधुना ।।६९ ।।

२५- अभयविनायकाय नमः	दशाश्वमेध, शूलटंकेश्वर में, म०नं० डी. १७/१११ के नीचे घाट पर।
२६- सिंहतुण्डविनायकाय नमः	खालिसपुरा ब्रह्मेश्वर में, म०नं० डी. ३३/६६ में।
२७- कूणिताक्षविनायकाय नमः	लक्ष्मीकुण्ड, पुरानी लक्ष्मी, म०नं० ५२/३८ में।
२८- क्षिप्रप्रसादविनायकाय नमः	पितरकुण्डा, पित्रेश्वर महादेव में, म०नं० सी. १८/४७ में।
२९- चिन्तामणिविनायकाय नमः	ईश्वरगंगी तालाब से पूर्व बाबू बाजार, म०नं० के. ५६/४२ में।
३०- दन्तहस्तविनायकाय नमः	लोहटिया, बड़ेगणेश में कूँए के पास, म०नं० के. ५८/१०१ में।

३१- पिचंडिलविनायकाय नमः प्रहूलादघाट, वट वृक्ष के नीचे, फाटक के भीतर, म०नं० ए. १०/८० में।

३२- उद्दंडमुंडविनायकाय नमः त्रिलोचन मंदिर, बरामदे के पास, म०नं० २/८० में।

चतुर्थावरणे काश्यां भक्तविघ्नविनाशकाः।
द्रष्टव्या हृष्टचेतोभिः स्पष्टमष्टौ विनायकाः ।।८८ ।।

काशी में चतुर्थ आवरण में स्थित आठ विनायकों का प्रसन्न चित्त से दर्शन करना चाहिए।

३३- स्थूलदन्तविनायकाय नमः मानमंदिर, सोमेश्वर के द्वार पर, म०नं० डी. १६/३४ में।

३४- कलिप्रियविनायकाय नमः साक्षीविनायक मार्ग पर, मनःप्रकामेश्वर मंदिर, म०नं० डी. १०/५० में।

३५- चतुर्दन्तविनायकाय नमः नईसड़क, सनातनधर्म स्कूल, म०नं० डी. ४८/१० में।

३६- द्विमुखविनायकाय नमः सूर्यकुण्ड साम्बादित्य के पश्चिम, म०नं० डी. ५१/६० में।

३७- ज्येष्ठविनायकाय नमः काशीपुरा, ज्येष्ठेश्वर मंदिर में, म०नं० के. ६२/१४४ में।

३८- गजविनायकाय नमः राजादरवाजा, भारभूतेश्वर के मंदिर, म०नं० ५४/४४ में।

३९- कालविनायकाय नमः रामघाट, सीढ़ी पर, पेड़ के नीचे, म०नं० के. २४/१० में।

४०- नागेशविनायकाय नमः भोंसलाघाट, नागेश्वर के मंदिर, म०नं० के. १/२० में।

प्रावरे पंचमे काश्यां द्विचतुष्कविनायकाः।
कुर्वन्ति रक्षां क्षेत्रस्य ये तानत्र ब्रवीम्यहम् ।।८७ ।।

पांचवे आवरण में ये आठों विनायक क्षेत्र की रक्षा करते हैं।

४१- मणिकर्णिकाविनायकाय नमः मणिकर्णिका, विश्वनाथ सिंह की लकड़ी के अड़ार के बगल में।

४२- आशाविनायकाय नमः मीरघाट, धर्मकूप के दक्षिण, म०नं० डी. २/१५ में।

४३- सृष्टिविनायकाय नमः कालिकागली, म०नं० डी. ८/३ के बाहर।

४४- यक्षविनायकाय नमः कोतवालपुरा, रुद्रप्रयाग के म०नं० सी.के. ३७/२६ में।

४५- गजकर्णविनायकाय नमः	कोतवालपुरा ईशानेश्वर म०नं० सी.के. ३७/४३ में।
४६- चित्रघंटविनायकाय नमः	चित्रघंटादेवी, म०नं० २३/३४ में, दूसरे रानीकुआँ चांदनीचौक, म०नं० सी.के. २३/२५ में।
४७- मंगलविनायकाय नमः	बालाघाट, मंगलागौरी, म०नं० के. २४/३४ में।
४८- मित्रविनायकाय नमः	सिन्धियाघाट के ऊपर, आत्मावीरेश्वर, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।
४६- मोदविनायकाय नमः	नैपालीखपड़ा, काशीकरवट, म०नं० सी.के. ३१/१२ में।
५०- प्रमोदविनायकाय नमः	बगल के मकान में, म०नं० सी.के. ३१/१६ में।
५१- सुमुखविनायकाय नमः	मार्ग पर वही, म०नं० सी.के. ३४/६० में।
५२- दुर्मुखविनायकाय नमः	मार्गपर वही, म०नं० सी.के. ३५/७ में।
५३- गणनाथविनायकाय नमः	ढुंढराजगली, म०नं० सी.के. ३७/१ में।
५४- ज्ञानविनायकाय नमः	ज्ञानवापी कूप के बगल में, मार्गपर।
५५- द्वारविनायकाय नमः	स्वर्गद्वारेश्वर समीप जौविनायक सीढ़ी पर।
५६- अविमुक्तविनायकाय नमः	प्राचीन मूर्ति लुप्त, देसरे ज्ञानवापी मस्जिद की दिवाल में पीछे लेटे हुए।

जो प्राणी इन छप्पन विनायको की यात्रा करते है, वे दुःख और विघ्नों से छूटते है। सर्वसम्पत्ति की प्राप्ति और मनोकामना की सिद्धि होती है। अंतकाल तक ज्ञान बना रहता है। इस यात्रा का बड़ा ही माहात्म्य है।

पंचतीर्थ यात्रा

प्रथमं चासिसम्भेदं तीर्थानां प्रवरं परम्।
ततो दशाश्वमेधाख्यं सर्वतीर्थनिषेवितम् ।।१०८ ।।
ततः पादोदकं तीर्थमादिकेशवसन्निधौ।
ततः पंचनदं पुण्यं स्नानमात्रादघौघहृत् ।।१०६ ।।
एतेषामपि तीर्थानां चतुर्णामपि सत्तम।
पंचमं मणिकर्ण्याख्यं मनोवयवशुद्धिदम् ।।११० ।।
पंचतीर्थ्या नरः स्नात्वा न देहं पांचभौतिकम्।
गृह्णाति जातु चित्काश्यां पञ्चास्योवाथ जायते ।।१११ ।।

(का० ख० अ० ८४)

तीर्थों में परम श्रेष्ठ अस्सी संगम नाम का तीर्थ है सम्पूर्ण तीर्थों से सेवित दशाश्वमेध नाम का दूसरा तीर्थ है। उसके बाद आदिकेशव के सन्निकट में पादोदक नामक तीसरा वरुणा तीर्थ है। स्नान मात्र से पापों के समूह का हरण करनेवाला पंचनद नामक चतुर्थ तीर्थ है।

मणिकर्णिका स्नान से कायिक मानसिक शुद्धि हो जाती है यह पांचवा तीर्थ है। पंचतीर्थो में स्नान करके पंचमहाभूतात्मक शरीर नहीं प्राप्त होता और मनुष्य पांच मुख प्राप्त करके अंत समय शिवस्वरूप हो जाता है।

१-	अस्सी संगमाय नमः	(हरिद्वार) संकल्प और अस्सी संगमस्नान।
२-	अस्सी संगमेश्वराय नमः	अस्सीघाट के ऊपर, म०नं० बी. १/१६६ के सामने।
३-	अस्सी माधवाय नमः	तुलसीदास के स्थान के बगल, म०नं० बी. २/१५ में।
४-	त्रिविक्रमाय नमः	तुलसीदास के स्थान के बगल, म०नं० बी. २/१५ में।
५-	लोलार्काय नमः	भदैनी, प्रसिद्ध, पुरानी मूर्ति लुप्त, दूसरी कुण्ड के ऊपर।
६-	अर्कविनाकाय नमः	लोलार्क से पूर्व तीर पर, म०नं० बी. २/१७ के सामने।

दशाश्वमेधस्नान (प्रयागतीर्थ)

७-	दशाश्वमेधेश्वराय नमः	दशाश्वमेध, शीतलामंदिर में, म०नं० डी. १८/१६ में।

दशाश्वमेधिकं प्राप्य सर्वतीर्थोत्तमोत्तमम्।
यत्किचिंत क्रियते कर्म तदक्षयमिहेरितम्॥

(का० खं० पृ० २०७)

सम्पूर्ण तीर्थो में उत्तम दशाश्वमेध नामक तीर्थ में, जो कुछ उत्तम कर्म किया जाता है, वह अक्षम्य सुख को देता है।

८-	बन्दीदेव्यै नमः	दशाश्वमेधघाट के ऊपर, म०नं० डी. १७/१०० में।
९-	शूलटंकेश्वराय नमः	दशाश्वमेधघाट पर, प्रसिद्ध बड़ालिंग, घाट के ऊपर मंदिर।
१०-	वाराहेश्वराय नमः	दशाश्वमेधघाट राममंदिर, म०नं० डी. १७/१११ में।
११-	सोमेश्वराय नमः	मानमंदिर घाट के ऊपर, म०नं० डी. १६/३४ में।

१२-	दालभेश्वराय नमः	मानमंदिर, म०नं० डी. १६/३२ में।
१३-	प्रयागमाधवाय नमः	मानमंदिर लक्ष्मीनारायण के नाम से प्रसिद्ध, म०नं० डी. १६/२१ में।

वरुणास्नान (गंगासागर तीर्थ)

१४-	वरुणातीर्थाय नमः	वरुणागंगा संगम स्नान।

वाराणसी जाह्नवीभ्यां संगमे लोकविश्रुते ।
दत्वान्नं च विधानेन न स भूयोऽभिजायते ।।

(लिंगपुराण, तीर्थचिंतामणि, पृष्ठ ३५१)

वरुणा संगम पर अन्नदान करने से पुनर्जन्म नहीं होता है।

संगमे तत्र संस्नातः संगमेशं समर्च्य च ।
नरो न जातु जननी गर्भसम्भवमाप्नुयात् ।।

(का० ख०, त्रिथस्लीसेतु, पृष्ठ १७३)

वरुणा संगम में स्नान करके संगमेश्वर की पूजा कर मनुष्य कभी भी माता के गर्भ में नहीं आता है।

१५-	श्वेतद्वीपेश्वराय नमः	वरणा आदिकेश्व के मंदिर, गंगा की तरफ, फाटक के दाहिने, म०नं० ए. ३७/५१ में।
१६-	आदिकेशवाय नमः	राजघाट किला में, प्रसिद्ध, म०नं० ए. ३७/५१ में।
१७-	संगमेश्वराय नमः	आदिकेशव मंदिर में, नीचे, म०नं० ए. ३७/५१ में।
१८-	खर्वविनायकाय नमः	राजघाट किला, आदिकेशव मार्ग पर, प्रसिद्ध।
१६-	केशवादित्याय नमः	वरणा आदिकेशव मंदिर में, म०नं० ए. ३७/५१ में।
२०-	ज्ञानकेशवाय नमः	आदिकेशव के बगल में, म०नं० ए. ३७/५१ में।
२१-	नक्षत्रेश्वराय नमः	आदिकेशव में गंगा की तरफ, दाहिने, चिन्ता हरण विनायक में, म०नं० ए. ३७/५१ में।
२२-	वेदेश्वराय नमः	आदिकेशव में गंगा की तरफ, म०नं० ए. ३७/५१ में।

पंचगंगास्नान (धर्मनदबिन्दुतीर्थ)

२३-	पंचगंगातीर्थाय नमः	पंचगंगाघाट स्नान करना।

एतत्पंचनदं तीर्थं पंचब्रह्मात्मसंज्ञकम् ।
यत्र स्नातो न गृह्णीयाच्छरीरं पांचभौतिकम् ।।

(का० ख०, ५६।११६)

यावत्संख्यास्तिला दत्ताः पितृभ्यो जलतर्पणे ।
पुण्ये पंचनदे तीर्थे तृप्तिः स्यात्तावदाब्दिकी ।।
(का० ख०, ५६।१२१)

शतं समास्तपस्तप्त्वा कृते यत्प्राप्यते फलम् ।
तत्कार्तिके पंचनदे सकृत्स्नानेन लभ्यते ।।
(का० ख०, ५६।१३७)

पंचब्रह्मात्मक नाम का पंचनद तीर्थ है, जिसमें स्नान करके मनुष्य पांचभौतिक शरीर नहीं ग्रहण करते। उस पंचनद तीर्थ में जितनी तिलों की संख्या से पितरो को तर्पण करता है, उतने वर्ष तक मनुष्य के पितर तृप्त रहते है। सैकड़ों वर्ष तक तपस्या कर के जो फल प्राप्त होता है, वही फल कार्तिक महीने में पंचनद तीर्थ में स्नान करने से प्राप्त होता है।

आदिमाधव नामाहं पूज्यः सत्ययुगें युने ।
अनन्तमाधवो ज्ञेयस्त्रेतायां सर्वसिद्धिदः ।।
श्रीदमाधवसंज्ञोऽहं द्वापरे परमार्थकृत् ।
कलौ कलिमलध्वंस ज्ञेयोऽहं बिन्दुमाधवः ।।
(का० ख०, अ० ६०, १२४, १२६)

२४- बिन्दुमाधवाय नमः — पंचगंगाघाट पर प्रसिद्ध, म०नं० २२/३७ में।

चारो युगों में बिन्दुमाधव के चार नाम है-

सतयुग में आदिमाधव। त्रेतायुग में अनन्तमाधव। द्वापरयुग में श्रीदमाधव। कलियुग में बिन्दुमाधव।

२५- गभस्तीश्वराय नमः — पंचगंगा बालाघाट मंगलागौरी, म०नं० के. २४/३४ में।

२६- पंचगंगेश्वराय नमः — पंचगंगा तेलंगमठ के नीचे, म०नं० के. २२/११ में।

२७- मंगलागौर्ये नमः — पंचगंगा बालाघाट, म०नं० २४/३४ में।

२८- मणिकर्णिकातीर्थाय नमः — मणिकर्णिका स्नान मूर्ति संकठा मंदिर के पीछे, म०नं० ७/१३० में।

स्नात्वा मुमुक्षुर्मणिकर्णिकायां मृडानि गंगाहृदये तवास्ते ।
विश्वेश्वरं पश्यति योऽपिकोऽपि शिवत्वमायाति पुनर्नजन्म ।।

मुक्ति की कामना वाले जो प्राणी मणिकर्णिका में स्नान करते है उनके हृदय में गंगा और शिव निवास करते हैं और जो कोई स्नान कर के विश्वनाथ का दर्शन करता है, वह शिवत्व को प्राप्त करता है।

मनोनिवृत्तिः परमोपशान्तिः सातीर्थवर्या मणिकर्णिका च ।
ज्ञानप्रवाहा विमलाऽऽदिगंगा सा काशिकाऽहं निजबोधरूपा ।।

मन का सांसारिक मोह-माया तथा प्रपंच से हट जाना ही परमशान्ति है और वही मणिकर्णिका तीर्थो में श्रेष्ठ है। ज्ञान का प्रवाह जो है, वही शुद्ध गंगा ज्ञान स्वरूप मैं काशी रूप हूँ।

पादोदकासीसंभेद ज्ञानोदमणिकर्णिका ।
षडगोंऽथं महायोगो ब्रह्मधर्महृदावपि ।।

आदिकेशव, अस्सी, ज्ञानवापी, मणिकर्णिका, ब्रह्मनद और धर्मकूप यह छह महायोग कहे गये हैं।

२९-	सिद्धिविनायकाय नमः	मणिकर्णिका कुण्ड के बगल, सीढ़ी से ऊपर, अमेठी कोठी के नीचे, म०नं० सी.के. ६/१ में।
३०-	मणिकर्णिकेश्वराय नमः	गोमठ काकाराम की गली, अभय सन्याश्रम, म०नं० सी.के. ८/१२ में।
३१-	विश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
३२-	अन्नपूर्णायै नमः	प्रसिद्ध, म०नं० डी. ६/१ में।
३३-	दण्डपाणिने नमः	ढुंढिराजगली, म०नं० सी.के. ३६/१० में।
३४-	ढुंढिराजाय नमः	अन्नपूर्णा मार्ग पर।
३५-	ज्ञानवाप्यै नमः	प्रसिद्ध।
३६-	मुक्तिमंडपाय नमः	ज्ञानवापी मंडप को कहते है।

मुक्तिमंडप स्थित व्यासासन के संमुख बैठ कर अक्षत छोड़ कर यथाशक्ति दक्षिणा, भोजन भूयी देकर अपने-अपने घर को जाना चाहिए।

सिद्धलिंगयात्रा (काशीखण्ड)

सिद्धैः ससेवितं लिंग सर्वसिद्धिकरं परम् ।
दर्शनात्स्पर्शनाद्यस्थ मनोनिवृतिभाग्भवेत् ।।
उध्दाटितं सदैवास्ते स्वर्गद्वारं हि यत्र वै ।
दिवानिशं पूजनार्थ विज्ञाप्य त्रिदशेश्वरम् ।।
(का० ख० अ० १०)

सिद्धों के द्वारा अच्छी तरह से पूजित यह लिंग सब प्रकार की सिद्धि को देने वाला है। इसके दर्शन और स्पर्श से मन का संकल्प-विकल्प दूर हो जाता है।

शिवजी अपने भक्तों को ज्ञानरूप शंकर की पूजा के लिए सदा स्वर्गद्वार खुला रखते है।

१- श्रीमदोंकारेश्वराय नमः — पठानी टोला, म०नं० ए. ३३/२३ में।

२- कृत्तिवासेश्वराय नमः — वृद्धकाल की सड़क, रत्नेश्वर के पूर्व, म०नं० के. ४६/२३ में।

३- कालेश्वराय नमः — दण्डपाणि की गली, म०नं० के. ३१/४६ में।

४- वृद्धकालेश्वराय नमः — वृद्धकाल, म०नं० के. ५२/३६ में।

५- कलशेश्वराय नमः — कलशेश्वर की ब्रह्मपुरी के फाटक पर, म०नं० ७/१०० में।

६- केदारेश्वराय नमः — सिंधियाघाट के ऊपर बृहस्पति में, म०नं० सी.के. ७/१३३ में।

७- कामेश्वराय नमः — त्रिलोचन बाजार के पास, म०नं० ए. २/६ में।

कामाः समृद्धिमाप्स्यन्ति कामेश्वरनिषेवणात् ।
तस्मात्सर्व प्रयत्नेन काश्यां कामेश्वरः सदा ।।
पूजनीयः प्रयत्नेन महाकामाभिलाषुकैः ।
यो तस्य मनस्म कामस्तं तमाप्नोति निश्चितम् ।।

(का० ख० ७८-८०।८५)

इच्छावान पुरुष कामेश्वर की पूजा से समृद्धि को प्राप्त करते है। इसलिए बड़े प्रयत्न के साथ निरन्तर काशी में कामेश्वर की पूजा करनी चाहिए। अत्यन्त काम की अभिलाषा वाले पुरुषों को प्रयत्न से पूजा करनी चाहिए। जिसके मन में जो भी कामना होती है, वह सम्पूर्ण कामनाएँ निश्चत रूप से पूर्ण हो जाती है।

८- चन्द्रेश्वराय नमः — सिद्धेश्वरी, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।

६- त्रिलोचनेश्वराय नमः — त्रिलोचनमहादेव, प्रसिद्ध, म०नं० ए. २/८० में।

भुजंगमेखलं लिंग नागयज्ञोपवीतिनम् ।

(का० ख० ७५।५८ए ब्र०पु०, पृष्ठ १६१)

सर्प जिसकी मेखला है और सर्प ही जिसका यज्ञोपवीत है, ऐसे त्रिनेत्रधारी त्रिलोचन महादेव है।

१०- ज्येष्ठेश्वराय नमः — काशीपुरा सप्तसागर, म०नं० के. ६२/१४४ में।

ज्येष्ठेश्वरं समालोक्य न भूयो जायतेभुवि । १२
ज्येष्टेश्वरोऽर्च्यः प्रथमः काश्यां श्रेयोऽर्थिभिर्नरैः ।।

(का० ख० ६३।२०)

ज्येष्ठेश्वर का दर्शन करके प्राणी पृथ्वी पर फिर उत्पन्न नहीं होता । पृथ्वी पर स्थित अर्थ की कामनावाले पुरुष के लिए सर्वप्रथम काशी में ज्येष्ठेश्वर ही पूज्य है ।

११-	जम्बुकेश्वराय नमः	लोहटिया, बड़ेगणेश के दरवाजे पर, म०नं० ५८/१०१ में ।
१२-	जैगीषव्येश्वराय नमः	भूतभैरव, म०नं० के. ६३/१४ में ।
१३-	उटजेश्वराय नमः	गोलादीनानाथ, कबीरचौरा अस्पताल के सामने गली, म०नं० के. ६५/८१ में ।
१४-	ईशानेश्वराय नमः	बांसफाटक मॉल के बगल गली में, म०नं० सी.के. ३७/४३ में ।
१५-	दशाश्वमेधेश्वराय नमः	दशाश्वमेध शीतलाजी में, म०नं० डी. १८/१६ में ।
१६-	वृक्केश्वराय नमः	लुप्त ।
१७-	गरुडेश्वराय नमः	जंगमबाड़ी तेलियाना के पास, म०नं० डी. ३१/४३ में ।
१८-	गोकर्णेश्वराय नमः	कोदई की चौकी से पश्चिम, दैलु की गली, म०नं० डी. ५०/३३ में ।
१९-	गणेश्वराय नमः	मानमंदिरघाट, रामेश्वर को कहते है । म०नं० डी. १६/३४ में ।
२०-	ढुंढिराजाय नमः	अन्नपूर्णा मार्ग पर, प्रसिद्ध ।
२१-	आशाविनायकाय नमः	मीरघाट धर्मकूप के दक्षिण,, म०नं० डी. २/१५ में ।
२२-	गजविनायकाय नमः	बांसफाटक, ईशानेश्वर, म०नं० सी.के. ३७/४७ में ।
२३-	सिद्धविनायकाय नमः	मणिकर्णिका कुण्ड के बगल से ऊपर सीढ़ी के, म०नं० सी. के. ८/१ में ।
२४-	धर्मेश्वराय नमः	मीरघाट धर्मकूप, म०नं० डी. २/२१ में ।
२५-	तारकेश्वराय नमः	ज्ञानवापी के पूर्व, गौरीशंकर के नीचे मढ़ी में ।
२६-	नन्दिकेश्वराय नमः	ज्ञानवापी से पूर्व में ।
२७-	निवसेश्वराय नमः	भूतभैरव, म०नं० के. ६३/२२ में ।
२८-	पितृश्वराय नमः	पितरकुण्डा, म०नं० सी. १८/४७ में ।

२९- प्रीतिकेश्वराय नमः	साक्षीविनायक के पीछे सटे, म०नं० डी. १०/८ में।
३०- पर्वतेश्वराय नमः	सिंधियाघाट, म०नं० सी.के. ७/५० में।
३१- पशुपतीश्वराय नमः	पशुपतेश्वर की गली, म०नं० सी.के. १३/३६ में।
३२- ब्रह्मेश्वराय नमः	खालिसपुरा, म०नं० डी. ३३/६६ में।
३३- मध्यमेश्वराय नमः	मैदागिन से उत्तर, म०नं० ५३/६३, दारानगर में।
३४- बृहस्पतीश्वराय नमः	सिंधियाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१३३ में।
३५- विभाण्डेश्वराय नमः	तिलभाण्डेश्वर ही, पाण्डेहवेली, म०नं० बी. १७/४२ में।
३६- भारभूतेश्वराय नमः	राजादरवाजा, म०नं० ५४/४४ में।
३७- महालक्ष्मीश्वराय नमः	लक्ष्मीकुण्ड, गोपालचन्द के घर, मं०नं० डी. ५२/५४ में।
३८- मरुतेश्वराय नमः	लुप्त।
३९- मोक्षेश्वराय नमः	ज्ञानवापी मस्जिद के पीछे लुप्त स्थान की पूजा।
४०- गंगेश्वराय नमः	ज्ञानवापी मस्जिद से पूर्व गुप्त, स्थान की पूजा करें।
४१- नर्मदेश्वराय नमः	त्रिलोचन के पीछे गली में, म०नं० ए. २/७९ में।
४२- मार्कंडेश्वराय नमः	ज्ञानवापी मस्जिद पूर्व-उत्तर कोणपर गुप्त, दूसरे पीछे बाजार में, म०नं० ३६/१७ में।
४३- मणिकर्णिकेश्वराय नमः	गोमठ काकाराम की गली, सन्यासाश्रम, म०नं० सी.के. ८/१२ में।
४४- रत्नेश्वराय नमः	बितकाल की सड़क, म०नं० के. ५३/४० में।
४५- योगिनीपीठाय नमः	चौसट्टीघाट के ऊपर (चौषष्ठीदेवी), म०नं० डी. २२/१७ में।
४६- यामुनेश्वराय नमः	पाटन दरवाजा, त्रिलोचन मंदिर में, म०नं० ए. २/८० में।
४७- लांगलीश्वराय नमः	खोवागली, म०नं० सी.के. २८/४ में।
४८- विश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१९ में।

४६- अविमुक्तेश्वराय नमः	ज्ञानवापी उत्तर फाटक पर गुप्त, दूसरे राधाकृष्ण धर्मशाला, म०नं० ३१/१ में। तीसरे विश्वनाथ में।
५०- विशालाक्षीश्वराय नमः	मीरघाट विशालाक्षी में, म०नं० डी. ३/८५ में।
५१- व्याघ्रेश्वराय नमः	भूतभैरव, म०नं० के. ६३/१६ में।
५२- वाराहेश्वराय नमः	दशाश्वमेध सट्टी के पीछे, राममंमदर में, म०नं० डी. १७/१११ में।
५३- व्यासेश्वराय नमः	कर्णघंटा तालाब के अन्दर, जल में, म०नं० के. ६०/६६ में।
५४- वृषभध्वजेश्वराय नमः	कपिलधारा, प्रसिद्ध।

कपिलाहृदतीर्थेऽस्मिन्स्नात्वा संयतमानसः।
वृषध्वजमिमंदृष्ट्वा सर्वयज्ञफलं लभेत् ॥

(का० ख० पृ० १७३)

जो संयमी मनुष्य कपिलधारा तीर्थ में स्नान कर वृषभध्वजेश्वर का दर्शन करते हैं, उन्हे सभी यज्ञों का फल मिलता है।

५५- वरुणेश्वराय नमः	ज्योतिरूपेश्वर से पश्चिम गोमठ, म०नं० ८/१० में। दूसरे ढुंढिराजगली, म०नं० सी.के. ३६/१० में।
५६- विधीश्वराय नमः	घोड़ाघाट, दशाश्वमेध गंगाजी के नीचे। दूसरे अगस्तेश्वर में।
५७- वशिष्ठेश्वराय नमः	संकठाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१६१ में।
५८- शनिश्चरेश्वराय नमः	विश्वनाथजी में, पश्चिमफाटक पर, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
५६- सोमेश्वराय नमः	मानमंदिरघाट, म०नं० डी. १६/३४ में।
६०- इन्द्रेश्वराय नमः	मणिकर्णिका घाट, तारकेश्वर के सामने ऊपर पीपर के निचे बड़ा लिंग है।
६१- स्वर्लीनेश्वराय नमः	प्रह्लादघाट नयामाहादेव के नाम से प्रसिद्ध, म०नं० ए. ११/३० में।
६२- संगमेश्वराय नमः	वरणा आदिकेशव में नीचे, म०नं० ए. ३७/५१ में।
६३- हरिश्चन्द्रेश्वराय नमः	संकठाघाट पर, म०नं० सी.के. ७/१६६ में।
६४- हरिकेशवाय नमः	जंगमबाड़ी खारीकुआँ के पास, म०नं० डी. ३५/२७३ में।
६५- त्रिसंघेश्वराय नमः	लाहौरीटोला, फूटे गणेश के सामने, म०नं० सी.के. ३४/१० में।

६६- आदिमहादेवाय नमः	त्रिलोचन के पीछे, म०नं० ए. ३/९२ में।
६७- उपशांतेश्वराय नमः	अग्नीश्वरघाट, म०नं० सी.के. २/४ में।
६८- भवानीशंकराय नमः	अन्नपूर्णा के बगल राममंदिर में, जगन्नाथ जी के बगल में, म०नं० डी. १०/५६ में।
६९- कपर्दीश्वराय नमः	पिशाचमोचन पर, म०नं० सी. २१/४० में।
७०- कन्दुकेश्वराय नमः	भूतभैरव के पास, म०नं० के. ६३/३६ में।
७१- मखेश्वराय नमः	पंचगंगेश्वर और मंगलागौरी के बीच में गंगा में विलीन।
७२- मित्रावरुणाय नमः	वशिष्टवामदेव में सिंधिया-घाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१६१ में।
७३- विकटादेव्यै नमः	सिंधियाघाट के ऊपर, कात्यायनी ही। म०नं० सी.के. ७/१५८ में।
७४- सिद्धेश्वराय नमः	सिद्धेश्वरी मंदिर में, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।
७५- आत्मावीरेश्वराय नमः	सिंधियाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।
७६- दृगचन्द्रेश्वराय नमः	गुप्त।

पुराणों में ओंकारखण्ड की सीमा

प्राच्यां भागीरथी गंगा ऐशान्यामादिकेशवः ।
आग्नेय्यां कपिलेशाख्यं याम्याँ, मत्स्योदरी तथा ।।
गंगेश्वरो नैर्ऋते च प्रतीच्यां नागकुण्डकम् ।
शैलेश्वरो वायुकोणे उत्तरे वरणानदी ।।
एतन्मध्ये संस्थितः स ओंकारः परमेश्वरः ।
अन्यानि बहुलिंगानि सन्ति तन्मध्यगानि च ।।
देवान् केचित स्थापयन्ति यक्षरक्षोरगानरा ।

पूर्व में गंगा, ईशानकोण में आदिकेशव, अग्निकोण में कपिलेश्वर, ईशान और अग्नि के मध्य में मच्छोदरी और नैऋत्यकोण में गंगेश्वर, पश्चिम में नागकुण्ड, वायव्यकोण में शैलेश्वर, उत्तर में वरणानदी तक इनके मध्य में ओंकारेश्वर स्थित है। ओंकारेश्वर के मध्य में बहुत से लिंग विराजमान हैं। बहुत से देवताओं के द्वारा अनेक यक्ष, रक्ष, नाग और मनुष्यों के द्वारा स्थापित है।

अंकाराख्यमिदं लिंग मकाराख्यमिदं परम् ।
उकाराख्यमेतच्च नादाख्यं बिन्दुसंज्ञकम् ।।

ये लिंग अकार, मकार, उकार तथा नादसंज्ञक है।

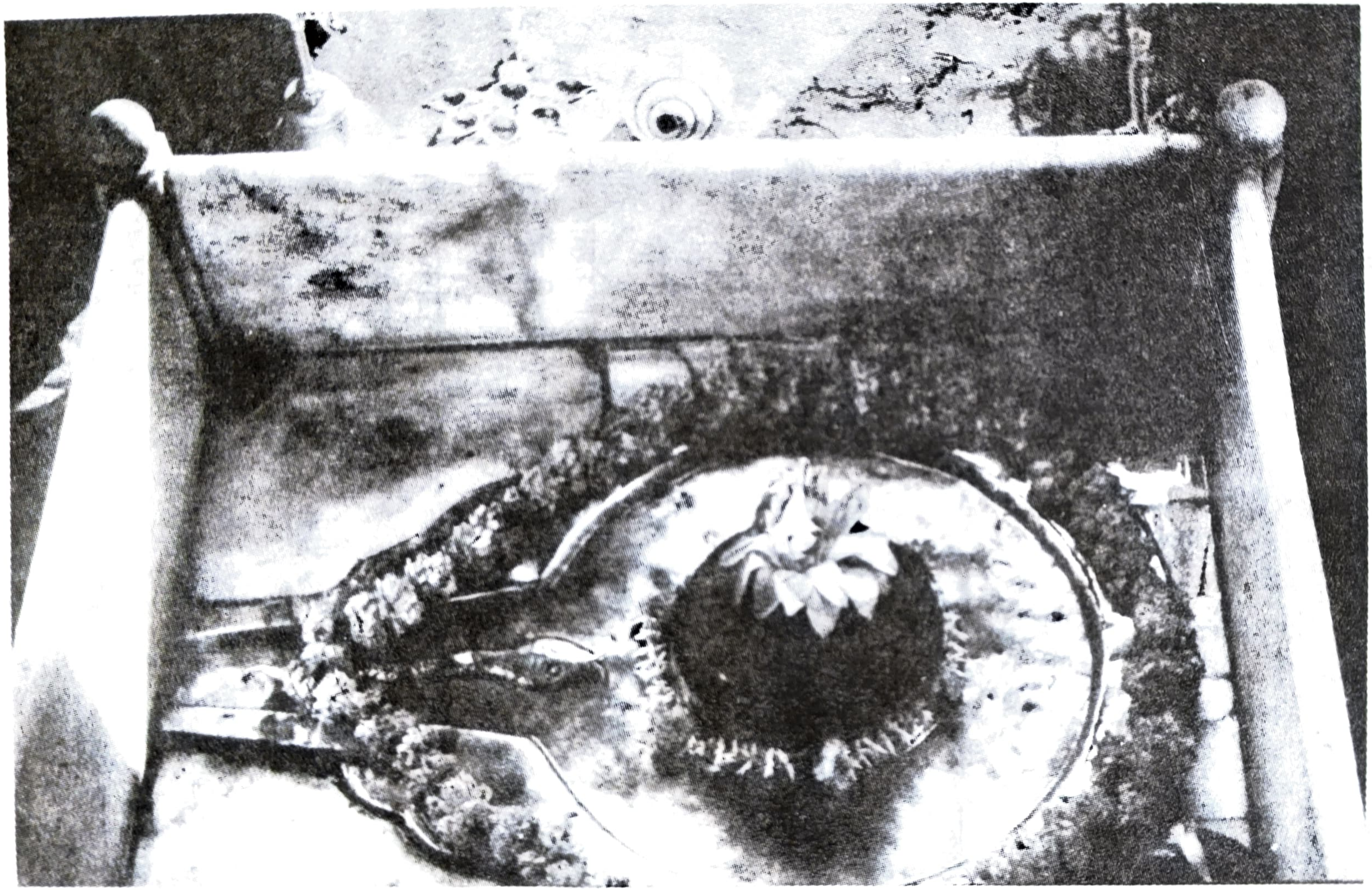

काशी स्थित श्री ओंकारेश्वर महादेव का शिवलिंग

पंचायतनमीशानमित्यमेतदुदीरितम् ।
मोक्षाय सर्वजन्तूनामस्मिन्नानन्दकानने ।।
(का० ख० ७३।१५३-१५४)

पंचायतन ईशान इनको कहा जाता है। (अ. उ. म. नाद बिन्दु) इस आनन्द कानन में सम्पूर्ण प्राणियों को मुक्ति देने वाले है।

यदेतत् कापिलं ज्योतिरेतल्लिंगे विलोक्यते ।
अतस्तु कपिलेशाख्यमेतल्लिंग सुदुर्लभम् ।।
(का० ख० ७३।१५७)

इस लिंग मे जो कपिल-ज्योति दिखलाई पड़ता है, इसीलिए वह कपिल नामका लिंग अत्यन्त दुर्लभ है।

एकमोंकारमालोक्य समस्ते क्षोणिमण्डले ।
लिंगजातानि सर्वाणि दृष्टानिस्युर्नसंशयः ।।
(का० ख० ७३।१७१)

एक ओंकारेश्वर लिंग का दर्शन कर लेने से समस्त पृथ्वीमंडल में जितने लिंग है, सबका दर्शन कर लिया, इसमें संशय नहीं।

तत्र जागरणं कृत्वा चतुर्दश्यामुपोषिताः ।
प्राप्नुवन्ति परं ज्ञानं यत्रकुत्रापि वै मृताः ।।
(का० ख० ७४।९८-९९)

चतुर्दशी तिथि में उपवास रहकर ओंकारेश्वर में जागरण करने से प्राणी कहीं पर भी मरने पर परम ज्ञान प्राप्त करता हैं।

ओंकार-अंतर्गृही-मार्गक्रम

मत्स्यतीर्थ मच्छोदरी स्नान या मार्जन करके पितरों का तर्पण करके, ओंकारेश्वर का पूजन करके प्रह्लादघाट त्रिलोचन वाली गली से राजमंदिर हनुमानजी से रामघाट, नयाघाट से ऊपर गोलागली से सिद्धेश्वरी देवी के मार्ग से कश्मीरी मल की कोठी के सामने से, पशुपतेश्वर वाली गली से लक्खीचौतरा निकल कर, चित्रघंटा चन्दूनाऊ की गली चढ़कर उसी मार्ग से चौक से दारानगर मध्यमेश्वर वृद्धकालेश्वर, कालभैरव होते हुए पुनः चौक आकर गोविन्दपुरा से मछरहट्टा फाटक में घुसकर गुदड़ी बाजार, काशीपुरा से ज्येष्ठेश्वर जाते है फिर उसी मार्ग से लौटकर कबीरचौरा से बेनिया जाने वाली सड़क पर आते है। दाहिने वरनवाल धर्मशाला के बगल से औघड़नाथ की तकिया होते हुए झण्डा तले निकलते हैं। वही से नाटीइमली वाले मार्ग से होते हुए ईश्वरगंगी जाते है। वहां से डिगिया होते हुए नागकुआँ जाते हैं।

नागकुआँ से वागेश्वरी होकर पुनः नागकुआँ होते हुये शैलपुत्री जाते है। वहाँ रात्रि निवास करके दूसरे दिन वरणा नदी के तीर से पुल पर चढ़कर कपालमोचन होते हुए बड़ी सड़क पर आते हैं। फिर सामने पापमोचन तीर्थ जाते है। बलुआबीर मार्ग से हनुमानफाटक के बीच ऋणमोचन तीर्थ का मार्जन दर्शन करते हुए हनुमानमंदिर को बायें छोड़ते हुए चौमुहानी से पीलीकोठी के पास धनेसरामठ में धन्वन्तरीश्वर का दर्शन कर पुनः गोलगड्डा विश्वकर्मेश्वर का दर्शन कर कपालमोचन जाते हैं। बड़ी लाइन के नीचे से दाहिने मुड़कर जाने पर ऐतरणी के बगल से छुतहा अस्पताल होते हुए सड़क पर जाते है। सड़क के किनारे-किनारे वरणा संगम जाते हैं। वहाँ से स्वर्लीनेश्वर का दर्शन पूजन कर प्रह्लादेश्वर होते हुए पुनः ओंकारेश्वर जाकर यात्रा समाप्त करें।

ओंकार अंतर्गृहीयात्रा के देवताओं का नाम और क्रम

१-	तारतीर्थाय नमः	ओंकारेश्वर मंदिर के नीचे पाट दिया गया हैं। लुप्तप्राय, भूमिपूजन।
२-	शुभोदककूपाय नमः	ओंकारेश्वर के पूर्व की ओर गली पर कुआँ जीर्णावस्था में, पूजन मार्जन।
३-	श्रीगुहाय नमः	ओंकारेश्वर के समीप ४ शूलेश्वर फिर ओंकारेश्वर पांचवा हैं।
४-	ओंकारेश्वराय नमः	पठानीटोला, म०नं० ए. ३३/२३ में।
५-	मकारेश्वराय नमः	पठानीटोला के म०नं० ए. ३३/२५ में मकार रूपात्मक ओंकारेश्वर।
६-	अकारेश्वराय नमः	पठानीटोला, म०नं० ए. ३३/४५ में अकार रूपात्मक ओंकारेश्वर।
७-	नादेश्वराय नमः	
८-	बिन्दुकेश्वराय नमः	
९-	गर्गेश्वराय नमः	सिद्धप्रा।
१०-	दमनेश्वराय नमः	प्रह्लादघाट के समीप।
११-	प्रह्लादेश्वराय नमः	प्रह्लादघाट के ऊपर, म०नं० ए. १०/८० में।
१२-	प्रह्लाद-केशवाय नमः	प्रह्लादघाट, म०नं० ए. १०/८० में।
१३-	विश्वेश्वरशान्ताय नमः	प्रह्लादघाट के उत्तर तरफ।
१४-	पिलपिलातीर्थाय नमः	त्रिलोचन से उत्तर, म०नं० ए. ३/८७ में, अब कूप है।
१५-	त्रिलोचनेश्वराय नमः	त्रिलोचन घाट के ऊपर गली, म०नं० ए. २/८० में।

१६- अरुणादित्याय नमः — त्रिलोचनेश्वर की परिक्रमा में पीछे, म०नं० ए. २/८० में।

१७- बाल्मीकीश्वराय नमः — त्रिलोचन मंदिर में बड़ा लिंग।

१८- आदिमहादेवाय नमः — त्रिलोचनेश्वर के पूरब मंदिर में बड़ा लिंग, म०नं० ए. ३/६२ में।

१९- बद्रीनारायणाय नमः — महताघाट पर, म०नं० ए. १/७३ में।

२०- उद्दालकेश्वराय नमः — राजमंदिर हनुमानजी में, म०नं० बी. २०/१५६ में। पहले ओं क्षेत्र में थे।

२१- कपिलेश्वराय नमः — दूधविनायक के आगे गली, म०नं० के. २३/१४ में।

२२- बिन्दुमाधवाय नमः — पंचगंगा पर, म०नं० के. २२/३७ में।

२३- धूतपापेश्वराय नमः — पंचगंगा पर पुस्त के नीचे।

२४- किरणेश्वराय नमः — पंचगंगा पर, मंगलागौरी के सामने गली, म०नं० के. २३/८३ में। दूसरे गंगा के तट पर वहीं।

२५- हनुमदीश्वराय नमः — रामघाट दास हनुमान में सीढ़ी पर, जगरनाथ मंदिर के ऊपर, म०नं० के. २४/१३ में।

२६- मध्यमेश्वराय नमः — दारानगर, म०नं० के. ५३/६३ में।

२७- जमदग्नीश्वराय नमः — दारानगर मध्यमेश्वर मंदिर से सटा, म०नं० के. ५३/६३ में।

२८- भैरवेश्वराय नमः — कालभैरव के पश्चिम कोने पर, म०नं० के. ३२/७ में।

२९- शिवेश्वराय नमः — वृद्धकाल में अमृतकुण्ड से अग्निकोण में, म०नं० के. ५२/३९ में।

३०- मृत्युंजयेश्वराय नमः — वृद्धकाल, म०नं० के. ५२/३९ में।

मृत्युना स्थापितं लिंग सर्वरोगविनाशनम् ।
कालेशाद्दक्षिणे भागे मृत्वीशस्त्वपमृत्युहृत् ।।

(का० ख० ९७।१२९)

मृत्यु द्वारा स्थापित सम्पूर्ण रोग को विनाश करनेवाला और कालेश से दक्षिण भाग में अपमृत्यु को दूर करनेवाला मृत्वीश नाम का (मृत्युंजय) लिंग है।

३१- विश्वेश्वराय नमः — विश्वेश्वरगंज चौराहा, म०नं० के. ४४/३३ में।

३२- अन्नपूर्णायै नमः — अन्नपूर्णागंज चौराहा से उत्तर तरफ, म०नं० सी. ५३/४६ में।

३३- गणेशविनायकाय नमः कम्पनी बाग से उत्तर गली में, गणेश गंज, म०नं० के. ५३/४४ में।

३४- मालतीश्वराय नमः मृत्युंजय मंदिर, म०नं० के. ५२/३६ में।

३५- महाकालेश्वराय नमः वृद्धकाल के घेरे में पश्चिम, म०नं० के. ५२/३६ में।

३६- दूलीतीर्थाय नमः दूलीगड़ही वृद्धकाल से पूरब लुप्त।

३७- वृद्धकालेश्वराय नमः मृत्युंजय मंदिर, म०नं० के. ५२/३६ में।

वृद्धकालेश्वरं लिंग महाकालनिवारणम् ।
कलिकालमहाज्वाला ज्वालंजीवनजीवनम् ।।

(ब्रह्मवैवर्त पु० त्रिस्थलिसेतु पृ. ११७)

वृद्धकालेश्वर जो लिंग है वह महाकाल को दूर करने वाला है। कलिकाल रूपी महाज्वाला को नष्ट करने वाला है, और जीवन को जीवन प्रदान करने वाला है।

३८- दक्षेश्वराय नमः वृद्धकाल कूप से उत्तर, बड़ा शिवाला, म०नं० के. ५२/३६ में।

३९- नन्दीश्वराय नमः वृद्धकाल कूप से उत्तर, बड़ा शिवाला, म०नं० के. ५२/३६ में।

४०- नन्दीश्वरकुण्डाय नमः लुप्त।

४१- जयन्तेश्वराय नमः मृत्युंजय में उत्तर बरामदा, म०नं० के. ५२/३६ में। दूसरे भूतभैरव में।

४२- अन्तकेश्वराय नमः भूतभैरव पर।

४३- हस्तिपालेश्वराय नमः वृद्धकाल मंदिर, म०नं० के. ५२/३६ में।

४४- ऐरावतेश्वराय नमः वृद्धकाल मंदिर से पूर्व दूलीगड़ही पर लुप्त।

४५- ऐरावतकुण्डाय नमः वृद्धकाल मंदिर से पूर्व लुप्त।

४६- विश्वक्सेनेश्वराय नमः वृद्धकाल में असितांगभैरव के सन्निकट, म०नं० ५२/३६ में।

४७- कृत्तिवासेश्वराय नमः मस्जिदवाला स्थान फुहारे की पूजा वृद्धकाल की सड़क।

४८- हंसतीर्थाय नमः हरतीरथ का पोखरा पाट दिया गया है। भूमि पूजन।

४९- रत्नेश्वराय नमः वृद्धकाल की सड़क, म०नं० के. ५३/४० में।

५०- सतीश्वराय नमः वृद्धकाल की सड़क, म०नं० के. ४६/३२ में।

५१- ऋणहर्त्रेश्वराय नमः	रायकृष्णचन्द्र के वाड़े के कोने पर, म०नं० के. ५३/४७ में, वृद्धकाल की सड़क।
५२- कालकूपाय नमः	दण्डपाणि भैरव, कालभैरव के पीछे, म०नं० के ३१/४६ में।
५३- कालेश्वराय नमः	कालभैरव, दण्डपाणि गली, म०नं० के. ३१/४६ में।
५४- कालराजाय नमः	कालभैरव, दण्डपाणि गली, म०नं० के. ३१/४६ में।
५५- जैगीषव्येश्वराय नमः	ईश्वरगंगी, जागेश्वर के पास, म०नं० जे. ६६/३ में।
५६- व्याघ्रेश्वराय नमः	भूतभैरव, म०नं० के. ६३/१६ में। दूसरे गुहागंगा बधवा में।
५७- कन्दुकेश्वराय नमः	भूतभैरव, म०नं० के. ६३/२६ में।
५८- देवलेशाय नमः	भूतभैरव, म०नं० के. ६३/२६ में।
५९- शतकालेश्वराय नमः	ठठेरी बाजार सड़क के नीचे गड़हे, म०नं० के. १७/२४ में।
६०- हेतुकेश्वराय नमः	हड़हा।
६१- तक्षककुण्डाय नमः	औघड़नाथ की तकिया पर गुप्त।
६२- तक्षकेश्वराय नमः	औघड़नाथ के बाहर।
६३- वासुकीश्वराय नमः	सिंधियाघाट के ऊपर, म०नं० ७/१५५ में।
६४- वासुकी कुण्डाय नमः	लुप्त।
६५- ईश्वरगंगी तीर्थाय नमः	ईश्वरगंगी, ईश्वरगंगी तालाब।
६६- जैगीषव्यगुहाय नमः	नाटीइमली जागेंश्वरमठ में दक्षिण, म०नं० जे. ६६/३ में।
६७- अग्निध्रुवेश्वराय नमः	जागेश्वरमठ, ईश्वरगंगी, म०नं० के. ६६/४ में।
६८- नागकुण्डाय नमः	बड़ीबाजार प्रसिद्ध, म०नं० २३/२०६ में।
६९- कर्कोटकेश्वराय नमः	नागकुआँ की सीढ़ी पर, म०नं० जे. २३/२०६ में।

इन्द्रेश्वराद्दक्षिणतोवापीकर्कोटकस्य च ।
तत्र तीर्थजले स्नात्वा दृष्टवा कर्कोटकेश्वरम् ।।
नागानां चाधिपत्यं तु जायते नात्र संशयः ।।

(लिंगपुराणकृत कल्पतरु पृ. ७१)

इन्द्रेश्वर के दक्षिण कर्कोटक नाम की वापी है। उस जल में स्नान कर कर्कोटकेश्वर का दर्शन करने से नागों का राजा होता है, इसमें संशय नहीं है।

तस्यां वाप्यां नरः स्नात्वाकर्कोटेशं समर्च्य च ।
कर्कोटनागमाराध्य नागलोके महीयते ।।

उस वापी के जल से स्नान कर कर्कोटकेश्वर की पूजा करके आराधना करने वाला प्राणी नागलोक में जाता है और पूजनीय हो जाता है ।

कर्कोटनागो यैर्दृष्टस्तद्वाप्या हितोदकैः ।
क्रमते न विषं तेषां देहे स्थावरजंगमम् ।।
(का० ख० ६६।२४-२५)

इस वापी के जल से स्नानादी करके कर्कोट नागके दर्शन करने से स्थावर जंगमात्मक दोनों प्रकार के विष का उस पर असर नहिं होता ।

७०- नागेश्वराय नमः	नागकुवाँ के जल के अन्दर लिंग, म०नं० जे. २३/१०६ में। दूसरे भोसलाघाट म०नं० १/२१ में।
७१- वागेश्वरीदेव्यै नमः	जैतपुरा, म०नं० जे. ६/३३ में।
७२- वागीश्वरी वाप्यै नमः	जैतपुरा, गुप्त।
७३- सिद्धवाप्यै नमः	जैतपुरा, सिद्धेश्वर समीप गुप्त।
७४- सिद्धेश्वराय नमः	जैतपुरा, वागीश्वरी के मार्ग पर, म०नं० जे. ६/८५ में।
७५- ज्वरहरेश्वराय नमः	जैतपुरा, वागीश्वरी के मार्ग पर, म०नं० जे. ६/८५ में।
७६- सोमेश्वराय नमः	जैतपुरा, वागीश्वरी के मार्ग पर, म०नं० जे. ६/८५ में।
७७- सिद्धगणाय नमः	जैतपुरा, वागीश्वरी के मार्ग पर, लुप्त।
७८- शैलेश्वराय नमः	मढ़ियाघाट, शैलपुत्री में, म०नं० ए. ४०/११ में।
७९- शैलपुत्रीदेव्यै नमः	मढ़ियाघाट, शैलपुत्री में, म०नं० ए. ४०/११ में।
८०- वरणातीर्थाय नमः	वरणा नदी की पूजा।
८१- पापमोचन तीर्थाय नमः	नौआ पोखरा, म०नं० ए. ३४/३४ में।
८२- पापमोचनेश्वराय नमः	पोखरा के ऊपर बगल में, म०नं० ए. ३४/३४ में।
८३- ऋणमोचनेश्वराय नमः	ऋणमोचन तीर्थ लड्डू तालाब, प्रसिद्ध हनुमान फाटक तेलियाना, म०नं० ए. ३१/१५६ में।
८४- अंगारेश्वराय नमः	आत्मावीरेश्वर में मंगलेश्वर, म०नं० सीके. ७/१५८ में।
८५- धन्वन्तरीश्वराय नमः	धनेसरामठ, पीलीकोठी, म०नं० जे. ४/६१ में।
८६- धन्वन्तरिकूपाय नमः	धनेसरामठ, म०नं० जे. ४/६१ में।
८७- हलीशेश्वराय नमः	वहीं पास में थोड़ा आगे पीली कोठी, म०नं० जे. ३०/२२ में।

८८- विश्वकर्मेश्वराय नमः ग्लालगढ़ढ़ा, म०नं० ए. ३४/१०६ में। दूसरे आत्मा वीरेश्वर, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।

८९- कपालमोचनतीर्थाय नमः लाटभैरव पर भैरवतीर्थ।

९०- नवभैरवाय नमः लाटभैरव पर भैरवतीर्थ।

९१- कपालेश्वराय नमः लाटभैरव के समीप।

९२- ऐतरणी तीर्थाय नमः छूतहा अस्पताल से थोड़ी दूर पर उत्तर।

९३- वैतरणीतीर्थाय नमः वहीं बगल में आमने सामने।

९४- वरणागंगासंगमाय नमः वरणा का संगम।

९५- वरणासंगमेश्वराय नमः वरणा आदिकेशव के मंदिर में नीचे, म०नं० ३७/५१ में।

९६- चतुर्मुखेश्वराय नमः प्रयागलिंग।

९७- शान्तिकरीगौर्यै नमः ककरहाघाट वरणा तट पर।

९८- केशवादित्याय नमः वरणा संगम आदिकेशव में, म०नं० ३७/५१ में।

९९- आदिकेशवाय नमः वरणा प्रसिद्ध, म०नं० ए. ३७/५१ में।

१००- ज्ञानकेशवाय नमः आदिकेशव के बगल में, म०नं० ए. ३७/५१ में।

१०१- वेदेश्वराय नमः आदिकेशव फाटक के बाहर, गंगा की ओर, चिन्ता हरण गणेश में, म०नं० ए. ३७/५१ में।

१०२- नक्षत्रेश्वराय नमः आदिकेशव फाटक के बाहर, गंगा की ओर, चिन्ता हरण गणेश में, म०नं० ए. ३७/५१ में।

१०३- दण्डीश्वराय नमः दण्डखाना तीर्थ के दक्षिण पियाला शहीद के कुण्ड पर लुप्त।

१०४- तुंगेश्वराय नमः धन्वन्तरी नाम से वृद्धकाल, म०नं० के. ५२/३९ में।

१०५- गजतीर्थाय नमः आदिकेशव के सामने गंगा में।

१०६- भैरवतीर्थाय नमः लाटभैरव का तालाब या दण्डपाणि भैरव कूप, मवनं० के. ३१/४९ में।

१०७- स्वर्लीनेश्वराय नमः राजघाट नयामहादेव के नाम से प्रसिद्ध, पंचाग्नी अखाड़ा, म०नं० ए. ११/३० में।

१०८- ओंकारेश्वराय नमः पठानीटोला, म०नं० ए. ३३/२३ में टीला पर।

प्रथम चतुर्दशलिंगयात्रा, ज्येष्ठकृष्ण १ से १४ तक

त्वया तु यानि पृष्ठानि यैरिदं क्षेत्रमुत्तमम्।
तानि लिंगानि वक्ष्यामि मुक्ति हेतूनि सुन्दरि ॥२८॥
ओंकारः प्रथमं लिंगं द्वितीयं च त्रिलोचनम्।
तृतीयश्च महादेवः कृत्तिवासश्चतुर्थकम् ॥३२॥

रत्नेशः पंचमं लिंगं षष्ठं चन्द्रेश्वराभिधम् ।
केदारः सप्तमं लिंगं धर्मेशश्चाष्टमं प्रिये ।।३३ ।।
वीरेश्वरं च नवमं कामेशं दशमं विदुः ।
विश्वकर्मेश्वरं लिंगं शुभमेकादशं परम् ।।३४ ।।
द्वादशं मणिकर्णिशमविमुक्तं त्रयोदशम् ।
चतुर्दशं महालिगं मम विश्वेश्वराभिधम् ।।३५ ।।
प्रिये चतुर्दशेतानी महालिंगानि यत्नतः ।
दृष्ट्वा न जायते जन्तुः संसारे दुःखसागरे ।।६५ ।।
क्षेत्रस्य परमं तत्वमतदेव प्रिये ध्रुवम् ।
संसाररोगग्रस्तानामिदमेव महौषधम् ।।६६ ।।
एकैकस्यास्य लिंगस्य महिमाद्यन्तवर्जितः ।
मयैव ज्ञायते देवि सम्यङ् नान्येन केनचित् ।।६८ ।।

(का० ख० अ० ७३)

जिन लिंगों से यह क्षेत्र श्रेष्ठ हैं, जिनके विषय में तुमने पूछा है, उन लिंगों को मुक्ति के लिये कहता हूँ । श्री महादेव जी पार्वती से कहते हैं, कि इन प्रथम विभाग के महा चतुर्दश लिंगों को यत्नपूर्वक यात्रा से कोई भी जीव हो दु-ख सागर रूप संसार में फिर नहीं उत्पन्न होता और काशीक्षेत्र के यही १४ लिंग परमोत्तम तत्त्व भी है । यह निश्चय संसाररूप रोगग्रस्त लोगों के लिये परम औषध है । इन लिंगों की महिमा का आदि अन्त नहीं है । इसे पूर्णरूप से मै ही जानता हूँ। दूसरे किसी को तो ज्ञान ही नहीं है ।

१- ओंकारेश्वराय नमः — ज्येष्ठ कृष्ण १, मच्छोदरी के उत्तर पठानी टोला, प्रसिद्ध, म०नं० ए. ३३/२३ में ।

२- त्रिलोचनेश्वराय नमः — ज्येष्ठ कृष्ण २, त्रिलोचन महाल प्रसिद्ध, म०नं० ए. २/८० में ।

३- आदिमहादेवाय नमः — ज्येष्ठ कृष्ण ३, त्रिलोचन के पीछे पूरब दिशा, म०नं० ए. ३/६२ में ।

४- कृत्तिवासेश्वराय नमः — ज्येष्ठ कृष्ण ४, हरतीरथ तालाब के पश्चिम तट, म०नं० के. ४६/२३ में ।

कृत्तिवाससमारभ्य वाराणस्यां चतुर्दिशम् ।
योजनं तत्र तत्क्षेत्रं गणैरुद्रैश्चसंवृतम् ।।

(लिं. पु. कृतकल्पतरु, पृ. ४०)

५- रत्नेश्वराय नमः	ज्येष्ठ कृष्ण ५, वृद्धकाल के मार्ग पर, म०नं० के. ५३/४० में।
६- चन्द्रेश्वराय नमः	ज्येष्ठ कृष्ण ६, सिद्धेश्वरी के मंदिर, म०नं० के. ७/१२४ में।
७- केदारेश्वराय नमः	ज्येष्ठ कृष्ण ७, केदारघाट प्रसिद्ध, म०नं० बी. ६/१०२ में।
८- धर्मेश्वराय नमः	ज्येष्ठ कृष्ण ८, मीरघाट धर्मकूप, म०नं० डी. २/२१ में।
६- वीरेश्वराय नमः	ज्येष्ठ कृष्ण ६, सिंधियाघाट के ऊपर प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।
१०- कामेश्वराय नमः	ज्येष्ठ कृष्ण १०, त्रिलोचन के उत्तर, म०नं० ए. २/६ में।
११- विश्वकर्मेश्वराय नमः	ज्येष्ठ कृष्ण ११, गोलगड्डा, पीलीकाठी, म०नं० ए. ३४/१०६ में।
१२- मणिकर्णिकेश्वराय नमः	ज्येष्ठ कृष्ण १२, गोमठ सन्यास आश्रम, म०नं० सी.के. ८/१२ में।
१३- अविमुक्तेश्वराय नमः	ज्येष्ठ कृष्ण १३, प्रथम ज्ञानवापी पर गुप्त। दूसरे राधाकृष्ण धर्मशाला, म०नं० ३०/१ में। तीसरे विश्वनाथ में, म०नं० सी. के. ३५/१६ में। चौथे मणिकर्णिका मार्ग पर।
१४- विश्वेश्वराय नमः	ज्येष्ठ कृष्ण १४, प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।

द्वितीय चतुर्दशलिंगयात्रा, आषाढ़कृष्ण १ से १४ तक

अमृतेशस्तारकेशो ज्ञानेशः करुणेश्वरः ।।४५ ।।
मोक्षद्वारेश्वरश्चैव स्वर्गद्वारेश्वरस्तथा ।
ब्रह्मेशोलांगलश्चैव वृद्धकालेश्वरस्तथा ।।४६ ।।
बृषेशश्चैवचण्डीशो नन्दिकेशोमहेश्वरः ।
ज्योतिरूपेश्वरं लिंग ख्यातमत्र चतुर्दशम् ।।४७ ।।
काश्यां चतुर्दशैतानि महालिंगानि सुन्दरि ।
इमानि मुक्तिहेतूनि लिंगान्यानन्दकानने ।।४८ ।।
एतान्याराधयेद्यस्तृ लिंगानीह चतुर्दश ।।४६/२
न तस्यपुनरावृत्तिः संसाराध्वनि कर्हिचित् ।।५०/१ ।।

(का० खं० अ० ७३)

इन चतुर्दशलिंगों की यात्रा अवश्य करनी चाहिए। काशी में ये लिंग मुक्ति के हेतु है। इन चौदह लिंगों की आराधना करने से संसार सागर में कभी जन्म लेना नहीं पड़ता है।

१-	अमृतेश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण १, नीलकंठ कुंजबिहारी का, म०नं० सी.के. ३३/२८ में।
२-	तारकेश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण २, ज्ञानवापी से पूरब गौरीशंकर मढ़ी के नीचे।
३-	ज्ञानेश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण ३, लाहौरीटोला, म०नं० डी. १/३२ में।
४-	करुणेश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण ४, त्रिसंधेश्वर के सामने, म०नं० सी.के. ३४/१० में।
५-	मोक्षद्वारेश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण ५, करुणेश्वर में पूरब, म०नं० सी.के. ३४/१० में।
६-	स्वर्गद्वारेश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण ६, मोक्षद्वारेश्वर में, म०नं० सी.के. ३४/१० में।
७-	ब्रह्मेश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण ७, खालिसपुरा, बंगालीटोला, म०नं० डी. ३३/६६ में।
८-	लांगलीश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण ८, खोआबाजार, म०नं० सी.के. २८/४ में।
९-	वृद्धकालेश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण ९, वृद्धकाल प्रसिद्ध, म०नं० के. ५२/३९ में।
१०-	वृषेश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण १०, मैदागीन गोरखनाथ का टीला, म०नं० के. ५८/७८ में।
११-	चण्डीश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण ११, सदर बाजार चण्डीदेवी के पास पश्चिम।
१२-	नन्दिकेश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण १२, मलदहिया रोडवेज मार्गपर, म०नं० एस. २१/११७ में।
१३-	महेश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण १३, मणिकर्णिका कुण्ड से पूर्व तट पर मढ़ी में।
१४-	ज्योतिरूपेश्वराय नमः	आषाढ़ कृष्ण १४, गौमठ, म०नं० सी.के. ८/१० बलजीत परमार्थ भवन में।

इन चौदह लिंगों की यात्रा काशीवासियों को प्रतिवर्ष करनी चाहिए।

तृतीय चतुर्दशलिंगयात्रा, चैत्रकृष्ण १ से १४ तक (सायुज्यमुक्तिप्राप्ति)

समारभ्य प्रतिपदं यावत्कृष्णाचतुर्दशी ।
एतत्क्रमेण कर्तव्यान्येतदायतनानि वै ।।६१ ।।
इमां यात्रां नरः कृत्वा न भूयोप्यभिजायते ।।६१ ।।

(का० खं० अ० १००)

१-	शैलेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण १, मढ़ियाघाट शैलपुत्री में, म०नं० ए. ४०/११ में ।
२-	संगमेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण २, वरणा आदिकेशव में नीचे, म०नं० ३७/५१ में ।
३-	स्वर्लीनेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण ३, प्रह्लादघाट नयामाहादेव मोहाल, म०नं० ए. ११/३० में ।
४-	मध्यमेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण ४, दारानगर प्रसिद्ध, म०नं० ५३/६३ में ।
५-	हिरण्यगर्भेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण ५, त्रिलोचनघाट मढ़ी में ।
६-	ईशानेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण ६, बाँसफाटक सिनेमा के बगल, म०नं० सी. ३७/४३ में ।
७-	गोप्रेक्षेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण ७, लालघाट गौरीशंकर नाम से प्रसिद्ध, म०नं० ४/२४ में ।
८-	बृषभध्वजेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण ८, कपिलधारा प्रसिद्ध ।
९-	उपशान्तेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण ९, पठानीटोला, म०नं० २/४ में ।
१०-	ज्येष्ठेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण १०, काशीपुरा प्रसिद्ध, म०नं० के. ६२/१४४ में ।
११-	निवासेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण ११, भूतभैरव गली, म०नं० के. ६२/२२ में ।
१२-	शुक्रेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण १२, कालिकागली, म०नं० डी. ८/३० में ।
१३-	व्याघ्रेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण १३, भूतभैरव के पास, म०नं० के. ६३/१६ में ।
१४-	जम्बुकेश्वराय नमः	चैत्रकृष्ण १४, लोहटिया बड़ेगणेश, म०नं० के. ५८/१०१ में ।

इन चौदह लिंगों की यात्रा के करने से मनुष्यों के सर्व कार्य सिद्ध हो जाते है और पुनः इस संसार में जन्म नहीं होता । वह परमगति को प्राप्त होता है ।

अविमुक्त प्रदक्षिणा यात्रा

प्रथम मणिकर्णिका घाट स्नान करके मुक्तिमण्डप व्यासासन से नियम लेकर अविमुक्तेश्वर महादेव की पूजा करे।

अविमुक्तेश्वर प्रथम ज्ञानवापी के उत्तर फाटक कब्र के चबूतरे पर गुप्त। द्वितीय वहीं राधाकृष्ण धर्मशाला में, मस्जिद के सामने खिड़की में बड़ी मूर्ति। तृतीय ब्रह्मनाल महादेव से मणिकर्णिका मार्ग पर। चतुर्थ विश्वनाथ मंदिर दक्षिण कोण पर। पूजा करके फिर विश्वनाथ अन्नपूर्णा मोदादि पंचगणेशों की पूजा करें। यह पाँचों विश्वनाथ के कचहरी में एक ही स्थान पर है। पूजा कर यात्रा आरम्भ करें।

अविमुक्तं समासाद्य तीर्थसेवी कुरूद्वह।
दर्शनादेव देवस्य मुच्यते ब्रह्महत्यया ॥

(महाभारत, वनपर्व, ८४।१८)

तीर्थ की सेवा करने वाला अविमुक्त को प्राप्त कर उनके दर्शन से ही ब्रह्महत्या से मुक्त हो जाता है।

१-	मणिकर्णिकेश्वराय नमः	गोमठ अभयसन्यास आश्रम, म०नं० सी.के. ८/१२ में।
२-	सिद्धविनायकाय नमः	मणिकर्णिका कुण्ड के बगल से सीढ़ी चढ़कर, म०नं० सी.के. ६/१ में।
३-	ललितादेव्यै नमः	ललिताघाट, म०नं० १/६७ में।
४-	गंगाकेशवाय नमः	ललिताघाट, म०नं० १/६८ में।
५-	जरासंधेश्वराय नमः	त्रिपुरा भैरवी घाट के ऊपर म०नं० डी. ५/१० में।
६-	सोमेश्वराय नमः	मानमंदिर घाट, म०नं० डी. १६/३४ में।
७-	अदालभ्येश्वराय नमः	मानमंदिर घाट, म०नं० डी. १६/३२ में।
८-	शूलटंकेश्वराय नमः	दशाश्वमेध घाट पर बड़ी मूर्ति।
९-	आदिवाराहेश्वराय नमः	म०नं० डी. १७/१११ दशाश्वमेध पर, राममंदिर में।
१०-	बंदीदेव्यै नमः	दशाश्वमेध के ऊपर सीढ़ी से, म०नं० डी. १७/१०० में।
११-	दशाश्वमेधेश्वराय नमः	शीतला जी के मंदिर में, म०नं० डी. १८/१६ में।
१२-	चतुःषष्ठीदेव्यै नमः	चौसट्टी घाट के ऊपर राणामहल, म०नं० डी. २२/१७ में।

१३-	सर्वेश्वराय नमः	पांडेयघाट के ऊपर चढ़कर दाहीने, म०नं० डी. २५/३२ में।
१४-	क्षेमेश्वराय नमः	क्षेमेश्वरघाट, कुमारस्वामी मठ, म०नं० बी. १४/१४ में।
१५-	रुक्मांगदेश्वराय नमः	चौकीघाट हनुमान मंदिर में, म०नं० बी. १४/१ में।
१६-	गौरीकुण्डाय नमः	केदारघाट पर कुण्ड।
१७-	केदारेश्वराय नमः	केदारघाट प्रसिद्ध, म०नं० बी. ६/१०२ में।
१८-	लम्बोदरविनायकाय नमः	केदारघाट के बगल में लालीघाट कोई कोई चिन्तामणि को कहते है।
१९-	कूटदंतविनायकाय नमः	कीनाराम का स्थल कृमिकुण्ड, म०नं० बी. ३/३३५ में।
२०-	वैद्यनाथेश्वराय नमः	बैजनत्था पर, म०नं० ३७/१ में।
२१-	त्रिपुरांतकेश्वराय नमः	सिगरा का टीला, म०नं० डी. ५६/६५ में।
२२-	त्रिमुखविनायकाय नमः	सिगरा का टीला, म०नं० डी. ५६/६५ में ही।
२३-	विमलतीर्थाय नमः	पिशाचमोचन का तालाब।
२४-	कपर्दीश्वराय नमः	पिशाचमोचन, म०नं० सी. २१/४० में।

मार्गशुक्लचतुर्दश्यां कपर्दीश्वरसन्निधौ ।
स्नात्वान्यत्रापि मरणान्नपैशाच्यमवाप्नुयुः ।।

(का० खं० ५४।८०)

मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष की चतुर्दशी को कपर्दीश्वर के समीप विमलकुण्ड पिशाचमोचन पोखरा में स्नान करके कपर्दीश्वर दर्शन करने वाला प्राणी मरने के बाद पिशाचगति को नहीं पाता है।

२५-	पिशाचविनायकाय नमः	पिशाचमोचन, म०नं० सी. २१/४० में।
२६-	हेरम्बविनायकाय नमः	त्रिलोचन मंदिर के पीछे, पार्वतीस्वर में। म०नं० ए. ३/६२ में।
२७-	वाल्मीकेश्वराय नमः	मलदहिया वाल्मीकी का टीला, म०नं० सी. २१/१४ में। दूसरे त्रिलोचन म०नं० ए.३/२० में।
२८-	विघ्नराजविनायकाय नमः	चित्रकूट के तालाब पर, म०नं० जे. १२/३२ में।
२९-	धूमावतीदेव्यै नमः	नाटीइमली धूपचण्डी देवी, म०नं० जे. १२/१ में।
३०-	विकटद्विजविनायकाय नमः	नाटीइमली के पीछें, म०नं० जे. १२/२३४ में।

३१- वागेश्वरीदेव्यै नमः — जैतपुरा स्कन्दमाता, म०नं० जे. ६/३३ में।

३२- प्रणवेश्वराय नमः — मछोदरी पार्क से उत्तर पठानी टोला ओंकारेश्वर ही।

३३- कामेश्वराय नमः — मछोदरी पार्क के दक्षिण, म०नं० ए. २/६ में।

कामाः समृद्धिमाप्स्यन्ति कामेश्वरनिषेवणात् ।
तस्मात्सर्वं प्रयत्नेनकाश्यां कामेश्वरः सदा ।।
पूजनीयः प्रयत्नेन महाकामाभिलाषुकैः ।
यो यस्य मनसाकामस्तं तमाप्नोति निश्चितम् ।।
(का० खं० ७८-८०।८५)

इच्छावान् पुरुष कामेश्वर की पूजा से समृद्धि को प्राप्त करते हैं। इसलिए बड़े प्रयत्न के साथ सदा कामेश्वर की पूजा करनी चाहिए। अत्यन्त काम की अभिलाषावाले पुरुष प्रयत्न से पूजा करें। जिसके मन में जो भी कामना होती है, वह सम्पूर्ण कामनाएँ निश्चितपूर्ण होती हैं (शनिप्रदोष के दिन सायंकाल **इनके पूजन का विशेष माहात्म्य हैं**)।

३४- त्रिलोचनेश्वराय नमः — त्रिलोचन प्रसिद्ध, म०नं० ए. २/८० में।

ओङ्कारादपि सल्लिङ्गान्मोक्षवर्त्मप्रकाशकात् ।
अतिश्रेष्ठतरं लिङ्गं श्रेयोरूपं त्रिलोचनम् ।।

अक्षयतृतीया को व्रत-जागरण, अन्नदान-जल-कुम्भ के दान से पितर लोगों को अक्षय तृप्ति मिलती हैं। अक्षयतृतीया को त्रिलोचन के समीप पिलपिलातीर्थ में स्नान करना श्रेयस्कर है।

३५- हिरण्यगर्भेश्वराय नमः — त्रिलोचनघाट के ऊपर, मढ़ी में।

३६- पंचगंगायै नमः — पंचगंगाघाट प्रसिद्ध, गंगा की पूजा।

३७- बिन्दुमाधवाय नमः — पंचगंगाघाट, म०नं० के. २२/३७ में।

३८- मंगलागौर्यै नमः — पंचगंगा प्रसिद्ध, म०नं० के. २४/३४ में।

३९- गभस्तीश्वराय नमः — पंचगंगा मंगलागौरी के मंदिर, म०नं० के. २४/३४ में।

४०- वीररामेश्वराय नमः — रामघाट, म०नं० के. २४/१० में।

४१- अग्नीश्वराय नमः — पटनीटोला, म०नं० सी.के. २/१ में।

४२- उपशान्तीश्वराय नमः — पटनीटोला, बगल का मकान नं० सी.के. २/४ में।

४३- नागेश्वराय नमः — भोसलाघाट, म०नं० सी.के. १/२१ में।

४४- यमेश्वराय नमः — यमघाट पर।

४५- यमादित्याय नमः — सिंधियाघाट वशिष्ठ वामदेव की सीढ़ी पर, म०नं० सी.के. ७/१६४ में।

४६- हरिश्चन्द्रेश्वराय नमः	संकठाघाट, म०नं० सी.के. ७/१६६ में।
४७- वशिष्ठवामदेवाय नमः	सिंधियाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१६१ में।
४८- आत्मावीरेश्वराय नमः	सिंधियाघाट प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।
४९- वासुकीश्वराय नमः	सिंधियाघाट, म०नं० सी.के. ७/१५५ में।
५०- पर्वतेश्वराय नमः	सिंधियाघाट, म०नं० सी.के. ७/१५६ में।
५१- महेश्वराय नमः	मणिकर्णिका कुण्ड के सामने, मढ़ी में गंगा तट।
५२- मणिकर्णिकाविनायकाय नमः	सतुआ बाबा आश्रम, म०नं० सी.के. १०/४८ के सामने।
५३- ब्रह्मनालेश्वराय नमः	मणिकर्णिका मार्ग पर, म०नं० सी.के. १०/५३ में।
५४- स्वर्गद्वारेश्वराय नमः	फूटे गणेश के सामने, मोक्षद्वारेश्वर, म०नं० ३४/१० में।
५५- पुलहेश्वराय नमः	वहीं ठाकुरदास सुरेका भवन, म०नं० सी.के. ३३/४३ में।
५६- पुलस्तीस्वराय नमः	ठाकुरदास सुरेका भवन के सामने राममंदिर के बाहर छोटे शिवाला के नीचे।
५७- अमृतेश्वराय नमः	बच्चामहाराज गंगापुत्र के म०नं० सी.के. ३३/२८ में।
५८- गंगेश्वराय नमः	ज्ञानवापी पीपल तले गुप्तस्थान की पूजा।
५९- तारकेश्वराय नमः	ज्ञानवापी कूप से पूर्व गौरीशंकर मढ़ी के नीचे।
६०- नन्दिकेश्वराय नमः	ज्ञानवापी से पूर्व बड़ा नन्दी की पूजा।
६१- महाकालेश्वराय नमः	नन्दीश्वर के पीछे पीपल के नीचे चौतरे पर।
६२- ज्ञानवाप्यै नमः	प्रसिद्ध, ज्ञानकूप वहीं।
६३- महेश्वराय नमः	ज्ञानकूप से पश्चिम दक्षिण कोण पर।
६४- मोक्षेश्वराय नमः	मस्जिद के पीछे, लुप्तस्थान की पूजा।
६५- वीरभद्रेश्वराय नमः	मस्जिद से उत्तर कोने में लुप्त स्थान की पूजा।
६६- विश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१९ में।
६७- अन्नपूर्णाय नमः	वहीं, आगे प्रसिद्ध, म०नं० डी. ९/१ में।
६८- ढुण्ढिराजाय नमः	प्रसिद्ध, अन्नपूर्णा मार्ग पर।
६९- दण्डपाणये नमः	आगे ढुंढिराज गली, म०नं० सी.के. ३६/१० में।

७०- मोदाय नमः	नेपाली खपड़ा, काशी करवट, म०नं० सी.के. ३१/१२ में।
७१- प्रमोदाय नमः	वही बगल के घर में, म०नं० सी.के. ३१/१६ में।
७२- सुमुखाय नमः	वहीं आगे मार्ग परं, म०नं० सी.के. ३४/६० में।
७३- दुर्मुखाय नमः	वहीं गली पर घर, म०नं० सी.के. ३५/७ में।
७४- गणनाथाय नमः	मस्जिद के पीछे, बाजार में अपारनाथ मठ के कोने पर, म०नं० ३७/१ में।
७५- अविमुक्तेश्वराय नमः	ज्ञानवापी उत्तरफाटक पर लुप्त स्थान की पूजा। दूसरे राधाकृष्ण धर्मशाला में मस्जिद की सीढ़ी के सामने, खिड़की में बड़ी मूर्ति, म०नं० सी.के. ३०/१ में।

ज्ञानवापी व्यासासन पर अक्षत छोड़ कर, ब्राह्मण को दक्षिणा देकर यात्रा समाप्त करें।

नगरप्रदक्षिणा यात्रा

मार्गशीर्ष पूर्णिमा को नगर कृत दोषों की शान्ति के लिए नगरप्रदक्षिणा यात्रा करनी चाहिये। मणिकर्णिका गंगा में स्नान कर विश्वनाथ की यथोपचार पूजा करना, मोदादि पंचविनायकों को प्रणाम करके ज्ञानवापी व्यासासन से नियम (संकल्प) लेकर मौन हो यात्रा करनी चाहिये। क्षेत्र सन्यास लेने वालों को इस यात्रा का विधान है (ब्रह्मवैवर्त पुराण)।

१- मणिकर्णिकायै नमः	गंगा में मार्जन कर मणिकर्णिका देवी का दर्शन करें। संकठा जी के पीछे म०नं० ७/१३० में।
२- मणिकर्णिकेश्वराय नमः	गोमठ अभयसन्यास आश्रम, म०नं० सी.के. ८/१२ में।
३- सिद्धविनायकाय नमः	कुण्ड के बगल अमेठी के शिवाले में, म०नं० सी.के. ८/१ में।
४- गंगाकेशवाय नमः	ललिताघाट के ऊपर, म०नं० डी. १/६८ मे।
५- ललितागौर्ये नमः	ललिताघाट, म०नं० डी. १/६७ में।
६- जरासंधेश्वराय नमः	त्रिपुरा भैरवी घाट के ऊपर म०नं० ५/१० में।

७-	रामेश्वराय नमः	मानमन्दिरघाट के ऊपर, म०नं० डी. १६/२ में।
८-	सोमेश्वराय नमः	मानमन्दिरघाट के ऊपर, म०नं० डी. १६/३४ में।
९-	अदाल्भ्येश्वराय नमः	मानमन्दिरघाट के ऊपर, म०नं० डी. १६/३२ में।
१०-	शूलटंकेश्वराय नमः	दशाश्वमेध घाट पर।
११-	आदिवाराहेश्वराय नमः	महादेव घाटिया के घर, म०नं० डी. १७/१११ में।
१२-	बन्दीदेव्यै नमः	दशाश्वमेध घाट के ऊपर, म०नं० डी. १७/१०० में।
१३-	दशाश्वमेधेश्वराय नमः	दशाश्मेधघाट शीतला मंदिर में बड़ा लिंग, म०नं० डी. १८/१९ में।
१४-	चतुःषष्टिदेव्यै नमः	चौषट्टी घाट के ऊपर राणामहल, म०नं० डी. २२/१७ में।
१५-	सर्वेश्वराय नमः	पाण्डेयघाट के ऊपर सीढ़ी चढ़कर, म०नं० डी. २५/३२ में।
१६-	क्षेमेश्वराय नमः	क्षेमेश्वरघाट कुमारस्वामी मठ, म०नं० बी. १४/१४ में।
१७-	रुक्मांगदेश्वराय नमः	चौकीघाट के ऊपर हनुमानमंदिर, म०नं० बी. १४/१ में।
१८-	गौरीकुण्डाय नमः	केदारघाट पर प्रसिद्ध।
१९-	केदारेश्वराय नमः	केदारघाट पर प्रसिद्ध, म०नं० बी. ६/१०८ में।
२०-	हनुमदीश्वराय नमः	हनुमानघाट नीचे मढ़ी में, म०नं० बी. ४/४२।
२१-	रामेश्वराय नमः	हनुमानघाट हनुमान मंदिर में, म०नं० बी. ४/४२।
२२-	सीतेश्वराय नमः	हनुमानघाट हनुमान मंदिर परिक्रमा में, म०नं० बी. ४/४२ में।
२३-	लोलार्काय नमः	भदैनी पुरानीमूर्ति लुप्त। लोलार्ककुण्ड के ऊपर बड़ी मूर्ति का पूजन।
२४-	लोलार्कादित्याय नमः	लोलार्ककुण्ड की सीढ़ी पर, नीचे मढ़ी में।
२५-	कुण्डोदरेश्वराय नमः	अस्सीघाट पर गुप्त। दूसरे लोलार्ककुण्ड पर रखी मूर्ति।
२६-	अमरेश्वराय नमः	लोलार्क के पास, म०नं० बी. २/२० में।
२७-	अर्कविनायकाय नमः	लोलार्क से गंगा के ऊपर, म०नं० बी. २/१७ के सामने।
२८-	अस्सीसंगमाय नमः	अस्सी और गंगा का संगम।

२९-	संगमेश्वराय नमः	अस्सी हरिहरबाबा आश्रम के बाहर, म०नं० १/१६६ में।
३०-	दुर्गाकुण्डाय नमः	दुर्गाजी प्रसिद्ध, म०नं० बी. २७/१ में।
३१-	दुर्गविनायकाय नमः	दुर्गाकुण्ड के पूर्व कोने पर, म०नं० बी. २७/१ में।
३२-	दुर्गादिव्यै नमः	प्रसिद्ध दुर्गाकुण्ड पर, म०नं० बी. २७/२ में।
३३-	शालकंटविनायकाय नमः	ककरमत्ता, मडुआडीह तालाब के ऊपर प्रसिद्ध।
३४-	कूष्माण्डविनायकाय नमः	फुलवरिया गाँव में।
३५-	चण्डीदेव्यै नमः	सदरबाजार प्रसिद्ध।
३६-	मुण्डविनायकाय नमः	सदरबाजार चण्डीश्वर के मंदिर में।
३७-	चण्डिकेश्वराय नमः	सदरबाजार।
३८-	पाशपाणि विनायकाय नमः	सदरबाजार दक्षिणामूर्ति मठ के आधीन मंदिर है।
३९-	नन्दिकेश्वराय नमः	मलदहिया रोडवेज मार्ग पर, म०नं० एस. २१/११७ में।
४०-	नन्दीश्वरीदेव्यै नमः	महाराज की नदेसरी कोठी में, म०नं० एस. १८/२४०।
४१-	शैलेश्वरीदेव्यै नमः	शैलपुत्रीदेवी ही, मढ़ियाघाट, म०नं० ए. ४०/११ में।
४२-	प्राज्ञसंज्ञकलिंगाय नमः	वरणासंगम पर। दूसरे मढ़ियाघाट शैलपुत्री देवी के मंदिर में।
४३-	शान्तिकरीगौर्यै नमः	वरणातट ककरहा घाट।
४४-	कुन्तीश्वराय नमः	कोनियाघाट वरणासंगम के पार मंदिर में।
४५-	वरणासंगमाय नमः	वरणा-गंगा का संगम स्थान।
४६-	संगमेश्वराय नमः	राजघाट किला में आदिकेशव में नीचे, म०नं० ३७/५१ में।
४७-	आदिकेशवाय नमः	राजघाट किला प्रसिद्ध, म०नं० ए. ३७/५१ में।
४८-	खर्वविनायकाय नमः	राजघाट किला आदिकेशव मार्ग पर।
४९-	प्रह्लादेश्वराय नमः	प्रह्लादघाट, म०नं० ए. १०/८० में।
५०-	भृगुकेश्वराय नमः	त्रिलोचन से ईशान कोण गोलाघाट, नन्दू फड़िया की सीढ़ी पर।
५१-	त्रिलोचनेश्वराय नमः	त्रिलोचन घाट के ऊपर गली में प्रसिद्ध, म०नं० ए. २/८० में।

५२- **नरनारायणाय नमः**	मेहताघाटपर बद्रीनारायण प्रसिद्ध, म०नं० ए. १/७३ में ।
५३- **पंचगंगायै नमः**	पंचगंगा घाट प्रसिद्ध ।
५४- **विन्दुमाधवाय नमः**	पंचगंगा घाट वेनीमाधव प्रसिद्ध, म०नं० के. २२/३७ में ।
५५- **मंगलागौर्ये नमः**	पंचगंगा घाट प्रसिद्ध, म०नं० के. २४/३४ में ।
५६- **गभस्तीश्वराय नमः**	मंगलागौरी के मंदिर में, म०नं० के. २४/३४ ।
५७- **वीररामेश्वराय नमः**	रामघाट पर, म०नं० के. २४/१० में ।
५८- **अग्नीश्वराय नमः**	पटनी टोला, म०नं० के. २/१ में ।
५९- **उपशान्तीश्वराय नमः**	पटनी टोला, म०नं० सी.के. २/४ में ।
६०- **नागेश्वराय नमः**	भोसलाघाट, म०नं० सी.के. १/२१ में ।
६१- **हरिश्चंद्रेश्वराय नमः**	संकठाघाट के ऊपर, सी.के. ७/१६६ में ।
६२- **वशिष्ठवामदेवाय नमः**	संकठाघाट उसी जगह, म०नं० सी.के. ७/१६१ में ।
६३- **वीरेश्वराय नमः**	आत्मावीरेश्वर प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ७/१५८ में ।
६४- **वासुकीश्वराय नमः**	सिंधियाघाट सीढ़ी के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१५५ में ।
६५- **पर्वतेश्वराय नमः**	सिंधियाघाट वहीं, म०नं० सी.के. ७/१५६ में ।
६६- **महेश्वराय नमः**	मणिकर्णिका कुण्ड के सामने, मढ़ी में ।
६७- **मणिकर्णिकायै नमः**	प्रसिद्ध ।
६८- **विश्वेश्वराय नमः**	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१ में ।
६९- **अन्नपूर्णादेव्यै नमः**	वहीं आगे, म०नं० डी. ८/१९ में ।
७०- **ढुण्ढिराजाय नमः**	अन्नपूर्णा मार्ग पर ।
७१- **साक्षीविनायकाय नमः**	आगे, बाजार में बड़ी मूर्ति, म०नं० डी. १०/७ में ।
७२- **दण्डपाणये नमः**	ज्ञानवापी मस्जिद के पीछे बाजार, म०नं० सी.के. ३६/१० में ।
७३- **ज्ञानवाप्यै नमः**	ज्ञानवापी कूप, प्रसिद्ध ।

यात्रा से लौट कर ज्ञानवापी स्थित व्यासपीठ के सन्मुख बैठकर आचार्य द्वारा समस्त देवताओं के नाम से अक्षत छोड़ना चाहिए । भूल से छूटे हुए सभी देवताओं का आवाहन हो जाता है । नगर प्रदक्षिणा करने वाला प्राणी नगरकृत पापों से छूट जाता है और निष्पाप हो जाता है ।

महापीठ यात्रा

(का० खं०, अ. ७६)

१- त्रिलोचनेश्वराय नमः (त्रिविष्टपेश्वर) बिरजापीठाय नमः, म०नं० ए. २/८० में। चतुर्नद (पिलपिलातीर्थ) स्नान, इस यात्रा से निष्पाप तथा रजोगुण से रहित हो जाता है, म०नं० ए. ३/८७ में।

२- आदिमहादेवाय नमः (महादेवपीठ) इस यात्रा से निष्पाप रजोगुण से रहित होता है, तथा मनुष्य सिद्धि प्राप्त करता है। म०नं० ए. ३/६२ में त्रिलोचन के पीछे।

३- वृषभध्वजेश्वराय नमः (पितृप्रीतिपदपीठ) कपिलधारा इस यात्रा से पितृ तर्पण करने से पितृ उसी क्षण तर जाते हैं, अर्थात् पितरों का उद्धार हो जाता है।

ततो वाराणसीं गत्वा देवमर्च्य वृषध्वजम्।
कपिलाह्रदमुपस्पृश्य राजसूयफलं लभेत् ।।८२ ।।

४- आदिकेशवाय नमः (श्वेतद्वीप पीठ) वैकुण्ठ सदृश्य स्थान। इस यात्रा से परमप्रिय बल्लभ वैष्णव लोक की प्राप्ति होती है, राजघाट किला में।

५- मंगलागौर्ये नमः (सर्व मंगलादायनीमहापीठ) इस यात्रा से सम्पूर्ण मांगलिक कार्यो की सिद्धि, सौभाग्य की प्राप्ति होती है। पंचगंगाघाट के ऊपर म०नं० के. २४/३४ में।

६- बिन्दुमाधवाय नमः (पंचनदे) पंचगंगा स्नान, म०नं० के २२/३७ में। इस पीठ यात्रा से परमपद वैष्णव लोक प्राप्ति होती है।

एतत्पंचनदं तीर्थं पंचब्रह्मात्मसंज्ञकम् ।
यत्र स्नातो न गृह्णीयाच्छरीरं पांचभौतिकम् ।।

(का० खं०, ५६।११६)

७- आत्मावीरेश्वराय नमः (पंचमुद्रामहापीठ) सिंधियाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१५८ में। इस पीठ की यात्रा करने से निर्वाण पद की प्राप्ति होती है।

८- सिद्धेश्वरीदेव्यै नमः (सिद्धपीठ) सिद्धेश्वरी, म०नं० सी.के. ७/१२४ में। इस महापीठ की यात्रा से तथा ६ महीना यहां अनुष्ठानादि करने से सिद्धि की प्राप्ति होती है।

६- चतुःषष्ठियोगिन्यै नमः (योगिनीपीठ) राणामहल, म०नं० डी. २२/१७ में। इस यात्रा से योग सिद्धि होती है। चतुःषष्टेश्वर म०नं० डी. २१/६ में।

१०- धर्मेश्वराय नमः (धर्मपीठ) मीरघाट, म०नं० डी. २/१६ में। इस महापीठ की यात्रा से धर्म में रूचि और ज्ञान प्राप्ति होती है।

इस काशीपुरी में पद पद पर अनेक सिद्ध पीठ है, परन्तु धर्मेश्वर पीठ की शक्ति अति उत्तम है। इस पीठ का सेवन करने वाले पक्षी (किरात) दिव्य विमान में बैठ कर कैलाश को गये हैं, तो मनुष्यों के लिए क्या कहना। अतएव इन पीठ यात्राओं का करना सबको अवश्य उचित है।

धर्माधिकरणं यत्रधर्मराजोऽप्यवाप्तवान्।

यमराज ने तपस्या कर के धर्मराजपद यहीं पाया था।

धर्मेश्वर के चारो ओर का क्षेत्र, जिसकी पूर्व सीमा पर वैराङ्गेश्वर, पश्चिम में धरणीश्वर, उत्तर में ऐश्वर्येश्वर और दक्षिण में तत्वेश्वर तथा ईशान कोण में ज्ञानेश्वर, ये धर्मेश्वर के पंचवक्त्र कहे जाते है।

ये कार्तिके मासि सिताष्टमीतिथौ यात्रां करिष्यंति नरा उपोषिताः।
रात्रौ च वै जागरणं महोत्सवं धर्मेश्वरे ते न पुनर्भवा भुविः ।।५५ ।।
धर्मेश्वरं यः सकृदेवमर्त्यो विलोकयिष्यत्यवदातबुद्धिः।
स्नात्वा पुनस्तत्र च धर्मतीर्थे न तस्य दूरे पुरुषार्थ सिद्धिः ।।४७ ।।

(का० खं०, अ. ७८)

कार्तिकशुक्ल ८ को धर्मकूप स्नान तर्पण करके श्रीधर्मेश्वर का यथोपचार पूजन, व्रत, जागरण करने से धर्म - काम - मोक्ष की सिद्धि होती है। पुनः संसार में जन्म नहीं होता है।

यत्फलं तीर्थराजस्य स्नानेन परिकीर्त्यते।
सहस्त्रगुणितं तत्स्याद्धर्माम्बुस्नानमात्रतः ।।

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, पृ. १६५)

धर्मकूपे नरः स्नात्वा परितर्प्य पितामहान्।
गयां गत्वा किमधिकं कर्त्ता पितृमुदावहम् ।।
यथा गयायां तृप्ताः स्युः पिण्डदाने पितामहाः।
धर्मतीर्थे तथैव स्युर्न न्यूनं नैव चाधिकम् ।।

तीर्थराज प्रयाग में स्नान करने का जो फल होता है, उससे हजार गुना फल धर्मकूप में स्नान करने मात्र से प्राप्त होता है, धर्मकूप में स्नान कर पितामहादिकों का तर्पण करने से, गंगा में स्नान कर तर्पण करने से अधिक फल होता है। गया में जाकर पिण्डदान करने से पितृ लोग जैसे तृप्त होते है, उससे न अधिक न कम धर्मतीर्थ में पिण्डदान करने से तृप्ति होती है।

प्रथम षडंग यात्रा

एतत्षडंगयो योगं नित्यं काश्यां निषेवते ।
संप्राप्य योगनिद्रां स दिव्यममृतमश्नुते ।।
षडंगसेवनादस्माद्वाराणस्यां नरोत्तमः ।
नजातु जायते जंतुर्जननीजठरे पुनः ।।

जो व्यक्ति काशी में षडंग यात्रा का सेवन करता है वह नरो में उत्तम है, वह कभी माता के उदर में उत्पन्न नहीं होता है।

१-	विश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
२-	विशालाक्षी गौर्ये नमः	मीरघाट, म०नं० डी. ३/८५ में।
३-	कालभैरवाय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० के. ३२/३२ में।
४-	ढुंढिराजाय नमः	अन्नपूर्णा मार्ग पर प्रसिद्ध।
५-	दण्डपाणये नमः	ढुंढराज गली, म०नं० सी.के. ३६/१० में
६-	नन्दीश्वराय नमः	ज्ञानवापी से पूर्व।

द्वितीय षडंग यात्रा

(का० खं०, अ. ४१)

१-	ओंकारेश्वराय नमः	पठानीटोला, मच्छोदरीपार्क से उत्तर टीला, म०नं० ए. ३३/२३ में।
२-	कृत्तिवासेश्वराय नमः	हरतीरथ तालाब से पश्चिम, म०नं० के. ४६/२३ में।
३-	केदारेश्वराय नमः	सिंधियाघाट के ऊपर, बृहस्पतिश्वर में, म०नं० सी.के. ७/१३३ में।
४-	वीरेश्वराय नमः	सिंधियाघाट बृहस्पतिश्वर के सामने, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।
५-	त्रिलोचनेश्वराय नमः	त्रिलोचनघाट के ऊपर प्रसिद्ध, म०नं० ए. २/८० में।
६-	विश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
७-	वरणासंगमाय नमः	राजघाट वरणा और गंगा संगम स्थान।
८-	असिसंगमाय नमः	अस्सीघाट पर गंगा में।
९-	ज्ञानवाप्यै नमः	प्रसिद्ध।
१०-	मणिकर्णिकायै नमः	मणिकर्णिका घाट।
११-	ब्रह्मकुण्डाय नमः	ब्रह्माघाट पर लुप्त।
१२-	पंचगंगायै नमः	पंचगंगा, प्रसिद्ध।
१३-	धर्मनदाय नमः	मीरघाट, धर्मकूप, प्रसिद्ध, म०नं० डी. २/१६ में।

ॐ नमः शिवाय

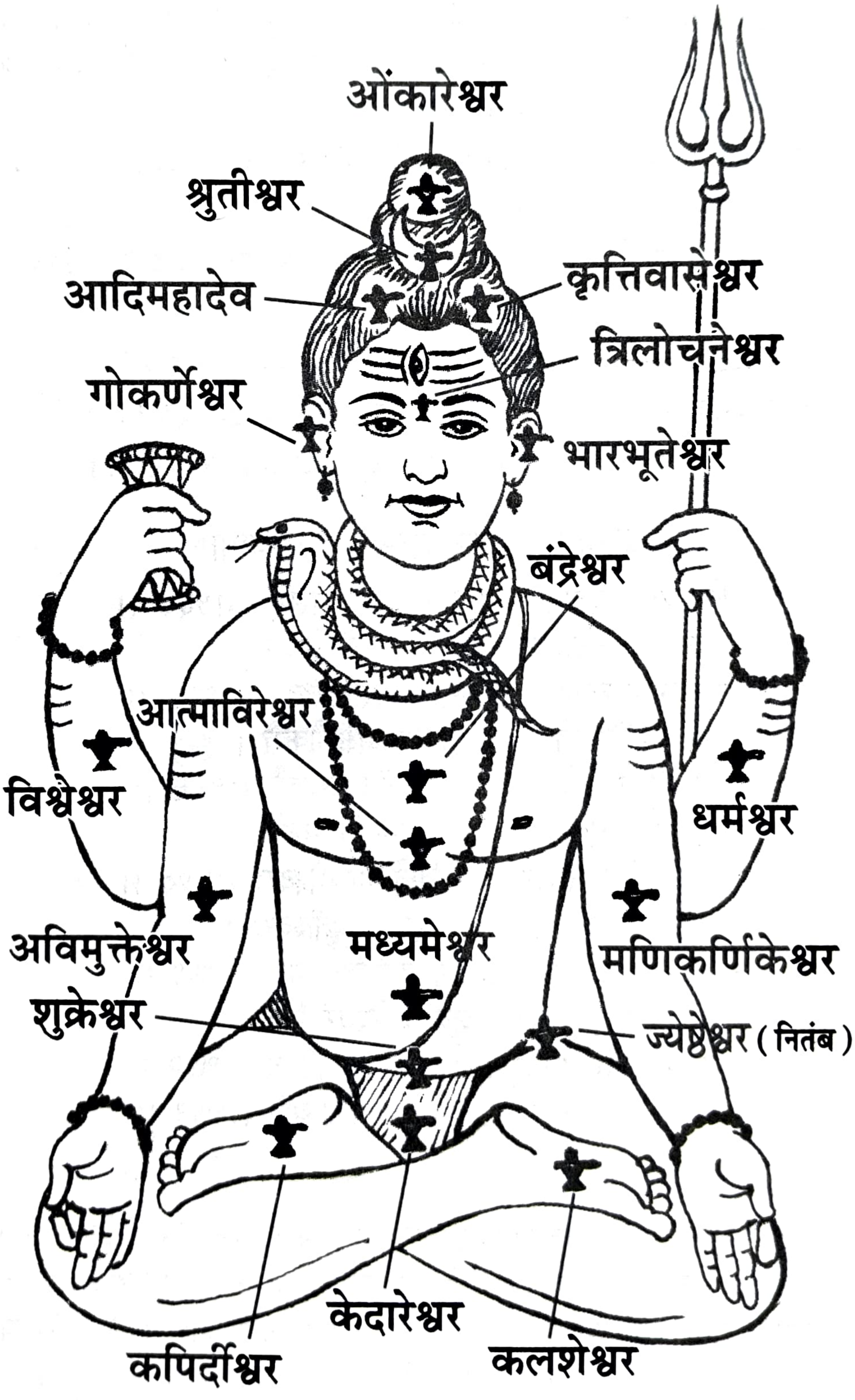

विशेश्वर स्वरूप अंग-यात्रा

तृतीय षडंग यात्रा (लिङ्गपुराण)

१-	अविमुक्तेश्वराय नमः	ज्ञानवापी उत्तरी फाटक। दूसरे धर्मशाला में नं. ३०१ में। तीसरे विश्वनाथ, म०नं० ३५/१६ में। चौथे ब्रह्मनालेश्वर के नाम से।
२-	स्वर्लीनेश्वराय नमः	राजघाट महादेव मोहाल, पंचाग्नी अखाड़ा, म०नं० ए. ११/३० में।
३-	ओंकारेश्वराय नमः	पठानीटोला, मच्छोदरी से उत्तर टीले पर, म०नं० ए. ३३/२३ में।
४-	चन्द्रेश्वराय नमः	सिद्धेश्वरी, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।
५-	मध्यमेश्वराय नमः	दारानगर प्रसिद्ध, म०नं० के. ५३/६३ में।
६-	कृतित्तवासेश्वराय नमः	हरतीरथ के पश्चिम, म०नं० के. ४६/२३ में।

श्रीविश्वेश्वरस्वरूपात्मक अंग-यात्रा

सर्वेषामपि लिंगानां मौलित्वं कृत्तिवाससम् ।।१६७ ।।
ओंकारेशः शिखा ज्ञेया लोचनानि त्रिलोचनः ।
गोकर्णभारभूतेशौ तत्कर्णौ परिकीर्तितौ ।।१६८ ।।
विश्वेश्वराविमुक्तौ च द्वावेतौ दक्षिणौकरौ ।
धर्मेशमणिकर्णेशौ द्वौकरौदक्षिणेतरौ ।।१६९ ।।
कालेश्वरकपर्दीशौ चरणवतिनिर्मलौ ।
ज्येष्ठेश्वरो नितंबश्च नाभिर्वै मध्यमेश्वरः ।।१७० ।।
कपर्दोऽस्यमहादेवः, शिरोभूषा श्रुतीश्वरः ।
चन्द्रेशो हृदयं तस्य आत्मा वीरेश्वरः परः ।।१७१ ।।
लिङ्गं तस्य तु केदारः शुकं शुक्रेश्वरं विदुः ।
अन्यानि यानि लिङ्गानि परःकोटिशनानि च ।।१७२ ।।
अन्यानि नखलोमानि वपुषो भूषणान्यपि ।।१७३ ।।

(का० खं०, अ. ३३)

सम्पूर्ण लिंगों का शिर कृतवासेश्वर, ओंकारेश्वर शिखा, दोनो नेत्र त्रिलोचन, गोकर्ण और भारभूतेश्वर दोनो कान हैं, विश्वनाथ और अविमुक्तेश्वर ये दोनो दक्षिण हाथ है। धर्मेश्वर और मणिकर्णिकेश्वर बाँया हाथ, कालेश्वर और कपर्दीश्वर यह चरण बताये गये है। ज्येष्ठेश्वर नितम्ब, मध्यमेश्वर नाभि और महादेव शिर के भूषण, चन्द्रेश्वर हृदय, वीरेश्वर आत्मा, केदारेश्वर लिंग, शुक्रेश्वर शुक्र माने गये है और जितने करोड़ो लिंग हैं वे नखलोम और भूषण माने गये हैं।

१-	कृत्तिवासेश्वराय नमः	मौलि (ललाट) रत्नेश्वर से पूर्व, म०नं० के. ४६/२३ में।
२-	ओंकारेश्वराय नमः	शिखा (चुन्दी) छित्तनपुरा, पठानीटोला, म०नं० ए. ३३/२३ में।
३-	त्रिलोचनेश्वराय नमः	नेत्र (लोचन) त्रिलोचनघाट के ऊपर प्रसिद्ध, म०नं० ए. २/८० में।
४-	गोकर्णेश्वराय नमः	दोनो कर्ण (कान) दैलु की गली, कोदई की चौकी, म०नं० डी. ५०/३३ में।
५-	भारभूतेश्वराय नमः	गोविन्दपुरा, म०नं० सी.के. ५४/४४ में।
६-	विश्वेश्वराय नमः	हस्त (दाहिनाहाथ) प्रसिद्ध।
७-	अविमुक्तेश्वराय नमः	ज्ञानवापी के उत्तर फाटक पर गुप्त। दूसरे धर्मशाला, म०नं० ३०/१ में।
८-	धर्मेश्वराय नमः	मीरघाट प्रसिद्ध, म०नं० डी. २/२१ में।
९-	मणिकर्णिकेश्वराय नमः	बाँया हाथ- गोमठ काकाराम की गली, म०नं० सी.के. ८/१२ में।
१०-	कालेश्वराय नमः	चरण (दोनो पाव) वृद्धकाल प्रसिद्ध, म०नं० के. ५२/३९ में।
११-	कपर्दीश्वराय नमः	पिशाचमोचन, म०नं० सी. २१/४० में।
१२-	ज्येष्ठेश्वराय नमः	नितंब- काशीपुरा, म०नं० के. ६२/१४४ में।
१३-	मध्यमेश्वराय नमः	नाभि- दारानगर, म०नं० के. ५३/६३ में।
१४-	आदिमहादेवाय नमः	कपाल- त्रिलोचन के पीछे, म०नं० ए. ३/९२ में।
१५-	श्रुतीश्वराय नमः	शिर के भूषण- वृद्धकाल की सड़क रत्नेश्वर से सटकर, म०नं० के. ५३/४० में।
१६-	चन्द्रेश्वराय नमः	हृदय- सिद्धेश्वरी, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।
१७-	आत्मावीरेश्वराय नमः	आत्मा- सिंधियाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।
१८-	केदारेश्वराय नमः	लिंग- केदारघाट प्रसिद्ध, म०नं० बी. ६/१०२ में।
१९-	शुक्रेश्वराय नमः	शुक्र- कालिकागली, म०नं० डी. ८/३० में।

द्वादश ज्योतिर्लिङ्ग यात्रा
(शिवरहस्य)

१-	सोमेश्वराय नमः	मानमंदिरघाट, म०नं० डी. १६/३४ में।
२-	शैलेश्वराय नमः	मढ़िया घाट, वरणा शैलपुत्री में, म०नं० ए. ४०/११, दूसरे सिगरा के टीला पर।

३-	महाकालेश्वराय नमः	वृद्धकाल के घेरे में, म०नं० के. ५२/३६ में।
४-	ओंकारेश्वराय नमः	मच्छोदरी से उत्तर, पठानीटोला, म०नं० ए. ३३/२३ में।
५-	केदारेश्वराय नमः	केदारघाट प्रसिद्ध, म०नं० बी. ६/१०२ में।
६-	भीमाशंकरेश्वराय नमः	विश्वनाथ मंदिर में बृहस्पती के नाम से, म०नं० सी.के. ३५/१६ में या तिलभाण्डेश्वर प्रसिद्ध।
७-	विश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.क. ३५/१६ में।
८-	त्र्यंबकेश्वराय नमः	हौजकटोरा त्रिलोकनाथ, म०नं० डी. ३८/२१ में।
६-	वैद्यनाथेश्वराय नमः	बैजनत्था, म०नं० ३७/१ में।
१०-	नागेश्वराय नमः	भोसलाघाट, म०नं० सी.के. १/२१ में।
११-	रामेश्वराय नमः	मानमंदिर, म०नं० डी. १६/३४ में। सेतुबन्ध रामेश्वर मानमंदिरघाट पर है। यह यात्रा करने पर रामेश्वर गमन का फल मिलता है।
१२-	घुष्णीशाय नमः	कमच्छा देवी के मंदिर के दालान में, म०नं० बी. २१/१२३ में।

चित्रपटी यात्रा
(का०ख० अ. ३३।३४)

असीसंगम में स्नान कर अस्सीसंगमेश्वर का दर्शन कर यात्रा आरम्भ करे।

१-	असिसंगमाय नमः	असीघाट पर संगम प्रसिद्ध। घाट के ऊपर मूर्ति।
२-	लोलार्काय नमः	प्राचीन मूर्ति लुप्त, दूसरी लोलार्क कुण्ड के ऊपर बड़ी मूर्ति की पूजा करते है।
३-	आदिकेशवाय नमः	वरणा, राजघाट किला के कोन पर, म०नं० ए. ३७/५१ में।
४-	वरणासंगमाय नमः	वरणा पर, गंगा वरणा संगम की पूजा करें।
५-	उत्तरवाहिनीगंगायै नमः	गंगा की पूजा कर संकठा जी के पीछे मूर्ति की पूजा करें।
६-	मणिकर्णिकायै नमः	संकठा जी के पीछे परिक्रमा मार्ग पर, म०नं० सी.के. ७/३० नया नं० ७/४४ में।
७-	कुलस्तंभाय नमः	अलईपुर लाटभैरव को कहते है।
८-	कालभैरवाय नमः	भैरोनाथ प्रसिद्ध, म०नं० के. ३२/२२ में।
६-	कपालमोचनतीर्थाय नमः	लाटभैरव का तालाब।
१०-	ऋणमोचनतीर्थाय नमः	हनुमानफाटक, तेलियाना तालाब व सोना तालाब के नाम से प्रसिद्ध।

११- ओंकारेश्वराय नमः पठानीटोला मच्छोदरी से उत्तर, म०नं० ए. ३३/२३ में।

एकमोङ्कारमालोक्य समस्ते क्षोणिमण्डले ।
लिङ्गजातानि सर्वाणि दृष्टानिस्युर्नसंशयः ।।

(का० ख० ७३।१७१)

ओंकारेश्वर लिंग का दर्शन कर लेने से समस्त पृथ्वी मंडल में जितने लिंग है, सबका दर्शन करने का फल मिलता है।

१२- मत्स्योदरीतीर्थाय नमः मत्स्योदी (मच्छोदरी) पार्क में।

मत्स्योदरीजले गङ्गा ओं ·रेश्वरसन्निधौ ।
तदा तस्मिञ्जले स्नात्वा ब्रह्महत्यां व्यपोहति ।।

(लिंगपुराण, त्रिस्थलीसेतु, पृष्ठ १४१)

ओंकारेश्वर के सन्निकट में मत्स्योदरी के जल में जब गंगा मिल जाती है, तो उसमें स्नान करने से ब्रह्महत्या की निवृत्ति होती है।

१३- त्रिलोचनेश्वराय नमः त्रिलोचनघाट के ऊपर प्रसिद्ध, म०नं० ए. २/८० में।

अक्षयतृतीया को व्रत, ज·गरण, अन्नदान, जलकुम्भ के दान से पितृ लोगों को अक्षय तृप्ति मिलती है। तृतीया को पिलपि·लातीर्थ में स्नान करना फलदायक है। त्रिलोचन के उत्तर में, म०नं० ए. ३/८७ में कूप रह गया।

१४-	कामेश्वराय नमः	मच्छोदरी से पूर्व त्रिलोचन बाजार, म०नं० ए. २/६ में।
१५-	स्वर्लीनेश्वराय नमः	राजघाट, नया महादेव पंचाग्नि अखाड़ा, म०नं० ए. ११/३० में।
१६-	आदिमहादेवाय नमः	त्रिलोचन के पीछे, म०नं० ए. ३/६२ में।
१७-	स्कंदेश्वराय नमः	भूतभैरव के पास, म०नं० के. ६३/३६ में।
१८-	विनायकेश्वराय नमः	त्रिलोचन मंदिर, म०नं० २/८० में।
१९-	वाराणसीदेव्यै नमः	त्रिलोचन मंदिर, म०नं० २/८० में।
२०-	भृंगीश्वराय नमः	काशीपुरा, ज्येष्ठविनायक से उत्तर, म०नं० ६२/१४४ में। दूसरे वृद्धकाल में।
२१-	चतुर्वेदेश्वराय नमः	वरणासंगम।
२२-	यक्षेश्वराय नमः	कोतवालपुरा, रुद्रप्रयाग के शिवाले में नीचे गणेश के समीप, म०नं० सी.के. ३७/२६ में।

२३- पार्वतीश्वराय नमः	त्रिलोचन के पीछे, आदिमहादेव में, म०नं० ए. ३/६२ में।
२४- पुराणेश्वराय नमः	स्वर्गद्वार पर, जौविनायक के समीप, म०नं० सी.के. ३३/३७ में
२५- धर्मशास्त्रेश्वराय नमः	धर्मकूप, म०नं० डी. २/२१ में।
२६- सरस्वतीश्वराय नमः	त्रिलोचनमंदिर, म०नं० ए. २/८० में।
२७- सर्वतीर्थेश्वराय नमः	मढ़ियाघाट शैलपुत्री, म०नं० ए. ४०/११ में।
२८- शैलेश्वराय नमः	मढ़ियाघाट शैलपुत्री, म०नं० ए. ४०/११ में।
२९- रत्नेश्वराय नमः	वृद्धकाल की सड़क पर, म०नं० के. ५३/४० में।
३०- सप्तसागरेश्वराय नमः	काशीपुरा, सप्तसागर कूप पर, म०नं० के. ६२/२८ में।
३१- मन्त्रेश्वराय नमः	अन्नपूर्णा मंदिर के दरवाजे पर, म०नं० डी. ६/१ में।
३२- त्रिपुरेश्वराय नमः	त्रिपुराभैरवी, म०नं० डी. ५/२४ में।
३३- त्रिपुरकुण्डाय नमः	लुप्त।
३४- बाणेश्वराय नमः	स्वर्लीनेश्वर के ईशानकोण में, नयामहादेव मोहाल, प्रह्लादघाट। दूसरे मैदागिन हरिश्चन्द्र स्कूल के बाहर।
३५- वैरोचनेश्वराय नमः	संकठा जी की परिक्रमा में, सीमाविनायक के पीछे, म०नं० सी.के. ७/१५६ में।
३६- प्रह्लादेश्वराय नमः	प्रह्लादघाट, म०नं० ए. १०/८० में।
३७- बलिकेशवाय नमः	त्रिलोचनमंदिर, म०नं० ए. २/८० में।
३८- नारदकेशवाय नमः	प्रह्लादघाट।
३९- आदिकेशवाय नमः	(अम्बरीषतीर्थ) वरणा के पास, म०नं० ए. ३७/५१ में।
४०- भीष्मकेशवाय नमः	वृद्धकालेश्वर के बाहर, म०नं० के. ५२/३९ में।
४१- दत्तात्रयेश्वराय नमः	वरणा गंगातट पर (दत्तात्रयेश्वर तीर्थ), म०नं० ए. ३७/५१ में।
४२- आदिगदाधराय नमः	प्रह्लादघाट, नयामहाल, गुप्त।
४३- भृगुकेशवाय नमः	नन्दूफड़िया की सीढ़ी, गोलाघाट (भार्गव तीर्थ)।
४४- वामनकेशवाय नमः	त्रिलोचन, अयोध्याराजा की कोठी, म०नं० ए. २/२९ में (वामन तीर्थ)।
४५- नरनारायणाय नमः	मेहताघाट, म०नं० ए. १/९२ में (नारायण तीर्थ)।

४६- यज्ञवाराहकेशवाय नमः	प्रह्लादघाट नयामाहादेव, म०नं० ए. ११/२६ में (यज्ञवाराह तीर्थ)।
४७- विदारनरसिंहाय नमः	प्रह्लादघाट, म०नं० ए. १०/८२ में (विदारनरसिंह तीर्थ)।
४८- गोपीगोविन्दाय नमः	लालघाट, म०नं० के. ४/२४ में (गोपीगोविन्द तीर्थ)।
४६- लक्ष्मीनरसिंहाय नमः	शीतलाघाट, राजमंदिर हनुमानजी, म०नं० के. २०/१५६ में।
५०- खर्वनसिंहाय नमः	दुर्गाघाट, म०नं० के. २२/५३ में।
५१- शेषमाधवाय नमः	शीतलाघाट की सीढ़ी पर नीचे गंगातट पर, विष्णु मूर्ति।
५२- शंखमाधवाय नमः	राजमंदिर, म०नं० के. २०/१३७ में।
५३- सरस्वतीस्रोताय नमः	मणिकर्णिका के उत्तर, गोमठ के सामने, गंगा में।
५४- बिन्दुमाधवाय नमः	वेनीमाधव पंचगंगा घाट, म०नं० के. २२/३७ में।
५५- पंचगंगेश्वराय नमः	पंचगंगा घाट, म०नं० के. २२/११ के बाहर।
५६- मंगलागौर्यै नमः	पंचगंगा घाट, म०नं० के. २४/३४ में।
५७- मयूखादित्याय नमः	पंचगंगा घाट मंगलागौरी, म०नं० के. २४/३४ में।
५८- गभस्तीश्वराय नमः	पंचगंगा घाट, म०नं० के. २४/३४ में।
५६- मारकण्डेयेश्वराय नमः	वृद्धकाल में, म०नं० के. ५२/३६ में।
६०- किरणेश्वराय नमः	पंचगंगा घाट पर। दूसरे मंगलागौरी के सामने, म०नं० के. २३/८३ में।
६१- धौतपापेश्वराय नमः	पंचगंगा घाट पर पुस्ते के नीचे।
६२- निर्वाणनरसिंहाय नमः	लोलार्क, पुराने राममंदिर में, म०नं० बी. २/६४।
६३- मणिप्रदीपनागाय नमः	वृद्धकाल के पास, दूलीगड़ही पर गुप्त।
६४- कपिलेश्वराय नमः	दूध विनायक के आगे, कपिलेश्वर गली, म०नं० २६/१२ में।
६५- प्रियव्रतेश्वराय नमः	प्रहूलाद घाट।
६६- श्रीमत्कालराजाय नमः	भैरोनाथ, म०नं० के. ३२/३३ में।
६७- पापभक्षेश्वराय नमः	भैरोनाथ के पिछे गली, म०नं० के. ३२/३७ में।
६८- मंदाकिनीतीर्थाय नमः	मैदागिन कम्पनीबाग, म०नं० के. ५६/१५ में।
६६- रत्नेश्वराय नमः	वृद्धकाल की सड़क, म०नं० के. ५३/४० में।

७०-	कृत्तिवासेश्वराय नमः	वृद्धकाल की सड़क रत्नेश्वर के पूर्व, म०नं० के. ४६/२३ में।
७१-	ओंकारेश्वराय नमः	पठानीटोला मच्छोदी से उत्तर, म०नं० ३३/२३ में।
७२-	गोकर्णेश्वराय नमः	कोदई की चौकी, म०नं० डी. ५०/३३ में।
७३-	भारभूतेश्वराय नमः	राजादरवाजा, म०नं० सी.के. ५४/४४ में।
७४-	विश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
७५-	अविमुक्तेश्वराय नमः	ज्ञानवापी उत्तरफाटक पर गुप्त। दूसरे धर्मशाला में वहीं, म०नं० सी.के. ३०/१ में। तीसरे विश्वनाथ में दक्षिण कोने में।
७६-	धर्मेश्वराय नमः	मीरघाट, म०नं० डी. २/२१ में।
७७-	मणिकर्णिकेश्वराय नमः	गोमठ संन्यासआश्रम, म०नं० सी.के. ८/१२ में।
७८-	कालेश्वराय नमः	दण्डपाणि की गली, म०नं० के. ३१/४६ में।
७९-	कपर्दीश्वराय नमः	पिशाचमोचन, म०नं० सी. २१/४० में।

मार्गशुक्लचतुर्दश्यां कपर्दीश्वरसन्निधौ ।
स्नात्वान्यत्रापि मरणान्न पैशाच्यमवाप्नुयुः ॥

(का० खं०, ५४-८०)

मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष की चतुर्दशी को कपर्दीश्वर के समीप विमलकुण्ड में स्नान करने वाला प्राणी मरने के बाद पिशाच गति को नहीं प्राप्त होता है।

८०-	श्रुतीश्वराय नमः	रत्नेश्वर से सटे उत्तर, म०नं० के. ५३/४० में।
८१-	चन्द्रेश्वराय नमः	सिद्धेश्वरी में, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।
८२-	आत्मावीरेश्वराय नमः	सिंधियाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।

तिलान्तरापि नो काश्यां भूमिर्लिङ्गं विना क्वचित् ।
परं वीरेशसदृशं न लिङ्गं त्वाशु सिद्धिदम् ॥
धर्मदं मोक्षदं सम्यक् कामदं सुखदं तथा ।
यथा वीरेश्वरं लिङ्गं काश्यां नान्यत्तथा ध्रुवम् ॥
यस्तु वीरेश्वरं लिङ्गं नक्तमभ्यर्चयिष्यति ।

(का० खं० वी. मित्रमिश्र, पृष्ठ २६८)

काशी में एक तिल भूमि भी लिंग से रहीत नहीं है, फिर भी आत्माविश्वेश्वर के समान शीघ्र सिद्धि देने वाला दूसरा कोई लिंग नहीं है। धर्म, मोक्ष, काम सुख देने वाला जैसा वीरेश्वर लिंग है, वैसा दूसरा नहीं है।

८३- केदारेश्वराय नमः	बृहस्पति मंदिर सिंधियाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/११३ में । दूसरे केदारघाट प्रसिद्ध, म०नं० बी. ६/१०२ में ।
८४- शुक्रेश्वराय नमः	कालिका गली, म०नं० डी. ८/३० में ।
८५- दुर्गादेव्यै नमः	दुर्गाकुण्ड, म०नं० बी. २७/२ में ।
८६- पितृश्वराय नमः	(पितृलिंग) पितरकुण्डा मोहाल, म०नं० सी. १८/४७ में।
८७- चित्रघंटादेव्यै नमः	चौक के पीछे, चन्दू नाऊ की गली, म०नं० सी.के. २३/३४ में ।
८८- घंटाकर्णहृदयाय नमः	कर्णघंटा मोहाल, म०नं० सी.के. ६०/६६ में ।
८९- ललितादेव्यै नमः	ललिताघाट मढ़ी, म०नं० डी. १/६७ में ।

ततोन्यललितातीर्थं गंगाकेशवसन्निधौ ।
तत्रास्ति ललितादेवी क्षेत्ररक्षाकरी परा ।।

(का० खं०, ७०।१८)

गंगाकेशव के सान्निध्य में ललिता तीर्थ है, वहीं क्षेत्र की रक्षा करने वाली ललिता गौरी है।

९०- विशालाक्षीदेव्यै नमः	मीरघाट, म०नं० डी. ३/८५ में ।
९१- आशाविनायकाय नमः	मीरघाट, धर्मकूप के दक्षिण म०नं० डी. २/१५ में ।
९२- धर्मकूपाय नमः	मीरघाट, म०नं० डी. २/१० में ।

धर्मेश्वरं यः सकृदेवमर्त्यो विलोकयिष्यत्यवदातबुद्धिः ।
स्नात्वा पुरस्तत्र च धर्मतीर्थे न तस्य दूरे पुरुषार्थसिद्धिः ।।४६ ।।

(का० खं०, अ. ७८)

स्थिर बुद्धि वाला मनुष्य एक बार भी धर्मेश्वर का दर्शन करके और वहां धर्म तीर्थ में स्नान करके मोक्ष को प्राप्त कर लेता है ।

९३- बन्दीदेव्यै नमः	दशाश्वमेध घाट के ऊपर, म०नं० डी. १७/१०० में ।
९४- प्रयागस्रोताय नमः	प्रयागघाट गंगा में ।
९५- अशोकतीर्थाय नमः	बुलानाला पर, अशोकतीर्थ को पाटकर बुलानाला नाम पड़ा।
९६- गंगाकेशवाय नमः	ललिताघाट, म०नं० १/६८ में ।
९७- मोक्षद्वारेश्वराय नमः	लाहौरीटोला, फूटेगणेश, म०नं० सी.के. ३४/१० में ।

९८-	स्वर्गद्वारेश्वराय नमः	फूटेगणेश के सामने मोक्षद्वारेश्वर के म०नं० ३४/१० में
९९-	मणिकर्णिकायै नमः	संकठा जी के पीछे, म०नं० ७/१३० में।
१००-	ज्ञानवाप्यै नमः	प्रसिद्ध।
१०१-	दण्डपाणिने नमः	विश्वनाथ गलि, म०नं० सी.के. ३६/१० में।
१०२-	संभ्रमाय नमः	दण्डपाणि के बगल में मूर्ति, म०नं० सी.के. ३६/१० में
१०३-	विभ्रमाय नमः	दण्डपाणि के अगल-बगल, म०नं० सी.के. ३६/१० में।

संभ्रम और विभ्रम का काम पापियों को डरा धमकाकर उनके मन में भ्रम पैदा कर काशी से बाहर भगाना है। बृद्धहारीत नामक ऋषि द्वारा स्थापित।

१०४-	मुक्तिमंडपाय नमः	ज्ञानवापी मंडप, प्रसिद्ध।
१०५-	ढुंढीराजाय नमः	अन्नपूर्णा मार्ग पर प्रसिद्ध।
१०६-	अन्नपूर्णायै नमः	प्रसिद्ध, म०नं० डी. ९/१ में।
१०७-	श्री विश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१९ में।

मोदादि पंचविनायकों का दर्शन करे। कचहरी विश्वनाथ के बगल में पांचों गणेश की मूर्ति हैं। फिर ज्ञानवापी स्थित व्यासासन से सम्पूर्ण देवताओं के नाम से अक्षत छोड़कर यथाशक्ति ब्राह्मण-आचार्य को दक्षिणा देकर यात्रा समाप्त कर अपने घर जाना चाहिए। इस यात्रा को करने वाला प्राणी शिव सायुज्य मुक्ति पाता है।

महाविष्णु यात्रा

सम्प्राप्य वासरं विष्णोर्विष्णुतीर्थेषु सर्वतः।
कार्या यात्रा प्रयत्नेन महाफलसमृद्धये ॥

(का० खं० अ. १०० श्लो. ९८)

विष्णु के वासर में (एकादशी) विष्णु भगवान तथा उनके तीर्थ की यात्रा करना। उससे महाफल की समृद्धि होती है।

(का० खं० अ. ६१ तथा ८४)

अहो महालिंगमयं जनार्दनम्।
पश्यामि काश्यां परमात्मरूपम् ॥

(ब्रह्म पुराण १०१)

काशी में जनार्दन भगवान को मैं महालिंग के रूप में देख रहा हूँ।

१-	आदिकेशवाय नमः	(पादोदकतीर्थ) राजघाट किले में, म०नं० ३७/५१ में।
२-	ज्ञानकेशवाय नमः	(श्वेतद्वीपतीर्थ) राजघाट आदिकेशव के बगल में, म०नं० ३७/५१ में।
३-	तार्क्ष्यकेशवाय नमः	(तार्क्ष्यतीर्थ) राजघाट आदिकेशव के बगल में, म०नं० ३७/५१ में।
४-	गजाधराय नमः	(गजाधरतीर्थ) राजघाट आदिकेशव मंदिर के बाहर।
५-	नारदकेशवाय नमः	(नारदघाटतीर्थ) प्रह्लादघाट, म०नं० १०/८० के सामने।
६-	प्रह्लादकेशवाय नमः	(प्रह्लादघाट तीर्थ) प्रह्लादघाट, म०नं० १०/८० में।
७-	आदित्यकेशवाय नमः	(अम्बरीषतीर्थ) आदिकेशव के पास, म०नं० ए. ३७/५१ में।
८-	आदिगजाधराय नमः	(दत्तात्रेयेश्वरतीर्थ) आदिकेशव के नीचे, म०नं० ए. ३७/५१ में।
९-	भृगुकेशवाय नमः	(भार्गवतीर्थ) गोलाघाट नन्दूफड़िया की सीढ़ी पर।
१०-	वामनकेशवाय नमः	अयोध्या राजा की कोठी, त्रिलोचन पर मधूसूदन के नाम से, म०नं० ए. २/२६ में।
११-	नरनारायणाय नमः	(नारायणतीर्थ) मेहताघाट बद्रीनारायण नाम से, म०नं० ए. १/७२ में।
१२-	यज्ञवाराहाय नमः	(वाराहतीर्थ) स्वर्लीनेश्वर के बाहर दीवाल पर, म०नं० ए. ११/३० में।
१३-	विदारनृसिंहाय नमः	(विदारनरसिंहतीर्थ) प्रह्लादघाट, म०नं० १०/८२ में।
१४-	गोपीगोविन्दाय नमः	(गोपिगोविन्दतीर्थ) लालघाट, म०नं० ४/२४ में।
१५-	लक्ष्मीनृसिंहाय नमः	(लक्ष्मीनरसिंहतीर्थ) राजमंदिर, हनुमान जी में, म०नं० के. २०/१५६ में।
१६-	शेषमाधवाय नमः	(शेषमाधवतीर्थ) शीतलाघाट नीचे मढ़ी में विष्णु मूर्ति।
१७-	शंखमाधवाय नमः	(शुखमाधवतीर्थ) राजमंदिर, म०नं० के. २०/१३७ में लुप्त।
१८-	हयग्रीवकेशवाय नमः	(हयग्रीवतीर्थ) भदैनी, आनन्दमयी अस्पताल के बगल, म०नं० बी. ३/२५ में।

१९- भीष्मकेशवाय नमः	वृद्धकालेश्वर के पश्चिम, म०नं० के. ५२/३९ में।
२०- निर्वाणकेशवाय नमः	प्राचीन राममंदिर में, भदैनी पानीकल, म०नं० बी. २/६४ में। वैशाखपूर्णिमा यात्रा, लोलारक।
२१- त्रिभुवनकेशवाय नमः	दशाश्वमेध घाट के ऊपर बन्दी देवी में, म०नं० डी. १७/१०० में।
२२- ज्ञानमाधवाय नमः	विश्वनाथ जी की कचहरी, कपिल मुनी के बगल दीवाल में, म०नं० सी.के. ३५/२१ में।
२३- श्वेतमाधवाय नमः	इनकी पुरानी मूर्ति लुप्त है, दूसरी मीरघाट हनुमान जी में, म०नं० डी. ३/७९ में।
२४- प्रयागमाधवाय नमः	मानमंदिर घाट के ऊपर लक्ष्मीनारायण के नाम से, म०नं० डी. १६/२१ में।
२५- विष्णवे नमः	विश्वनाथ मंदिर में दण्डपाणि के दक्षिण दीवाल में, म०नं० सी.के. ३५/१९ में।
२६- गंगाकेशवाय नमः	ललिता घाट, म०नं० डी. १/६७ में।
२७- वैकुण्ठमाधवाय नमः	सिंधियाघाट के ऊपर हरिश्चन्द्रेश्वर के बगल में, म०नं० सी.के. ७/१६५ में।
२८- वीरमाधवाय नमः	आत्मा वीरेश्वर के दरवाजे पर, वहीं सामने ७/१३० के अन्दर खिड़की से दर्शन होता है।
२९- कालमाधवाय नमः	काठ की हवेली के पीछे, म०नं० के. ३४/४ में।
३०- निर्वाणनृसिंहाय नमः	जौविनायक के पास, पुलस्तेश्वर के समीप लुप्त।
३१- महाबलनृसिंहाय नमः	कामेश्वर महादेव के घेरे में मच्छोदरी से पूर्व, म०नं० ए. २/९ में।
३२- प्रचण्डनृसिंहाय नमः	अस्सीघाट जगन्नाथ जी के पीछे उसी जगह, म०नं० बी. १/१५१ में।
३३- गिरिनृसिंहाय नमः	देहलीविनायक के पास।
३४- महाभयनृसिंहाय नमः	कश्मीरीमल हवेली के पास, पितामहेश्वर में नीचे दीवाल में, म०नं० सी.के. ७/६२ में।
३५- अत्युग्रनृसिंहाय नमः	गोमठ, म०नं० सी.के. ८/२१ में।
३६- ज्वालानृसिंहाय नमः	कपिलधारा के पास, कोटवा गाँव में।
३७- कोलाहलनृसिंहाय नमः	सिद्धविनायक से ऊपर, मठ के अन्दर, म०नं० सी.के. ८/१८९ में।

३८-	विकटनृसिंहाय नमः	केदारेश्वर के बांये मढ़ी में, गंगा की तरफ, म०नं० बी. ६/१०२ के बाहर।
३९-	अनन्तवामनाय नमः	बिंदुमाधव ही, म०नं० के. २२/३७ में। सतयुग में आदिमाधव, त्रेता में अनन्तमाधव, द्वापर में श्रीदमाधव, कलि में बिन्दुमाधव।
४०-	दधिवामनाय नमः	अस्सीघाट, तुलसीघाट के आश्रम में।
४१-	त्रिविक्रमाय नमः	त्रिलोचन महादेव के मंदिर में, म०नं० ए. २/८० में।
४२-	बलिवामनाय नमः	वरणा आदिकेशव के मंदिर के बाहर उत्तर घेरे में, म०नं० ए. ३७/५१ में।
४३-	ताम्रवाराहय नमः	नीलकंठ मोहाल नीचे ढाल पर, म०नं० सी.के. ३३/३७ के बाहर।
४४-	धरणीवाराहाय नमः	दशाश्वमेध घाट, म०नं० डी. १७/१११ के बाहर वाराह की खंडित मूर्ति पड़ी है।
४५-	कोकावाराहय नमः	भदैनी।
४६-	पंचशतनारायणेभ्यो नमः	पाँच सौ नारायण मूर्तिया।
४७-	शतंचजलशायिभ्यो नमः	सौ जल साई (शेषशाई)।
४८-	त्रिशतकमठरूपेभ्यो नमः	तीन सौ कमठ (कच्छप)।
४९-	विंशतिमत्स्यरूपेभ्यो नमः	बीसमच्छ भगवान् शंकूधारा, म०नं० २२/१९५ शिला में।
५०-	शतशष्टिंगोपालमूर्तिभ्यो नमः	एक सौ साठ गोपाल।
५१-	सहस्त्रबुद्धावतारेभ्यो नमः	हजार बुद्धावतार।
५२-	त्रिशत्परशुरामेभ्यो नमः	तीन सौ परशुराम।
५३-	एकोत्तरशतरामरूपेभ्यो नमः	एक सौ राम।
५४-	विष्णुरूपाय नमः	रामघाट, म०नं० के. २४/२५ में।
५५-	बिन्दुमाधवाय नमः	पंचगंगाघाट, म०नं० के. २२/३७ में।

का.ख.अ. ६० श्लोक १२५, १२६ में ऐसा लिखा है कि बिन्दुमाधव के हर युग में अलग अलग नाम थे। सतयुग में आदिमाधव, त्रेतायुग में अनन्तमाधव, द्वापर में श्रीदमाधव और कलियुग में बिन्दुमाधव।

५६-	खर्वनृसिंहाय नमः	दुर्गाघाट, म०नं० के. २२/५३ में ब्रह्मचारिणी के पास।

दक्षिण दिग्देव यात्रा

मणिकर्णिका स्नान करके कुण्ड में मार्जन करें। फिर ज्ञानवापी मुक्तिमंडप स्थित व्यासपीठ के आचार्य द्वारा नियम लेकर मोदादो पंचविनायकों का दर्शन पूजन कर विश्वनाथ का पंचोपचार पूजन कर यात्रा आरम्भ करें।

१-	कालराजाय नमः	विश्वनाथ के दक्षिणीफाटक पर हनुमान के बगल में, म०नं० सी.के. ३५/२० में।
२-	निकुम्भेश्वराय नमः	विश्वनाथ के दक्षिण अहिल्याबाई जिन्हे लोग पार्वती कहते है, वही गढ़े में, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
३-	श्रृंगारगौर्ये नमः	ज्ञानवापी मस्जिद के पीछे दीवाल में, कुछ लोग विश्वनाथ में कहते है, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
४-	सौभाग्यगौर्ये नमः	आदिविश्वनाथ में, म०नं० सी.के. ३८/८ में।
५-	विरूपाक्षेश्वराय नमः	विश्वनाथ मंदिर, दण्डपाणि में फटालिंग, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
६-	लक्ष्मीनारायणाय नमः	विश्वनाथ मंदिर में वही, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
७-	शनिश्चरेश्वराय नमः	विश्वनाथ के दक्षिण फाटक पर पीतल के अर्घे में, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
८-	शनिश्चराय नमः	प्रसिद्ध, त्रिपुराभैरवी के पास रानीभवानी गली में।
६-	अक्षयवटाय नमः	विश्वनाथ मंदिर से सटे हनुमान जी में, म०नं० सी.के. ३५/२१ में।
१०-	द्रुपदादित्याय नमः	उसी हनुमान मंदिर के दीवाल में, म०नं० सी.के. ३५/२१ में।
११-	दौपद्यै नमः	हनुमान मंदिर के दीवाल में, म०नं० सी.के. ३५/२१ में।
१२-	नकुलीश्वराय नमः	हनुमान मंदिर के दीवाल में, वृक्ष के नीचे। म०नं० सी.के. ३५/२१ में।
१३-	कुबेरेश्वराय नमः	अन्नपूर्णाजी के उत्तर कोने, म०नं० डी. ६/१ में।
१४-	अन्नपूर्णादेव्यै नमः	प्रसिद्ध, म०नं० डी. ६/१ में।
१५-	ढुंढिराजाय नमः	अन्नपूर्णा जी से आगे मार्ग पर।
१६-	भवानीशंकराय नमः	अन्नपूर्णा के बगल राममंदिर, जगरनाथ के पास, म०नं० डी. ८/३८ में।
१७-	शुक्रेश्वराय नमः	कालिकागली, म०नं० डी. ८/३० में।
१८-	शुक्रकूपाय नमः	वहीं, म०नं० डी. ८/३० में।
१६-	कालरात्र्यै नमः	कालिकागली, म०नं० डी. ८/१७ में।
२०-	चंडीचण्डीश्वराय नमः	कालिकागली, म०नं० डी. ८/२७ में।
२१-	धर्मेश्वराय नमः	मीरघाट, म०नं० २/२१ में।
२२-	धर्मकूपाय नमः	मीरघाट, म०नं० २/१० में।
२३-	विश्वबाहुकायै नमः	मीरघाट, म०नं० डी. २/१५ में।
२४-	दिवोदासेश्वराय नमः	मीरघाट, धर्मकूप के दक्षिण म०नं० २/१५ में।
२५-	आनन्दभैरवाय नमः	मीरघाट वृद्धादित्य के पीछे, म०नं० डी. ३/१४ में।

२६- आशाविनायकाय नमः	मीरघाट, धर्मकूप विश्वभुजा के बगल में म०नं० डी. २/१५ में।
२७- वृद्धादित्याय नमः	मीरघाट, म०नं० डी. ३/१५ में।
२८- हनुमते नमः	मीरघाट, म०नं० ३/७६ में।
२९- विशालाक्षीगौर्ये नमः	मीरघाट प्रसिद्ध, म०नं० डी. ३/८५ में।
३०- ज्ञानेश्वराय नमः	लाहौरीटोला, म०नं० डी. १०/३२ में।
३१- त्रिसंधेश्वराय नमः	लाहौरीटोला, म०नं० डी. १/४० में।
३२- त्रिसंधविनायकाय नमः	लाहौरीटोला में फूटेगणेश के नाम से प्रसिद्ध, म०नं० डी. ३४/४० में।
३३- करुणेश्वराय नमः	फूटेगणेश के पास, म०नं० सी.के. ३४/१० में।
३४- मोक्षेश्वराय नमः	फूटेगणेश के पास, म०नं० सी.के. ३४/१० में।
३५- राजराजेश्वराय नमः	ललिताघाट, म०नं० सीके. १/५८ में।
३६- गंगाकेशवाय नमः	ललिताघाट, म०नं० डी. १/६८ में।
३७- ललितादेव्यै नमः	ललिताघाट, म०नं० डी. १/६७ में।

ततोन्यललितातीर्थं गंगाकेशवसन्निधौ ।
तत्रास्ति ललितादेवी क्षेत्ररक्षाकरी परा ।।
(का० खं०, ७।१८)

गंगाकेशव के सान्निध्य में ललिता तीर्थ है, वहीं क्षेत्र की रक्षा करने वाली है।

३८- जरासंधेश्वराय नमः	त्रिपुरा भैरवी घाट के ऊपर म०नं० डी. ५/१० में।
३९- त्रिपुराभैरवीदेव्यै नमः	मीरघाट के ऊपर, मार्गपर, म०नं० ५/२४ में।
४०- वाराहीदेव्यै नमः	मानमंदिरघाट, म०नं० डी. १६/८४ में।

अन्यास्तु काश्यां वाराही क्रतुवाराहसन्निधौ ।
ताम्प्रणम्य नरो भक्त्या विपदब्धौ न मज्जति ।।
(का० खं०, अ. ७।२६)

इनके दर्शन पूजन और आराधना से विपत्तियों से बचाती हुई आयु की रक्षा करती है (आयुरक्षति वाराही)।

४१- रामेश्वराय नमः	मानमंदिरघाट के ऊपर, म०नं० डी. १६/२ में।
४२- सोमेश्वराय नमः	मानमंदिरघाट, म०नं० डी. १६/३४ में।
४३- दालभेश्वराय नमः	मानमंदिरघाट, म०नं० डी. १६/२८ में।
४४- प्रयागमाधवाय नमः	मानमंदिरघाट लक्ष्मीनारायण के नाम से प्रसिद्ध, म०नं० डी. १६/२१ में।

४५- संकर्षणतीर्थाय नमः	मानमंदिरघाट सेतुबन्धरामेश्वर तीर्थ है।
४६- शूलटंकेश्वराय नमः	दशाश्वमेध घाट पर बड़ा लिंग।
४७- दशाश्वमेधेश्वराय नमः	दशाश्वमेधघाट शीतला मंदिर, म०नं० डी. १८/१९ में।
४८- दशाश्वमेधतीर्थाय नमः	दशाश्वमेधघाट गंगा मे पूजा करें।
४९- बन्दीदेव्यै नमः	दशाश्वमेध घाट के ऊपर, म०नं० डी. १७/१०० में।
५०- शीतलादेव्यै नमः	मशाश्वमेधघाट प्रसिद्ध, म०नं० डी. १८/१९ में।
५१- गजाननादि चतुःषष्ठि योगिन्यै नमः	राणामहल, चौसट्टीघाट, म०नं० डी. २२/१७ में।
५२- कृष्णगोपालाय नमः	राणामहल, म०नं० डी. २१/१९ में।
५३- पातालेश्वराय नमः	बंगालीटोला, म०नं० डी. ३२/११८ के बाहर।
५४- पुष्पदंतेश्वराय नमः	बंगालीटोला, म०नं० डी. ३२/१०२ में।
५५- गरुड़ेश्वराय नमः	जंगमबाड़ी, तेलियाना, म०नं० डी. ३१/४३-ए में।
५६- तिलभाण्डेश्वराय नमः	पाण्डेहवेली, म०नं० बी. १७/४२ में।
५७- सुभाण्डेश्वराय नमः	पाण्डेहवेली, तिलभाण्डेश्वर मंदिर के कुंआ में, म०नं० बी. १७/४२ में।
५८- रेवातीर्थाय नमः	रेवड़ी तालाब को कहते है।
५९- मानसरोवर तीर्थाय नमः	मानसरोवर मोहाल, आन्ध्रामठ के अन्दर, अब कूप के रूप मे है।
६०- मानसरोवरेश्वराय नमः	मानसरोवर महाल गली पर, म०नं० बी. १४/२० में।
६१- सर्वेश्वराय नमः	पाण्डेघाट, म०नं० डी. २५/३२ में।
६२- नारदेश्वराय नमः	दत्तात्रयमठ नारदघाट, म०नं० डी. २५/११ में।
६३- विभ्राटकेश्वराय नमः	दत्तात्रयमठ नारदघाट, म०नं० डी. २५/१२ में।
६४- अनसूयेश्वराय नमः	दत्तात्रयमठ नारदघाट, म०नं० डी. २५/११ में।
६५- चित्रग्रीवायै नमः	केदारघाट, कुमारस्वामी मठ, म०नं० बी. १४/११८ में।
६६- चित्रांगदेश्वराय नमः	केदारघाट, कुमारस्वामी मठ, म०नं० बी. १४/११८ में वही दोनों है।
६७- अम्बरीषेश्वराय नमः	कूचबिहार कालीबाड़ी के पीछे, सोनारपुरा, म०नं० बी. १३/६५ में।
६८- तारकेश्वराय नमः	केदारघाट, बुर्जी के नीचे।
६९- जयन्तेश्वराय नमः	लालीघाट पर, लम्बोदर विनायक के पास। दूसरे अवधकेदार पर।
७०- गौरीकुण्डाय नमः	केदारघाट पर मंदिर के नीचे।
७१- हरंपापेश्वराय नमः	केदारघाट किनारे मढ़ी में।

७२- नीलकंठेश्वराय नमः	केदर के दक्षिण, ताहिर पुर स्टेट का मंदिर, म०नं० बी. ६/९९ भूमा आश्रम में।
७३- केदारेश्वराय नमः	केदारघाट, म०नं० बी. ६/१०२ में।
७४- कालंजरेश्वराय नमः	क्षेमेश्वरघाट पर कुमारस्वामी मठ के सीढ़ी के नीचे मंदिर बन्द, म०नं० बी. १४/१० में।
७५- लम्बोदर विनायकाय नमः	लालीघाट तट पर, कोई-कोई चिन्ताहरण को कहते है अवध, म०नं० बी. ७/२०८ में।
७६- चिन्तामणिविनायकाय नमः	केदार की सड़क, अवध, म०नं० बी. ७/२०८ में।
७७- शत्रुघ्नेश्वराय नमः	हनुमानघाट, म०नं० बी. ४/४४ में।
७८- भरतेश्वराय नमः	हनुमानघाट, म०नं० बी. ४/९ में।
७९- लक्ष्मणेश्वराय नमः	हनुमानघाट, म०नं० बी. ४/४७ में।
८०- रामेश्वराय नमः	हनुमानघाट, म०नं० बी. ४/४२ में।
८१- सीतेश्वराय नमः	हनुमानघाट, विष्णु के दक्षिण तरफ कोठरी में, म०नं० बी. ४/४२ में।
८२- अंजनीनन्दाय नमः	हनुमानघाट, म०नं० बी. ४/४२ में।
८३- हनुमदीश्वराय नमः	हनुमानघाट, म०नं० बी. ४/४२ में।
८४- रुरुभैरवाय नमः	हनुमानघाट, म०नं० बी. ४/१९ घाट की ओर।
८५- कृमिकुण्डाय नमः	कीनाराम का स्थल, म०नं० बी. ३/३३५ में।
८६- कूटदन्तविनायकाय नमः	कीनाराम का स्थल, म०नं० बी. ३/३३५ में।
८७- हनुमतेश्वराय नमः	शिवालाघाट (बादशाहगंज), म०नं० बी. ३/१५० में।
८८- हयग्रीवकुण्डाय नमः	शिवालाघाट, भदैनी में लुप्त।
८९- हयग्रीवकेशवाय नमः	शिवालाघाट आनन्दमयी अस्पताल के बाहर, म०नं० बी. ३/२५ में।
९०- अक्रूरेश्वराय नमः	भदैनी, आनन्दमयी माँ आश्रम के पीछे।
९१- लोलार्काय नमः	भदैनी, लोलार्क प्रसिद्ध।
९२- लोलार्कादित्याय नमः	लोलार्ककुण्ड के सीढ़ी पर, नीचे मढ़ी में।
९३- चामुण्डाय नमः	लोलार्ककुण्ड के पास, म०नं० बी. २/६२ मे।
९४- चर्ममुण्डाय नमः	लोलार्ककुण्ड के पास, म०नं० बी. २/६२ में।
९५- महारंडाय नमः	लोलार्ककुण्ड, म०नं० बी. २/६२ में ही तीनो।
९६- करंधमादेव्यै नमः	लोलार्ककुण्ड पर लुप्त।

९७-	करंधमेश्वराय नमः	लोनार्क से दक्षिण तरफ, म०नं० बी. २/२१ में छोटालिंग पराशरेश्वर में।
९८-	उद्दालकेश्वराय नमः	लोलार्क के समीप।
९९-	पराशरेश्वराय नमः	भदैनी लोलार्ककुण्ड के पास, म०नं० बी. २/२१ में।
१००-	अमरेश्वराय नमः	भदैनी लोलार्ककुण्ड के पास, म०नं० बी. २/२० में।
१०१-	अर्कविनायकाय नमः	भदैनी लोलार्क घाट की तरफ, म०नं० बी. २/१७ के सामने गणेश।
१०२-	असिमाधवाय नमः	तुलसीदास के स्थान के पास, म०नं० बी. २/१५ में।
१०३-	गंगासागरतीर्थाय नमः	अस्सी संगम।
१०४-	कपिलमुनये नमः	तुलसीघाट के सीढ़ी पर, दीवाल में।
१०५-	असिसंगमेश्वराय नमः	अस्सी, हरिहरबाबा आश्रम के द्वार पर, म०नं० बी. १/१६६ में।
१०६-	असिसंगमाय नमः	अस्सी संगम, गंगाजी।
१०७-	स्वर्णह्रदतीर्थाय नमः	सिद्धकुण्ड सोनहटिया, शुभोदक कुण्ड प्रसिद्ध, भदैनी।
१०८-	सिद्धेश्वराय नमः	अस्सी सिनेमा के बगल गोयनका कालेज, म०नं० २/२८२ में।
१०९-	पुष्करतीर्थाय नमः	अस्सी मोक्ष भवन के पूर्व गुरुदास के स्थान के पास।
११०-	स्थाणुलिंगेश्वराय नमः	कुरुक्षेत्र तालाब के उत्तर, म०नं० बी. २/२४७ में।
१११-	कुरुक्षेत्रतीर्थाय नमः	अस्सी कुरुक्षेत्र का तालाब, म०नं० बी. २/२८३ में।
११२-	रणतम्भाय नमः	अस्सी कुरुक्षेत्र तालाब के ऊपर, बड़ालिंग।
११३-	महामायादेव्यै नमः	दुर्गाकुण्ड दुर्गाजी, म०नं० बी. २७/२ में।
११४-	कुक्कुटेश्वराय नमः	दुर्गाकुण्ड के दक्षिणी द्वार पर, म०नं० बी. २७/२ के बाहर मैदान। दूसरे राणामहल बक्रतुण्ड विनायक के समीप, नीचे, म०नं० डी. २०/१८ में।
११५-	द्वारेश्वराय नमः	दुर्गाकुण्ड दुर्गविनायक से दक्षिण मंदिर, म०नं० बी. २७/१ के बगल में।
११६-	दुर्गाकुण्डाय नमः	दुर्गाकुण्ड, म०नं० बी. २७/१ के बगल में।
११७-	दुर्गविनायकाय नमः	दुर्गाकुण्ड के ऊपर कोन पर, म०नं० बी. २७/१ में।
११८-	दुर्गादेव्यै नमः	दुर्गाकुण्ड प्रसिद्ध, म०नं० बी. २७/२ में।

११९-	चण्डभैरवाय नमः	दुर्गाकुण्ड दुर्गामंदिर, कालीजी में, म०नं० बी. २७/२ में।
१२०-	वराटिकादेव्यै नमः	दुर्गाकुण्ड कौढ़ियादेवी प्रसिद्ध (गोआबाई)।
१२१-	मुकुटेश्वराय नमः	तिलभाण्डेश्वर पार्क के बगल, म०नं० बी. १७/१९ में।
१२२-	रेणुकादेव्यै नमः	बेलवरिया कालोनी, म०नं० बी. २७/७७ में।
१२३-	द्वारावतीतीर्थाय नमः	खोजवाँ बाजार के पास शंकुधारा कुण्ड।
१२४-	द्वारवतीश्वराय नमः	(द्वारकेश्वराय नमः) खोजवाँ, म०नं० बी. २२/११५ में।
१२५-	दुर्वासाऋषये नमः	खोजवाँ, शंकुधारा कुण्ड के पूर्व, म०नं० बी. २२/६५ में।
१२६-	कृष्णरुक्मिणीभ्यो नमः	द्वारकाधीश के नाम से प्रसिद्ध, म०नं० बी. २२/६५ में।
१२७-	वैद्यनाथेश्वराय नमः	बैजनत्था प्रसिद्ध, म०नं० बी. ३७/१ में।
१२८-	कामाक्षातीर्थाय नमः	कामाक्षादेवी के पास पीछे कुण्ड है अब पटा है।
१२९-	कामाक्षादेव्यै नमः	कामाक्षादेवी, म०नं० बी. २१/१२३ में।
१३०-	क्रोधनभैरवाय नमः	बटुकभैरव में आदिभैरव के नाम से, म०नं० बी. २१/१२६ में।
१३१-	प्रीतिगौरीदेव्यै नमः	वहीं।
१३२-	बटुकभैरवाय नमः	कामाक्षापर प्रसिद्ध, म०नं० बी. २१/१२६ में।
१३३-	रामेश्वराय नमः	लक्सा के पीछे रामकुण्ड पर, म०नं० डी. ५४/४५ में।
१३४-	रामकुण्डाय नमः	लक्सा के पीछे तालाब है।
१३५-	लवेश्वराय नमः	लक्सा रामकृष्ण मिशन अस्पताल, म०नं० डी. ४५/५ में।
१३६-	कुशेश्वराय नमः	रामकृष्ण मिशन के सामने गली, म०नं० डी. ५३/४८ में।
१३७-	लक्ष्मीकुण्डाय नमः	मिश्रपोखरा, लक्ष्मीकुण्ड प्रसिद्ध।
१३८-	कुविताक्षविनायकाय नमः	मिश्रपोखरा पुराना लक्ष्मीमंदिर, म०नं० ५२/३८ में।
१३९-	महालक्ष्मीदेव्यै नमः	लक्ष्मीकुण्ड पर, लक्ष्मीजी प्रसिद्ध, म०नं० डी. ५२/४० में।
१४०-	मयूर्यै नमः	लक्ष्मीकुण्ड पर, म०नं० डी. ५२/४० में। दूसरी राणामहल म०नं० डी. २२/१६ में।
१४१-	महालक्ष्मीश्वराय नमः	लक्ष्मीकुण्ड गोपालचंद के म०नं० डी. ५२/५४ सोरहिया महादेव के नाम से।

१४२- सूर्यकुण्डाय नमः	सूरजकुण्ड मोहाल प्रसिद्ध ।
१४३- साम्बादित्याय नमः	सूरजकुण्ड के ऊपर गली में मंदिर, म०नं० डी. ५१/९० में ।
१४४- द्विमुखविनायकाय नमः	सूर्यकुण्ड पर साम्बादित्य के पीछे दीवाल पर, म०नं० डी. ६१/६० में ।
१४५- दीप्तशक्त्यै नमः	साम्बादित्य के पूर्व-दक्षिण कोण में सिंह वाहिनी दीप्ताशक्ति।
१४६- प्रचण्डभैरवाय नमः	सूरजकुण्ड अष्टांगभैरव के नाम से, म०नं० ५१/२०२ के सामने ।
१४७- चतुर्दन्तविनायकाय नमः	नईसड़क ध्रुवेश्वर मठ स्कूल के अन्दर, म०नं० डी. ४६/१० में ।
१४८- ध्रुवेश्वराय नमः	नईसड़क सनातन धर्म स्कूल, म०नं० डी. ४६/१० में ।
१४६- गोकर्णेश्वराय नमः	कोदई की चौकी दैलु की गली, म०नं० डी. ५०/३३ में ।
१५०- वैद्यनाथेश्वराय नमः	कोदई की चौकी, म०नं० डी. ५०/२०-ए, में ऊपर चढ़कर सीढ़ी से ।
१५१- त्र्यम्बकेश्वराय नमः	हौजकटोरा त्रिलोकनाथ, म०नं० डी. ३८/२१ में ।
१५२- गोदावरीतीर्थाय नमः	गोदौलिया, गुप्त ।
१५३- गौतमेश्वराय नमः	गोदौलिया काशीनरेश के शिवाले में, म०नं० डी. ३७/३३ में ।
१५४- अगस्तीश्वराय नमः	अगस्तकुण्डा मोहाल, म०नं० डी. ३६/११ में ।
१५५- कोटिलिंगेश्वराय नमः	साक्षीविनायक जंगमबाड़ी कटरा, म०नं० डी. १०/४६ में।
१५६- साक्षीविनायकाय नमः	प्रसिद्ध विश्वनाथ गली, म०नं० डी. १०/७ में ।
१५७- प्रीतिकेश्वराय नमः	साक्षीविनायक के पीछे, म०नं० डी. १०/८ में ।
१५८- मनप्रकामेश्वराय नमः	साक्षीविनायक के आगे, म०नं० डी. १०/५० में ।
१५६- पंचमुखीगणेशाय नमः	ढुंढिराज के ऊपर, सावित्री में । दूसरे जगबंधु बर्तन वाले के ऊपर, म०नं० सी.के. ३७/१८ में ।
१६०- राजराजेश्वराय नमः	ढुंढिराजगली, म०नं० सी.के. ३५/३३ में । दूसरे घुघरानीगली के सेवासदन अस्पताल में ।
१६१- दण्डपाणिने नमः	ढुंढिराज गली बाजार, म०नं० सी.के. ३६/१० में ।
१६२- अविमुक्तेश्वराय नमः	ज्ञानवापी के उत्तर फाटक पर गुप्त, नयी धर्मशाला म०नं० ३०/१ में ।
१६३- श्रीविश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१६ में ।

मुक्तिमंडप स्थित व्यासपीठ पर आकर आचार्य द्वारा पूर्वोक्त देवताओं का नाम लेकर अक्षत छोड़ना, यात्रा समाप्त कर आचार्य को यथाशक्ति भोजन, दक्षिणा देकर निष्पाप हो अपने अपने स्थान को जाना चाहिए।

इस यात्रा को करने से सम्पूर्ण पापों की शान्ति और सायुज्य मुक्ति होती है।

उत्तरदिग्देवयात्रा या उत्तरमानुषयात्रा

मणिकर्णिका में स्नान करके श्री विश्वनाथजी की यथोपचार पूजा करके मोदादि पंचविनायकों का दर्शन पूजन करें। पंचविनायक विश्वनाथ जी की कचहरी में भी है। ज्ञानवापी मुक्तिमंडप स्थित व्यासासन से यात्रा का नियम लेकर यात्रा आरम्भ करनी चाहिए।

१-	श्री विश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
२-	ज्ञानवाप्यै नमः	प्रसिद्ध।
३-	लांगलीश्वराय नमः	खोवाबाजार, म०नं० सी.के. २८/४ में।
४-	पशुपतेश्वराय नमः	पाशुपतेश्वर की गली, म०नं० सी.के. १३/६६ में।
५-	पितामहेश्वराय नमः	कश्मीरीमल की कोठी के पास शीतलागली, म०नं० ७/६२ में।
६-	कलशेश्वराय नमः	कलशेश्वर की ब्रह्मपुरी के फाटक पर, म०नं० ७/१०० में।
७-	चन्द्रेश्वराय नमः	सिद्धेश्वरी मन्दिर, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।
८-	सिद्धेश्वराय नमः	सिद्धेश्वरी मन्दिर, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।
९-	सिद्धेश्वरीदेव्यै नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।
१०-	चन्द्रकूपाय नमः	सिद्धेश्वरी मन्दिर, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।
११-	कलियुगेश्वराय नमः	सिद्धेश्वरी मन्दिर, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।
१२-	विघ्नेश्वराय नमः	नीम वाली ब्रह्मपुरी, म०नं० सी.के. २/४१ में।
१३-	आत्मावीरेश्वराय नमः	संकठाजी के पीछे, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।
१४-	मंगलेश्वराय नमः	आत्मावीरेश्वर, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।
१५-	बुधेश्वराय नमः	आत्मावीरेश्वर, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।
१६-	मित्रविनायकाय नमः	आत्मावीरेश्वर में, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।
१७-	पर्वतेश्वराय नमः	सिंधियाघाट, म०नं० सी.के. ७/१५६ में।
१८-	वासुकीश्वराय नमः	सिंधियाघाट, म०नं० सी.के. ७/१५५ में।
१९-	बृहस्पतीश्वराय नमः	सिंधियाघाट, म०नं० सी.के. ७/१३३ में।
२०-	वसिष्ठवामदेवाय नमः	संकठाघाट, म०नं० सी.के. ७/१६१ में।

२१- चिन्तामणिविनायकाय नमः	संकठाघाट वसिष्ठेश्वर के द्वार पर, म०नं० सी.के. ७/१६१ में।
२२- सेनाविनायकाय नमः	संकठाघाट संकठा की परिक्रमा, म०नं० सी.के. ७/१५६ में।
२३- याज्ञवल्क्येश्वराय नमः	संकठाघाट कृष्णेश्वर समीप, म०नं० सी.के. ७/१५६ में।
२४- हरिश्चन्द्रेश्वराय नमः	संकठाघाट, म०नं० सी.के. ७/१६६ में।
२५- कृष्णेश्वराय नमः	संकठा की दीवाल में, फेरीमार्ग पर, म०नं० सी.के. ७/१५६ में।
२६- संकठादेव्यै नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ७/१५६ में।
२७- विन्ध्यवासिनीदेव्यै नमः	संकठा के बाहर, म०नं० सी.के. २/३३ में।
२८- अश्विनीकुमारेश्वराय नमः	भोंसलाघाट, गंगामहल के सामने, म०नं० सी.के. २/२६ में।
२६- नागेश्वराय नमः	थोड़ा आगे भोंसलाघाट, म०नं० सी.के. १/२१ में।
३०- उपशान्तेश्वराय नमः	पटनीटोला, म०नं० सी.के. २/४ में।
३१- गभस्तीश्वराय नमः	पंचगंगाघाट, मंगलागौरी, म०नं० के. २४/३४ में।
३२- पंचगंगेश्वराय नमः	पंचगंगाघाट, म०नं० के. २२/११ में।
३३- मंगलविनायकाय नमः	पंचगंगाघाट, मंगलागौरी, म०नं० के. २४/३४ में।
३४- मंगलागौर्ये नमः	पंचगंगाघाट प्रसिद्ध, म०नं० के. २४/३४ में।
३५- मयूखादित्याय नमः	पंचगंगाघाट मंगलागौरी, म०नं० के. २४/३४ में।
३६- केशवाय नमः	पंचगंगाघाट, म०नं० के. २४/३४ में।
३७- व्यंकटेश्वराय नमः	पंचगंगाघाट के नीचे, म०नं० के. २२/२४ में।
३८- रामचन्द्राय नमः	वहीं।
३६- द्वारकाधीशाय नमः	प्रसंगात।
४०- बिन्दुमाधवाय नमः	पंचगंगाघाट के ऊपर, म०नं० के. २२/३७ में।
४१- दधिकल्पेश्वराय नमः	शीतलाघाट, रिद्धीश्वर नाम से, म०नं० के. २०/८५ अक्षयलोक वास एक कल्प।
४२- ब्रह्मचारिणी दुर्गायै नमः	दुर्गाघाट प्रसिद्ध, म०नं० के. २२/७२ में।
४३- खर्वनृसिंहाय नमः	दुर्गाघाट के ऊपर मूर्ति, म०नं० के. २२/५३ में।
४४- कपिलेश्वराय नमः	कपिलेश्वर की गली, म०नं० के. २६/१२ में।
४५- दूग्धविनायकाय नमः	दूधविनायक गली, म०नं० के. २३/६६ में।
४६- दधिविनायकाय नमः	दूधविनायक गली, म०नं० के. २३/६५ में।
४७- मधुविनायकाय नमः	दूधविनायकाय गली, म०नं० के. २३/६३ में।
४८- घृतविनायकाय नमः	दूधविनायक गली, म०नं० के. २३/५७ में।
४६- शर्कराविनायकाय नमः	दूधविनायक गली, म०नं० के. २८/५३ में।

५०- आमर्दकेश्वराय नमः	काठकी हवेली के पीछें, म०नं० के. ३४/४ में।
५१- कालमाधवाय नमः	काठकी हवेली के पीछें, म०नं० के. ३४/४ में।
५२- पापभक्षेश्वराय नमः	कालभैरव की गली पर, म०नं० के. २३/३७ में।
५३- कालभैरवाय नमः	कालभैरव की गली, म०नं० के. ३२/२२ में।
५४- नवग्रहेश्वराय नमः	दण्डपाणी की गली, म०नं० के. ३१/४८ में।।
५५- व्यतिपातेश्वराय नमः	दण्डपाणिकी गली, म०नं० के. ३२/४३ में।
५६- कालकूपाय नमः	दण्डपाणिकी गली, म०नं० के. ३१/४६ में।
५७- कालदण्डाय नमः	दण्डपाणिकी गली, म०नं० के. ३१/४६ में।
५८- कालेश्वराय नमः	दण्डपाणिकी गली, म०नं० के. ३१/४६ में।
५९- हंसेश्वराय नमः	हरतीरथ कुण्ड के ऊपर।
६०- हंसतीर्थाय नमः	हरतीरथ मोहाल। लुप्त।
६१- कृत्तिवासेश्वराय नमः	वृद्धकाल की सड़क, म०नं० के. ४६/२३ में।
६२- आपस्तंम्भेश्वराय नमः	दारानगर, मध्यमेश्वर मंदिर में दक्षिण शिवाला, म०नं० के. ५३/६३ में।
६३- रत्नचूडामणितीर्थाय नमः	वृद्धकाल की सड़क, रत्नेश्वर के पास कूप, म०नं० के. ५३/४० में।
६४- सतीश्वराय नमः	वृद्धकाल की सड़क, म०नं० के. ४६/३२ में।
६५- रत्नेश्वराय नमः	वृद्धकाल की सड़क, म०नं० के. ५३/४० में।
६६- मणिकेश्वराय नमः	वृद्धकाल की सड़क, म०नं० के. ५३/३८ में।
६७- शंखचूड़ेश्वराय नमः	रत्नेश्वर के पास, म०नं० के. ५३/३७ में।
६८- वृद्धकालेश्वराय नमः	वृद्धकाल मंदिर, म०नं० के. ५२/३९ में।
६९- महाकालेश्वराय नमः	वृद्धकाल मंदिर, म०नं० के. ५२/३९ में।
७०- दक्षेश्वराय नमः	वृद्धकाल कूप के सामने बड़ा शिवाला, म०नं० के. ५२/३९ में।
७१- अमृतकुण्डाय नमः	वृद्धकाल कूप के समीप, म०नं० के. ५२/३९ में।
७२- धन्वन्तरीश्वराय नमः	वृद्धकाल में, म०नं० के. ५२/३९ में।
७३- असितांगभैरवाय नमः	वृद्धकाल कूप के समीप, म०नं० के. ५२/३९ में।
७४- मालतीश्वराय नमः	वृद्धकाल, शीतलाजी के सामने, म०नं० के. ५२/३९ में।
७५- अपमृत्युहरेश्वराय नमः	बृद्धकाल, मृत्युंजय प्रसिद्ध, म०नं० के. ५२/४० में।
७६- मध्यमेश्वराय नमः	दारानगर, म०नं० के. ५३/६३ में।
७७- जमदग्नीश्वराय नमः	दारानगर मध्यमेश्वर के पास, म०नं० के. ५३/६३ में।
७८- मंदाकिनीश्वराय नमः	कम्पनीबाग में मंदिर, म०नं० के. ५९/१५ में।
७९- मंदाकिनीतीर्थाय नमः	कम्पनीबाग में कूण्ड, म०नं० के. ५९/१५ में।

८०-	वृषेश्वराय नमः	मैदागीन गोरखनाथ का टीला, म०नं० के. ५८/७८ में।
८१-	जम्बुकेश्वराय नमः	लोहटिया बड़ेगणेश के दरवाजे पर, म०नं० के. ५८/१०१ में।
८२-	महाराजविनायकाय नमः	राजादरवाजा, भारभूतेश्वर, म०नं० के. ५४/४४ में।
८३-	सिद्धअष्टकेश्वराय नमः	बड़ेगणेश पर, म०नं० के. ५८/१०१ में।
८४-	कंदुकेश्वराय नमः	भूतभैरव पर, म०नं० के. ६३/२९ में।
८५-	जैगीषव्येश्वराय नमः	ईश्वगंगी पर, म०नं० जे. ६६/३ में।
८६-	भीषणभैरवाय नमः	भूतभैरव के नाम से प्रसिद्ध, म०नं० के. ६३/२८ में।
८७-	निवासेश्वराय नमः	भूतभैरव पर ही।
८८-	व्याघ्रेश्वराय नमः	भूतभैरव पर, म०नं० के. ६३/१६ में।
८९-	जेष्ठागौर्यै नमः	काशीपुरा, म०नं० के. ६२/१४४ में।
९०-	दण्डखाततीर्थाय नमः	पियाला शहीद का कुण्ड, लुप्त।
९१-	ज्येष्ठेश्वराय नमः	काशीपुरा, भूतभैरव, म०नं० ६२/४४ में।
९२-	चतुःसमुद्रकूपाय नमः	सप्तसागर का कूप, म०नं० के. ६२/२८ में।
९३-	घण्टाकर्णतीर्थाय नमः	कर्णघण्टा तालाब, म०नं० के. ६०/६७ में।
९४-	घण्टाकर्णेश्वराय नमः	कर्णघण्टेश्वर नाम से प्रसिद्ध, म०नं० के. ६०/६६ में।
९५-	व्यासेश्वराय नमः	कर्णघण्टा पानी के अन्दर, म०नं० के. ६०/६७ में।
९६-	चित्रगुप्तेश्वराय नमः	मछरहट्टा फाटक, म०नं० सी.के. ५७/७७ में।
९७-	भारभूतेश्वराय नमः	राजादरवाजा, म०नं० सी.के. ५४/४४ में।
९८-	कीकसेश्वराय नमः	राजादरवाजा नारायण कटरा के म०नं० ५२/१५ में।
९९-	हाटकेश्वराय नमः	हड़हा गुदड़ी बाजार, म०नं० सी.के. ४३/१८९ में।
१००-	अस्थिक्षेपनतीर्थाय नमः	हड़हा, लुप्त। बड़ा लिंग की पूजा करे। म०नं० सी.के. ४८/४५ में।
१०१-	पितृकुण्डतीर्थाय नमः	पितरकुण्डा तालाब।
१०२-	पितृश्वराय नमः	पितरकुण्डा, म०नं० सी. १८/४७ में।
१०३-	क्षिप्रप्रसादविनायकाय नमः	पितरकुण्डा, म०नं० सी. १८/४७ में।
१०४-	मातृदेव्यै नमः	माताकुण्ड पर।
१०५-	मातृकुण्डतीर्थाय नमः	लल्लापुरा, पितृकुण्ड के आगे।
१०६-	विमलतीर्थाय नमः	पिशाचमोचन का तालाब।
१०७-	कपर्दीश्वराय नमः	पिशाचमोचन पर, म०नं० सी. २१/४० में।

मार्गशुक्लचतुर्दश्यां कपर्दीश्वरसन्निधौ ।
स्नात्वान्यत्रापि मरणान्न पैशाच्यमवाप्नुयुः ।।
(का० खं०, ५४-८०)

मार्गशीर्ष शुक्लपक्ष की चतुर्दशी को कपर्दीश्वर के समीप विमलकुण्ड पिशाचमोचन स्नान करने वाला प्राणी मरने के बाद पिशाच गति को नहीं प्राप्त होता है।

१०८- पंचास्यविनायकाय नमः	पिशाचमोचन, म०नं० सी. २१/४० में।
१०९- वाल्मीकेश्वराय नमः	पिशाचमोचन तालाब के तट पर, म०नं० सी. २१/४० में।
११०- हेरम्बविनायकाय नमः	त्रिलोचन मंदिर के पीछे, पार्वतिश्वर में, म०नं० ए. २/६२ में।
१११- चित्रकूटतीर्थाय नमः	चित्रकूट का तालाब।
११२- विघ्नराजविनायकाय नमः	चित्रकूट, म०नं० जे. १२/३२ में।
११३- धूमावतीदेव्यै नमः	चित्रकूट, म०नं० जे. १२/२३४ में।
११४- विकटद्विजविनायकाय नमः	धूपचण्डी देवी के पास, म०नं० जे. १२/१३४ में।
११५- धूपचण्डीतीर्थाय नमः	धूपचण्डी देवी के पास, चित्रकूट का तालाब।
११६- आग्नीध्रकुण्डाय नमः	ईश्वरगंगी का पोखरा।
११७- आग्नीध्रेश्वराय नमः	ईश्वरगंगी जागेश्वर मठ, म०नं० के. ६६/४ में जागेश्वर महादेव।
११८- चिन्तामणिविनायकाय नमः	ईश्वरगंगी से गली में, म०नं० ५६/४२ में।
११९- उर्वशीश्वराय नमः	औसानगंज बाग में, बाबू की बाजार, म०नं० ५६/१०८ में।
१२०- सिद्धेश्वराय नमः	जैतपुरा ज्वरहरेश्वर समीप, म०नं० जे. ६/८५ में।
१२१- ज्वरहरेश्वराय नमः	जैतपुरा वागेश्वरी मार्ग पर, म०नं० जे. ६/८५ में।
१२२- वागेश्वरीदेव्यै नमः	जैतपुरा स्कंदमाता को कहते है, म०नं० जे. ६/३३ में।
१२३- वागीशविनायकाय नमः	जैतपुरा स्कंदमाता के मन्दिर में, म०नं० जे. ६/३३ में।
१२४- कर्कोटकतीर्थाय नमः	जैतपुरा नाग कुआँ को ही कहते है, म०नं० जे. २३/२०६ में।
१२५- मरीचीकुण्डाय नमः	मीरासागर।
१२६- मरीचीश्वराय नमः	मीरासागर।
१२७- उत्तरार्क कुण्डाय नमः	बकरियाकुण्ड, अलईपुर।
१२८- उत्तरार्काय नमः	बकरियाकुण्ड के ऊपर लाट के रूप में, दूसरी सूर्य की मूर्ति

१२९- शैलपुत्री दुर्गायै नमः	मढ़ियाघाट, शैलपुत्री प्रसिद्ध, म०नं० ए. ४०/११ में।
१३०- कुलस्तंभाय नमः	लाटभैरव जी।
१३१- कपालमोचनतीर्थाय नमः	लाटभैरव का तालाब।
१३२- विश्वकर्मेश्वराय नमः	गोलगड्डा प्रसिद्ध, म०नं० ए. ३४/१०६ में।
१३३- धन्वन्तरीश्वराय नमः	पीलीकोठी, धनेसरामठ, म०नं० जे. ४/६१ में।
१३४- धन्वन्तरी कुण्डाय नमः	पीलीकोठी में कूप, म०नं० जे. ४/६१ में।
१३५- सुमन्तेश्वराय नमः	हनुमानफाटक, तुलसीदास के हनुमान जी, म०नं० जे. ३१/६१ में।
१३६- ओंकारेश्वराय नमः	पठानीटोला टीला पर, म०नं० ए. ३३/२३ में।
१३७- नादेश्वराय नमः	ओंकारेश्वर का नाम पठानी टोला, म०नं० ए. ३३/२३ में।
१३८- वरणासंगमाय नमः	राजघाट गंगावरणा का संगम स्थान।
१३९- वरणा संगमेश्वराय नमः	राजघाट आदिकेशव में नीचे, म०नं० ए. ३७/५१ में।
१४०- आदिकेशवाय नमः	राजघाट वरणा संगम पर प्रसिद्ध, म०नं० ए. ३७/५१ में।
१४१- केशवादित्याय नमः	राजघाट आदिकेशव में नीचे दीवाल में संगमेश्वर, म०नं० ए. ३७/५१ में।
१४२- वेदेश्वराय नमः	वरणा आदिकेशव में घाट के फाटक चिन्तामणी गणेश में, म०नं० ए. ३७/५१ में।
१४३- नक्षत्रेश्वराय नमः	वरणा आदिकेशव, म०नं० ए. ३७/५१ में।
१४४- श्वेतद्वीपेश्वराय नमः	वरणा आदिकेशव वहीं बगल में, म०नं० ए. ३७/५१ में।
१४५- खर्वविनायकाय नमः	वरणा राजघाट किला सड़क के किनारे।
१४६- राजपुत्रविनायकाय नमः	वरणा राजघाट वसंतकालेज के घेरे में, म०नं० ए. ३७/४८ में।
१४७- स्वर्लीनेश्वराय नमः	राजघाट प्रह्लादघाट के पूर्व नया महादेव के नाम से, म०नं० ए. ११/३० में।
१४८- लक्ष्मीदेव्यै नमः	राजमंदिर, म०नं० के. २०/१३७ में।
१४९- वरदविनायकाय नमः	प्रह्लादघाट सड़क पर, म०नं० ए. १३/१९ में।
१५०- प्रह्लादेश्वराय नमः	प्रह्लादघाट के ऊपर, म०नं० ए. १०/८१ में।
१५१- हिरण्यगर्भेश्वराय नमः	त्रिलोचनघाट, म०नं० ए. २/६२ के नीचे मढ़ी में तटपर।

१५२- प्रणवविनायकाय नमः	प्रह्लादघाट, म०नं० ए. २/६२ के नीचे उसी मढ़ी में।
१५३- त्रिलोचनेश्वराय नमः	प्रह्लादघाट बाजार प्रसिद्ध, म०नं० ए. २/८० में।
१५४- अरुणादित्याय नमः	प्रह्लादघाट मंदिर, म०नं० ए. २/८० में।
१५५- उदण्डमुण्डविनायकाय नमः	त्रिलोचन के घेरे में, देवी के पास, म०नं० ए. २/८० में।
१५६- त्रिविक्रमाय नमः	त्रिलोचन मंदिर, म०नं० ए. २/८० में।
१५७- आदिमहादेवाय नमः	त्रिलोचन के पीछे, म०नं० ए. ३/६२ में।
१५८- मोदकप्रियविनायकाय नमः	त्रिलोचन के पीछे आदिमहादेव, म०नं० ए. ३/६२ में।
१५९- नर्मदेश्वराय नमः	त्रिलोचन के पीछे गली में, म०नं० ए. २/७६ में।
१६०- नर्मदाकूपाय नमः	त्रिलोचन के पीछे मंदिर नर्वदेश्वर में।
१६१- पिलपिलातीर्थाय नमः	त्रिलोचन बाजार प्रसिद्ध पिलपिला कूप, म०नं० ए. ३/६७ में।
१६२- वाराणसी देव्यै नमः	भविष्यपुराण के ब्रह्मखण्ड के अनुसार राजा वरणार ने काशी में वाराणसी देवी की स्थापना की थी त्रिलोचन मंदिर, म०नं० ए. २/८० में।
१६३- दुर्वासेश्वराय नमः	मछोदरी से पूरब, म०नं० ए. २/६ में।
१६४- प्रहसितेश्वराय नमः	मछोदरी कामेश्वर में, म०नं० ए. २/६ में।
१६५- स्कन्देश्वराय नमः	कामेश्वर में, म०नं० ए. २/६ में।
१६६- खखोल्कादित्याय नमः	कामेश्वर के घेरे में, म०नं० ए. २/६ में।
१६७- संहारभैरवाय नमः	पाटन दरवाजा के पास, म०नं० ए. १/८२ में।
१६८- मुखनिर्मालिकागौर्यै नमः	गायघाट हनुमान मंदिर, म०नं० के. ३/४२ में।
१६९- गोप्रेक्षेश्वराय नमः	गायघाट के पास लालघाट, म०नं० के. ४/२४ में।
१७०- वृद्धेश्वराय नमः	(रिद्धिनाथ) शीतलाघाट के ऊपर, म०नं० के. २०/८५ में।
१७१- दधीचीश्वराय नमः	रिद्धिश्वर नाम से प्रसिद्ध, म०नं० के. २०/८५ में।
१७२- बटुकभैरवाय नमः	राजमंदिर, म०नं० के. २०/६ में।
१७३- हनुमते नमः	राजमंदिर के हनुमान जी, म०नं० के. २०/१५९ में।
१७४- लक्ष्मीनृसिंहाय नमः	राजमंदिर, म०नं० के. २०/१५९ में।
१७५- पंचमुखीहनुमते नमः	राजमंदिर के पीछे, म०नं० के. २०/१६१ में।
१७६- शेषमाधवाय नमः	राजमंदिर गंगा के पास, तट पर मढ़ी में।
१७७- धनधान्येश्वराय नमः	रतनफाटक, म०नं० के. १७/६ में।

१७८- सिद्धेश्वराय नमः	शीतलाघाट, म०नं० के. २०/६० में।
१७९- ब्रह्मेश्वराय नमः (धौतपापेश्वराय नम)	ब्रह्माघाट, म०नं० के. २२/८२ में।
१८०- वीररामेश्वराय नमः (जगन्नाथाय नमः)	वहीं रामघाट, म०नं० के. २४/१० में।
१८१- यमेश्वराय नमः (यमादित्याय नमः)	यमघाट प्रसिद्ध, नीचे गंगा तट पर।
१८२- महेश्वराय नमः	मणिकर्णिका कुण्ड के सामने घाट पर।
१८३- सिद्धविनायकाय नमः	मणिकर्णिका कुण्ड से बगल सीढ़ी से चढ़ कर, म०नं० सी.के. ६/१ में।
१८४- मणिकर्णिकेश्वराय नमः	गोमठ काकाराम की गली, सन्यासश्रम के बाहर, म०नं० सी.के. ८/१२ में।
१८५- नैऋतेश्वराय नमः	काकाराम गली खत्री धर्मशाला, म०नं० के. ८/१३ के अन्दर।
१८६- पवनेश्वराय नमः	काशीपुरा भूतभैरव के समीप, म०नं० के. ८/१३ के अन्दर।
१८७- कमलास्वतरेश्वराय नमः	मणिकर्णिका कुण्ड के पास गुप्त, दूसरे काकाराम की गली, म०नं० के. ८/१४ में।
१८८- मणिकर्णिकाविनायकाय नमः	मणिकर्णिका चौकी के पास, म०नं० सी.के. १०/४८ के सामने सतुआ बाबा के पास।
१८९- ब्रह्मनालेश्वराय नमः	मणिकर्णिका मार्ग, म०नं० १०/५३ में।
१९०- स्वर्गद्वारेश्वराय नमः	फुटे गणेश के सामने मोक्षेश्वर, म०नं० ३४/१० में।
१९१- अमृतेश्वराय नमः	नीलकंठ, म०नं० सी.के. ३३/२८ के अन्दर नीचे उतर कर गड्ढे में।
१९२- पुलहेश्वराय नमः	ठाकुरदास सुरेका धर्मशाला, म०नं० सी.के. ३३/४३ में।
१९३- पुलस्तेश्वराय नमः	ठाकुरदास सुरेका धर्मशाला के सामने राममंदिर के बाहर छोटे सिवाला के नीचे, म०नं० १०/१६ में।
१९४- गालवेश्वराय नमः	लुप्त।
१९५- नीलकंठेश्वराय नमः	नीलकंठमोहाल, म०नं० सी.के. ३३/२३ में।
१९६- गंगेश्वराय नमः	ज्ञानवापी मस्जिद के पूर्व, पीपल तले गुप्त, स्थान की पूजा।
१९७- नन्दिकेश्वराय नमः	ज्ञानवापी के पूर्व बड़ा नन्दी मूर्ति लुप्त।

१९८- तारकेश्वराय नमः — ज्ञानवापी गौरीशंकर मढ़ी के नीचे।
१९९- महाकालेश्वराय नमः — नन्दीश्वर के पीछे, पूर्व दक्षिण कोण पर, पीपल तले।
२००- मोदादिपंचविनायकाय नमः — पांचोविश्वनाथ जी की कचहरी में, म०नं० सी.के. ३५/२१ में।
२०१- श्रीविश्वेश्वराय नमः — प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१९ में।

मुक्तिमंडप व्यासासन के समीप बैठकर आचार्य द्वारा पूर्वोक्त देवताओं का नाम लेकर अक्षत छोड़ना, यात्रा पूर्ण कर यथाशक्ति आचार्य को भोजन, दक्षिणा देकर अपने अपने घर को जाये। इस यात्रा को करने वाला अनेक जन्मों के संचित पापों से निवृत्त होकर मोक्षफल का भागी होता है।

नवदुर्गा यात्रा

आश्विनशरद नवरात्र दुर्गा यात्रा

अष्टम्यां च चतुर्दश्यां भौमवारे विशेषतः।
संपूज्य सततं काश्यां दुर्गादुर्गतिनाशिनी ॥८२॥
नवरात्रं प्रयत्नेन प्रत्यहं सा समर्चिता।
नाशयिष्यति विघ्नौघान्सुमतिं च प्रदास्यति ॥८३॥
महापूजोपहारैश्च महाबलिनिवेदनैः।
दास्यत्यभीष्टदा सिद्धिर्दुर्गा काश्यां न संशयः ॥८४॥
प्रति संवत्सरं तस्याः कार्या यात्रा प्रयत्नतः।
शारदनवरात्रञ्च सकुटुम्बैः शुभार्थिभिः ॥८५॥
यो न सांवत्सरीं यात्रां दुर्गायाः कुरुते कुधीः।
काश्यां विघ्नसहस्त्राणि तस्य स्युश्चु पदे पदे ॥८६॥
दुर्गाकुण्डे नरःस्नात्वासर्वदुर्गार्तिहारिनीम्।
दुर्गासंपूज्य विधिवन्नवषजन्माद्यमुत्सृजेत् ॥८७॥

(का० खं०, अ. ७२)

यह नौ दुर्गा की यात्रा प्रतिमास (शुक्ल अष्टमी) या चर्तुदशी को करना। यदि उक्ततिथि को मंगलवार हो तो विशेषमाहात्म्य है। जो प्राणी काशी में दुर्गाजी की पूजा करते हैं, उनकी दुर्गति का नाश होता है। प्रयत्न करके नवरात्र में अवश्य यात्रा करें। इनके पूजन करने से विघ्नों का नाश, सुमति की प्राप्ति होती है। अनेक प्रकार से पूजा करने से मनोरथ सिद्ध करती है। सकुटुम्ब पूजा करें। ऐसा न करने से पद पद पर विघ्न उपस्थित होते है। दुर्गाकुण्ड स्नान और दुर्गाजी की विधिवत् पूजा करने से नौ जन्मों का पाप नाश होता है। (इति मारकण्डये पुराण)

१-	शैलपुत्रीदेव्यै नमः	मढ़ियघाट, वरणा तट प्रसिद्ध, म०नं० ए. ४०/११ में।
२-	ब्रह्मचारिणीदुर्गायै नमः	दुर्गाघाट पर प्रसिद्ध, म०नं० के. २२/७२ में।
३-	चित्रघंटादुर्गायै नमः	लक्खी चौतरा चौक से पूरब चन्दुनाऊ की गली, म०नं० सी. के. २३/३४ में।
४-	कूष्मांडाख्यदुर्गायै नमः	दुर्गाकुण्ड, दुर्गाजी प्रसिद्ध, म०नं० बी. २७/२ में।
५-	स्कंदमातादुर्गायै नमः	वागेश्वरीदेवी प्रसिद्ध, जैतपुरा, म०नं० जे. ६/३३ में।
६-	कात्यायनीदुर्गायै नमः	सिंधियाघाट के ऊपर, आत्मावीरेश्वर, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।
७-	कालरात्रिदुर्गायै नमः	कालिकागली प्रसिद्ध, म०नं० डी. ८/१७ में।
८-	महागौरीदुर्गायै नमः	अन्नपूर्णा की पूजाकरे, म०नं० डी. ९/१ में।
९-	सिद्धिदातृदुर्गायै नमः	सिद्धमाता की गली, म०नं० सी.के. ६०/२६ कोई कोई सिद्धेश्वरी को कहते है, म०नं० ७/१२४ में।

नवशक्ति यात्रा

रक्षन्ति क्षेत्रमेतद्वै तथान्या नवशक्तयः।
उपसर्गसहस्त्रेषु ता वै दिग्देवताः क्रमात् ॥

(का० खं०, अ. ७२, श्लो. ८९ से ९१ तक)

१-	शतनेत्रायै नमः	लुप्त।
२-	सहस्त्रास्यै नमः	लुप्त।
३-	अयुतभुजायै नमः	लुप्त।
४-	अश्वारूढ़ायै नमः	जैतपुरा वागेश्वरी मंदिर, म०नं० जे. ६/३३ में।
५-	गजास्यायै नमः	लुप्त।
६-	त्वरितायै नमः	रविन्द्रपुरी लेन नं० ५ में।
७-	शववाहिन्यै नमः	देवनाथपुरा की शवशिवा।
८-	विश्वायै नमः	धर्मकूप में विश्वभुजानाम से प्रसिद्ध, म०नं० डी. २/१५ में।
९-	सौभाग्यगौर्यै नमः	बाँसफाटक आदिविश्वनाथ के दालान, म०नं० सी.के. ३८/८ में।

नव गौरी यात्रा

अतः परं प्रवक्ष्यामि गौरीयात्रामनुत्तमाम् ।
शुक्लपक्षे तृतीयायां या यात्रा विश्वऋद्धिदा ।।
गोप्रेक्षतीर्थे सुस्नाय मुखनिर्मालिकां व्रजेत् ।
ज्येष्ठावाप्यां नरः स्नात्वा ज्येष्ठागौरीं समर्चयेत् ।।६८ ।।
सौभाग्यगौरीं सम्पूज्या ज्ञानवाप्यां कृतोदकैः ।
ततः श्रृङ्गारगौरीश्च तत्रैव च कृतोदकैः ।।६९ ।।
स्नात्वा विशालङ्गांया विशालाक्षीं ततो व्रजेत् ।
सुस्नातो ललितातीर्थे ललितामर्चयेत्ततः ।।७० ।।
स्नात्वा भवानीतीर्थे यो भवानीं परिपूजयेत् ।
मङ्गलां च ततोऽभ्यर्च्य बिन्दुतीर्थकृतोदकः ।।७१ ।।
ततो गच्छेन्महालक्ष्मीं स्थिरलक्ष्मीसमृद्धये ।
इमां यात्रां नरः कृत्वा क्षेत्रेऽस्मिन्मुक्तिजन्मनि ।।७२ ।।
न दुःखैरभिभूयेत इहामुत्रापि कुत्रचित् ।।७३ ।।

(का० खं०, अ. १००)

चैत्र ग्रीष्मनवरात्र या प्रत्येक महीने के शुक्ल तृतीया को करनी चाहिए । इस यात्रा को करने से सर्वार्थसिद्धि अथवा सौभाग्यफल की प्राप्ति होती है और यात्री लोकपरलोक में सुख का भागी होता है ।

१- मुखनिर्मालिकागौर्यै नमः — (गोप्रेक्षतीर्थ स्नान) गायघाट हनुमानजी में, म०नं० के. ३/४२ में ।

२- ज्येष्ठागौर्यै नमः — (ज्येष्ठावापी स्नान) काशीपुरा ज्येष्ठेश्वर, म०नं० ६२/१४४ में ।

३- सौभाग्यगौर्यै नमः — (सौभाग्यतीर्थ स्नान) आदिविश्वनाथ पूर्व दालान, म०नं० सी. के. ३८/८ में ।

४- श्रृंगारगौर्यै नमः — (ज्ञानवापी स्नान) ज्ञानवापी मस्जिद के पीछे के स्थान में ।

५- विशालाक्षीगौर्यै नमः — (विशालतीर्थ स्नान) मीरघाट प्रसिद्ध, म०नं० डी. ३/८५ में ।

६- ललितागौर्यै नमः — (ललितातीर्थ स्नान) ललिताघाट, म०नं० डी. १/६७ में ।

७- भवानीगौर्यै नमः	(भवानीतीर्थ स्नान) अन्नपूर्णा के बगल राम मंदिर में, म०नं० डी. ८/३८ में।
८- मंगलागौर्यै नमः	(बिन्दुतीर्थ स्नान) पंचगंगाघाट के ऊपर, म०नं० के. २४/३४ में।
९- महालक्ष्मीगौर्यै नमः	(लक्ष्मीतीर्थ स्नान) लक्ष्मीकुण्ड प्रसिद्ध, म०नं० डी. ५२/४० में।

महादेवी यात्रा

येतां यत्नेन संपूज्याः क्षेत्ररक्षण देवताः ।

(का० खं०, अ. ८३)

१- ब्रह्माण्यै नमः	खालिसपुरा ब्रह्मेश्वर, म०नं० डी. ३३/६६ में।
२- वैष्णव्यै नमः	लालघाट गौरीशंकर, म०नं० के. ४/२४ में।

प्रतीच्यां गोपिगोविन्दात् भ्राम्यंच्चक्रोच्चतर्जनीम् ।
नारायणीं यः प्रणमेत्तस्य काश्यां महोदयः ।।

(का० खं०, ७०।३५)

इनकी आराधना से पातकों का नाश होता है।

३- वाराह्यै नमः	मानमंदिर, म०नं० डी. १६/८४ आयुरक्षतुवाराही, इनके दर्शन पूजन से आयु की रक्षा होती है।
४- रौद्रायै नमः	लुप्त।
५- नारसिंह्यै नमः	जौविनायक, ठाकुरदास सुरेका भवन, म०नं० सी.के. ३३/४३ में।
६- कौमार्यै नमः	काश्मीरीमहल मोहाल, कलशकूप के ऊपर भद्रकाली नाम से, म०नं० सी.के. ७/१०२ में।
७- माहेश्वरी नमः	विश्वनाथ की कचहरी के उत्तर, दीवाल में। दूसरी रामघाट आनन्दभैरव में, म०नं० २४/२२ में।
८- चामुण्डायै नमः	लोलार्ककुण्ड से उत्तर, म०नं० २/६२ में।
९- चंडिकायै नमः	सदरबाजार, पाशपाणि विनायक के पास।
१०- विकटायै नमः	सिंधियाघाट के ऊपर, आत्मावीरेश्वर में, कात्यायनी प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।

पंचमुद्रे महापीठे वीरेश्वर समीपतः ।
विकटाख्या महादेवी पूजनीया हितेप्सुभिः ।।

(ब्रह्मपुराण, त्रि.से. पृष्ठ १५६)

पंचमुद्रा पीठ पर वीरेश्वर के समीप विकटा (कात्यायनी) नाम की महादेवी है, हितकी कामना वालों को इनकी पूजा करनी चाहिये।

चण्डी यात्रा

नवम्यामथवाष्टम्यां चण्डीयात्रा शुभा मता।

(का० खं०, अ. ७० श्लो. १०० ७५ १/२ तक)

१- विशालाक्षीगौर्यै नमः	मीरघाट प्रसिद्ध, म०नं० डी. ३/८५ में।
२- ललितागौर्यै नमः	ललिताघाट प्रसिद्ध, म०नं० डी. १/६७ में।
३- विश्वभुजागौर्यै नमः	धर्मकूप से दक्षिण, म०नं० डी. २/१५ में।
४- वाराह्यै नमः	मानमंदिर, म०नं० डी. १६/८४ में।
५- शिवदूत्यै नमः	मोहाल नयामहादेव, प्रह्लादघाट पंचाग्नि अखाड़ा, म०नं० ए. ११/३० में।
६- वज्रहस्तायै नमः	लुप्त।
७- रौद्रायै नमः	लुप्त।
८- संपत्कैर्यै नमः	लुप्त।
९- कौमार्यै नमः	मोहाल कश्मीरीमल, कलशकूप के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१०२ में।
१०- माहेश्वर्यै नमः	विश्वनाथ जी की कचहरी के उत्तर दीवाल में। दूसरी रामघाट आनन्दभैरव, म०नं० २४/२२ में।
११- वृष्यावत्यै नमः	लुप्त।
१२- नारसिंह्यै नमः	जौविनायक सुरेकाभवन, म०नं० सी.के. ३३/४३ में।
१३- ब्राह्म्यै नमः	खालिसपुरा, ब्रह्मेश्वर में नीचे कूँए में, म०नं० डी. ३३/६६ में।
१४- नारायण्यै नमः	लालघाट, गौरीशंकर, म०नं० के. ४/२४ में।
१५- विरूपाक्षीगौर्यै नमः	विश्वनाथ जी के नैऋत्य कोण में छोटा मंदिर, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
१६- शैलेश्वैर्यै नमः	मढ़ियाघाट, वरणा शैलपुत्री ही, म०नं० ए. ४०/११ में।
१७- चित्रघंटायै नमः	चौक से पूर्व, चन्दूनाऊ की गली, म०नं० सी.के. २३/२४ में।
१८- चित्रग्रीवायै नमः	क्षेमेश्वरघाट के ऊपर, चित्रांगदेश्वर में, म०नं० बी. १४/११८ में।

१९- भद्रकाल्यै नमः	कलशेश्वर की ब्रह्मपुरी कूप के ऊपर, म०नं० ७/१०२ में। दूसरी मध्यमेश्वर, म०नं० ५३/१०७ में।
२०- हरसिद्ध्यै नमः	मणिकर्णिका, सिद्धविनायक के पीछे, विक्रमादित्य की कुलदेवी, म०नं० सी.के. ६/६ में।
२१- विन्ध्यै नमः	संकठामंदिर के बाहर विन्ध्यवासिनी, म०नं० सी.के. २/३३ में।
२२- निगड़भंजिन्यै नमः	दशाश्वमेधघाट के ऊपर, बन्दिदेवी ही, म०नं० डी. १७/१०० में।
२३- घनटंकारायै नमः	वही, दशाश्वमेध शूलटंकेश्वर में आदि हाथी फाटक पर लुप्त।
२४- अमृतेश्वर्यै नमः	नीलकंठ अमुतेश्वर में नीचे, म०नं० सी.के. ३३/२८ में।
२५- सिद्धलक्ष्म्यै नमः	(जगद्धातृ) मणिकर्णिका सिद्धविनायक के पूर्व, म०नं० सी. के. ८/१ में।
२६- कुब्जायै नमः	काश्मीरीमल की हवेली के पास, प्रपितामहेश्वर के पश्चिम, म०नं० सी.के. ७/६२ में।
२७- त्रिलोकसुन्दर्यै नमः	वहीं, पितामहेश्वर के द्वार पर, शीतलादेवी, म०नं० सी.के. ७/६२ में।
२८- दीप्ताशक्त्यै नमः	सूर्यकुण्ड, साम्बादित्य के पूर्व, दक्षिणा सिंह वाहिनीदिप्ताश।
२९- जगदंबिकायै नमः	(महालक्ष्मी) लक्ष्मीकुण्ड प्रसिद्ध, म०नं० डी. ५२/४० में।
३०- हयकंठयै नमः	लक्ष्मीकुण्ड कालीमठ में खिन्नी के पेड़ के नीचे, म०नं० डी. ५२/३५ में।
३१- कौर्मीशक्त्यै नमः	(चण्डीदेवी) पाशपाणि सदरबाजार के पास।
३२- वायव्यै नमः	लुप्त।
३३- शिख्यै नमः	लक्ष्मीकुण्ड लक्ष्मीमंदिर दरवाजे पर पूर्वाभिमुखी, म०नं० डी. ५२/४० में।
३४- भीमचण्ड्यै नमः	पंचक्रोशी में, भीमचण्डी गाँव।
३५- क्षावक्रेश्वर्यै नमः	कपिलधारा मंदिर के दक्षीण दीवाल में।
३६- तालजंघेश्वर्यै नमः	लुप्त।
३७- विकटाननायै नमः	कात्यायनी जी का दूसरा नाम विकटा है।

३८- यमदंष्ट्रायै नमः	लुप्त।
३९- शुष्कोदर्यै नमः	कृत्तिवासेश्वर समीप दारानगर।
४०- चर्ममुण्डायै नमः	म०नं० बी. २/६२ में। लोलार्क कुण्ड से उत्तर।
४१- महारुण्डायै नमः	म०नं० बी. २/६२ में। लोलार्क कुण्ड से उत्तर।
४२- चामुण्डायै नमः	लोलार्क कुण्ड के उत्तर, म०नं० बी. २/६२ में।
४३- स्वप्नेश्वर्यै नमः	शिवाला, बादशाहगंज, हनुमान मंदिर में, म०नं० बी. ३/१५० में।
४४- दुर्गादेव्यै नमः	दुर्गाकुण्ड प्रसिद्ध दुर्गाजी, म०नं० बी. २७/२ में।

यह चण्डी यात्रा नवमी या अष्टमी के दिन करनी चाहिये। गंगास्नान कर पंचगणेशों को प्रणाम कर यात्रा को चलना चाहिए।

चतुषष्ठि योगिनी यात्रा

कृष्णपक्षस्य भूतायामुपवासी नरोत्तमः।
तत्र जागरणं कृत्वा महतीं सिद्धिमाप्नुयात् ॥४९॥
प्रणवादिचतुर्थ्यन्तैर्नामभिर्भक्तिमान्नरः।
प्रत्येकं हवनं कृत्वा शतमष्टोत्तरं निशि ॥५०॥
संसर्पिषा गुग्गुलुना लघुकोलप्रमाणतः।
यां यां सिद्धिमभीप्सेत तां तां प्राप्नोति मानवः ॥५१॥
नामानीमानि यो मर्त्यञ्चतुःषष्टिं दिने दिने।
जपेत त्रिसंध्यं तस्येह दुष्टबाधा प्रशाम्यति ॥४२॥
न डाकिन्यो न शाकिन्यो न कूष्मांडा न राक्षसाः।
तस्य पीडां प्रकुर्वन्ति नामानीमानि यः पठेत् ॥४३॥
शिशूनां शांतिकारीणि गर्भशांतिकराणि च।
रणे राजकुले वापि विवादे जयदान्यपि ॥४४॥
लभेदभीप्सितां सिद्धिं योगिनीपीठ सेवकः।
मन्त्रान्तराराये़पि जपंस्तत्पीठे सिद्धिभाग् भवेत् ॥४५॥
बलिपूजोपहारैश्च धूपदीपसमर्पणैः।
क्षिप्रं प्रसन्ना योगिन्यः प्रयच्छेयुर्मनोरथान् ॥४६॥

शरत्काले महापूजां तत्र कृत्वा विधानतः ।
हवींषि हुत्वा मंत्रज्ञो महतीं सिद्धिमाप्नुयात् ।।४७ ।।
आरभ्याश्वयुजः शुक्लां तिथिं प्रतिपदं शुभाम् ।
पूजयेन्नवमीं यावन्नरश्चिन्तितमान्तुयात् ।।४८ ।।
यां यां सिद्धिमभीप्सेत तां तां प्राप्नोति मानवः ।।५१ ।।
चैत्रकृष्णप्रतिपदि तत्र यात्रा प्रयत्नतः ।
क्षेत्रविघ्नप्रशान्त्यर्थं कर्तव्या पुण्यकृज्जनैः ।।५२ ।।
यात्रां च सांवत्सरिकं यो न कुर्यादवज्ञया ।
तस्य विघ्नं प्रयच्छन्ति योगिन्यः काशिवासिनः ।।५३ ।।

(का० खं०, अ. ४५, योगिनीमहात्म्य)

योगिनी यात्रा प्रतिमास के कृष्णपक्ष चतुर्दशी को करनी चाहिए उस दिन व्रत, उपवास, जागरण करने से अलभ्य सिद्धि की प्राप्ति होती है। जो प्राणी प्रतिदिन त्रिकाल इनका नाम स्मरण करते है, झबेर के बराबर गुग्गुल की गोली घी के साथ, प्रणव के सहित, इनका नाम लेकर अग्नि में हवन करते हैं, शाकिनी, डाकिनी, कूष्माण्डा, राक्षस, प्रेतादि बाधा, रोग, बालग्रहादि सब उपद्रव नष्ट कर गर्भरक्षा करती है। रण, विवाद, राजकुल, सर्वत्र जय की देने वाली है। आश्विन नवरात्र में अनेक वस्तुओं से पूजा हवनादि करने से उनका मनोरथ सिद्ध होता है। चैत्रकृष्ण प्रतिपदा को वार्षिक यात्रा अवश्य करनी चाहिए। चौसट्टी की ही पूजा से सम्पूर्ण फल मिलता हैं।

१-	गजाननायै नमः	राणामहल, सरस्वती विनायक के बगल में, म०नं० डी. २१/२२ के बाहर।
२-	सिंहमुख्यै नमः	राणामहल लुप्त।
३-	गृध्रास्यायै नमः	राणामहल लुप्त।
४-	काकतुण्डिकायै नमः	राणामहल लुप्त।
५-	उष्ट्रग्रीवायै नमः	राणामहल लुप्त।
६-	हयग्रीवायै नमः	भदैनी आनन्दमयी अस्पताल के बगल, म०नं० बी. ३/२५ में।
७-	वाराह्यै नमः	मानमंदिर, म०नं० डी. १६/८४ में।
८-	शरभाननायै नमः	मानमंदिर लुप्त।
९-	उलूकिकायै नमः	मानमंदिर लुप्त।
१०-	शिवाशवायै नमः	मानमंदिर लुप्त।

११- मयूर्यै नमः — राणामहल, चौसट्टीघाट की सीढ़ी पर दाहिने दीवाल में, म०नं० डी. २२/१६ के। दूसरी लक्ष्मीकुण्ड में।

१२- विकटाननायै नमः — सिंधियाघाट के ऊपर, कात्यायनी ही आत्मावीरेश्वर में, म०नं० सी.के. ७/१५८ में।

पंचमुद्रे महापीठे वीरेश्वरसमीपतः ।
विकटाख्या महादेवी पूजनीया हितेप्सुभिः ।।

(ब्रह्मपुराण, त्रिस्थली सेतु पृष्ठ १५६)

पंचमुद्रा पीठ पर वीरेश्वर के समीप विकटा (कात्यायनी) नाम की महादेवी है, हितकी कामना वालों को इनकी पूजा करनी चाहिये।

१३- अष्टवक्रायै नमः	लुप्त।
१४- कोटराक्ष्यै नमः	लुप्त।
१५- कुंजायै नमः	लुप्त।
१६- विकटलोचनायै नमः	मध्यमेश्वर के घेरे में पूर्वकोण, दारानगर म०नं० के. ५३/६३ में।
१७- शुष्कोदर्यै नमः	कृत्तिवासेश्वर के पास।
१८- लोलज्जिह्वाय नमः	लुप्त।
१९- श्वदंष्ट्रायै नमः	लुप्त।
२०- वानराननायै नमः	लुप्त।
२१- ऋक्षाक्ष्यै नमः	लुप्त।
२२- केकराक्ष्यै नमः	लुप्त।
२३- बृहत्तुण्डायै नमः	लुप्त।
२४- सुराप्रियायै नमः	लुप्त।
२५- कपाल हस्तायै नमः	लुप्त।
२६- रक्ताक्ष्यै नमः	लुप्त।
२७- शुकिश्येन्यै नमः	ड्योढ़ियावीर के समीप, म०नं० बी. १९/६८ में।
२८- कपोतिकायै नमः	लुप्त।
२९- पाशहस्तायै नमः	लुप्त।
३०- दण्डहस्तायै नमः	लुप्त।
३१- प्रचण्डायै नमः	लुप्त।
३२- चण्डविक्रमायै नमः	लुप्त।
३३- शिशुघ्न्यै नमः	लुप्त।
३४- पापहन्त्र्यै नमः	लुप्त।

३५- काल्यै नमः	कालिकागली प्रसिद्ध, म०नं० डी. ८/१७ में।
३६- रुधिरपाण्यै नमः	लुप्त।
३७- वसाधर्यायै नमः	लुप्त।
३८- गर्भभक्षायै नमः	लुप्त।
३९- शवहस्तायै नमः	लुप्त।
४०- अन्त्रमालिन्यै नमः	लुप्त।
४१- स्थूलकेश्यै नमः	लुप्त।
४२- बृहत्कुक्ष्यै नमः	लुप्त राणामहल।
४३- सर्पास्यायै नमः	लुप्त।
४४- प्रेतवाहनायै नमः	लुप्त।
४५- दन्तशूकरायै नमः	लुप्त।
४६- क्रौंच्यै नमः	लुप्त।
४७- मृगशीर्षायै नमः	लुप्त।
४८- वृषाननायै नमः	रामघाट आनन्द भैरव में।
४९- व्यात्तास्यायै नमः	लुप्त।
५०- धूमनिश्वासायै नमः	लुप्त।
५१- व्योमैकचरणायै नमः	लुप्त।
५२- ऊर्ध्वदृक्यै नमः	उर्धरेबा फुलवरिया, मडुआडीह कूष्माण्डविनायक के बगल में।
५३- तापिन्यै नमः	कालिका गली, काली जी के समीप।
५४- शोषणदृष्ट्यै नमः	राजमंदिर हनुमान जी में, म०नं० के. २०/१५९ में।
५५- कोटर्यै नमः	लुप्त।
५६- स्थूलनासिकायै नमः	लुप्त।
५७- विद्युत्प्रभायै नमः	लुप्त।
५८- वलाकास्यायै नमः	लुप्त।
५९- मार्जार्यै नमः	लुप्त।
६०- कठपूतनायै नमः	लुप्त।
६१- अट्टातहासायै नमः	कश्मीरीमल की हवेली, शीतला जी के पास, म०नं० सी.के. ७/९२ में।
६२- कामाक्षायै नमः	कमक्षा प्रसिद्ध, बी. २१/१२३ में।
६३- मृगाक्ष्यै नमः	लुप्त।
६४- सृगलोचनायै नमः	ललिताघाट, पिशाचघंट नाम से।

सम्पूर्ण चौसठ योगिनीयों का पता नहीं चलता। प्राचीन काशी से अब बड़ा अन्तर हो गया है।

विश्वभुजा गौरी यात्रा

आश्विन शारदीय नवरात्र विश्वभुजा गौरीयात्रा शुक्ल १ प्रतिपदा से ९ नौमी तक।

आरभ्याश्वयुजः शुक्लां तिथिं प्रतिपदं शुभाम् ।
पूजयेन्नवमीं यावन्नरश्चिन्तितमाप्नुयात् ।।४८ ।।

(का० ख०, अ. ७०)

नवरात्रभर इनके दर्शन व पूजन से मनुष्य अपनी चिन्तित सिद्धि को पा जाता हैं।

मुने विश्वभुजागौरी विशालाक्षीपुरःस्थिता ।
संहरन्ती महाविघ्न क्षेत्रभक्तिजुषां सदा ।।२१ ।।
शारदे नवरात्रे च कार्या यात्रा प्रयत्नतः ।
देव्या विश्वभुजाया वै सर्वकामसमृद्धये ।।२३ ।।
यो न विश्वभुजां देवीं वाराणस्यां नमेन्नरः ।
कुतो महोपसर्गेभ्यस्तस्य शान्तिर्दुरात्मनः ।।२४ ।।
यैस्तु विश्वभुजादेवी वाराणस्यां स्तुतार्चिता ।
नहि तान्विघ्नसंघातो वाधते सुकृतात्मनः ।।२५ ।।

मीरघाट, विशालाक्षी के सामने धर्मकूप के समीप विश्वभुजा गौरी का नवरात्र में दर्शन पूजन करने से विघ्नों का नाश होता है और मनोरथ की सिद्धि होती हैं। कुंआर के नवरात्र भर इनकी यात्रा प्रयत्लपूर्वक करनी चाहिए। विश्वभुजा देवी ही सब कामनाओं से संपन्न करती हैं। जो मनुष्य काशी में विश्वभुजा देवी का दर्शन पूजन नहीं करता, उस दुरात्मा के उपद्रवों की शान्ति कैसे हो सकती है ? जो प्राणी वाराणसी में विश्वभुजा देवी की पूजा करते हैं, उनको कभी कोई बाधा नहीं पहुँचा सकता।

महाभगवती जगदम्बा की देवी यात्रा

त्रैलोक्यविजयाद्याश्च ज्वालामुख्यतमाश्च याः ।
शक्तयोऽत्र मयाख्याता मुने कलशसंभव ।।
ताः काशीं परिरक्षंति चतुर्दिक्षुद्यतायुधाः ।
ताः समर्च्याः प्रयत्नेन महाविघ्नप्रशांतये ।।

(का० ख०, अ. ७२ श्लो. १०१ से १०२)

त्रैलोक्य विजयादि शक्ति काशी के चारों तरफ रहती है और आयुध लेकर रक्षा करती हैं। जो इनकी पूजा करते हैं, उनके महाविघ्नों की शान्ति होती है।

१- त्रैलोक्यविजयायै नमः — लुप्त।
२- तारायै नमः — ललिताघाट की सीढ़ी पर, म०नं० डी. १/५८ में। दूसरी कालिकागली म०नं० ८/१७ में।
३- क्षमायै नमः — लुप्त।
४- त्रैलोक्यसुन्दर्यै नमः — शीतलागली पितामहेश्वर के द्वार की शीतला, म०नं० के. ७/६२ में।
५- त्रिपुरायै नमः — लुप्त।
६- जगन्मातायै नमः — लुप्त।
७- भीमायै नमः — पंचगंगा बालाजी के बगल में भूदेवी, म०नं० के. २२/२४ में।
८- त्रिपुराभैरव्यै नमः — मीरघाट प्रसिद्ध, म०नं० डी. ५/२४ में।
९- कामाख्यायै नमः — कामाक्षा प्रसिद्ध, म०नं० बी. २१/१२३ में।
१०- कमलाक्ष्यै नमः — महालक्ष्मी कुण्ड के ऊपर।
११- धृत्यै नमः — लुप्त।
१२- त्रिपुरतापिन्यै नमः — लुप्त।
१३- जयायै नमः — लुप्त।
१४- जयंत्यै नमः — लुप्त।
१५- विजयायै नमः — लुप्त।
१६- जलेश्यै नमः — लुप्त।
१७- अपराजितायै नमः — लुप्त।
१८- शंखिन्यै नमः — लुप्त।
१९- गजवक्रायै नमः — लुप्त।
२०- महिषघ्न्यै नमः — लुप्त।
२१- रणप्रियायै नमः — लुप्त।
२२- शुभायै नमः — लुप्त।
२३- नन्दायै नमः — लुप्त।
२४- कोटराक्ष्यै नमः — लुप्त।
२५- विद्युज्जिह्वायै नमः — लुप्त।
२६- शिवारावायै नमः — लुप्त।
२७- त्रिनेत्र्यै नमः — लुप्त।
२८- त्रिवक्रायै नमः — लुप्त।
२९- त्रिपदायै नमः — लुप्त।
३०- सर्वमंगलायै नमः — लुप्त।
३१- हुँकार हेत्यै नमः — लुप्त।
३२- तालेश्यै नमः — लुप्त।
३३- सर्पास्यायै नमः — लुप्त।
३४- सर्वसुन्दर्यै नमः — लुप्त।
३५- सिद्ध्यै नमः — लुप्त।
३६- बुद्ध्यै नमः — लुप्त।
३७- स्वधायै नमः — लुप्त।
३८- स्वाहायै नमः — लुप्त।
३९- महानिद्रायै नमः — लुप्त।
४०- शरासनायै नमः — लुप्त।
४१- पाशापाण्यै नमः — सदरबाजार पाशपाणि के समीप।
४२- खरमुख्यै नमः — लुप्त।
४३- वज्रतारायै नमः — लुप्त।
४४- षडाननायै नमः — लुप्त।
४५- मयूरवदनायै नमः — लुप्त।
४६- काकींयै नमः — लुप्त।
४७- शुकीभास्यै नमः — लुप्त।

४८- गरुत्मत्यै नमः लुप्त।
४९- पद्मावत्यै नमः लुप्त।
५०- पद्मकेशीयै नमः लुप्त।
५१- पद्मास्यायै नमः लुप्त।
५२- पद्मवासिन्यै नमः लुप्त।
५३- अक्षरायै नमः लुप्त।
५४- त्र्यक्षरांततूर्यै नमः लुप्त।
५५- प्रणवेशीयै नमः लुप्त।
५६- स्वरात्मिकायै नमः लुप्त।
५७- त्रिवर्गीयै नमः लुप्त।
५८- गर्वरहितायै नमः लुप्त।
५९- अजपायै नमः लुप्त।
६०- जपहारिण्यै नमः लुप्त।
६१- जपसिद्धयै नमः लुप्त।
६२- तपसिद्धयै नमः लुप्त।
६३- योगसिद्धयै नमः लुप्त।
६४- परायै नमः लुप्त।
६५- अमृतायै नमः नीलकंठ अमृतेश्वर में, बच्चाजी गंगा पुत्र के घर में, सी.के. ३३/२८ के कुआँ में नीचे।
६६- मैत्रीकृत्यै नमः लुप्त।
६७- मित्रनेत्रायै नमः लुप्त।
६८- रक्षोघ्न्यै नमः लुप्त।
६९- दैत्यतापन्यै नमः लुप्त।
७०- स्तम्भनीयै नमः लुप्त।
७१- मोहनीयै नमः लुप्त।
७२- मायायै नमः लुप्त।
७३- बहुमायायै नमः लुप्त।
७४- बलोत्कटायै नमः लुप्त। दूसरी वृद्धकाल सतीश्वर के मंदिर में, के. ४६/३२ में।
७५- उच्चाटनीयै नमः यात्रा करने से
७६- महोल्कास्यायै नमः लुप्त।
७७- दनुजेन्द्रै नमः लुप्त।
७८- क्षयकर्यै नमः लुप्त।
७९- क्षेमकर्यै नमः लुप्त।
८०- सिद्धकर्यै नमः लुप्त।
८१- छिन्नमस्तायै नमः जंगमबाड़ी तेलियाना, डी. ३५/२२१ में।
८२- शुभाननायै नमः लुप्त।
८३- शाकंभर्यै नमः लुप्त।
८४- मोक्षलम्यै नमः मणिकर्णिका सिद्धविनायक के सामने गली पर।
८५- त्रिवर्गायै नमः लुप्त।
८६- फलदायिन्यै नमः लुप्त।
८७- वार्तालयै नमः लुप्त।
८८- जभलील्किन्नायै नमः लुप्त।
८९- अश्वारूढ़ायै नमः जैतपुरा वागेश्वरी में, ६/३३ में।
९०- सुरेश्वर्यै नमः लुप्त।
९१- ज्वालामुख्यै नमः मृत्युजय से थोड़ा आगे, म०नं० ५४/१३४ में।
९२- लोपामुद्रायै नमः अगस्तकुण्ड मंदिर, डी. ३६/११ में।
९३- अम्बिकायै नमः सिद्धेश्वरी कलसेश्वर की ब्रह्मपुरी में।

वेताल यात्रा

य एतेभैरवाः प्रोक्ता ये वेताला उदाहृता ।। ५ ।।
तेषां नामानि चाकर्ण्यनरो विघ्नैर्न इयते ।।१०८ ।।

(का० ख०, अ. ७२)

इन बैतालों का नाम लेने से विघ्नों का समूह दूर हो जाता है।

१-	विद्युज्जिह्वाय नमः	लुप्त।	१३-	गर्तनेत्राय नमः	लुप्त।
२-	क्रूरास्याय नमः	लुप्त।	१४-	महानेत्राय नमः	लुप्त।
३-	लोलज्जिह्वाय नमः	लुप्त।	१५-	तुच्छनेत्राय नमः	लुप्त।
४-	क्रूरलोचनाय नमः	लुप्त।	१६-	अत्रमंडनाय नमः	लुप्त।
५-	उग्राय नमः	लुप्त।	१७-	ज्वालाकेशाय नमः	लुप्त।
६-	विकटदंष्ट्राय नमः	लुप्त।	१८-	कंबुशिरसे नमः	लुप्त।
७-	वक्रास्याय नमः	लुप्त।	१९-	खर्वग्रीवाय नमः	लुप्त।
८-	वक्रनासिकाय नमः	लुप्त।	२०-	महाहनवे नमः	लुप्त।
९-	जृंभकाय नमः	लुप्त।	२१-	महानाशाय नमः	लुप्त।
१०-	जृभकाय नमः	लुप्त।	२२-	लंबकर्णाय नमः	लुप्त।
११-	ज्वालानेत्राय नमः	लुप्त।	२३-	कर्णप्रावरणाय नमः	लुप्त।
१२-	वृकोदराय नमः	लुप्त।	२४-	अनसाय नमः	लुप्त।

काशी में चारो धाम यात्रा

यह चारों धाम की यात्रा पौषमास (धनु के सूर्य में) चारों रविवार तथा पौषशुक्ल १५ को करें। माथा घाट पर यात्रा से पहले संकल्पस्नान कर बद्रीनारायण का प्रथम दर्शन कर यात्रा करें।

१-	बद्रीनारायणाय नमः	माथाघाट के ऊपर, म०नं० १/७२ में।
२-	जगन्नाथाय नमः	(पुरुषोत्तमपुरी) रामघाट हैं, इस यात्रा से जगन्नाथजी के यात्रा गमन का फल होता हैं, परन्तु अस्सी के जगन्नाथ जी की यात्रा करते हैं। म०नं० बी. १/१५१ में।
३-	सेतुबन्धरामेश्वराय नमः	मानमंदिर घाट, म०नं० डी. १६/२ में, यहाँ यात्रा करने से रामेश्वर यात्रा गमन का फल होता है। परन्तु आचार्य पंचक्रोशी वाले रामेश्वर की यात्रा करते थे, वह अयोध्या पुरी है।
४-	द्वारकाभगवते नमः	शंकुधारा, बी. २२/१९५ में, यहाँ की यात्रा से द्वारिकापुरी की यात्रा गमन का फल होता है।

यह चारों धाम की यात्रा कही गयी है। उसकी विधि इस प्रकार कही गयी हैं। तीर्थ पर जाकर तर्पण श्राद्धादि करें और स्थान के देवताओं की पूजा परिक्रमा कर यथाशक्ति ब्राह्मणों को

भोजन, दक्षिणा देकर चारों स्थानों पर रात्रिवास करना चाहिए। इस प्रकार यात्रा करने से यथोक्त फल होता हैं।

काशी में सप्तपुरी यात्रा

अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची ह्यवंतिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैते मोक्षदायिकाः ।।

(काशीरहस्य, अ० १३)

प्रथम मथुरापुरी की यात्रा वसंतऋतु में करना चाहिए। शैलपुत्री जाकर वरणा स्नान संकल्प के साथ यात्रा आरम्भ करे।

उत्तरार्कोदूरततो मथुरा वरणावधि

१- मथुरापुरी तीर्थाय नमः	वरणा की पूजा करना।
२- शैलेश्वराय नमः	मढ़ियाघाट, शैलपुत्री मंदिर में, म०नं० ए. ४०/११ में।
३- शैलपुत्री देव्यै नमः	मढ़ियाघाट प्रसिद्ध, म०नं० ए. ४०/११ में।
४- शैलमल्लिकार्जुनाय नमः	मढ़ियाघाट शैलपुत्री मंदिर में।
५- पुलहस्तखम्बाय नमः	लाटभैरव अलईपुर।
६- बरबरीतीर्थाय नमः	अलईपुर बकरियाकुण्ड।
७- उत्तरार्कादित्याय नमः	अलईपुर बकरियाकुण्ड के ऊपर, दूसरे हनुमान मंदिर में वही पास में।
८- सुमन्तेश्वराय नमः	हनुमानफाटक तुलसीदास के, म०नं० ३१/६१ में।
९- ऋणमोचनाय नमः	नौआपोखरा पर।
१०- पापमोचनाय नमः	नौआपोखरा पर।
११- ऐतरिण्यै नमः	छुतहा अस्पताल के पीछे।
१२- वैतरिण्यै नमः	छुतहा अस्पताल के पीछे सुग्गी गढ़ही।
१३- कपालमोचनाय नमः	अलईपुर लाटभैरव समीप।
१४- मथुरापुरी देवेभ्यो नमः	वरणा पूजन।
१५- मथुरापुरी तीर्थेभ्यो नमः	वरणा पूजन।

परिक्रमा से शैलपुत्री मंदिर लौटकर सुपाड़ी रखकर इन सभी देवताओं के नाम से अक्षत छोड़कर संकल्प पूर्णकर ब्राह्मण को यथाशक्ति भोजन, दक्षिणा देकर आप भोजन करें, रात्रि में वही निवास करना चाहिये।

नोट :- फलाहार करना चाहिये।

अयोध्या वायुकोणे तु सोमेश्वर समीपतः।
यत्र रामेश्वरं लिङ्ग वसेत्सीतापतिः स्वयम् ।।

विभीषणादिभिर्यत्र राक्षसैर्वानरैरपि ।
स्थापितान्ययुतंसार्धलिङ्गानि परितःपृथक् ।।

द्वितीय अयोध्यापुरी की यात्रा ग्रीष्मऋतु में, रामेश्वर जाकर वरणा स्नान कर यात्रा का संकल्प लेकर आरम्भ करनी खहिये । सेतबन्धु रामेश्वर मानमंदिर घाट पर हैं । यहां यात्रा करने से रामेश्वर यात्रागमन का फल होता है । म०नं० डी. १६/२ में ।

परन्तु लोग पंचक्रोशी के रामेश्वर की यात्रा करते हैं, वह अयोध्यापुरी है ।

१- अयोध्यापुरी तीर्थाय नमः	वरणा स्नान ।
२- सरयूतीर्थाय नमः	खजुरी गाँव में ।
३- स्वर्गद्वारतीर्थाय नमः	खजुरी गाँव में ।
४- जन्मभूम्यै नमः	खजुरी गाँव में ।
५- भरतकूपाय नमः	खजुरी गाँव में ।
६- लक्ष्मणकूपाय नमः	खजुरी गाँव में ।
७- सीताकूपाय नमः	खजुरी गाँव में ।
८- चक्रतीर्थाय नमः	खजुरी गाँव में ।
९- पाकस्थलाय नमः	खजुरी गाँव में ।
१०- सभास्थलाय नमः	खजुरी गाँव में ।
११- सुमन्त्रादिमंत्रिवर्गेभ्यो नमः	खजुरी गाँव में ।
१२- जाम्बवदाभ्यौ नमः	खजुरी गाँव में ।
१३- कौशल्यायै नमः	खजुरी गाँव में ।
१४- कैकेय्यै नमः	खजुरी गाँव में ।
१५- सुमन्त्रायै नमः	खजुरी गाँव में ।
१६- रत्नसिंहासनाय नमः	खजुरी गाँव में ।
१७- कनकसिंहासनाय नमः	खजुरी गाँव में ।
१८- क्षत्रायै नमः	खजुरी गाँव में ।
१९- रामेश्वराय नमः	पंचक्रोशी करौना गाँव में प्रसिद्ध ।
२०- भरतेश्वराय नमः	पंचक्रोशी करौना गाँव में प्रसिद्ध ।
२१- लक्ष्मणेश्वराय नमः	पंचक्रोशी करौना गाँव में प्रसिद्ध ।
२२- शत्रुघ्नेश्वराय नमः	पंचक्रोशी करौना गाँव में प्रसिद्ध ।
२३- द्यावाभूमीश्वराय नमः	पंचक्रोशी करौना गाँव में प्रसिद्ध ।
२४- नहुषेश्वराय नमः	पंचक्रोशी करौना गाँव में प्रसिद्ध ।
२५- असंख्याततलिंगेभ्यो नमः	पंचक्रोशी करौना गाँव में प्रसिद्ध ।

२६-जन्मभूम्यै नमः	पंचक्रोशी रामेश्वर समीप, करौना गाँव।
२७-रुद्राणीदेव्यै नमः	हरमपुर गाँव मार्गपर।
२८-रुद्रकूपाय नमः	हरमपुर गाँव मार्गपर।
२९-वरणातीर्थाय नमः	वरणा नदी।
३०-अयोध्यापुरीतीर्थेभ्यो नमः	वरणा नदी।
३१-अयोध्यापुरी देवेभ्यो नमः	वरणा नदी।

इन सभी देवताओं की परिक्रमा और पूजन के बाद पुनः वहीं लौटकर सम्पूर्ण देवताओं के नाम से सुपारी रखकर अक्षत छोड़ना चाहिए और संकल्पपूर्ण कर ब्राह्मण को यथाशक्ति भोजन, दक्षिणा देकर स्वयं फलहार कर वहीं रात्रि निवास करना चाहिए।

शंखोद्धारप्रदेशे तु द्वारका परिकीर्तिता।

शंकुधारा क्षेत्र में द्वारकापुरी कही गयी है।

तृतीय द्वारकापुरी की यात्रा श्रावण मास वर्षा ऋतु में करें। प्रथम शंकुधारा कुण्ड में संकल्प, स्नान कर के परिक्रमा में देवताओं का पूजन करते हुए चलना चाहिये।

१- द्वारकापुरीतीर्थाय नमः	खोजवां के पीछे, शंकुधारा कुण्ड, म०नं० बी. २२/१६४ में।
२- जय-विजयादि पार्षदेभ्यो नमः	खोजवां के पीछे, शंकुधारा पर द्वाराकाधीश मंदिर में, म०नं० बी. २२/१६५ में।
३- कृष्णरुक्मिणीभ्यो नमः	शंकुधारा पर।
४- सत्यभामादिभ्यो नमः	शंकुधारा पर।
५- संकर्षणाय नमः	शंकुधारा पर।
६- समुद्राय नमः	शंकुधारा पर।
७- देवक्यै नमः	शंकुधारा पर।
८- वसुदेवाय नमः	शंकुधारा पर।
९- चक्रतीर्थाय नमः	शंकुधारा पर।
१०- शंकुधारातीर्थाय नमः	शंकुधारा कुण्ड, म०नं० बी. २२/१६४ में।
११- शंकुनारायणाय नमः	शंकुधारा पर, म०नं० बी. २२/१६५ में।
१२- वैद्यनाथाय नमः	बैलनथ्था, म०नं० बी. ३७/१ में।
१३- कामाक्षादेव्यै नमः	कमाक्षादेवी प्रसिद्ध, म०नं० बी. २१/१२३ में।
१४- बटुकनाथाय नमः	वहीं प्रसिद्ध, म०नं० बी. २१/१२६ में।
१५- द्वारकेश्वराय नमः	शंकुधारा पर, म०नं० बी. २२/१६५ में।
१६- द्वारकापुरीतीर्थेभ्यो नमः	शंकुधारा कुण्ड, म०नं० बी. २२/१६४ में।
१७- द्वारकापुरीदेवेभ्यो नमः	शंकुधारा मंदिर, म०नं० बी. २२/१६५ में।

इन सभी देवताओं का पूजन कर के परिक्रमा के पश्चात सुपारी रखकर सभी के नाम से अक्षत छोड़े। फिर ब्राह्मण को यथाशक्ति भोजन दक्षिणा देकर फलाहार ग्रहण कर वहीं रात्रि वास करें।

बिन्दुमाधवपार्श्वस्था विष्णुकाञ्ची पुरीमता ।

विन्दुमाधव के पास में विष्णुकांचीपुरी कही गयी है।

चतुर्थ विष्णुकांची की यात्रा कार्तिक कृष्ण १ प्रतिपदा शरदऋतु में करे। पंचगंगा जाकर संकल्प स्नान कर बिन्दुमाधव की पूजा कर परिक्रमा आरम्भ करें।

का०ख०, अ० ६० श्लोक १२५, १२६ में बिन्दुमाधव के चारों युगों में अलग अलग नाम हैं। सतयुग में आदिमाधव, त्रेता में अनन्तमाधव, द्वापर में श्रीमाधव और कलियुग में बिन्दुमाधव है।

१-	विष्णुकांची तीर्थाय नमः	पंचगंगा घाट।
२-	पंचगंगातीर्थाय नमः	पंचगंगा घाट।
३-	गभस्तीश्वराय नमः	बालाघाट मंगलागौरी म०नं० के. २४/३४ में।
४-	मंगलागौर्ये नमः	बालाघाट म०नं० के. २४/३४ में।
५-	लक्ष्मणबालायै नमः	बालाघाट, म०नं० के. २२/२४ में।
६-	दुग्धविनायकाय नमः	दूधविनायक मोहाल, म०नं० के. २३/६६ में।
७-	दधिविनायकाय नमः	दूधविनायक मोहाल, म०नं० के. २३/६५ में।
८-	मधुविनायकाय नमः	दूधविनायक मोहाल, म०नं० के. २३/६३ में।
९-	घृतविनायकाय नमः	दूधविनायक मोहाल, म०नं० के. २३/५७ में।
१०-	शर्कराविनायकाय नमः	दूधविनायक मोहाल, म०नं० के. २८/५३ में।
११-	पापभक्षेश्वराय नमः	कालभैरव की सड़क पर, म०नं० सी.के. ३२/३७ में।
१२-	कालमर्दनेश्वराय नमः	कालभैरव की सड़क पर, म०नं० के. ३२/३३ में।
१३-	कालभैरवाय नमः	कालभैरव मोहाल प्रसिद्ध, म०नं० के. ३२/२२ में।
१४-	कालकूपाय नमः	दण्डपाणि, म०नं० के. ३१/४९ में।
१५-	दंडपाणये नमः	दण्डकाल वहीं, म०नं० के. ३१/४९ में।
१६-	कपिलेश्वराय नमः	दूधविनायक से आगे कपिलेश्वरगली, म०नं० के. २९/१२ में।
१७-	विठ्ठलेश्वराय नमः	दूधविनायक से आगे कपिलेश्वरगली, म०नं० के. २९/१२ में।
१८-	ब्रह्मचारिणीदुर्गायै नमः	दुर्गाघाट पर प्रसिद्ध, म०नं० के. २२/७२ में।
१९-	वेंकटेश्वराय नमः	बालाघाट लक्ष्मण बाला, म०नं० के. २२/२४ में।
२०-	पंचगंगेश्वराय नमः	तैलंगमठ के नीचे, मार्ग पर गढ़हे में, म०नं० के. २२/११ में।

२१- महाविष्णवे नमः	रामघाट मंगलागौरी मार्ग, म०नं० २४/२५ में।
२२-बिन्दुमाधवाय नमः	पंचगंगा घाट, म०नं० के. २२/३७ में।
२३- बिन्दुरिणाय नमः	पंचगंगा घाट, म०नं० के. २२/३७ में।
२४-बिन्दुशेषाय नमः	पंचगंगा घाट, म०नं० के. २२/३७ में।
२५-त्रिविक्रमाय नमः	त्रिलोचन मंदिर, म०नं० ए. २/८० में।
२६-मखतीर्थाय नमः	पंचगंगा लक्ष्मणवाला के सामने, गंगा में।
२७-गभस्तीश्वराय नमः	पंचगंगा मंगलागौरी, म०नं० के. २४/३४ में।
२८-नारायणाय नमः	माथाघाट, म०नं० ए. १/७२ में।
२९-राधादामोदराय नमः	वहीं।
३०-विष्णुकांचीतीर्थाय नमः	वहीं गंगा में।
३१- विष्णुकांचीपुरीभ्यो नमः	वहीं विष्णु मंदिर।

पूर्वक्रमानुसार अक्षत छोड़कर संकल्प कर यथाशक्ति ब्राह्मण को भोजन देकर फलाहार कर रात्रिवास करें। विष्णु मंदिर म०नं० ए. १/७२ में।

वृद्धकालेश्वरं लिङ्गं महाकालनिवारणम्।
कालकालपुरी ज्ञेया ह्यवन्ती सर्वतो जगत्॥

पंचम अवन्तिका पुरी की यात्रा हेमन्तऋतु में वृद्धकाल जाकर हंसतीर्थ या वृद्धकाल कूप में स्नान कर संकल्प के बाद परिक्रमा को चलना चाहिये।

१- अवन्तिकापुरी तीर्थाय नमः	हंसतीर्थ (हरतीरथ)। पाट दिया गया है।
२- महाकालाय नमः	वृद्धकाल के मंदिर से पश्चिम, म०नं० के. ५२/३९ में।
३- दक्षप्रजापतये नमः	रत्नेश्वर से पूर्व।
४- वृद्धकालेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० के. ५२/३९ में।
५- नागेश्वराय नमः	वृद्धकाल कूप से पश्चिम, म०नं० के. ५२/३९ में।

महाकाल को दूर करने वाला वृद्ध कालेश्वर महालिंग हैं, जगत् की रक्षा करने वाली अवन्तीपुरी (उज्जयनी) हैं।

६- असितांगभैरवाय नमः	वृद्धकाल सर्वेश्वर की दीवाल में, म०नं० के. ५२/३९ में।
७- मालतीश्वराय नमः	वृद्धेश्वर शीतलाजी के घेरे में, म०नं० के. ५२/३९ में।
८- हंसेश्वराय नमः	हरतीरथ कुण्ड के पीछे, म०नं० के. ४६/२३ में।
९- हंसतीर्थाय नमः	हरतीरथ कुण्ड प्रसिद्ध, लुप्त।
१०- रत्नेश्वराय नमः	वृद्धकाल की सड़क, म०नं० के. ५३/४० में।
११- शतेश्वराय नमः	वृद्धकाल की सड़क, म०नं० के. ४६/३२ में।
१२- रत्नचूडतीर्थाय नमः	रत्नेश्वर समीप, म०नं० के. ५३/४० में कूप।
१३- कृत्तिवासेश्वराय नमः	रत्नेश्वर के पूर्व, म०नं० के. ४६/२३ में।

वृद्धकालत्पुरोभागे कृत्तिवासेश्वरावधि ।
कालकालपुरी ज्ञेया ह्यवन्तीह्यघतोजगत् ।।

कृत्तिवासेश्वर के एक कोस चारो तरफ (एक योजन) रुद्रगणों से व्याप्त हैं ।

१४- महामृत्युंजयाय नमः वृद्धकाल पर प्रसिद्ध, म०नं० के. ५२/३९ में ।
१५- अवन्तिकापुरीदेवेभ्यो नमः वृद्धकाल पर ।
१६- अवन्तिकापुरीतीर्थेभ्यो नमः वृद्धकाल पर ।

ये सभी वर्णित देवताओं के नाम से सुपारी रखकर अक्षत छोड़े फिर संकल्प पूर्ण कर ब्राह्मण को भोजन, दक्षिणा देकर स्वयम् फलाहार करें । फिर रात्रि-वास वृद्धकाल में करना चाहिये ।

असीसम्भेदकोणे तु गंगाद्वारं प्रकीर्तितम् ।

अस्सी संगम के कोण पर हरिद्वार तीर्थ कहा गया है ।

छठी मायापुरी की यात्रा, शिशिरऋतु में अस्सीघाट जाकर संकल्प के साथ संगम में स्नान कर परिक्रमा में देवी देवताओं का पूजन करते चलना चाहिए । जो इस प्रकार वर्णित है ।

१-	मायापुरीतीर्थाय नमः	गंगा में स्नान व पूजन करें ।
२-	असीसंगमाय नमः	(हरिद्वार तीर्थ) संगम पर गंगा में ।
३-	संगमेश्वराय नमः	भदैनी हरिहर बाबा के आश्रम, म०नं० बी. १/१६९ के बाहर दरवाजे के सामने । प्राचिन, म०नं० बी. १/७५ में ।
४-	संगममाधवाय नमः	अस्सी पर तुलसीदास स्थान, अस्सी माधव के नाम से प्रसिद्ध, म०नं० बी. २/१५ में ।
५-	जगन्ननाथाय नमः	अस्सीघाट के ऊपर, म०नं० बी. १/१५१ में ।
६-	बलभद्राय नमः	अस्सीघाट के ऊपर, म०नं० बी. १/१५१ में ।
७-	सुभद्राय नमः	अस्सीघाट के ऊपर, म०नं० बी. १/१५१ में ।
८-	नृसिंहाय नमः	अस्सीघाट जगन्नाथ मंदिर के पीछे, म०नं० बी. १/१५१ में ।
९-	पुष्करतीर्थाय नमः	अस्सी मोक्षभवन के सामने गुरुदास के पास ।
१०-	दुर्गादेव्यै नमः	दुर्गाकुण्ड पर प्रसिद्ध, म०नं० बी. २७/२ में ।
११-	दुर्गविनायकाय नमः	दुर्गाकुण्ड के पूर्व कोन पर, म०नं० बी. २७/१ में ।
१२-	दुर्गाकुण्डाय नमः	दुर्गाकुण्ड प्रसिद्ध, म०नं० बी. २७/१ में ।
१३-	महामायादेव्यै नमः	दुर्गामंदिर में, म०नं० बी. २७/२ में ।
१४-	भद्रकालीदेव्यै नमः	दुर्गामंदिर के दक्षिणी दालान में ।
१५-	कुटकुटेश्वराय नमः	दुर्गामंदिर फाटक के बाहर ।
१६-	तिलपर्णेश्वराय नमः	दुर्गामंदिर के फाटक पर बलिस्थान से दक्षिण में ।

१७- कुरुक्षेत्रतीर्थाय नमः	अस्सी पर प्रसिद्ध, म०नं० बी. २/२८३ तालाब।
१८- कुरुक्षेत्रेश्वराय नमः	वहीं।
१९- अस्थानेश्वराय नमः	वहीं।
२०-लोलार्ककुण्डाय नमः	भदैनी प्रसिद्ध।
२१- लोलार्कादित्याय नमः	भदैनी लोलार्ककुण्ड में सीढ़ी पर मढ़ी में नीचे।
२२-अमरेश्वराय नमः	भदैनी लोलार्ककुण्ड के पास, म०नं० बी. २/२० में।
२३-पराशरेश्वराय नमः	भदैनी लोलार्ककुण्ड के पास, म०नं० बी. २/२१ में।
२४-अर्कविनायकाय नमः	भदैनी लोलार्ककुण्ड से गंगा की तरफ, म०नं० बी. २/१७ के सामने।
२५-पुनः असीसंगमाय नमः	अस्सी घाट गंगा में।
२६-मायापुरीदेवेभ्यो नमः	अस्सी घाट गंगा में।
२७-मायापुरीतीर्थेभ्यो नमः	अस्सी घाट गंगा में।

अस्सी जगन्नाथ मंदिर लौटकर सुपाड़ी रख कर सम्पूर्ण देवताओं के नाम से अक्षत छोड़कर संकल्प कर ब्राह्मण को भोजन, दक्षिणा देकर फलाहार कर वहीं रात्रि वास करें।

सप्तम काशीपुरी की यात्रा

वसंतऋतु में ललिताघाट जाकर वहां संकल्प कर स्नान करके देवताओं का पूजन करते हुए परिक्रमा करें।

१- काशीपुरीतीर्थाय नमः	ललिता घाट गंगा में।
२- काशीदेव्यै नमः	ललिताघाट पर ललितादेवी के बगल में।
३- ललितादेव्यै नमः	ललिताघाट प्रसिद्ध, म०नं० डी. १/६७ में।
४- गंगाकेशवाय नमः	ललिताघाट. म०नं० डी. १/६८ में।
५- जरासंधेश्वराय नमः	त्रिपुरा भैरवी घाट के ऊपर म०नं० डी. ५/१० में।
६- वृद्धादित्याय नमः	मीरघाट, म०नं० डी. ३/१६ में।
७- आशाविनायकाय नमः	म०नं० डी. २/१५ में।
८- आनन्दभैरवाय नमः	मीरघाट हनुमान जी के सामने, म०नं० डी. ३/१४ में।
९- धर्मेश्वराय नमः	मीरघाट धर्मकूप, म०नं० डी. २/२१ में।
१०- धर्मकूपाय नमः	मीरघाट धर्मेश्वर में, म०नं० डी. २/१० में।
११- विश्वबाहुकादेव्यै नमः	मीरघाट, म०नं० डी. २/१५ में।
१२- विशालाक्षीदेव्यै नमः	मीरघाट, म०नं० डी. ३/८५ में।
१३- कालरात्रिदेव्यै नमः	कालिकागली, म०नं० डी. ८/१७ में।
१४- शुक्रेश्वराय नमः	कालिकागली, म०नं० डी. ८/३० में।

१५- शुक्रकूपाय नमः	कालिकागली, म०नं० डी. ८/३० के बाहर ।
१६- विश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१६ में ।
१७- अन्नपूर्णायै नमः	प्रसिद्ध, म०नं० डी. ६/१ में ।
१८- ढुंढिराजाय नमः	प्रसिद्ध, अन्नपूर्णा मार्ग पर ।
१६- दण्डपाणीश्वराय नमः	ढुंढिराज गली, म०नं० सी.के. ३६/१० में ।
२०- ज्ञानवाप्यै नमः	प्रसिद्ध ।
२१- नन्दिकेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, ज्ञानवापी कूप से पूर्व बड़ा नन्दी, मूर्ति लुप्त है ।
२२- तारकेश्वराय नमः	ज्ञानवापी नन्दी से पूर्व गौरीशंकर मढ़ी के नीचे ।
२३- महाकालेश्वराय नमः	ज्ञानवापी के दक्षिण पीपल तले सीढ़ी के ऊपर ।
२४- मोदादिपंचविनायकेभ्यो नमः	विश्वनाथ की कचहरी धर्मराज के आस पास पांचो है ।
२५- नीलकंठेश्वराय नमः	मणिकर्णिका मार्ग पर नीलकंठमोहाल, म०नं० सी.के. ३३/२३ में ।
२६- अमृतेश्वराय नमः	नीलकंठ कुंजबिहारी, गंगापुत्र, म०नं० सी.के. ३३/२८ में।
२७- ब्रह्मनालेश्वराय नमः	मणिकर्णिका मार्ग पर सी.के. १०/५३ में ।
२८- चक्रपुष्करिणीतीर्थाय नमः	मणिकर्णिका कुण्ड को कहते है ।
२६- काशीपुरीदेवेभ्यो नमः	ललिताघाट, म०नं० डी. १/६७ में ।
३०- काशीपुरीतीर्थेभ्यो नमः	ललिताघाट, गंगा में पूजा करें ।
३१- श्रीकाशीविश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१६ में ।

यात्रा से लौटकर सुपारी रखकर अक्षत छोड़कर संकल्प कर ब्राह्मण को भोजन, दक्षिणा यथाशक्ति देकर स्वयम् फलाहार कर वहीं ललिताघाट पर रात्रि में वास करें ।

सातो पुरियो के नाम से हो सके तो उद्यापन करे ऐसा उल्लेख है ।

पंचायतनयात्रा लिङ्गपुराण

दृष्ट्वा न जायते मर्त्यः संसारे दुःखसागरे ।।१०८ ।। पूर्वभाग अ. ६२ ।।

इनलिंगो का दर्शन करने से मनुष्य दुःखरूपी संसारसागर में फिर कभी जन्म नहीं लेता है ।

१- कृत्तिवासेश्वराय नमः — हरतीरथ से पश्चिम, म०नं० के. ४६/२३ में ।

कृत्तिवाससमारभ्य क्रोशं व्याप्यचतुर्दिशम् ।
योजनं तत्र तत्क्षेत्रं गणैरुद्रैश्च संवृतम् ।।

(लिंगपुराणकृतकल्पतरु, पृष्ठ ४०)

२- मध्यमेश्वराय नमः — दारानगर, म०नं० के. ५३/६३ में।
३- ओंकारेश्वराय नमः — मच्छोदरी से उत्तर पठानीटोला, म०नं० ए. ३३/२३ में।
४- कपर्दीश्वराय नमः — पिशाचमोचन, म०नं० सी. २१/४० में।

मार्गशुक्लचतुर्दश्यां कपर्दीश्वरसन्निधौ ।
स्नात्वान्यत्रापि मरणान्न पैशाच्यमवाप्नुयुः ।।
(का० खं० ५४-८०)

अगहन महीना शुक्लचतुर्दशी में कपर्दीश्वर के सान्निध्य में स्नान करके कही भी मरने पर पिशाचयोनि में मनुष्य नहीं पड़ता है।

५- विश्वेश्वराय नमः — प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१९ में।

द्विलिङ्ग यात्रा

सर्वपापविनिर्मुक्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते । (नन्दीपुराण)

यह यात्रा करने वाला प्राणी समस्त पापों से छूटकर ब्रह्मस्वरूप हो जाता है।

१- मणिकर्णिकेश्वराय नमः — स्नान पुनः दर्शन गोमठ अभय संन्यासाश्रम, म०नं० सी.के. ८/१२ में।
२- विश्वेश्वराय नमः — प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१९ में (ज्ञानवापी स्नान)।

द्वितीय त्रिलिङ्ग यात्रा

१- केदारेश्वराय नमः — केदारघट प्रसिद्ध, म०नं० बी. ६/१०२ में।
२- विश्वेश्वराय नमः — प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१९ में।
३- त्रिलोचनेश्वराय नमः — त्रिलोचनघाट के ऊपर प्रसिद्ध, म०नं० ए. २/८० में।

त्रिलिङ्ग यात्रा (लिङ्गपुराण)

एतल्लिङ्गत्रयं देवि दृष्ट्वा पापं प्रणश्यति ।

इन तीनों लिंगो के दर्शन करने से मनुष्य के सब पाप छूट जाते हैं।

१- अविमुक्तेश्वराय नमः — ज्ञानवापी के उत्तर फाटक पर गुप्त, वहीं स्थान की पूजा करे। दूसरे राधाकृष्ण धर्मशाला, म०नं० सी.के. ३०/१ में। तीसरे विश्वनाथ मंदिर, म०नं० ३५/१९ में। चौथे मणिकर्णिका मार्ग पर पीतल के अर्घे में।
२- स्वर्लीनेश्वराय नमः — राजघाट के पास नयामहादेव नाम से पंचाग्नी अखाड़े में, म०नं० ए. ११/३० में।
३- मध्यमेश्वराय नमः — दारानगर प्रसिद्ध, म०नं० के. ५३/६३ में।

चतुर्थलिङ्गयात्रा (लिङ्गपुराण)

१- शैलेश्वराय नमः	मढ़िया शैलपुत्री मंदिर में, म०नं० ए. ४०/११ में।
२- संगमेश्वराय नमः	वरणासंगम आदिकेशव में नीचे, म०नं० ए. ३७/५१ में।
३- स्वर्लीनेश्वराय नमः	राजघाट के पास नयामहादेव पंचाग्नी अखाड़ा, म०नं० ए. ११/३० में।
४- मध्यमेश्वराय नमः	दारानगर प्रसिद्ध, म०नं० के. ५३/६३ में।

योगयात्रा

१- असिताष्टमीगुरुपुष्यव्यतिपात	३३ कोटिगयाफल ज्ञानवापी (श्राद्ध) स्नान से।
२- आद्रा १४ रुद्र वास यात्रा	८७ कोटिलिंग दर्शनफल हंसतीर्थ स्नान से।
३- भौम १४ भरणी यमतीर्थ	५१ गयाश्राद्धफल संकठा के नीचे यमघाट स्नान श्राद्ध (से पितृऋण छूटे)।
४- भौम ८ भैरव तीर्थ	८४ कालमैनिः भैरवतीर्थस्नान कूप में (श्राद्ध)।
५- सोमवती कपिलधारा	६२ शतगया श्राद्धफल, चन्द्रकूपस्नान श्राद्ध ३ ऋणनिःवारण।
६- शनिप्रदोष कामेश्वर	८५ त्रिलोचन समीप प्रसिद्ध, म०नं० ए. २/६ कामकृत पापनिवारण।
७- सिंहगुरौ त्र्यंबकेश्वर	६६ गोदावरी स्नान श्राद्ध से विशेषफल हौजकटोरा, म०नं० डी. ३८/२१ में।
८- प्रतिमास ६ सेतुबन्धरामेश्वर	६६ मानमंदिर स्नान श्राद्ध, म०नं० डी. १६/३४ में महत्फल।

इस योग यात्रा को श्रद्धाभक्ति-पूर्वक सभी तीर्थो में स्नान और उल्लिखित देवताओं के विधिवत् पूजन व श्राद्ध करने वाला प्राणी पितृऋण से उऋण होकर अंत समय शिवलोकगामी होता है।

गणयात्रा

(का० खं० अ. ७४ श्लोक ५० से ५३)

ये गण बड़े पराक्रमी सूर्य के समान तेजस्वी कोटि कोटि गणों को लेकर चारों तरफ काशी की रक्षा करते है।

१- अट्टाट्टहासगणाय नमः	प्राग्द्वार पर रक्षा करते हैं सिद्धेश्वरी शीतला के पास।
२- भूतधात्रिगणाय नमः	दक्षिण द्वार की रक्षा करते है भूतेश्वर गली, म०नं० डी. १७/५० में।
३- गोकर्णगणाय नमः	पश्चिम द्वार की रद्धा करते हैं कोदई चौकी में गोकर्ण नाम से प्रसिद्ध, म०नं० ५०/३३ में।

४- घण्टाकर्णगणाय नमः	उदुग् (उत्तर द्वार) रक्षा करते है, कर्णघंटा म०नं० ६०/६७ में।
५- छागवक्रगणाय नमः	ईशानकोण कपिलधारा वृषभध्वज।
६- भीषणगणाय नमः	बह्दिदिग्दलम् अग्निकोण की रक्षा करते है भूतभैरव।
७- शंकुकर्णगणाय नमः	नैर्ऋत्यकोण की रक्षा करते है शंकुधारा, म०नं० बी. २२/१६६ में।
८- दृमीचण्डगणाय नमः	मरुद्दिशामे लुप्त।

अन्यरक्षकगणयात्रा

इत्थं क्षेत्रं सदा पान्ति गणा ये ऽतिभास्कराः।

(का० खं० अ. ७४ श्लो. ५४ से ५७)

इस प्रकार और गण भी काशी की चारों दिशाओं की रक्षा करते है।

१- कालक्षायाय नमः	लुप्त।
२- रणभद्राय नमः	लुप्त।
३- कौलयायै नमः	लुप्त।
४- कालकंपनाय नमः	लुप्त। ये गण गंगापार पूर्वदिशा की रक्षा करते है।
५- वीरभद्राय नमः	ज्ञानवापी मस्जिद के उत्तर पश्चिम कोने पर।
६- नभाय नमः	लुप्त।
७- कर्दमालिप्तविग्रहाय नमः	लुप्त।
८- स्थूलकर्णाय नमः	लुप्त।
९- महाबाहवे नमः	लुप्त। यह गण अस्सी पार रक्षा करते है।
१०- विशालाक्षाय नमः	मीरघाट विशालाक्षि में, म०नं० डी. ३/८५ में।
११- महाभीमाय नमः	पंचक्रोशी में हरपुर गाँव हरैया तालाब पर।
१२- कुण्डोदराय नमः	अस्सीपर लुप्त, नए लोलार्क कुण्ड पर।
१३- महोदराय नमः	देहली विनायक के पास पश्चिम दिशा की रक्षा करते है।
१४- नन्दिसेनाय नमः	देउरा गाँव पंचक्रोशी में।
१५- पंचालाय नमः	लुप्त।
१६- खरपादाय नमः	लुप्त।
१७- करंटकाय नमः	लुप्त।
१८- आनन्दाय नमः	लुप्त।

१९- गोपकाय नमः	लुप्त।
२०- बभ्रये नमः	लुप्त। ये गण वरणातट की रक्षा करते है।

अन्यगण जो विश्वानाथ जी के भेजे गये काशी आये, राजा दिवोदास के राज्य शासन के समय जिनको काशी परमप्रिय लगी, वे यहाँ शिवस्थापना करके रह गये।

काशीखण्ड अध्याय ५३, श्लोक ७।। से ११।। तक

१- शंकूकर्ण गणाय नमः	शंकुधाराकुण्ड पर दक्षिण ओर, म०नं० बी. २२/१६५ में।
२- महाकाल गणाय नमः	वृद्धकाल के बगल में, म०नं० के. ५२/३९ में।
३- घंटाकर्ण गणाय नमः	कर्णघंटा पर, म०नं० ६०/६६ में।
४- महोदर गणाय नमः	कर्णघंटा महावीर नाम से।
५- सोमनन्दि गणाय नमः	मलदहिया।
६- नन्दिषेण गणाय नमः	लुप्त।
७- काल गणाय नमः	वरणासंगम पार। इनकी स्थापना काल गण ने किया था।
८- पिंगल गणाय नमः	पिशाचमोचन पर, म०नं० सी. २१/३९ में नकुलेश्वर नाम से प्रसिद्ध तालाब पर।
९- कुक्कुट गणाय नमः	प्रथम दुर्गाकुण्ड दक्षिण फाटक पर, म०नं० बी. २७/२ में। दूसरे राणामहल सरस्वती विनायक के पास, म०नं० डी. २२/१८।
१०- कुण्डोदर गणाय नमः	प्रथम लुप्त अस्सीघाट। द्वितीय लोलार्क कुण्ड के ऊपर।
११- मयूराक्ष गणाय नमः	तुलसीघाट के ऊपर त्रिविक्रमेश्वर नाम से।
१२- बाण गणाय नमः	म०नं० ११/३० के सामने प्रह्लादघाट स्वर्लीनेश्वर से ईशानकोण। दूसरे हरिश्चन्द्र स्कूल के कोने पर, म०नं० ५८/६६ में।
१३- गोकर्ण गणाय नमः	कोदई की चौकी दैलु की गली, म०नं० डी. ५०/३३ में।
१४- तारक गणाय नमः	ज्ञानवापी कूप से पूर्व गौरीशंकर मढ़ी के नीचे।
१५- तिलपर्ण गणाय नमः	दुर्गाकुण्ड दुर्गाजी, म०नं० बी. २७/२ में। दूसरे तिलभाण्डेश्वर पाण्डेहवेली, म०नं० बी. १७/४२ में।

१६- स्थूलकर्ण गणाय नमः	लुप्त।
१७- दृमिचण्ड गणाय नमः	लुप्त।
१८- प्रभामय गणाय नमः	लुप्त।
१६- सुकेश गणाय नमः	भेलूपुर ड्योढ़ियाबीर में, म०नं० बी. १६/६८ में।
२०-विन्दते गणाय नमः	लुप्त भीमचण्डी के पास।
२१- छाग गणाय नमः	कपिलधारा।
२२-कपर्दि गणाय नमः	पिशाचमोचन तालाब पर, म०नं० सी. २१/४० में।
२३- पिंगलाक्ष गणाय नमः	पिशाचमोचन, म०नं० सी. २१/४० में।
२४-वीरभद्र गणाय नमः	ज्ञानवापी मस्जिद के उत्तर पश्चिम कोणपर लुप्त।
२५-किराताख्य गणाय नमः	लालीघाट पर।
२६-चतुर्मुख गणाय नमः	(प्रयाग लिंग) सकरकंद गली म०नं० डी. ७/१६ में।
२७-निकुम्भ गणाय नमः	विश्वनाथ मंदिर में अहिल्या बाई जिसे पार्वती कहते है वहीं गढ्ढे में, म०नं० सी.के. ३५/१६ में।
२८-पंचाक्षगणाय नमः	लुप्त।
२६-भारभूत गणाय नमः	काशीपुरा भारभूतेश्वर, म०नं० सी.के. ५४/४४ में।
३०-त्र्यक्षगणाय नमः	लुप्त।
३१- क्षेमक गणाय नमः	लुप्त।
३२- लांगलिगणाय नमः	खोवाबाजार लांगलीश्वर, म०नं० सी.के. २८/४ में।
३३- विराधगणाय नमः	लुप्त।
३४- सुमुखगणाय नमः	सरस्वती फाटक, म०नं० सी.के. ३४/६० में।
३५- आषाढ़गणाय नमः	नकाश बेतिया की कोठी, म०नं० के. ६३/५३ में। दूसरे मछरहट्टा, म०नं० सी.के. ५७/२५ में।

काशीखण्ड अध्याय ८५

१- नंदी	प्रसिद्ध बड़ानंदी ज्ञानवापी से पूर्व।
२- नंदिषेण	लुप्त।
३- सोमनंदि	लुप्त।
४- महोदर	लुप्त।
५- महाहनु	लुप्त।
६- महाग्रीवी	लुप्त।
७- महाकाली	कालिका गली म०नं० डी. ८/१७ में।
८- जीतांतक	लुप्त।

९- मृत्युःकंपन	वृद्धकाल मृत्युंजयेश्वर प्रसिद्ध (अपमृत्युनाशक)।
१०- भीम	पांचोपाण्डव, म०नं० सी.के. २८/१० में।
११- घण्टाकर्ण	कर्णघंटा।
१२- महाबल	लुप्त।
१३- क्षोभण	लुप्त।
१४- द्रावण	लुप्त।
१५- जृंभ	लुप्त।
१६- पंचास्य	पिशाचमोचन।
१७- पंचलोचन	लुप्त।
१८- द्विशिरा	लुप्त।
१९- त्रिशिरा	लुप्त।
२०- सोम	लुप्त।
२१- पंचहस्ती	लुप्त।
२२- दशानन	लुप्त।

इत्यादयो गणेशानाः शतकोटिदुरासदाः ।

इत्यादि शतकोटिगण काशी में सब जगह बाहर भीतर रक्षा करते हैं।

२३- चण्डी	लुप्त।
२४- भृंगिरिटी	देवरागाँव पंचक्रोशी।
२५- स्तंडी	लुप्त।
२६- प्रचंड	लुप्त।
२७- तांडवप्रिय	लुप्त।
२८- पिचंडिल	लुप्त।
२९- स्थूलशिरा	मानमंदिर।
३०- स्थूलकेश	लुप्त।
३१- गभस्तिमान	लुप्त।
३२- क्षेमक	लुप्त।
३३- क्षेमधन्वा	लुप्त।
३४- वीरभद्रो	पंचक्रोशी भीमचण्डी देल्हना गाँव में।
३५- रणप्रिय	लुप्त।
३६- चण्डपाणि	लुप्त।
३७- शूलपाणि	लुप्त।
३८- पाशपाणि	सदरबाजार में।
३९- कृशोदर	लुप्त।
४०- दीर्घग्रीवा	लुप्त।
४१- पिंगाक्ष	लुप्त।
४२- पिंगल	लुप्त।
४३- पिंगल धन	लुप्त।
४४- बहुनेत्र	लुप्त।
४५- लवकर्ण	लक्शा रामकृष्ण मी. अस्पताल में।
४६- खर्व	वरणा आदिकेशव मार्ग पर।
४७- पर्वत विग्रह	लुप्त।
४८- गोकर्ण	कोदईकीचौकी म०नं० डी. ५०/३३ में।
४९- गजकर्ण	बांसफाटक म०नं० सी.के. ३७/३३ में।

५०- कोकिला	लुप्त ।	५५- शिवारा	लुप्त ।
५१- गजानन	लाहौरीटोला फूटे गणेश के बगल, म.नं. १/४० में ।	५६- वैणिक	लुप्त ।
		५७- वेणुवादन	लुप्त ।
५२- विकटास्य	धूपचण्डी मोहाल, धूपचण्डी मंदिर, जे. १२/१३४ में ।	५८- दुराधर्ष	लुप्त ।
		५९- दुःसह	लुप्त ।
५३- अट्टहासक	सिद्धेश्वरी शीतला गली शीतला के समीप ।	६०- गर्जन	लुप्त ।
		६१- रिपुतर्जन	लुप्त ।
५४- सोस्पाणिः	लुप्त ।		

काश्यां निवारयामासुरपि प्रांभंजननीं गतिम् ।

दुर्वासाऋषि जब काशी पुरी को श्राप देने के लिये तैयार हो गये तब ये गण अपने अपने हथियार लेकर युद्ध के लिये तैयार हो गये ।

शिवपूजा विधान एवं शिव के प्रिय पुष्प

चतुर्णां पुष्पजातीनां गन्धमघ्राति शंकरः ।
अगस्त्यकरवीरस्य बिल्वस्य बकुलस्य च ।।
दशसुवर्णदानफलं श्वेताकंपुष्पम् ततः सहस्त्रगुणं बकुलपुष्पम् ।
एवं धत्त्सूरशमीपुष्पद्रोणपुष्पनीलोत्पलानामुत्तरोत्तराणां सहस्त्रगुणत्वम् ।।
मणिमुक्ताप्रवालैस्तु रत्नैरप्यर्चनं कृतम् ।
न गृह्यमि विना देवि बिल्वपत्रैर्वरानने ।।
सर्वकामप्रदं बिल्वं दारिद्र्यस्य विनाशनम् ।

श्री शंकर जी चार जाति अर्क, करवीर, बेल और मौलसिरी के गन्ध को ग्रहण करते है । दस सुवर्ण दान का फल श्वेत अर्क पुष्प को चढ़ाने से होता है । इसी प्रकार धत्तूर, शमीपुष्प द्रोणपुष्प और नीलकमल उत्तरोत्तर सहस्त्र गुण फल देते है । श्री शंकरजी पार्वती से कहते है कि मणि, मोती, मूंगा और रत्नों से मेरा पूजन किया जाय या फिर भी हे वरानने देवी मैं बिना बिल्वपत्र के उन्हे ग्रहण नहीं करता । बिल्वपत्र दारिद्र्य का विनाशक और सब मनोरथ देने वाला होता है ।

नीलोत्पलसहस्त्रेण मालार्पणे कल्पकोटिसहस्त्रं शिवपुरे वासः । धत्तूरैर्बृहतीपुष्पैश्च पूजने गोलक्षफलम् । पाटलामन्दारापामार्गजाती चम्पकोशीरतगरनागकेशरपुन्नागजपामल्लिसहकारकुसुम्भपुष्पाणि शिव प्रियाणि ।

धत्तूराणि कदम्बानि रात्रौ देयानि शंकरे ।
(मदनरत्ने केतकानि कदम्बानीति पाठः)
अभावे पुष्पपत्राणामन्नाद्येनाभिपूजयेत् ।
शालितण्डुलगोधूमयवैर्वापि समाचरेत् ।।

हजार नीले कमल की माला चढ़ाने से कल्प कोटि सहस्त्र शिवपुर में वास होता है। धत्तूर और बृहती के फूलों से पूजन करने से लाख गोदान का फल होता है।

शिव के प्रिय पुष्प ये हैं- पाटल, मन्दार, अपामार्ग, जाति (चमेली), चम्पक, उशीर तगर, नागकेशर, पुन्नाग, जपा, मल्लिका, सहकार और कुसुम्भ । धत्तूर कदम्ब के पुष्प रात में शंकर को अर्पण करने चाहिए । मदनरत्न में 'धत्तूराणि' की जगह केतकानि कदम्बानि ऐसा पाठ हैं। पुष्प पत्र के जगह (न मिलने) पर खाने लायक अन्नों से भी पूजन करे । साठी का चावल (अगहनी चावल), गेहूँ और जौ से भी पूजन करे । (अथ धर्मसिन्धुः)

(अथ निषिद्धपुष्पाणि) त्याज्य पुष्प ।
बन्धूककुन्दातिमुक्तकेतकीकपित्थबकुलशिरीषनिम्बानि ।

' पुष्पपत्रादिकं स्वाभिमुखमुत्तानमर्पयेत् ।
पत्रं पुष्पं फलं चैव यथोत्पन्नं तथाऽर्पयेत् ।। इति वचनात् ।
बिल्वपत्रं तु स्वाभिमुखाग्रं न्युब्जमर्पयेत् ।
पक्काम्रफलस्य शिवार्पणे वर्षायुतं शिवपुरे वासः ।

' सव्यं व्रजेत्ततोऽसव्यं प्रणाली नैव लंघयेदित्यादि स्थिरलिंगे
प्रदक्षिणाप्रकारः चरेत्तु सव्येनैव । (निषिद्ध पुष्प) ये हैं ।

बन्धूक, कुन्द, अतिमुक्त, केतकी, कपित्थ, बकुल, शिरीष और निम्ब । पुष्प पत्र आदि अपने सम्मुख उत्तान अर्पित करे, क्योकि पुष्प और फल जैसे उत्पन्न होते है वै वैसे ही अर्पित करें ऐसा वचन हैं। बिल्वपत्र तो अपने संमुख औधा कर के अर्पण करें।

श्री शिव को पके आम फल को अर्पण करने पर दश हजार वर्ष शिवपुर में वास होता है।

(प्रदक्षिणा विचार) शिव के शिवालय में अपने बाएँ से प्रवेश करें फिर बाएँ से लौट आवें शिव के प्रणाल (जलमार्ग के) बहने का लंघन न करे इत्यादि । यह स्थिर लिंग में प्रदक्षिणा प्रकार हैं। चर लिंग में अपने (सब्य) दाहीने से प्रदक्षिणा करें।

अथराजसूयादियज्ञफलदायकानि ।
बिल्वपत्रैः पूजने राजसूयफलम् ।
करवीरस्त्रजाऽग्निष्टोमस्य ।
बकुलस्य वाजपेयस्य ।
द्रोणस्य राजसूयस्येति ।

बिल्वपत्रों से पूजन करने पर राजसूय का फल होता हैं, करवीर की माला से अग्निष्टोम का मौलसरी की माला से वाजपेय का और द्रोण की माला से राजसूय यज्ञ का फल मिलता हैं।

अब शिवनिर्माल्य (प्रसाद) ग्रहण विचार

अग्राह्यं शिवनैवेद्यं पत्र पुष्पं फलं जलम् ।
शालग्रामशिलासंगात्सर्वं याति पवित्रताम् ।
शैवसौरनैवेद्यभक्षणे चान्द्रायणम् ।
अभ्यासेद्विगुणम् । अत्याऽभ्यासे सांतपनम् ।
अन्यनिर्माल्येऽप्यनापद्येवम् ।
इदं ज्योर्तिलिङ्गस्वयम्भूलि सिद्धप्रतिष्ठापितलि ग
तिरिक्तस्थावरलिङ्गविषयम् ।।

शिव का नैवेद्य पत्र पुष्प फल और जल अग्राह्य है किन्तु शालग्राम शिला के संग से सब पवित्र हो जाते है। शिव और सूर्य का नैवेद्य खाने में चान्द्रायण करें। अभ्यास में दूना चान्द्रायन करें। ज्ञानपूर्वक अभ्यास में शान्तपन से करें।

अन्य के निर्माल्य में भी आपद् रहित काल में ऐसा ही जानना चाहिए।

यह ज्योतिर्लिंग स्वयम्भूलिंग और सिद्धों से प्रतिष्ठापित लिंग के अतिरिक्त स्थावर लिंग के विषय में हैं।

ज्योतिर्लिङ्गादौ तु पूजकेन दत्तं फलं तीर्थादिकं
भक्तया शुद्ध्यर्थ ग्राह्यं न लोभेन ।
पंचायतनस्थितलिङ्गेषु चरेषु प्रतिमासु
चान्नादेरपि स्वयं ग्रहणेऽपि न दोषः ।
ज्योतिर्लिङ्गाद्यन्यस्थिरलिङ्गेषु तीर्थादिकं-
चन्दनमात्रं श्रद्धावभ्दिः शिवोपासकैरेव ग्राह्यम् ।
ज्योतिर्लिङ्गादौ पूजकदत्तमन्नमपि भक्ष्यमिति केचित् ।

ज्योतिलिंगादि में पूजक (पुजारी) का दिया हुआ फल तीर्थ जल आदि शुद्धि के लिए ग्रहण करें, लोभ से नहीं। पंचायतन स्थित चर लिंगों में और प्रतिमाओं में अन्न आदि का भी

स्वयं ग्रहण करने में दोष नहीं है। ज्योतिलिंगादि से भिन्न स्थिर लिंगो में तीर्थोदक और चन्दन मात्र श्रद्धालु शिव के उपासक ही ग्रहण करें।

नोट- ज्योतिलिंगादि में पूजक का दिया अन्न भी भक्षणीय है, ऐसा कुछ लोग कहते है।

ब्रह्मेश्वर के ३ लिङ्ग हैं।

१- ब्रह्मेश्वर — ब्रह्माघाट पर, म०नं० के. २२/८२ में।

२- ब्रह्मेश्वर — ब्रह्माघाट पर, म०नं० के. २२/८६ में।

३- ब्रह्मेश्वर — खालिसपुरा बालमुकुन्द का चौहट्टा, म०नं० डी. ३३/६७ में।

४- विधीश्वर — घोड़ाघाट दशाश्वमेध गंगातट पर इसे कोई कोई ब्रह्मा भी कहते है।

भीष्मेश्वर के ५ लिङ्ग हैं।

१- भीष्मेश्वर — सदरबाजार चण्डीश्वर में

२- भीष्मेश्वर — त्रिलोचन घाट।

३- भीष्मेश्वर — काशीपुरा कबूतर बाजार में।

४- भीष्मेश्वर — विश्वनाथ मंदिर शनिलिंग के पास, म०नं० सी.के. ३५/१६ में। बृहस्पति के नाम से प्रसिद्ध हैं।

५- भीष्मेश्वर — प्रमुख लिंग म०नं० सी.के. ३४/६० में।

विजयेश्वर (विजयलिङ्ग) २ हैं।

१- विजयलिंग — मडुआडीह ककरमत्ता ग्राम शालकंट विनायक के समीप।

२- विजयलिंग — मोतीझील के सामने बगीचे के अन्दर।

काशी में आषाढ़ेश्वर के २ स्थान।

१- आषाढ़ेश्वर — नकाश रानीबेतिया कोठी के अन्दर दो लिंगों में बड़ा लिंग, म०नं० ६३/५३ में।

२- आषाढ़ेश्वर — मछरहट्टा फाटक, म०नं० सी.के. ५४/२४ में गोविन्दपुरा खुर्द खेदू सोनार के सामने।

काशी में कृष्ण की २ विलक्षण मूर्तियाँ है।

१- योगिराज कृष्ण — पंचगंगा तैलंगमठ, म०नं० के. २३/९५ नरहरीदास द्वारा स्थापित, इनके मस्तक पर शिवलिंग है।

२- विष्णुकृष्ण	अगस्तकुण्ड, म०नं० डी. ३६/१७० में, इनकी चारभुजा है, मुरली बजाते शंख-चक्र धारण किए हुए अगल बगल में राधा और रुक्मिणी की मूर्तियाँ है।

काशी में रामेश्वर के छः लिङ्ग हैं।

१- रामेश्वर	पंचक्रोशी में वरणा तट पर करौना गाँव में।
२- रामेश्वर	मानमंदिर घाट, म०नं० डी. १६/२ में।
३- रामेश्वर	रामघाट पर, म०नं० के. २४/१० में।
४- रामेश्वर	रामकुण्ड पर, म०नं० डी. ५४/४५ में।
५- रामेश्वर	हनुमानघाट पर, म०नं० बी. ४/४२ में।
६- रामेश्वर	दंडपाणि गली (भैरोनाथ) महाराजा जयपुर द्वारा स्थापित, म०नं० के. ३२/४६ में।

काशी में केदारेश्वर के चार लिङ्ग हैं।

१- केदारेश्वर	केदारघाट प्रसिद्ध, म०नं० बी. ६/१०२ में हरिहरात्मक अर्धभाग शिवपार्वती अर्धभाग विष्णु और लक्ष्मी।
२- केदारेश्वर	कालिका गली कालीजी में, म०नं० डी. ८/१७ में।
३- केदारेश्वर	अगस्तकुण्डा अगस्तेश्वर में, म०नं० डी. ६६/११ में।
४- केदारेश्वर	सिंधियाघाट बृहस्पतीश्वर म०नं० सी.के. ७/१३३ में।

काशी में ताडकेश्वर के चार लिङ्ग हैं।

१- ताडकेश्वर	प्रधान ज्ञानवापी नन्दि के पूर्व गौरीशंकर मढ़ी के नीचे।
२- ताडकेश्वर	विश्वनाथ मंदिर के बगल में गनपतराय खेमका मंदिर, म०नं० सी. के. ३५/१७ में।
३- ताडकेश्वर	मणिकर्णिका घाट पर प्रसिद्ध।
४- ताडकेश्वर	केदारघाट पर प्रसिद्ध।

पंचमुखी गणेश के २ स्थान हैं।

१- पंचमुखी गणेश	अन्नपूर्णा मार्ग पर रानी भवानी के मंदिर में।
२- पंचमुखी गणेश	उसी मार्ग पर थोड़ा आगे, म०नं० सी.के. ३७/१८ में।

वाल्मीकेश्वर के ४ स्थान हैं।

१-	वाल्मीकेश्वर	भेलूपुर नीलकंठ महादेव के बगल में बड़ा लिंग, म०नं० बी. २०/१५ में।
२-	वाल्मीकेश्वर	मलदहिया वाल्मीकटीला पर, म०नं० सी. २१/१४ में।
३-	वाल्मीकेश्वर	पिशाचमोचन कुण्ड के ऊपर, म०नं० सी. २१/३६ में।
४-	वाल्मीकेश्वर	त्रिलोचन से सटे पूर्व बड़ा लिंग त्रिलोचन घाट, म०नं० ए. २/८० में।

नीलकंठेश्वर के ४ लिङ्ग हैं।

१-	नीलकंठेश्वर	भेलूपुर, म०नं० बी. २०/१५ में।
२-	नीलकंठेश्वर	केदारघाट करपात्री आश्रम के बगल में ताहिरपुर राजभवन, म०नं० बी. ६/१६ में।
३-	नीलकंठेश्वर	नीलकंठ मोहाल मणिकर्णिका मार्ग, म०नं० सी.के. ३३/२३ में।
४-	नीलकंठेश्वर	प्रह्लादघाट, म०नं० ए. १०/४७ में।

दत्तात्रयेश्वर के ६ स्थान हैं।

१-	दत्तात्रेयेश्वर	भगवान आश्रम पीतल की मूर्ति हनुमानघाट, म०नं० बी. ५/२७६ में।
२-	दत्तात्रेयेश्वर	वरणा आदिकेशव के नीचे मंदिर के बाहर, म०नं० ए. ३७/५१ में।
३-	दत्तात्रेयेश्वर	गायघाट गंगा तट पर खड़ी मुर्ति।
४-	दत्तात्रेयेश्वर	ब्रह्माघाट पर, म०नं० के. १८/४८ में।
५-	दत्तात्रेयेश्वर	सेंधियाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१५६ में।
६-	दत्तात्रेयेश्वर	अगस्तकुण्डा मन्दिर, म०नं० डी. ३६/११ में।
७-	दत्तात्रेयेश्वर	नारदघाट के ऊपर मठ, म०नं० बी. २५/१२ में।
८-	दत्तात्रेयेश्वर	किनाराम का स्थल, म०नं० बी. ३/३३५ में।
९-	दत्तात्रेयेश्वर	पंचगंगा घाट शंकराचार्य आश्रम, म०नं० के. २२/११ में।

काशी में शवशिवाकाली के २ स्थान हैं।

१-	शवशिवाकाली	देवनाथपुरा, म०नं० डी. ३०/६६ में, पांचमुंडो के ऊपर शव है शव पर शिव है शिव पर काली है इनके दोनो ओर सियार है।
२-	शवशिवाकाली	प्रह्लादघाट, म०नं० ए. १०/३६ में।

काशी में बटुकभैरव के ३ स्थान हैं ।

१- बटुकभैरव	बटुकभैरव कामक्षा, म०नं० बी. २१/१२६ में ।
२- बटुकभैरव	शीतलाघाट राजमंदिर, म०नं० २०/६ में ।
३- बटुकभैरव	चौखम्बा गोपाल मंदिर के बगल, म०नं० ३४/२२ में ।

काशी में पंचमुखी हनुमान की ३ मूर्तियाँ है ।

१- पंचमुखी हनुमान	पाण्डेहवेली, म०नं० बी. ३१/३०२ में ।
२- पंचमुखी हनुमान	राजमंदिर, म०नं० के. २०/१६१ में ।
३- पंचमुखी हनुमान	राजघाट (रामबाग), म०नं० ए. २६/३६ में ।

काशी में अविमुक्तेश्वर के ४ लिङ्ग हैं ।

१- अविमुक्तेश्वर	ज्ञानवापी के उत्तर फाटक पर लुप्त कब्र के चौतरे पर स्थान की पूजा, आदि स्थान ।
२- अविमुक्तेश्वर	वहीं राधाकृष्ण धर्मशाला में बड़ा लिंग अप्सरेश्वर के बगल में, म०नं० सी.के. ३०/१ में ।
३- अविमुक्तेश्वर	मणिकर्णिका मार्ग पर ब्रह्मनालेश्वर के नाम से प्रसिद्ध ।
५- अविमुक्तेश्वर	विश्वनाथ मंदिर में दक्षिणकोण में, म०नं० सी.के. ३५/१६ में ।

बाणेश्वर के ४ लिङ्ग हैं ।

१- बाणेश्वर	लोलार्ककुण्ड के समीप ।
२- बाणेश्वर	सिद्धेश्वरी के पास ।
३- बाणेश्वर	मैदागिन हरिश्चन्द्र स्कूल के कोने में, म०नं० ५८/१६ में ।
४- बाणेश्वर	प्रह्लादघाट पंचाग्नी अखाड़े से पूर्व म०नं० ११/३० के सामने ।

जमदग्नीश्वर के २ स्थान हैं ।

१- जमदग्नीश्वर	दारानगर मध्यमेश्वर समीप, म०नं० के. ५३/६३ में ।
२- जमदग्नीश्वर	सिंधियाघाट के ऊपर वशिष्ठवामदेव में दर्वाजे के दाहिने, म०नं० सी.के. ७/१६१ में ।

काशी में हरिश्चन्द्रेश्वर के ३ स्थान हैं।

१-	हरिश्चन्द्रेश्वर	यमघाट के ऊपर संकठा परिक्रमा मार्ग, म०नं० सी.के. ७/१६६ में।
२-	हरिश्चन्द्रेश्वर	बंगालीटोला पातालेश्वर के बगल में म०नं० डी. ३२/११८ के बाहर।
३-	हरिश्चन्द्रेश्वर	हरिश्चन्द्रघाट स्मशानेश्वर ही।

काशी में चिन्तामणिविनायक के ४ स्थान हैं।

१-	चिन्तामणिविनायक	सिंधियाघाट के ऊपर वशिष्ठेश्वर के बाहर, म०नं० ७/१६१ में।
२-	चिन्तामणिविनायक	ईश्वरगंगी तालाब के पास गली में म०नं० ५६/४२ में।
३-	चिन्तामणिविनायक	पिताम्बरपुरा अवधकेदार, म०नं० के. ७/२०८ में।
४-	चिन्ताहरणविनायक	वरणा आदिकेशव के दक्षिणफाटक पर, म०नं० के. ३७/५१ में।

काशी में यन्त्रेश्वर लिङ्ग के ३ स्थान है।

१-	यन्त्रेश्वर	अन्नपूर्णा मंदिर के दरवाजे पर, म०नं० डी. ६/१ में आचार्य भास्करराय द्वारा स्थापित।
२-	यन्त्रेश्वर	पंचगंगा घाट पातालेश्वर के नाम से, म०नं० के. २२/२४ में।
३-	यन्त्रेश्वर	हनुमानघाट म०नं० बी. ४/५५ में संत मुथुस्वामी संगीतज्ञ द्वारा दो सौ वर्ष पूर्व स्थापित।

काशी में सिद्धेश्वर के छः स्थान हैं।

१-	सिद्धेश्वर	सिद्धेश्वरी मंदिर, म०नं० सी.के. ७/१२४ में।
२-	सिद्धेश्वर	जैतपुरा वागेश्वरी के बगल में, म०नं० जे. ६/८४ में।
३-	सिद्धेश्वर	अस्सी गोयनका कालेज, म०नं० बी. २/२८२ में।
४-	सिद्धेश्वर	बंगालीटोला पातालेश्वर के बगल में म०नं० डी. ३२/११८ के बाहर।
५-	सिद्धेश्वर	कीनाराम का स्थल, म०नं० बी. ३/३३५ में।
६-	सिद्धेश्वर	बड़ागणेश लोहटिया, म०नं० के. ५८/१०१ में।

काशी में तारा के ४ स्थान हैं ।

१- तारादेवी	बंगालीटोला रानीभवानी द्वारा स्थापित म०नं० डी. २४/४ में ।
२- तारादेवी	ललिताघाट सीढ़ी से दाहीने मढ़ि में, म०नं० डी. १/५८ में ।
३- तारादेवी-	कालिकागली कालीजी में दरवाजे के सामने, म०नं० डी. ८/१७ में।
४- तारादेवी-	ब्रह्मनाल रानी पद्मावती द्वारा स्थापित म.नं० सी.के. ३२/१५ में । सन् १९१२ फाल्गुन शुक्ल २ को ।

कुक्कुटेश्वर के ४ स्थान हैं ।

१- कुक्कुटेश्वर	राणामहल वक्रतुण्ड विनायक के बगल में नीचे उतर कर म०नं० डी. १८/२२ में ।
२- कुक्कुटेश्वर	ज्येष्ठेश्वर के समीप लुप्त ।
३- कुक्कुटेश्वर	कालभैरव के पास दण्डपाणि भैरव, म०नं० के. ३१/४६ में
४- कुक्कुटेश्वर	दुर्गामंदिर के दक्षिणी फाटक के बाहर, म०नं० २७/१ में ।

काशी में पशुपतेश्वर के ३ स्थान हैं ।

१- पशुपतेश्वर	मलदहिया, म०नं० ३०/४० में जहां गाटर बिकता है ।
२- पशुपतेश्वर	पाशुपतेश्वर की गली, म०नं० सी.के. १३/६६ में ।
३- पशुपतेश्वर	ललिताघाट म०नं० डी. १/६८ में महाराजा नेपाल द्वारा स्थापित ।

काशी में हाटकेश्वर के ५ स्थान है (यह नागरों के इष्टदेव है) ।

१- हाटकेश्वराय नमः	दालमंडी गुदड़ी बाजार, म०नं० सी.के. ४३/१८९ में ।
२- हाटकेश्वराय नमः	हड़हा बाजार म०नं० सी.के. ४८/१९० में ।
३- हाटकेश्वराय नमः	मानसरोवर म०नं० बी. १/१५१ में ।
४- हाटकेश्वराय नमः	दूधविनायक म०नं० के. २३/४१ में ।
५- हाटकेश्वराय नमः	सिंधियाघाट के ऊपर म०नं० सी.के. ७/१३६ में ।

काशी में ९ स्थानों पर जगन्नाथ मंदिर है ।

१-	जगन्नाथाय नमः	अस्सीघाट के ऊपर म०नं० बी. १/१५१ में ।
२-	जगन्नाथाय नमः	दशाश्वमेधघाट म०नं० डी. १७/१०१ में ।
३-	जगन्नाथाय नमः	अन्नपूर्णा मंदिर के बगल राममंदिर म०नं० डी. ८/३८ में ।
४-	जगन्नाथाय नमः	नीलकंठ मोहाल म०नं० सी.के. ३३/५४ में ।
५-	जगन्नाथाय नमः	रामघाट म०नं० के. २४/११ में ।
६-	जगन्नाथाय नमः	राजमंदिर हनुमानजी म०नं० के. २०/१५९ में ।
७-	जगन्नाथाय नमः	नाटीइमली ।
८-	जगन्नाथाय नमः	लोहटिया बड़ागणेश के बाहर म०नं० के. ५८/१०५ में ।
९-	जगन्नाथाय नमः	चौक भद्दोमल की कोठी में ।

काशी में राजराजेश्वर के दो स्थान है ।

१-	राजराजेश्वराय नमः	ढुंढिराज गली म०नं० सी.के. ३५/३३ में ।
२-	राजराजेश्वराय नमः	कोतवालपुरा, म०नं० सी.के. ३८/२० में ।

बृहस्पति के एक स्थान है ।

१-	बृहस्पतेश्वराय नमः	सिन्धियाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१३३ में ।
२-	बृहस्पतेश्वर नाम से	(त्रैलौक्य मोहनेश्वर) डेड़सी का पुल महाराज टैगोर द्वारा स्थापित लिंग को जनता बृहस्पति करके पूजने लगी । काशी खण्डोक्त नहीं है । म०नं० डी. १२/७९ में ।

मान्धातेश्वर के २ स्थान है ।

१-	मान्धातेश्वराय नमः	शूलटंकेश्वर के सामने प्रयागघाट सीढ़ी पर जमीन के नीचे मंदिर है।
२-	मान्धातेश्वराय नमः	लाहौरीटोला म०नं० सी.के. ३४/१४ में ।

१६००-१६६० बनारस के कुछ मुहल्लों के नाम वरदराज के गीर्वाण पद मंजरी में मिलते हैं । जैसे ब्रह्माघाट, दूधविनायक, मंगलागौरी, रामघाट, त्रिलोचनघाट, बालाघाट, सिन्धियाघाट, स्वर्गद्वार, मोक्षद्वार, गंगाकेशव, जरासन्धेश्वर, बृषभध्वजेश्वर, सोमेश्वर, रामेश्वर, लोलार्क, असी, वरणा, कालभैरव, मानमंदिर, दशाश्वमेध, चौसट्टीघाट, सर्वेश्वरघाट, केदारघाट और आदिविश्वनाथ, आदिकेशव, मंजरी के अनुसार आदि विश्वनाथ का मन्दिर बिन्दुमाधव घाट पर था ।

लक्ष्मीघर के निबन्ध हिरण्येकेशी गृह्यसूत्र २।७।१०।७। में विष्णु, रूद्र, स्कन्द और ज्वर के साथ-साथ काशीश्वर की पूजा का भी उल्लेख है। इस आधार पर कहा जा सकता है ई० पूर्व ५वीं सदी में बनारस में शिवपूजा आरम्भ हो चुकी थी। ६वीं सदी में भारत आए चीनी यात्रि ह्वेनसांग ने विश्वनाथ का नाम महेश्वर लिखा है। ह्वेनसांग लिखता है मालोनिसी (वाराणसी) राज्य में ब्राह्मणों के सौ देवालय है जिनमें २० राजधानी में हैं, यहाँ दस हजार शिवभक्त दर्शनार्थ आते हैं। माहेश्वर का पुतला पीतल का हैं। कुट्टनीमत के अनुसार ८वीं सदी में भी मन्दिरों की मर्यादा सुरक्षित थी। अलबेरूनी के अनुसार ११वीं सदी के आरम्भ में भारत के कोने कोने से यात्री व साधु यहाँ इकट्ठा होते थे। वाराणसी का वही रूप १२वीं सदी में भी था। गहड़वाल सम्राट चन्द्रदेव अपने को गौरव मानते थे। काशी का अधिपति होने के कारण वैष्णव होते हुए भी अनेक शिवमंदिरों के लिये उन्होने दान दिया। जैसे देवेश्वर, अघोरेश्वर, त्रिलोचनेश्वर, कृत्तिवासेश्वर, इन्द्रेश्वर, ओंकारेश्वर इत्यादि। ११वीं सदी के अन्त में उनसे सम्बन्धित है। राल्फफिच १५८३-९१ ई० में बनारस के घाटों मन्दिरों और मूर्तियों का वर्णन करता है।

हिन्दूमूर्तियाँ कुछ बाघों जैसी हैं, कुछ चीतों सी, कुछ बन्दरो जैसी, कुछ मूर्तिया स्ती-पुरुषों जैसी है। कुछ मोरों की तरह तो कुछ चार हाथवाले शैतानों जैसी मूर्तियाँ पालथी मारे बैठी हैं और इनके हाथों में भिन्न-भिन्न वस्तुएँ है। कलाहीन मूर्तियों को देखकर ''फिच'' घबड़ासा गया। वह कहता है उनके चेहरे भयंकर थे, उनके कान मुलम्मेदार और रत्नजटित थे और उनके दाँत-आँख सोने चाँदी और शीशे के थे। मूर्तियों के सम्मुख सदा दीप जलते थे। गर्मियों में उन पर पंखा भी किया जाता था। ''फिच'' बनारस में एक अड़ा (अद्या) नाम के मूर्तियों का जिक्र करता है। बहुतसी जगहों में एक तरह की मूर्तियाँ खड़ी रही हैं जिसे उनकी भाषा में अड़ा कहते हैं। इस अड़ा को चार हाथ और पंजे होते है। जिनप्रभ के वर्णन से काशी के १४वीं सदी का विश्वनाथ मंदिर देववाराणसी में स्थित था।

लक्ष्मीधर ने अपने निबन्धतिर्थ में बनारस के ३४० मन्दिरों का उल्लेख किया है और बतलाया हैं कि गहड़वाल युग में वाराणसी राजधानी बना दी गई जिसके फलस्वरूप काशी की धार्मिक महत्ता बढ़ने लगी।

लक्ष्मीधर जिस प्राचीन लिंगपुराण को उद्धृत करते है उसके अनुसार देवताओं, देवियों, नागों, असुरों और ऋषियों में काशी में शिव मन्दिर स्थापित करने की होड़ सी लगी थी। नारायणभट्ट और मित्रमिश्र ने १२वीं सदी के बाद बने मन्दिरों का उल्लेख किया है। लक्ष्मीधर द्वारा उद्धृत लिंगपुराण के विवरणों के बाद के पौराणिक विवरणें में काशीखण्ड ब्रह्मवैवर्तपुराण से तुलना करने पर यह बात स्पष्ट हो जाती है कि १६वीं सदी के लेखकों ने किस तरह प्राचीन मंदिरों को दिखाने का प्रयत्न किया। इसके दो कारण थे। पहला कारण है काशी के प्रति ममता तथा दूसरा लोगों के सूदूरतीर्थो में जाने की कठिनाई।

गहड़वालयुग में असीसंगम पर लोलार्केश्वर शिव का मन्दिर था। देवमंदिरों की संख्या किस तरह बढ़ रही थी, इसका पता इससे लगता है कि लक्ष्मीधर के समय में इनकी संख्या तीन सौ पचास थी। प्रिंसेप के समय इनकी संख्या एक हजार हो गई और १८६८ ई० में जब शेरिंग ने अपनी पुस्तक लिखी इनकी संख्या १६ सौ ५४ हो गई। लक्ष्मीधर के तीर्थ विवेचन खण्ड और १५वीं सदी से १७वीं सदी तक के तीर्थ माहात्म्यों के तुलनात्मक अध्ययन से कुछ विशिष्ट तथ्यों का भी पता चलता हैं। लक्ष्मीधर के उद्धरणों में काशी का नाम एक बार आया है वह भी अविमुक्त और वाराणसी के सम्बन्ध में काशीखण्ड इत्यादि के इस विवेचन को उद्धृत करते हुए कि विश्वेश्वर ही काशी का प्रधान देव है। अविमुक्त की दो व्युत्पत्तियाँ दी गई हैं। लिंगपुराण के अनुसार (अवि) पाप से मुक्त होने के कारण ही इसका नाम अविमुक्त क्षेत्र पड़ा। मत्स्यपुराण के अनुसार इस क्षेत्र से शिव के कभी अलग न होने से ही इसका नाम अविमुक्त पड़ा। आधुनिक संकल्पों में आनन्दवन का नाम आता है, पर लक्ष्मीधर ने इसका उल्लेख नहीं किया है। काशी में पंचतीर्थी-यात्रा की स्नान विधि जिस प्रकार इस समय है वह लक्ष्मीधर के समय कुछ दूसरी ही थी। काशी में अविमुक्तेश्वर शिव की ही प्रधानता थी।

प्राचीन साहित्य और अभिलेखों के अनुसार मुगलयुग और उसके कुछ पहले ही यह नाम बदलकर विश्वेश्वर हो गया। लक्ष्मीधर (पृष्ठ १२१-१२३) के समय में विश्वेश्वर का मंदिर अवश्य था पर उसमें कोई विशेषता नहीं थी, उस समय प्रधानता तो अविमुक्तेश्वर के स्वयम्भू लिंग की थी (पृष्ठ ४१)। विश्वेश्वर का दो जगहों पर उल्लेख हुआ है, एक जगह अविमुक्तेश्वर का विशेषण है (पृष्ठ २०) और दूसरी जगह उसकी गणना साधारण लिंगो में की गई है (पृष्ठ ९३)। वाचस्पतिमिश्र के समय (१५वीं सदी) विश्वेश्वर और अविमुक्तेश्वर का एकत्व मान लिया गया था। तीर्थचिन्तामणि (पृष्ठ ३६०) में कहा गया है कि अविमुक्तेश्वर ही लोक में विश्वनाथ नाम से प्रसिद्ध हुये। पर नारायणभट्ट और मित्रमिश्र दोनों ही विद्वान् वाचस्पति के मत से सहमत नहीं हैं। उनके अनुसार पदमूपुराण, ब्रह्मवैवर्तपुराण और काशीखण्ड में दोनों लिंग पृथक माने गये है तथा अविमुक्तेश्वर को आदि लिंग माना गया है। नारायण भट्ट और मित्रमिश्र दोनों ही स्वयम्भू लिंग को विश्वेश्वर मानते हैं। दोनों ही के मत से मुगलों द्वारा काशी ध्वंस किये जाने पर उस लिंग की महता नष्ट हो गई और साधारणतः स्वयम्भू लिंग के स्थान पर विश्वेश्वर लिंग पूजा जाने लगा। इसमें भी संदेह नहीं की जहाँ आज मस्जिद है वहाँ कभी अविमुक्तेश्वर एवं विश्वेश्वर का मंदिर नहीं था, क्योकि तीर्थ-विवेचन के अनुसार बनारस के उत्तर में अविमुक्त का स्थान था।

लक्ष्मीधर ने मणिकर्णिका कुण्ड का उल्लेख किया है, पर उसमें स्नान आज कल की तरह किसी विशेष पवित्रता का द्योतक नहीं था। दशाश्वमेध पर मंदिर और तीर्थ दोनों ही माना गया हैं।

लक्ष्मीधर ने पंचक्रोशी का कहीं उल्लेख नहीं किया है। लक्ष्मीधर ने मुक्तिमंडप, श्रृंगार

मंडप, ज्ञान-मंडप, ज्ञानवापी, मंगलागौरी, भवानीगौरी, शूलटंकेश्वर तथा विदारनृसिंह, लक्ष्मीनृसिंह, गोपी-गोविन्द और किणोवाराह के वैशणव मंदिरों का उल्लेख नहीं किया है। कालभैरव का कही उल्लेख नहीं है, पर भैरव चित्रपट की पूजा कर के जल भरने की बात का उल्लेख है। विशालाक्षी को शिव की रानी कहा गया है तथा मुखप्रेक्षणी ललिता के एक मंदिर का भी उल्लेख है। लक्ष्मीधर द्वारा उद्धृतपुराणों में काशी में अनशन से डूबके तथा अग्निपात से आत्मघात की बात कही गई हैं, पर इस क्षेत्र में इसकी कोई आवश्यकता नहीं मानी गई है, क्योकि पौराणिक विश्वास था कि अंत समय स्वयम् शिव मुमुक्षु को तारक मंत्र का ज्ञान देते हैं। जिसके फलस्वरूप प्राणी मुक्ति पाकर पुनः जन्म ग्रहण नहीं करता पर ऐसी मुक्ति केवल नगर के भीतर ही उपलब्ध है।

कृत्यकल्पतरू के तीर्थ-विवेचन खण्ड तथा मत्स्यपुराण में आरम्भ के उद्धरण (पृष्ठ १२३०) से ज्ञात होता है कि सब प्राणियों को मुक्ति मिलती है। यहां नाना तरह के सिद्ध, योगी, संन्यासी रहते हैं इस नगरी को कभी नहीं छोड़ने से ही इसे अविमुक्त कहा गया है। स्नानादि से जो मोक्ष यहॉ सुलभ है, वह नैमिषारण्य, कुरुक्षेत्र, हरिद्वार और पुष्कर में भी नहीं मिलता है। यहॉ प्रयाग महाकाल कायावरोहण तथा कालजंर से भी कहीं अधिक मोक्ष सुलभ है कुबेर संवर्त, व्यास, ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र इत्यादि यहॉ बसते हैं।

इस अलर्क की पुरी में गृहस्थ और सन्यासी दोनों ही मुक्ति पाते है। अविमुक्त में आनेवालों के सभी पूर्व संचित पाप नष्ट हो जाते हैं। यहाँ पत्थर से पैर तुड़वा कर रहना पड़े तो भी अच्छा है। यहां ब्रह्महत्या ऐसे पापों तथा संसार बन्धन से छुटकारा मिलता है। यहां देव सदाभक्तों पर दया करके उनकी मनोकामनायें पूरी करता है।

यहां स्वयम् शिव अंतकाल में कर्णजाप (महातारक मंत्र) देते है जिससे मनुष्य के सब पाप नष्ट हो जाते है। जो पुरुष विघ्नों के होते हुये भी अविमुक्त नहीं छोड़ता, उसे जन्म, जरा, मृत्यु से छुटकारा मिलता है और उसे शिव सायुज्य मुक्ति देते हैं। जो यज्ञ में यहां दान करता है और शिव की पूजा करता है उसे स्वर्ग मिलता है। यहां शाकपर्णाशियों, एक दिन व्रत रखने वालों मरीचियों, दन्तोलूखलियों तथा अश्मकुट्टव्रतधारियों, हर महिने कुशाग्र जलग्रहण करने वालों, वृक्षमूल में रहने वालों को भी मुक्ति मिलती है। इस क्षेत्र में धर्म मूर्तिमान् होकर स्थित रहने से चारों वर्गो को परमगति मिलती है। जो मनुष्य यहां सोने से मढ़ी सीगों वाली चाँदी से मढ़ी खुरों वाली तथा गले में कपड़े से मंडित गाय का दान वेदपारंगत ब्राह्मण को करता है उसकी सात-पीढ़ियॉ तर जाती है।यहॉ ब्राह्मणों को सुवर्ण, रजत (चांदी), अन्न, वस्त्र और भी भोगसामग्रियों को दान करने का महत्व है। यहां गंगा में स्नान से दस अश्वमेधयज्ञों का फल मिलता है। जो यहां उपवास कर ब्राह्मणों को भोजन कराता है उसे सौत्रामणि यज्ञ का फल मिलता है। जो यहां एकाहार से एक महीना बिताता है उसका जीवन भर का पाप एक ही महीने

में नष्ट हो जाता है।

यहाँ जो विधान पूर्वक अग्नि प्रवेश करता है अथवा अनशन से प्राण देता है उसे पुनर्जन्म नहीं मिलता है। धूप और गंध से युक्त सामग्रियों को अविमुक्तक्षेत्र में जो दान करता है उसे अग्निहोत्र का फल मिलता है। भूमिदान, सम्मार्जन, अनुलेपन तथा माल्यदान का यहाँ विशेष महत्व है। यहाँ का श्मशान भद्र है। यहाँ शिवभक्त और सूर्यभक्त सभी सायुज्य गति पाते है। यहाँ के रहने वाले सन्यासियों को आठ महीने बाहर तथा चार मास एक स्थान पर रहने की आवश्यकता नहीं। यहाँ पतिव्रता और भोगपरायण कामचारिणी दोनों ही तरह की स्त्रियों को मुक्ति मिलती है। यहां शतरुद्री के पाठ का विशेष फल है। ब्रह्म-पुराण (पृष्ठ ३०-३२) में अविमुक्त क्षेत्र के भौगोलिक वर्णन और कपालमोचन तीर्थ में पिण्डदान व श्राद्ध की महिमा बतलाई गई हैं। गंगास्नान, पूजा, जप, होम, गोदान, चान्द्रायणव्रत इत्यादि की महत्ता का उल्लेख है।

लक्ष्मीधर द्वारा उद्धृत लिंगपुराण (पृष्ठ ३२) में वाराणसी के मन्दिरों की बहुत बड़ी तालिका दी हुई है तथा पौराणिक ढंग से वाराणसी को मुक्तिदायक माना गया है। शुष्क नदी अर्थात् असी पर लोलार्क की स्थिति मानी गई है। वरणापार आदिकेशव की स्थिति तथा मत्स्योदरी पर संक्राति की महिमा बताई गयी है। कहा गया है- कि भक्तों को सिद्धि प्रदान करने वाले सात करोड़ रूद्र यहाँ लिंगरूप में बसते हैं। लक्ष्मीधर द्वारा उद्धृत स्कंदपुराण में काशी के पर्वो का उल्लेख है। कृष्ण और शुक्लपक्ष की अष्टमी और चतुर्दशी चन्द्र और सूर्य ग्रहण का महत्व बतलाया है विशेषकर कार्तिक में तथा संक्राति में सब तीर्थ गंगापार आ जाते है।

केदारलिंग, महालयलिंग, मध्यमेश्वर, पशुपतीश्वर, शंकुकर्णेश्वर, गोकर्ण के दो लिंग, दृमिचण्डेश्वर, भद्रेश्वर, स्थानेश्वर, एकाम्रेश्वर, कामेश्वर, अजेश्वर, भैरवेश्वर, ईशानेश्वर (कायावरोहणतीर्थ) पर इत्यादि पुण्यतीर्थ भी पर्व के दिनों काशी में आ जाते है।

आगे चलकर लिंग पुराणेक्त लिंगों, हृदों, कूपो तथा सरोवरों के नाम उनके स्थापको के नाम के साथ दिये गये हैं। उनमें से अधिकांश की स्थापना देवों, ऋषियों, सिद्धो द्वारा किये जाने का उल्लेख है।

लिंग, कूप, कुण्ड इत्यादि नगरी के किन-किन भागों में अवस्थित थे इन का भी उल्लेख है। अविमुक्तेश्वर के अविमुक्त क्षेत्र में सिद्धों और पाशुपतों के रहने का तथा उनकी शिवभक्ति परायणता का भी उल्लेख है। अविमुक्तेश्वर का स्वयम्भू लिंग नगरी के पूर्वोत्तर भाग में स्थित था। उससे लगा हुआ महादेव कूप था, जिसके स्पर्शमात्र से लोगों को वागेश्वरी गति मिलती थी। वहीं कूप के पश्चिम में वाराणसी देवी की मूर्ति की स्थापना राजा वरणार ने काशी में की जिनके आशीर्वाद से लोगों को यहां निवास मिलता था। भविष्यपुराण ब्रह्मखण्ड में गोप्रेक्षेश्वर

महादेव के दर्शन से गोदान का फल मिलता है। पूर्व मे इस देव-मंदिर की स्थिति थी। इनके दर्शन से सब कल्मष नष्ट हो जाते थे।

अनसूयेश्वर-अनसूइया द्वारा स्थापित यह लिंग गोप्रेक्षेश्वर के उत्तर में था। इनके दर्शन से परागति मिलती थी और स्त्रियों को पतिव्रत पालन में बल मिलता है। अनसूयेश्वर के आगे गणेश्वर का मन्दिर पड़ता था जो गणाध्यक्षपद देने वाला था जिसे हिरण्यकश्यपु ने एक कूप के पास स्थापित किया था, सिद्धेश्वर हिरण्येकश्यपु मंदिर के पश्चिम में पड़ता था। यह सर्वसिद्धिदायक माना जाता था। वृषभेश्वर इस लिंग की स्थिति सिद्धेश्वर के पूर्व तथा गोप्रेक्ष के दक्षिण पश्चिम में थी, दधीचेश्वर गोप्रेक्ष के दक्षिण में सर्वकाम फलप्रद लिंग था।

बाणेश्वर वैरोचनेश्वर के उत्तर में शिवभक्त बलिद्वारा स्थापित लिंग बतलाया गया। शालकंटकेश्वर बाड़ेश्वर के उत्तर में राक्षसी शालकंटका द्वारा स्थापित शिवलिंग था। हिरण्यगर्भेश्वर शालकंट के मंदिर में तथा मोक्षेश्वर शालकंटकेश्वर मंदिर में ही था। स्वर्गेश्वर भी शालकंटकेश्वर के मंदिर में ही थे। वासुकीश्वर शालकंटकेश्वर के उत्तरस्थित चतुर्मुखलिंग तथा वासुकीश्वर के पूर्व स्थित एकतीर्थ था जिसमें स्नान करने से मनुष्य रोगरहित हो जाता था। चन्द्रेश्वर वासुकीतीर्थ के पास स्थापित तथा विद्येश्वर चन्द्रेश्वर के पूर्व में बतलाये गये जिनके दर्शन से विद्याधर लोक मिलता था। वीरेश्वर नगर के उत्तर में स्थित थे। जिसकी स्थापना के सम्बन्ध में एक लम्बी कथा दी गई है।

सगरेश्वर वीरेश्वर के वायव्य भाग में सगर द्वारा स्थापित तथा वालीश्वर सगरेश्वर के आगे उसी जगह वाली द्वारा स्थापित चतुर्मुख लिंग था जिसके दर्शन मात्र से बल मिलता था। सुग्रीवेश्वर-वालीश्वर के उत्तर में सुग्रीव द्वारा स्थापित शिवलिंग था। हनुमतेश्वर सुग्रीवेश्वर के पास हनुमान द्वारा स्थापित लिंग था। अश्विनीकुमारेश्वर सगरेश्वर के उत्तर में अश्विनीकुमारों द्वारा स्थापित शिवलिंग था। भद्रदोह तीर्थ अश्विनीकुमार मंदिर के उत्तर में स्थित था इस तीर्थ में भाद्रपद पौर्णमासी को स्नान करने से हजार गोदान का पुण्य मिलता था। भद्रेश्वर भद्रदोह तीर्थ के पश्चिमी किनारे पर स्थित शिवलिंग था। उपशान्त शिव भद्रेश्वर के नैर्ऋत्य में स्थित शिवलिंग था। चक्रेश्वर उपशांत के उत्तर में स्थित शिवलिंग था। उसके आगे एक पश्चिमाभिमुख ह्रद था। जिसमें स्नान से शिवलोक की प्राप्ति होती थी। नारदेश्वर शूलेश्वर के पूर्व में नारद द्वारा स्थापित कुण्डाभिमुखी शिवलिंग था। धर्मेश्वर नारदेश्वर के पूर्व में कुण्डाभिमुखी शिवलिंग था। विनायक कुण्ड धर्मेश्वर के वायव्य दिशा में स्थित था जिसमें स्नान करके यात्री सर्व विघ्नों से मुक्त होकर अविमुक्त क्षेत्र में बस सकता था। अत्रीश्वर अत्री द्वारा स्थापित लिंग था जो दधीचेश्वर के दक्षिण में पड़ता था। मधुकैटभेश्वर मधुकैटभ द्वारा स्थापित लिंग था।

यह अत्रीश्वर के दक्षिण पूर्वाभिमुख था। मंदिर के पूर्व में कैटभ द्वारा स्थापित शिवलिंग

था। बालकेश्वर गोप्रेक्ष के पूर्व स्थित था। विज्वरेश्वर बालकेश्वर के समीप था। इस लिंग के दर्शन से ज्वर का तुरन्त नाश होता था। देवेश्वर ज्वरेश्वर के पूर्व में स्थित शिवलिंग था। वेदेश्वर देवेश्वर के ईशान में स्थित चतुर्मुख लिंग था जिसके दर्शन से ब्राह्मण चतुर्वेदी हो जाते थे। केशव वेदेश्वर के उत्तर में स्वयं केशव का मंदिर था।

संगमेश्वर इसकी स्थिति केशव के मंदिर के पास थी। इनके दर्शन से शिष्टों के समागम होने का फल मिलता था। स्कन्दपुराण के अनुसार वरणा और गंगा के समागम पर स्थित संगमेश्वर की स्थापना ब्रह्मा ने की थी। संगम पर स्नान कर के लोग लिंग का दर्शन करते थे। प्रयागेश्वर संगमेश्वर के पूर्व में ब्रह्मा द्वारा स्थापित लिंग था।

जिसके दर्शन से ब्रह्मपद मिलता था शांकरीदेवी प्रयागेश्वर के मंदिर में वट वृक्ष पर शांकरीदेवी का आवास था जो सब काशीवासियों को शातिं प्रदान करती थी। गंगा वरणा संगम श्रावण द्वादशी को यदि बुधवार पड़े तो इस संगम पर स्नान तथा श्राद्ध बड़ा ही फलदायक था। श्राद्ध के करने वाले को विष्णुलोक की प्राप्ति होती थी। मत्स्यपुराण ने वहां विधिपूर्वक अन्नदान को श्रेयस्कर माना है। कुम्भीश्वर वरणा के पूर्वीतट पर स्थित शिवलिंग था। कालेश्वर कुम्भेश्वर के पूर्व में स्थित शिवलिंग था। कपिलहृद आधुनिक कपिलधारा जिसकी स्थिति कालेश्वर के उत्तर में थी।

इसके बाद कर्दमेश्वर के दर्शन से राजसूय यज्ञ का पुण्य मिलता था, नरक में पड़े पितरगण तर जाते थे तथा वहाँ श्राद्ध करना गयाश्राद्ध से भी बड़कर था। स्कंदेश्वर महादेव के पश्चिम में स्कंद द्वारा स्थापित शिवलिंग था वहाँ पर शाख-विशाख और नैगमियों द्वारा स्थापित अनेक शिवलिंग थे। बलभद्रेश्वर, स्कन्देश्वर के उत्तर में बलभद्र द्वारा स्थापित शिवलिंग था। नन्दीश्वर-स्कन्देश्वर के दक्षिण में नन्दी द्वारा स्थापित शिवलिंग था शिलादेश्वर नन्दीश्वेर के पश्चिम में नन्दी के पिता द्वारा स्थापित तथा वंदित लिंग था। हिरण्याक्षेश्वर शिलादेश्वर के पास हिरण्याक्ष द्वारा स्थापित शिवलिंग था। उसके पास ही देवों द्वारा स्थापित हजारों लिंग थे। अट्टहास हिरण्याक्षेश्वर के दक्षिण में अट्टहास का पश्चिमाभिमुख शिवलिंग था, जिसके दर्शन से ईशानलोक की प्राप्ति होती थी। मित्रावरुणेश्वर अट्टहास के पास ही पश्चिम में मित्रावरुण द्वारा स्थापित शिवलिंग अट्टहास के द्वार पर था। वशिष्ठेश्वर मित्रावरुणेश्वर के मंदिर में ही स्थापित लिंग था। याज्ञवल्क्येश्वर मित्रावरुणेश्वर के मंदिर में ही स्थापित याज्ञवल्क्य द्वारा चतुर्मुख लिंग था। मैत्रेयीश्वर याज्ञवल्क्येश्वर के पास ही मैत्रेंयी द्वारा स्थापित शिवलिंग था। प्रह्लादेश्वर याज्ञवल्क्येश्वर के पश्चिम में पश्चिमाभिमुख लिंग था। स्वर्लीनेश्वर प्रह्लादेश्वर के आगे ज्ञान विज्ञान में स्थित तथा परमानंद के इच्छुकों को यह लिंग आनन्द और मुक्तिदायक था। वैरोचनेश्वर स्वर्लीनेश्वर के आगे वैरोचन द्वारा स्थापित शिवलिंग था। अमरहृद विनायकेश्वर के उत्तर की ओर सटा हुआ कुण्ड था। अमरकेश्वर अमरक के दक्षिण में स्थित शिवलिंग इसके

दर्शन से भूल से भी किये गये दुष्कर्म का फल नष्ट हो जाता था।

वरणेश्वर अमरकेश्वर के उत्तर में थोड़ी ही दूर वरणा के तट पर पश्चिमाभिमुख शिवलिंग था। कहा गया है कि पाशुपतसिद्ध अश्वपाद को यहाँ शाश्वतसिद्धि मिली थी इसके दर्शन से गंधर्वत्व मिलने की बात कही गई है।

शैलेश्वर वरुणेश्वर के पश्चिम में स्थित शिवलिंग था। कोटीश्वर शैलेश्वर के दक्षिण में स्थित शिवलिंग था। भीष्मचण्डिका कोटीश्वर के पास ही भीष्मचण्डिका की श्मशानवासिनी मूर्ति होने से वीभत्स थी। कोटीश्वर तीर्थ इसमें स्नान करने से एक करोड़ गोदान का पुण्य मिलता था। ऋषिसंघद्वारा स्थापित शिवलिंग कोटीश्वर के उत्तर में था। श्मशानस्तम्भ कोटितीर्थ के दक्षिण पूर्व में स्थित इस स्तम्भ में स्वयं शिव का निवास माना जाता था। उसकी पूजा करने से मनुष्यों की सब पापों से विनिर्मुक्ति होती थी। कपालमोचन में स्नान करते समय शिव के अंग से एक कपाल वहाँ गिर जाने से उसका नामकरण हुआ। यहाँ स्नान करने से ब्रह्महत्या जैसे पाप से छुटकारा मिलने की बात कही गई है।

कपालेश्वर कपालमोचन पर स्थित शिवलिंग था। ऋणमोचन तीर्थ कपालेश्वर के उत्तरपूर्व में स्थित एक तिर्थ था जिसमें स्नान करने से तथा तीन शिवलिंगों के दर्शन से त्रिविधऋण का परिशोधन हो जाता था। अंगारेश्वर (मंगलेश्वर) ऋणमोचनतीर्थ के दक्षिणकुण्ड के सामने पश्चिमाभिमुख शिवलिंग था जहां चतुर्थी या अष्टमी को यदि मंगलवार पड़े तो वहां स्नान और दर्शन से रोग से मुक्ति होती थी। विश्वकर्मेश्वर अंगारेश्वर के पास ही पश्चिमाभिमुख शिवलिंग था। बुधेश्वर विश्वकर्मेश्वर के पास स्थित शिवलिंग था। महामुण्डेश्वर बुधेश्वर के दक्षिण में महामुंडेश्वर का शिवलिंग था। उसके सामने ही एक कूप था जिसमें स्नान करते समय शिव की मुंडमाला उसमें गिर जाने से लिंग का नामकरण पड़ा। खट्वांगेश्वर महामुण्डेश्वर के अहाते मे ही एक शिवलिंग और कूप था। कथा है कि शिव ने कूप में स्नान के लिए यहाँ अपना खट्वांग कूप में डाला था। भुवनेश्वर महामुण्डेश्वर के पास ही एक कुण्ड के दक्षिण तटपर उत्तराभिमुख लिंग था। विमलेश्वर भुवनेश्वर के दक्षिण में एक कुण्ड था उसके पूर्व में विमलेश की स्थिती थी। यहीं से पाशुपतसिद्ध त्र्यंबकशरीर रुद्रलोक पहुंचे। भृग्वेश्वर अंगारक कुण्ड के दक्षिण में भृगुद्वारा स्थापित बड़ा शिव मंदिर था। नन्दीशेश्वर भृग्वेश्वर के दक्षिण में नन्दीश्वर का शिवलिंग था। जिसके दर्शन मात्र से ही पाशुपतव्रत में सिद्धि मिल जाती थी।

यहीं पर तपस्वी कपिल ने गुहा में वास करके शिव की एक हजार वर्ष तक पूजा की जिसके फल स्वरूप वे सांख्यवेत्ता हुये। वह गुहा कपिलेश्वर गली में स्थित थी।

कपिलेश्वर पार्वती द्वारा यह प्रश्न करने पर कि कपिलेश्वर का नाम ओंकारेश्वर कैसे पड़ा, शिव ने बताया कि ओंकार के अकार में पंचायतन विष्णु उकार में ब्रह्मा और मकार में नन्दीश्वर रूप में स्वयम् शिव हैं। मत्स्योदी-मत्स्योदरी के उत्तर कूल पर उसी तरह नन्दीश्वर का

मंदिर स्थित था। जिस तरह ओंकार के उत्तर में मकार। इस जगह वामदेव सावर्णि अघोर और कपिल ने पाशुपत व्रत द्वारा सिद्धि पायी थी। कभी-कभी गंगा इस देव के दर्शनार्थ मत्स्योदरी में आ मिलती थी। कपिलेश्वर के नीचे दक्षिण में मत्स्योदरी बहती थी। कपिलेश्वर के पश्चिम गंगा और मत्स्योदरी का संगम था।जहाँ अष्टमी और चतुर्दशी को स्नान का महत्व था। वहां पाशुपतों का बड़ा अड्डा था तथा यह मंदिर काफी बड़ा था। उद्दालकेश्वर तथा दूसरे शिवलिंग कपिलेश्वर के आगे पश्चान्मुख लिंग थे। यहां उद्दालकऋषि ने परमसिद्धि पायी थी। पास ही उत्तर में एक दूसरे शिवलिंग से पराशर मुनि को सिद्धि मिली। उसी लिंग से सटे आयतन में पश्चिममुख बाष्कलि मुनि रहते थे। उसी के पूर्वाभिमुख होकर पाशुपत भावसिद्ध रहते थे और पश्चिम में एकमुख लिंग था। जिसके सान्निध्य में आरुण ने सिद्धि पाई। आरुणीश के पश्चिम में एक शिवलिंग था जहां पाशुपताचार्य का योगसिद्धि का निवास था। उसी के दक्षिण में एक शिवलिंग के सान्निध्य में कौस्तुभ नामक ऋषि को सिद्धि प्राप्त हुई तथा उसके दक्षिण में एक लिंग के पास सावर्णि नामक एक पाशुपत रहते थे। उसके आगे एक महद् लिंग था। जिसमें ओंकार रूप में स्वयम् शिव का निवास था। उसी के नीचे श्रीमुखी नामक एक गुहा थी जिसमें शिवार्चन में रत पाशुपत रहते थे। उसी महालिंग के द्वार पर इसी शरीर से अघोर मुनि रुद्रत्व को प्राप्त हुए और इसीलिये उसका नाम अघोरेश्वर पड़ा। वहां यात्रियों को त्रिरात्रि बिताने का आदेश था। श्रीकंठ जान पड़ता है कि मत्स्योदरी के किनारे बहुत से शिव मंदिर थे जिनमें शांत-दांत, जितक्रोध और ब्रह्मचारी पाशुपत पूजा करते थे। कपिलेश्वर के दक्षिण में श्रीकंठ के मंदिर में पाशुपात ऋतुध्वज रहते थे। उसके आगे एक पूर्वमुख लिंग के सान्निध्य में जाबाल को सिद्धि मिली थी। उसके दक्षिण में ओंकारेश्वर की मूर्ति थी। उसके दक्षिण में दूसरे लिंग के पास कालकवृक्षीय सिद्ध हुए। उस लिंग के भी दक्षिण एक पंचमुख शिवलिंग के पास गार्ग्य सिद्ध हुए।

इन पांचों को पंचायतन कहते थे और इनके दर्शन का विशेष महत्व माना जाता था। इस पंचायतन के समीप एक कूप था। रुद्रवास यह मंदिर श्रीकंठ के दक्षिण में स्थित था उसके उत्तर पास में एक कुण्ड था जिसमें आर्द्रा नक्षत्र संयुक्त चतुर्दशी को स्नान का महत्व था। वहीं स्थित रुद्रलिंग और उसके आस-पास बहुत से लिंग थे। रुद्रमहालय रुद्र के नैऋत्य भाग में था। वहां स्वयं पार्वती का वास माना जाता था। इसके आगे एक कूप था जहां पितरों और देवों का निवास माना जाता था। वहां श्राद्ध और पिंड की विधि थी तथा पिंड कूप में ढाल दिये जाते थे। वहीं पर वैतरणी नामक एक बावली थी जिसमें स्नान से नरक से परित्राण मिलता था। रुद्रमहालय के उत्तर में बहुत से लिंग थे। बृहस्पतीश्वर रुद्रकंठ के पश्चिम में बृहस्पति द्वारा स्थापित लिंग था। पितरों द्वारा स्थापित लिंग रुद्रकूप के दक्षिण भाग में था। कामेश्वर रुद्रवास

के दक्षिण में यहाँ काम के तपस्वरूप एक कुण्ड उत्पन्न हुआ उसके उत्तर तटपर कामेश्वर लिंग था जिसकी पूजा से सभी मनचाही बातें मिलती थी। कुण्ड में चैत्रशुक्ल १३ को स्नानविधि थी। पांचालकेश्वर कामेश्वर के पूर्व में इसलिंग की कुबेर के पुत्र ने आराधना की। इसकी पूजा से धनप्राप्ति की बात मानी गई है। पंचकेश्वर के हाते में पूर्वाभिमुखलिंग था जिसके आगे एक कूप था।

अघोरेश कामेश्वर-कूप के पास यहां किन्नरों ने नौलिंग स्थापित किए। दिवाकर निशाकर द्वारा स्थापित लिंग पंचकेश्वर के पूर्व में था। अंधकेश्वर अघोरेश के दक्षिण में अंधक द्वारा स्थापित लिंग था। देवेश्वर अंधकेश्वर के पश्चिम और कामकुण्ड के दक्षिण में था। वहीं पर भीमेश्वर-सिद्धेश्वर-गंगेश्वर-यमुनेश्वर और वहीं उर्वशीश्वर लिंग भी था। बालखिल्येश्वर शांतेश्वर के वायव्य दिशायें द्रोणेश्वर के पास कामकुण्ड के पश्चिम में था। बाल्मीकेश्वर बालखिल्येश्वर के आगे मुखलिंग था। च्यवनेश्वर कामकुण्ड के तटपर च्यवनद्वारा स्थापित लिंग था। वातेश्वर वायुद्वारा स्थापित बालखिल्येश्वर के दक्षिण में था। वहीं अग्नीश्वर-भरतेश और सनकेश्वर के लिंग थे। वातेश्वर के दक्षिण में धर्मेश्वर का मंदिर था।

सनकेश्वर के उत्तर में गरुडेश्वर थे और बगल में सनन्दनेश्वर थे। सनकेश्वर के दक्षिण आसुरीश्वर पंचशिखिलिंग तथा, शनैश्चरेश्वर थे। शनैश्चरेश्वर के दर्शन से रोगमुक्ति मानी जाती थी। मारकण्डेयेश्वर लिंग के आगे मारकण्डेयश्वर हृद था जिसमें स्नान-दान-जप -होम-श्राद्ध और पितृतर्पण की विधि थी। मारकण्डेयेश्वर के उत्तर में एक कूप था और उसके बगल में एक कुण्ड के मध्य कुंडेश्वर का मंदिर था। कुंड के पश्चिम में स्कंद द्वारा स्थापित एक लिंग था। मारकंडेयेश्वर के पास शांडिल्येश्वर का मुखलिंग और दक्षिण पास में भद्रेश्वर थे। श्रीकुंड कपालीश के दक्षिण में था इसमें स्नान करके श्रीदेवी के दर्शन से धन-धान्य मिलने का विधान था। दधीचेश्वर महालक्ष्मी द्वारा स्थापित शिवलिंग के पश्चिम में और उसके दक्षिण में गायत्री द्वारा स्थापित उसके भी दक्षिण में सावित्री द्वारा स्थापित पश्चान्मुख लिंग थे। सत्यथेश्वर दधीचेश्वर के पूर्व में मत्स्योदरी के तट पर स्थित था। उग्रेश्वर लक्ष्मीलिंग के पास था तथा उसके दक्षिण में एक बड़ा कुण्ड था। धनेश्वर लिंग दधीचेश्वर के पश्चिम में था जहां कुबेर का बनवाया एक बड़ा कुंड था। जिसमें स्नान करने से कुबेर का सान्निध्य प्राप्त होता था। वहां और भी बहुत से लिंग थे। करवीर धनेश्वर के पश्चिम में तथा उसके वायव्यकोण में मरीचेश्वर थे। आगे एक कुण्ड था। मरीचेश्वर के पश्चिम कुंड के तट पर इन्द्रेश्वर विराजमान थे। कर्कोटकेश्वर इन्द्रेश्वर के दक्षिण में था जहां नागराज कर्कोटक की एक वापीं और कर्कोटकेश्वर का मंदिर था। दृमिचण्डेश्वर कर्कोटकेश्वर के पास ही दक्षिण की ओर थे। जिनके दर्शन से ब्रह्महत्या छूट जाती थी। यहां कौतुमी नाम के पाशुपत सिद्ध ज्ञान प्राप्त करके रुद्रलोक को प्राप्त हुए। यह पश्चिमाभिमुख लिंग कुंड के ऊपर था। अग्नीश्वर दृमिचण्डेश्वर के पूर्व एक दीर्घिका

के किनारे स्थित था। अभ्रातकेश्वर अग्नीश्वर के पूर्व में तथा उसके पास ही दक्षिण में एक कुंड पर उर्वशीश्वर स्थित थे। तालकर्णेश्वर तथा और भी बहुत से शिवलिंग उर्वशीश्वर के पास थे।

मंदिर के पूर्व में एक कूप था वहीं चित्रेश्वर और चण्डेश्वर के पूर्व कालेश्वर थे। चित्रेश्वर के समीप-पिंगाक्ष नामक पाशुपत रहते थें जिन्होनें काल को भी ठग लिया। यहां कालोदक नामक एक कूप भी था। लगता है यहां शिवभक्त त्रिशूल का दाग लेते थे। यहां पूजा-होम-जप-दीप-प्रदान-धूपदान तथा जागरण की विधि थी। कालेश्वर के पास दक्षिण में मृत्यु द्वारा स्थापित सर्व रोग विनाशक एक लिंग था तथा कूप से उत्तर भाग में दक्षेश्वर और शच्येश्वर के मंदिर थे। महाकाल दक्षेश्वर के पूर्व में यहां एक कुण्ड था जिसके किनारे अंतर्केश्वर का मंदिर था तथा उसीके पास शक्रेश्वर का। उसके पास दक्षिण में मातलीश्वर थे। उसके आगे एक कुण्ड पर हस्तिपालेश्वर का मंदिर था। हस्तीश्वर के पूर्व में विजयेश्वर का मंदिर था। बलिकुण्ड महाकालकुण्ड के उत्तर में था। यहां बलि ने शिव की आराधना की थी। कृतिवासेश्वर काशी के प्रधान शिवलिंगों में एक था। कथा है कि एक दैत्य हाथी का रूप धारण करके शिव से लड़ने लगा उसे मार कर और उसका चमड़ा उधेड़ कर शिव ने ओढ़लिया, इसी से उनका नाम कृत्तिवास पड़ा। लिंग पश्चिमाभिमुख था। उसके उत्तर में शक्रेश्वर दक्षिण में मातलीश्वर तथा पूर्व में एक कूप था। वहाँ बहुत से पाशुपत रहते थे। फाल्गुन कृष्ण चतुर्दशी को फल पुष्प, भक्ष्य, दूध, मधु तथा सरसों के साथ जल तथा हुंडुकार नमस्कार नित्य गीत मुखवाद्यस्तोत्र और मंत्र से उनकी पूजा होती थी। वर्ष के दूसरे महीने की चतुर्दशी को भी उनकी पूजा विहित थी। भृंगीशेश्वर लिंग की स्थापना का श्रेय काशीराज धन्वन्तरी को दिया गया है। इस मंदिर के आगे एक कूप था जिसमें वैद्यराज ने सब औषधियाँ फेंक दी थी। इसीसे इस कुएँ का नाम वैद्यनाथ पड़ा। विश्वास था कि इसका पानी पीने से विषमज्वर, चर्मरोग, कुष्ठ तथा अन्य सब व्याधियाँ नष्ट हो जाती थी। कूप के उत्तरभाग में हरिकेश्वर लिंग था जिसके दर्शन से भी रोग मुक्ति की बात कही गई है। शिवेश्वर तुंगेश्वर के पास थे। दक्षिण में एक शिवतड़ाग था जिसके पश्चिम तट पर शिवेश्वर का मंदिर था। जमदग्नीश्वर लिंग शिवेश्वर के पास ही दक्षिण में था। भैरवेश्वर जमदग्नी लिंग के पास ही पश्चिम में था। लिंग के पास ही नाचती हुई दुर्गा की मूर्ति थी। उसके उत्तर में एक कूप था जिसके पश्चिम भाग में शुक्रेश्वर का मंदिर था उत्तर में एक तालाब था जिसके नैर्ॠत्यकोण में व्यासेश्वर का मंदिर और घंटाकर्ण ह्द भी था। उसी के पास उत्तर में एक तालाब था जिसका नाम पंचचूड़ाह्द था। उसके उत्तर में विलोक नामक कुण्ड था। उसी को पाटकर बुलानाला मुहाल बसा है। इसी के सन्निकट अशोक वन स्थित था। उसकें पास ही में मंदाकिनी थी। मंदाकिनी में स्नान करके मध्यमेश्वर के दर्शन से रुद्रलोक की प्राप्ति होती थी। यहाँ ब्राह्मणों, पाशुपतो तथा यतियों को भोजन कराना तथा स्नान, दान, तप, होम, स्वाध्याय, तर्पण, श्राद्ध और पिण्डदान फलदायक थे। मंदिर के दक्षिण भूभाग में विश्वेदेव द्वारा स्थापित एक पूर्वाभिमुख लिंग था तथा पश्चिम में वीरभद्र द्वारा प्रतिष्ठित शिवलिंग था।

उन दोनों के दक्षिण में भद्रकालीहृद था जिसके पश्चिम तीरपर शौनक द्वारा स्थापित पतंगेश्वर थे। उसी के वायव्यकोण में मनुष्यों द्वारा स्थापित अनेक लिंग थे तथा जयन्त द्वारा स्थापित शिवलिंग भी यहीं था। सिद्धकूट और सिद्धेश्वर जयन्तेश्वर के दक्षिण में थे। सिद्धकूट में शिवपूजा में निरतसिद्ध और पाशुपत रहते थे। उनमें कुछ ध्यानरत रहते थे, कुछ जप करते थे, कुछ स्वाध्याय करते थे और कुछ तप। कुछ आकाश शयन करते थे तो कुछ अधोमुख होकर धूम्रपान करते थे। कुछ प्रदक्षिणा करते थे और कुछ ने काष्ठमौन ले रखा था। कुछ पूजा के लिये गण्डूक पुष्प चुनते थे। सबके सब पूर्वाभिमुख सिद्धेश्वर की पूजा में निरत रहते थे। लिंग के पश्चिमभाग में एक वापी थी। व्याघ्रेश्वर सिद्धकूट के पूर्व में था। स्वयम्भू लिंग व्याघ्रेश्वर के दक्षिण में था तथा उसके पूर्व ज्येष्ठ स्थान था जहाँ एक लिंग था। उसके पश्चिम पंचचूड़ा द्वारा स्थापित एक लिंग था। दक्षिण में प्रहसितेश्वर नाम का और उसके समीप निवासेश्वर और वहीं चतुःसमुद्र नामक एक कूप था। दण्डीश्वर चतुःसमुद्र कूप के उत्तर में था। व्याघ्रेश्वर के दक्षिण में और उसके उत्तर में दण्डखात नामक एक तालाब था जिसमें स्नान करने से पितृगण तर जाते थे। उसी अहाते में जैगीषव्येश्वर का मंदिर था। उसके पश्चिम में सिद्धकूप पूर्व में देवल और शतकाल द्वारा प्रतिष्ठित लिंग तथा पश्चिम में शातातपेश्वर थे।

हेतुकेश्वर शातातपेश्वर के पश्चिम में तथा दक्षिणभाग में कणाद द्वारा स्थापित कणादेश्वर नामक पश्चिमाभिमुख लिंग था। कणादेश्वर के दक्षिण में एक वापी थी उसकें पास भूतीश का पश्चिमाभिमुख लिंग था। उसके पश्चिम में आषाढ़ि नामक पश्चान्मुख चर्तुमुख लिंग था तथा और भी बहुत से लिंग थे। उसके पूर्व में दैत्येश्वर थे जिनके दर्शन से पुत्रलाभ होता था। उसके दक्षिण में भारभूतेश्वर थे। पराशरेश्वर व्यासेश्वर के पूर्व में तथा उसके सामने अत्रि द्वारा स्थापित एक लिंग था। शंखलिखित व्यासेश्वर के पूर्व में शंख और लिखित द्वारा स्थापित दो शिव मंदिर विश्वेश्वर इनके दर्शन तथा पाशुपत व्रत से फल मिलता था। उस मंदिर के पूर्वोत्तर में अवधूत तीर्थ था। पशुपतीश्वर अवधूत तीर्थ से लगा हुआ पूर्व में पश्चिमाभिमुख चतुर्मुखलिंग था तथा उसके दक्षिण भूभाग में गोभिलऋषि द्वारा स्थापित पंचमुख शिवलिंग था। पश्चिम में विद्याधरपति जीमूतवाहन द्वारा स्थापित शिवलिंग था।

गभस्तीश्वर सूर्य द्वारा स्थापित पश्चान्मुख लिंग था उसके दक्षिण में दधिकर्ण हृद तथा उत्तर में एक कूप था जिस पर दधिकर्णेश्वर का मंदिर था। ललिता गभस्तीश्वर के उत्तर में उत्तराभिमुखी देवी थी जहाँ लोग जागरण करते थे, घर बनवाते थे। मूर्ति के आगे दीपदान करते थे, झाड़ू लगाते थे तथा ब्राह्मण और ब्राह्मणियों को भोजन कराते थे। वहीं मुखप्रेक्षणिका की मूर्ति थी, जिसकी माघमास की चतुर्थी को उपवास रखकर पूजा होती थी। वृत्रत्वाष्ट्रेश्वर मुख प्रेक्षा के उत्तर में था जहाँ त्रिरात्रि जागरण का फल था। चर्चिकाललिता के उत्तर में तथा उसके आगे रेवन्त द्वारा स्थापित पूर्वाभिमुख लिंग था। उसके आगे पश्चान्मुख पंचनदीश्वर थे। ललिता से लगा पूर्व में एक कूप था और उसके दक्षिण में पंचनद तीर्थ था। वहीं पर उपमन्यु द्वारा स्थापित

अनेक मुखों वाला लिंग था। उसी के पास पश्चिम में व्याघ्रपाद द्वारा प्रतिष्ठित लिंग था। विश्वकर्म और दूसरे गभस्तीश्वर के आगे थे। शशांकेश्वर कनकेश्वर के उत्तर में मुखलिंग था और उसके आगे इन्द्रद्वारा स्थापित लिंग, इन्द्रेश्वर के दक्षिण में रम्भा द्वारा स्थापित शिवलिंग तथा उत्तर में शचीद्वारा स्थापित लिंग थे। शचीश्वर के उत्तर भाग में लोकपालदेव, असुर, मरुत, यक्ष, नाग गंधर्व, किन्नर तथा अप्सराओं द्वारा स्थापित लिंग थे। दक्षिण में फाल्गुनेश्वर तथा महापशुपतेश्वर थे। समुद्रेश्वर महापशुपतेश्वर के दक्षिण में समुद्र द्वारा स्थापित लिंग था दक्षिण में ईशान पूर्व में लांगली थे वहीं नकुलीश का पूर्वाभिमुख लिंग चार पुरुषों से युक्त था। देवदेव इस लिंग के बारे में एक कथा दी हुई है। एक समय जब देवदेव का लिंग राक्षस आकाश मार्ग से ले जा रहे थे, विचारा लिंग सोचने लगा कि बिना अविमुक्त के उसकी गति संभव नहीं है। इतने में उस प्रदेश से कुकड़ूकूं की आवाज आयी जिसे सुनकर राक्षस भागे उन्होने लिंग वहीं छोड़ दिया और इसका नाम अविमुक्त पड़ा। उन दिनों भी उस मन्दिर में कुक्कुटों की पूजा होती थी। वाराहपुराण में मयूर को कुक्कुट कहा गया है। संस्कृत शब्दकोश में भी कुक्कुट नाम मयूर का है। (आपटे के कोश में भी) मन्दिर के दक्षिण भाग में एक वापी थी जिसके जल की रक्षा दंडपाणि पश्चिम में करते थे, पूर्व में तारक उत्तर में नंदीश और दक्षिण में महाकाल करते थे। प्रीतकेश्वर अविमुक्तेश्वर के आगे पश्चान्मुख लिंग था। अविमुक्तेश्वर के उत्तर में मोक्षेश्वर थे व उसके उत्तर में वरुणेश्वर का चतुर्मुख लिंग था। सुवर्णाक्षेश्वर वरुणेश्वर के पूर्व में मुखलिंग था। उसके उत्तर में गौरी दक्षिण में निकुंभ तथा पश्चिम में विनायक थे। विजयास्य निकुम्भ के पूर्व में थे। इसके दक्षिण में शुक्रेश्वर तथा उत्तर में देवयानी द्वारा स्थापित लिंग था। उसके आगे कचद्वारा स्थापित लिंग था जिसके पास ही एक कूप भी था।

पूर्व में अनारकेश्वर और गणेश्वर थे। रामेश्वर के दक्षिण में त्रिपुरांतक और दत्तात्रेय द्वारा प्रतिष्ठित लिंग, पश्चिम में हरिकेशेश्वर और गोकर्णेश्वर थे तथा उत्तर में एक तड़ाग था जिसके पश्चिम तटपर देवेश्वर थे और उनके सामने एक कुण्ड था। पिशाचेश्वर देवेश्वर के उत्तर में, उसके आगे ध्रुवेश्वर का मुखलिंग, उसके पश्चिम में एक कुण्ड पर वैद्यनाथ, नैर्ऋत्य भाग में मनु द्वारा स्थापित एक लिंग, पश्चिम में मुचकुंदेश्वर तथा दक्षिण में गौतमेश्वर और विभांडेश्वर थे। ऋष्यश्रृंगेश्वर विभाडेश्वर के दक्षिण में था। उसके पूर्व में ब्रह्मेश्वर तथा पश्चिम में परजन्येश्वर थे। नहुषेश्वर परजन्येश्वर के पूर्व में, उसके पूर्व में विशालाक्षी, दक्षिण में जरासंधेश्वर नामक जरासंध द्वारा स्थापित चतुर्मुखलिंग और ललितादेवी थी। हिरण्याक्षेश्वर जरासंधेश्वर के आगे मुखलिंग था जिसके दक्षिण में ययातीश्वर का मुखलिंग था। उसके पश्चिम ब्रह्मेश्वर के पास अगस्तेश्वर तथा उसी के पास विश्वावसु द्वारा स्थापित लिंग था। मंडेरा अगस्तेश्वर के पूर्व में तथा उसके दक्षिण में, दशाश्वमेधिक लिंग था उसी के उत्तर में नवमातृकाओं का मंदिर और कुण्ड था। पुलस्त्येश्वर अगस्तेश्वर के दक्षिण में तथा उसके दक्षिण

में पुष्पदंतेश्वर और बहुत से लिंग थे । उसके पूर्व में सिद्धेश्वर जिनकी पंचोपकार पूजा से सिद्धि मिलती थी । हरिश्चन्द्रेश्वर पूर्व में नैर्ऋतेश्वर दक्षिण में अंगिरेश और क्षेमेश्वर, कालंजर और लोलार्क, दुर्गादेवी लोलार्क के पश्चिम में, असितेश्वर दुर्गा के पश्चिम में था । वहीं अस्सी (शुष्कनदी) के नाम से शुष्केश्वर का मंदिर था । उसके पश्चिम में जनकेश्वर, उसके उत्तर शंकुकर्णेश्वर तथा एक कुण्ड पर स्थित सिद्धेश्वर थे । माण्डव्येश्वर शंकुकर्णेश्वर के वायव्य भाग में थे तथा उसके उत्तर में छागलेश्वर, पश्चिम में कपर्दीश्वर पूर्व में हरितेश्वर, दक्षिण में कात्यायनेश्वर तथा अंगारेश्वर थे । अंगारेश्वर पर एक कुण्ड था और उसके दक्षिण में मुकुटेश्वर कुण्ड के बगल में छागलेश्वर का मंदिर था ।

वाराणसी के लिंगो की इतनी विशद व्याख्या के बाद लिंगपुराण का कहना है कि वहां असंख्य लिंग थे । जिनका वर्णन असम्भव था केवल इतने ही सिद्ध लिंगो, कूपों, ह्रदो, वापियो, नदियों का वर्णन कर दिया गया, जिनके स्पर्श से ही मुक्ति मिलती थी ।

चतुर्दशआयतन :- यात्री वरणा में स्नान करके पहले शैलेश का दर्शन करता था । संगम पर स्नान और संगमेश्वर का दर्शन, स्वर्लीन में स्नान और स्वर्लीनेश्वर का दर्शन कर, गंगा में स्नान और मध्यमेश्वर का दर्शन, हिरण्यगर्भ में स्नान और हिरण्यगर्भेश्वर का दर्शन, मणिकर्णिका में स्नान और ईशानेश्वर का दर्शन, कूपजल स्पर्श करके गोप्रेक्षेश्वर का दर्शन तथा कपिलह्रद में स्नान करके वृषभध्वज का दर्शन, उसके बाद उपशांत के कूप का जलस्पर्श, पुचचूड़ा ह्रद में स्नान तथा ज्येष्ठवापी में स्नान कर अर्चन, चतुःसमुद्रकूप में स्नान, देवी की पूजा तथा उसके आगे के कूप का जल स्पर्श, शुद्धेश्वर का दर्शन दंडखात में स्नान, व्यासेश की पूजा, शौनकेश्वर कुण्ड में स्नान तथा जंबुकेश्वर की पूजा कृष्णप्रतिपदा से लेकर चतुर्दशी तक होती थी। पंचायतन शिव का कहना है कि जो पंचायतन वाराणसी के उत्तर में स्थित था बहुत प्रिय था। यहाँ धर्मनिष्ठ एकांतवासी ब्राह्मण रहते थे । इनमें ओंकार की मूर्ति दिव्वय थी । अविमुक्त स्वर्लीन और मध्यमेश्वर को त्रिकंटक कहा गया है । ईश्वर षडंग माने गये है । अष्टायतन लांगलीश, आषाढ़ीश, भारभूत, त्रिपुरांतक, नकुलीश, त्र्यंबक, अविमुक्त, देवदेव लिंग है ।

चैत्रमास में कामकुण्ड में स्नान और पूजन, वैशाखमास में विमलेश्वरकुण्ड में स्नान और पूजन, ज्येष्ठमास में रुद्रवासकुण्ड में स्नान और पूजन, आषाढ़ में श्रीकुण्ड में स्नान और पूजन, श्रावण में लक्ष्मीकुण्ड में स्नान और पूजन, आश्विन में कपिलह्रद और मार्कण्डेयह्रद में स्नान और पूजन, मार्गशीर्ष में कपालमोचन में स्नान और पूजन, पौष में गुह्यकों की यात्रा, माघ में धनदेश्वर कुण्ड तथा कोटितीर्थ में स्नान और पूजन तथा फाल्गुन १४ को पिशाची चतुर्दशी पड़ती थी, यात्रा में मिष्ठान्न सहित उदकभांड के दान का आदेश था । गौरी की पूजा फाल्गुन शुक्लपक्ष तृतिया के दिन स्नान के बाद गोप्रेक्ष का दर्शन, उसके बाद कालिकादेवी की पूजा,

ज्येष्ठस्थान में गौरी और ललिता की पूजा, ललिता के स्थान में ब्राह्मण भोजन, वस्त्र तथा दक्षिणा का विधान था। पहले ढुंढिराज विनायक फिर क्रमशः कोणविनायक, देवढ़िविनायक, गोप्रेक्ष के हस्तीविनायक और सिन्दुरविनायक के दर्शन तथा यहाँ ब्राह्मणों को लड्डू देने की विधि थी। क्षेत्ररक्षित चंडिकाएँ दक्षिण में दुर्गा, नैर्ऋत्य में उत्तरेश्वरी, पश्चिम में अंगारेशी, वायव्य में भद्रकाली, उत्तर में भीमचण्डी तथा महामुण्डा ऊर्ध्वकेशी और शांकरी सब जगह थी तथा चित्रघंटा मध्य में वाराणसी में थी। शिवलिंगों के उपर्युक्त वर्णन में तीर्थ माहात्म्य के सिवाय और भी बातें आयी है जिनसे तत्कालीन वाराणसी के शैव धर्म पर प्रकाश पड़ता है। लिंगो की स्थापना का श्रेय तो अधिकतर देवी, देवताओं, किन्नरों, राक्षसों, अपसराओं, ऋषियों इत्यादि को दिया गया है, परन्तु लिंगपुराण में अनेक ऐसे उल्लेख हैं जिनसे वाराणसी के पाशुपत सिद्धों के नाम आये है। वरणेश्वर के मंदिर में पाशुपत अश्वपाद को सिद्धि मिली (पृष्ठ ५३) तथा उसी प्रकार विमलीश के सान्निध्य में (पृष्ठ ५६) पाशुपतसिद्ध त्र्यंबक को (पृष्ठ ५६), कपिलेश्वर के नीचे एक गुहा थी जिसमें सम्भवतः पाशुपतगण तप करते थे (पृष्ठ ५७) उद्दालकेश्वर के आसपास वाश्कलि और पाशुपतभव सिद्ध रहते थे (पृष्ठ ५६-६०) तथा अरुणौश के पास योगसिद्ध (पृष्ठ ६०) पाशुपतों की दृष्टि से कपिलेश्वर मंदिर विशेष महत्व का था। कपिलेश्वर के आसपास कौस्तुभ और सावर्णि को सिद्धि मिली। उसी के नीचे श्रीमुखी नाम की गुहा थी जिसमें पाशुपत रहते थे। यहाँ पाशुपत अघोर को सिद्धि मिली (पृष्ठ ६०-६१) दृमिचण्डेश्वर के सान्निध्य में पाशुपतकौथुमी को ज्ञान प्राप्त हुआ। कालेश्वर के पास पिंगाक्ष नामक पाशुपत रहते थे (पृष्ठ ७२) कृत्तिवासेश्वर पाशुपतों का अड्डा था (पृष्ठ ७७) सिद्धकूप में पाशुपत जप-तप में निरत रहते थे। कुछ अजीब शैव-क्रियाओं का भी उल्लेख आया है। कोटीश्वर के आग्नेय दिशा में श्मशानस्तम्भ था जहाँ मनुष्य अपने दुष्कृत्यों को तज देते थे (पृष्ठ ५४) कालेश्वर में शिवभक्त त्रिशूल का दाग लेते थे तथा देवदेव के मंदिर में कुक्कुटों की पूजा होती थी (पृष्ठ १०६) वाराणसी में अग्निपात का तो अनेक वार उल्लेख हुआ हैं। १६ वीं सदी तक यह क्रिया वाराणसी में विद्यमान थी। लक्ष्मीधर ने इस अग्निपात का विधिपूर्वक वर्णन किया है (पृष्ठ २५८)। वायुपुराण के अनुसार जो ब्राह्मण निम्नलिखित मंत्र का ध्यान करके अग्निप्रवेश करता था उसे रुद्रलोक की प्राप्ति होती थी।

त्वमग्ने रुद्रस्त्वं सुधामहोदधिस्त्वं सर्वेमारुताक्षि प्रमीयरे।
त्वं वातैर्यासि सगरीयस्त्वं प्रस्थिमायी रूपः पातयन् माम् ।।

देवीपुराण के अनुसार अग्निपात के पहले शिवरूप भैरव की पूजा होती थी तथा भैरव का चित्रपट बनाया जाता था। उनकी पचीस भुजाएँ होती थी। जिनमें खंग, खेटक, शूल, चक्र, गजचर्म, खट्वांग, वज्र तथा डमरु होते थे वे दन्तुर और त्रिलोचन होते थे और नाना शिव और शिवाओं से घिरे होते थे। नागराज छुरी की जगह, उपवीत की जगह, जटाबन्ध में कुटिल तथा

कंकण की जगह शंखपाल होते थे । तक्षक और पद्मराग केयूर का काम देते थे । पद्म और कर्कोटक नूपुर का । इसके दोनों ओर गजमुख और हस्तिमुखवाले शूलधारी पुरुष होते थे और दो आयुध पुरुषों में एक के हाथ में कपाल और शूल, दूसरे के हाथ में उत्पल और अंकुश होते थे। ब्रह्मा और विष्णु उनके सेवक होते थे और उनका रूप अंधकासुर जैसा होता था, उसकी पूजा करने के बाद वीर आठ प्रकार से अपने को अग्नि में होम देता था ।

(१) पतंगपात- इसमें पतंगे की तरह वीर आग में गिरता था । (२) हंसपात- हंस की तरह दोनों बगलें सिकोड़कर अग्निपात । (३) मृगपात- मृग जैसे समपाद होकर अंधेगढ़े को पार करता हैं । (४) मूसल- जैसे ओखल में मूसल गिरता है । (५) शाखापात । (६) विमानपात । (७) वृष की तरह हंकारते हुए अग्निपात । (८) सिंहपात- सिंह जैसे गजेन्द्र को मारकर तनता है, उसी तरह तनकर अग्निपात । स्त्रियों को भी अग्निपात का अधिकार था । यह भी कहा गया है कि भैरव वैष्णव के अस्थि की माला तथा शांभव कंबुक धारण करते थे । इनकी पूजा घर, पर्वत, नदी और विन्ध्याचल के सान्निध्य में विहित थी । इनके लिये मठ, कूप और आरामघर बनवाये जाते थे । विष्णुस्मृति (३०।६) में तीर्थयात्रा का फल अश्वमेधयज्ञ के समान माना गया है। विष्णु (५।१३१) पुष्करादि तीर्थो में यज्ञ, तप, पिण्ड और श्राद्ध की महत्ता बतलाई गयी है तथा गंगाजल (विष्णु ५३।१७) की सर्वश्रेष्ठता स्वीकार की गई । विष्णुस्मृति (१६।१०।१२) में गंगा तथा कुरुक्षेत्र की यात्रा पुण्यदायिनी कही गई है । वृहस्पतिस्मृति 'तथा याज्ञवल्क्यस्मृति ने गयाश्राद्ध के महत्वपर बल दिया है । आश्वलायन (१२।६ और लाट्यायन १०।१५ इत्यादि) श्रौतसूत्र (२४।१०) के अनुसार सत्र समाप्ति के बाद यमुना अथवा कारपचा में स्नान फलदायक बतलाया गया है । तीर्थयात्रा के सम्बन्ध में सबसे पहले उल्लेखों का चयन लक्ष्मीधर ने किया है । लक्ष्मीधर ने तीर्थ विवेचन खण्ड में पृष्ठ ३४,५८,६६ पर उल्लेख किया है कि शुष्कनदी अस्सी पिंगला नाड़ी वरणा इला नाड़ी तथा दोनों के बीच मत्स्योदरी सुषुम्नानाड़ी है । मित्रमिश्र द्वारा उद्धृत काशीखंड (पृष्ठ २४) में मत्स्योदरी को बहिरन्तरश्चरी कहा है । मत्स्याकार काशी के गर्भ में अवस्थित मत्स्योदरी और गंगा के संगम पर स्नान मोक्षदायक है । अग्निपुराण (३५-२०) में अस्सी नदी को नासी कहा महाभारत (८२।६९-७०) आरण्यकपर्व से पता चलता है । वृषभध्वज की पूजा तीर्थ कपिलहृद कपिलधारा में स्नान से राजसूय यज्ञ का पुण्य होता था ।

गंगा-गोमती के संगम पर स्थित मारकण्डेयतीर्थ की यात्रा का भी उल्लेख है अथर्ववेद में। ४।७।१ वरणावती नदी का उल्लेख है । उसे लुडविग ने गंगा माना था । मत्स्यपुराण (अ. २८७) में सप्तसागर पर दान का महत्व बतलाया है । ७वीं सदी में युवान चुवाङ् ने भी यह बात परिलक्षित की कि वाराणसी शैवधर्म का केन्द्र हैं । काशीखंड में जिस स्थान का नाम हरिकेक्षवन है वहीं शैवसिद्धान्त वीर-शैव पुरुषों का वर्णन वेद-उपनिषद्-पुराण आदि में मिलता है । वीरशैवमत के मूलरेणुकादिपंचाचार्य तथा वीरभद्र आदि शिवजी के गण हैं । अष्टादश पुराणों के

कर्ता भगवान् व्यासजी ने स्कन्दपुराणान्तर्गत शंकरसंहिता में वीरशैवमत का वर्णन विस्तार से किया है तथा स्कन्दपुराण के महेश्वर खण्डान्तर्गत केदारनाथ के सप्तम अध्याय में कहा है -

सन्ति रुद्रेण कथिताः शिवधर्माः सनातनाः ।
वीरभद्रो यथारुद्रस्तथान्ये गुरवः स्मृताः ।।३८ ।।
लिङ्गस्य महिमानं तु नन्दी जानाति तत्त्वतः ।
तथा स्कन्दो हि भगवानन्ये ते नामधारकाः ।
शैलादेन महाभागा विचित्रालिङ्गधारकाः ।
देहस्योपरि लिङ्गश्च ध्रियते च पुरातनैः ।।४१ ।।
लिङ्गेन सहः पञ्चत्वं लिङ्गेन सह जीवनम् ।
एते धर्माः सुप्रतिष्ठाः शैलादेन महात्मना ।।४२ ।।
धर्मः पाशुपतः श्रेष्ठः स्कन्देन प्रतिपालितः ।।४३ ।।
(आज के नगर विशेषांक से ७।१२।१९५० ई० के) ।

अर्थात् श्री रुद्रभगवान् के कथनानुसार लिंगधारणादि शिवधर्म सनातन है । वीरभद्र, नन्दी, सन्दि आदि प्रमथों से शिवमत का विस्तार हुआ हैं । वीरशैवमत के लोग सदा शिवलिंग धारण करते है और ये लिंगधारणादिधर्म, वेद आदि शास्त्रों में प्रतिपादित हैं । इससे स्पष्ट है कि श्री विश्वाराध्यजी का यह स्थान जंगम ज्ञानमठ अनादि है । इस प्रकार के अनेक शास्त्र प्रमाणों के अतिरिक्त इस मठ की प्राचीनता के बारे में अनेक ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध है । शैव और वीरशैवमत की प्राचीनता तथा व्यापकता के विषय में भी कुछ ऐतिहासिक तथ्य एवं मठाधीशों की महत्ता के विषय में विवरण दिये गये हैं । जिसमें कुछ प्रामाणिक अंग्रेजी पुस्तकों का उल्लेख निम्नलिखित है :- (१) वैष्णबीजम शैविजम् एण्ड मैजर रिलीजयस सिस्टम्स वाय् थण्डार । (२) रिलीजियस् क्वेस्ट आफ् इण्डिया वाय् थर्स्टन । (३) गजेडियर आफ् बनारस वाय् एच् आर् नेविल । I.C.S.F.R.C.S.F.S.S.M.R.A.S.

जिसमें निम्नलिखित प्रमाण हैं कि औरंगजेब काशी आकर जब जंगममठ की ओर आकृष्ठ होकर वहां गया तो वहां के महंत ने आश्चर्य दिखाया जो औरंगजेब ने अपनी आखों से देखा कि वह उड़कर नेपाल स्थित अपने मठ पहुँच गये । यह घटना देखकर वगैर मठ को क्षति पहुँचाये वह वापस चला गया । पीछे लिखे श्लोकों के अनुसार उक्त वीरभद्र शैलाद (नन्दी) और स्कन्द वीर शैवों के गोत्र पुरुषों में से हैं । वीरशैव गणगोत्रज हैं । वीर, नन्दि, भृंगी, वृषभ, स्कन्द ये ही पांच शिवगण इनके गोत्रपुरुष है । वीरशैवमत के संस्थापक पंचाचार्य माने गये है । प्रत्येक

युग में शिवजी की आज्ञानुसार इस भूलोक में शिवलिंगो से अवतार लेकर शिव-सिद्धान्त तथा शिवभक्ति का प्रचार करते आये हैं। क्रमशः इनके नाम ये है- (१) रेणुकाचार्य (२) दारुकाचार्य (३) एकोरामाध्याचार्य या घण्टाकर्ण (४) पं० राध्याचार्य या धेनुकर्ण (५) विश्वाराध्याचार्य या विश्वकर्ण। इनके युगान्तरीय नाम भी भिन्न-भिन्न हैं। इन्होने वीरशैवसिद्धान्त की रक्षा के लिए भारतवर्ष के विभिन्न शिवक्षेत्रों में पाँच धर्मपीठों की स्थापना की। रेणुकाचार्य जी का वीरपीठ मलयपर्वत के समीप भद्रानदी के तीर पर कर्नाटक में रम्भापुरी में है। एकोरामाराध्य जी का वैराग्यपीठ हिमवत्केदार के उषामठ में हैं, जिसे उस प्रांत के लोग केदारनाथ रावल् की गद्दी कहते हैं। श्री केदारनाथ के रावल् (महंत) वीरशैव पंचाचार्यो में से एक महान् आचार्य है। भगवान श्री पं० राध्यजी की सूर्यपीठ शैलक्षेत्र में स्थित है। विश्वाराध्य जी का ज्ञानपीठ काशी में जंगममठ हैं। उपरोक्त पर्यालोचना से ही सिद्ध होता है कि वीरशैवमत प्राचीनकाल से समस्त भारत भर में व्याप्त था। महाभारत के समय में वीरशैवमत विशेषतः महापाशुपत या पाशुपत नाम से भी व्याप्त था। उत्तर में बौद्धों और वैष्णवों की प्रबलता से वीरशैवों की हर तरह से भारी क्षति हुई और उनकी संख्या प्रतिदिन घटती ही गई। जो शेष थे वह दक्षीण में जा बसे। इसलिए आजकल दक्षिण में ही शैव लोग विशेषतः पाये जाते हैं। अब भी शैवमत के लोग करोड़ो की संख्या में है और वे महाराष्ट्र-मद्रास-कर्नाटक-आंध्र-मध्य भारत आदि प्रदेशों में रहते हैं। वीरशैवसिद्धान्तशक्ति विशिष्टाद्वैत है। द्वैताद्वैत-शिवाद्वैत-विशेषद्वैत आदि नाम भी उसी के है। वीरशैवमत शिवोक्त अप्राकृत वर्णाश्रमों से आबद्ध है।

"श्रुतिस्तु द्विविधा वैदिकी तान्त्रिकी च" इस हारीत महर्षि के कथनानुसार कामिकादि शिवागमों को भी 'श्रुति' संज्ञा दी गयी है। शिवागमों और सिद्धान्त शिखामणि में वर्णाश्रम व्यवस्था दो प्रकार की कही गई है।

वर्णाश्रमादि धर्माणां व्यवस्थाहि द्विधा मता ।।
एका शिवेन निर्दिष्टा ब्रह्मणा कथिता परा ।। ३५ ।।
शिवोक्तधर्मनिष्ठा तु शिवा श्रमनिषेविणाम् ।
शिवसंस्कारहीनानां धर्मः पैतामहः स्मृतः ।। ३६ ।।
(सिद्धा० शि० प० १०)

ब्राह्मणा वीरशैवस्थाः शिखायज्ञोपवीतिनः ।
लिङ्गरुद्राक्षभस्माङ्गा ब्रह्मकर्म समाश्रिताः ।। ६ ।।
(पारमेश्वरागम० प० १७)

उपरोक्त आधारों से स्पष्ट है कि वीरशैवों में वर्णव्यवस्था अनादिकाल से चली आ रही है। वीरशैव लोग शिवभक्ति में और आचार-विचार में दृढ़ होते है, इनकी वीरता के साथ विद्वेष करने मे कदापी नहीं । वीरशैव शब्द के निर्वचन के स्थल में शिवागमों में कहा गया है कि 'भवत्यावीरोन वैरेण' अर्थात् वे नवधा भक्ति निवाहने में वीर हैं । भक्ति के आवेश में प्राणों तक न्योछावर कर देते है, इसलिए वीर है वैर से नहीं । अतः खान-पान में भी वीरशैवों का कट्टर होना स्वाभाविक हैं । कामिकादि शिवागम, सिद्धान्तशिखामणि, श्रीकर भाष्य, नीलकण्ठ भाष्य, क्रियासार, शिवाद्वैतमंजरी, लिंगधारण चन्द्रिका आदि वीरशैवों के प्रामाणिक प्राचीन मत ग्रन्थ हैं। पंचाचार्यों का अत्यन्त विस्तृत वर्णन पारमेश्वरागम स्वायम्भुवागम पाशुपततन्त्र आदि में हैं ।

काशी विश्वाराध्यजी का वर्णन इस प्रकार है- "काश्याँ विश्वेश्वरे लिंगे विश्वाराध्यस्य सम्भवः, स्थानं श्री काशिका क्षेत्रे श्रृणु पार्वति सादरम् ।। ० ।। (स्वयम्भुवागम) स्कन्द गोत्राधिनाथश्च महासिंहासनाग्रणीः । विश्वाराध्य इति ख्यातो जगदगुरुतमश्च सः ।। ० ।। (सुप्रबोधागम) जंगमवाड़ीमठ वीरशैव सम्प्रदायका है ।

वीरशैवमत के प्रतिपादक स्वयं भगवान शंकर थे ऐसा कहा जाता है । इस कथन एवं मान्यता के सम्बन्ध में अनेक बातें कही जाती हैं । इस मत की प्राचीनता के सम्बन्ध में हिन्दू धर्म के प्रामाणिक ग्रन्थों में जो उल्लेख किये गये हैं वे वीर शैवमत को शिव की भाँति ही अनादि बताते हैं । कुछ विद्वान् तो इसे महाभारत काल के पाशुपत मत का ही एक रूप बताते हैं । भविष्य कथन के रूप में महाभारत में भी शिवभक्तलिंगियों की चर्चा हैं । जिसके अनुसार सिद्ध होता है कि सतयुग में भी शेवमताबलम्बी कम न थे । काशीखण्ड में भी दुर्वासाजी के आगमन की चर्चा में शैवों तथा पाशुपतों का उल्लेख हुआ हैं । महाभारत के पूर्व में ही शिव भागवत् शब्द का प्रयोग आता है । वैशेषिक सूत्रों के भाष्य में कहा गया है कि महर्षि कणाद भी शिव आराधक थे । कुशाणवंशीय एक राजा के सिक्के में भी एक ओर त्रिशूलधारी शिव और नंदी का चित्र है । राजा को माहेश्वर सम्प्रदाय का कहा गया है । वाराहमिहिर की बृहत्संहिता में भी शिवपूजा प्राधान्य का वर्णन है । चीनी यात्री ह्वेनच्यांग के यात्रा विवरण में भी १२ स्थानों पर पाशुपतों का शैवों का वर्णन आया है । कवियों में कालिदास, सुबन्धु, बाण, श्रीहर्ष, भवभूति आदि ने भी अपने ग्रन्थों के आरम्भ में भगवान शंकर की ही वंदना की है । पुरातत्व वेत्ताओं का कहना है लिंग पूजा किसी समय ईसा के पूर्व संसार का व्यापक धर्म था । यही नहीं, आज जिन-जिन देशों में इसाई धर्म की प्रमुखता है वहाँ भी गत दो तीन हजार वर्षो के भीतर शिवलिंग की पूजा विद्यमान थी । इटली, फ्रांस, अमेरिका में न्यूनाधिक भेद के साथ शिवलिंग की पूजा होती थी । श्याम और बाली में तो अबतक व्यापक शिवोपासना मौजूद है । मक्के में तो आज भी मुहम्मद साहब द्वारा स्थापित शिवलिंग विद्यमान है । इस प्रकार इतिहास और पुराणों को देखने पर जान पड़ता है कि शिवपूजा-शैवमत किसी समय जगद्व्यापी था और एक समय तो भारत में शैवो की संख्या २० करोड़ तथा वीरशैवों की तीन करोड़ थी । शैवो की वर्णव्यवस्था भी मानी जाती है ।

इनके चार भेद मुख्य है । सामान्य, शैव, मिश्रशैव तथा वीरशैव । वीरशैव में जो ब्राह्मण है उन्हे ही जंगम कहा गया है । इस प्रकार जंगमबाड़ी मठ जंगमो का है । वीरशैवों की विशेषता यह है कि वे अपने शरीर पर बराबर शिवलिंग धारण किये रहते है । इनका विश्वास है कि जगत् के ३६ तत्वों का क्रिया विलास पंचब्रह्म रूप शिव की ही लीला है । शास्त्रों, आगमों में भगवान शिव के ही पाँचों मुखों से इनके पंचाचार्यो का अवतार बताया जाता है । ये पंचाचार्यो को अनादि मानते है । इनका विश्वास है कि हर युग में ये आचार्य अवतार लेते हैं । इसी मत के श्री केदारनाथजी में एकोरामाराध्यजी भगवान के अघोररूप बतलाये गये हैं । वह द्राक्षाराम क्षेत्र में रामनाथ लिंग से प्रकट हुए । श्री शैलके मल्लिकार्जुन लिंग से भगवान् के तत्पुरूष रूप हैं पं० ताराध्यजी प्रकट हुए और काशी के विश्वनाथ लिंग से ईशानरूप विश्वाराध्यजी प्रकट हुए । इन्हीं पाँचों स्थानों में पांचमठ स्थापित हैं । यो तो काशी में और भी अनेक मठ हैं जिनकी महानता और प्राचीनता कुछ कम उल्लेखनीय नहीं बल्कि लोगों का कहना है, कि जंगममठ एक स्वयं संस्थान है ।

जंगमवाड़ीमठ के पश्चिम में हरीकेश्वर नाम का शिवलिंग स्थित हैं वहीं समीप में एकनाला था उसी के चारों ओर घना हरिकेश नाम का वन था । जहाँ रोहिताश्व को सांप ने काटा था । अब वह बउलिया नाम का स्थान छोटे से मैदान के रूप में पड़ा हुआ है । यही रोहिताश्व को सांप ने काटा था । इस स्थान के अतिरिक्त मठ में नरेशों द्वारा दिये गये दानपत्रों का भी एक महत्वपूर्ण संग्रह है । जिन्हे देखकर यह स्वीकार करना पड़ता है कि जंगमवाड़ी मठ प्राचीन है । १४ सौ वर्ष पूर्व सन् ५७४ का एक दानशासन आज भी मठ मे सुरक्षित है जिस पर काशी के तत्कालीन शासक श्री जयनन्ददेव का दानपत्र अंकित है जिसमें अब काशी हिन्दूविश्वविद्यालय स्थित है । इस दानशासन की एक विशेषता यह भी है कि यह दानपत्र एक फ्रेम में मढ़ा हुआ है जो मठ में सुरक्षित है जिसे महाराजा प्रभुनारायण सिंह ने लिखवाया है । इस मठ में हुमायूं, अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, औरंगजेब तथा मुहम्मदशाह द्वारा समय समय पर मठ को दिये गये दानपत्र भी अपने मौलिक रूप में जीर्ण-शीर्ण अवस्था में रखे हुए है । बनारस गजेटियर में पृष्ठ १२३ पर भी इन फरमानों का उल्लेख है । इस मठ को दिये गये भूमिदान का उल्लेख है । हुमायूं के द्वारा ३०० बीघा जमीन चुनार में मठ को दान की गई थी । उनके बाद सभी मुगलबादशाहों ने इस फरमान को माना है और उसी के आधार पर नए फरमान भी दिये बादशाहों के दानपत्र १५३० से १७४८ ई० के हैं । हुमायूं के बाद अकबर ने ४८० बीघा भूमि दी अकबर के तीन फरमान यहाँ है । जहाँगीर के समय के भी दो फ़रमान हैं । शाहजहाँ के समय के १६ फरमान है । औरंगजेब द्वारा मंदिरों को ध्वंस किये गये स्थानों को देखने और नये मठ मन्दिरों को तुड़वाने के ख्यालात को लेकर जंगमबाड़ीमठ पहुँचा । किन्तु प्रवेश करते ही उसे लगा कोई भीमकाय काछालाल-लाल नेत्रों से निगलने के लिए उसकी ओर निहार रही है । सैन्यबल से सुसज्जित सम्राट औरंगजेब काँप उठा और बाहर आकर मठ ध्वंस

का विचार त्याग कर उसने भी भूमिदान की असली हस्ताक्षर युक्त पत्र आज तक मठ में सुरक्षित है जिसमें यह सब लिखा हैं। मठ में रखे हुए उपर्युक्त दानपत्रों के अतिरिक्त अन्यदर्शनीय वस्तुओं में वह स्थान भी है जहाँ पीठ के प्रथम आचार्य ने उपदेश प्रदान किया था। नए मठाधीशों को शिष्यारोहण पर सिंहासनारूढ़ कराकर फिर उस स्थान की पूजा की जाति है। इस पीठ के अबतक ८४ आचार्य महन्त हो चुके हैं। यह मठ दर्शनार्थ शिवरात्रि पर सबके लिए खोल दिया जाता है। दैनिक आज नगर विशेषांक ७,१२-१९५० ई०।

(काशी खण्डोक्त देव तीर्थ)

(क)

१. कलशकूप- सिद्धेश्वरी मोहाल कलशेस्वर की ब्रह्मपुरी।

२. कालगंगा- कलशेस्वर के सामने काललिंग के समीप लुप्त, स्नान से प्राणि निष्पाप हो।

३. कमलाश्वतर तीर्थ- मणिकर्णिका के पास लुप्त, स्नान से गीत विद्या में विशारद हो।

४. कालकूप- कालदण्ड मन्दिर में स्नान से काल और कलि का भय दूर हो।

५. कामकुण्ड- मच्छोदरी के पूरब लुप्त, स्नान कामेश्वर पूजा से सभी कामना पूर्ण हो।

६. कपालमोचन कुण्ड- लाटभैरव मोहाल अलईपुर।

७. कालोदककूप- वृद्धकाल स्नान से जरा व्याधि कुष्ठ विस्फोटक, विचचिंका हरे। शूल, प्रमेह, प्रवाहिका, अग्निमान्ध, मूत्रकृच्छ, भूतप्रेत, विषम ज्वर निवारण।

८. कायारोहणतीर्थ- लुप्त।

९. कर्णादित्य तीर्थ- लुप्त स्नान से प्राणी सूर्यकान्ति को प्राप्त हो।

१०. कण्वेश्वर कूप- लुप्त।

११. कर्णिकार तीर्थ- लुप्त।

१२. कर्दम कूप- पंचक्रोशी कंदवा में।

१३. कर्कोटक तीर्थ- नागकुआँ, स्नान से सर्पविष निवारण हो प्रसिद्ध।

१४. कपालेश तीर्थ- अश्वमेध फल लुप्त।

१५. कपिलधारा तीर्थ- कपिलधारा प्रसिद्ध, १ सत्ययुग में दुग्धमयी, २ त्रेता में मधुमयी, ३ द्वापर में घृतमयी, ४ कलियुग में जलमयी। पिण्डदान से पितृमोक्ष।

१६. कोटि तीर्थ- कोटि गोदान फल, साक्षी विनायक के समीप लुप्त।

१७. कुरुक्षेत्र तीर्थ- सूर्यग्रहण स्नान फल, अस्सी।

१८. कोकावाराह तीर्थ- लोलार्क के पास लुप्त, स्नान से पुनर्जन्म नही।

१९. केदार कुण्ड- भौमवती विशेषफल, केदारघाट स्नान से महापाप पुंज का नाश।

२०. क्रिमी कुण्ड- किनाराम का स्थल, भदैनी स्नान से गर्भदोष जाय।

२१. कनाद्र तीर्थ- शीतलाघाट के नीचे राजमंन्दिर।

२२. कर्दम तीर्थ- पंचक्रोशी कंदवा में

२३. कल तीर्थ- कलशेश्वर के समीप लुप्त।

(ख)

२४. खुर्तरी तीर्थ- लुप्त, स्नान से पाप से छूट कर गोलोक वास होता है।

२५. खर्वनृसिंह तीर्थ- लुप्त, स्नान से पुरुष को पाप का भय नहीं रहता है।

२६. खिनाग कुण्ड- लुप्त।

२७. खुड चुण्डवापी- लुप्त।

(ग)

२८. गारुत्मतीर्थ- मिश्रपोखरा लुप्त, स्नान से संसाररूपी गरल का नाशकर वैकुण्ठ वास हो।

२९. गोपी गोविन्द तीर्थ- लालघाट लुप्त, स्नान से म० गर्भपीड़ा कभी न हो।

३०. गोप्रेक्ष तीर्थ- गायघाट लुप्त, स्नान से गोलोक प्राप्त हो।

३१. गंगा सागर तीर्थ- वरणा संगम।

३२. गोदावरी तीर्थ- गोदौलिया लुप्त।

३३. गंगाकेशव तीर्थ- ललिता घाट, गंगा में काशीपुरी।

३४. गोब्याघ्र तीर्थ- दशाश्वमेध शीतला के नीचे लुप्त, स्नान से सिद्धि प्राप्त।

३५. गरुड़ तीर्थ- जंगमबाड़ी तेलियाना लुप्त, स्नान से मनुष्य शोचमुक्त हो।

३६. गज तीर्थ- लुप्त, भदैनी, स्नान से गजदान का फल हो।

३७. गदा तीर्थ- लुप्त गायघाट, स्नान से गदरोग का नाश गदाधर का दर्शन हो।

३८. गभस्तिमालिका तीर्थ- स्नान से मनुष्य विमल हो जाता है।

३९. गंधर्व कुण्ड- भीमचंडी।

४०. गौतम कुण्ड- बड़ादेव पर लुप्त, स्नान से मनुष्य पश्चाताप से मुक्त हो।

४१. गौरी कुण्ड- केदारघाट, स्नान से भैरवगणों के भय से मुक्त हो।

४२. गोकर्ण कूप- कोदई की चौकी देलु की गली लुप्त, पापनाशक।

४३. गोंप्रतार तीर्थ- लुप्त, स्नान से मनुष्य घोर पापी वैतरणी पार हो जाते हैं।

(घ)

४४. घन्टाकर्ण तीर्थ- मो० कर्णघन्टा, काशीमृत्यु प्राप्त।

(च)

४५. चतुस्सागर वापी- काशीपुरा का कुआं, स्नान से सभी सागरों में स्नान फल प्राप्त।

४६. चौरतीर्थ- ओंकार समीप लुप्त, स्नान से सुवर्ण चौर्यादिक पापों का क्षय हो।

४७. चक्र तीर्थ- स्नान से शिवलोक प्राप्त, मनुष्य संसारचक्र में नहीं गिरने पाता, शाश्त्रीनगर।

४८. चक्रपुष्कर्णि कुण्ड- मणिकर्णिका कुण्ड स्नान से विशेष फल। शाश्त्रीनगर।

४९. चण्डेश्वर कुण्ड- कालिकागली लुप्त।

५०. चूड़ामणि कूप- रत्नेश्वर के समीप स्नान से रत्नों की प्राप्ति हो।

५१. चित्रकूप- चित्रघन्टा की गली सी.के. २३/३४।

५२. चन्द्रतीर्थ- सिद्धेश्वरी चन्द्रग्रहण स्नानफल श्राद्ध से चंद्रलोक प्राप्त सी.के. ७/१२४।

५३. चित्ररथेश्वर तीर्थ- लुप्त रेशमकटरा स्नान से चित्रगुप्त उस मनुष्य की ओर दृष्टि नहीं रखते।

(छ)

५४. छशांकेश कुण्ड- लुप्त।

(ज)

५५. जरासंधेश तीर्थ- मीरघाट गंगा में स्नान से संसार ज्वर पीड़ा से मोहित नहीं होता।

५६. जानकी कुण्ड- लुप्त, दूसरा लक्सा सीताकुण्ड नाम से प्रसिद्ध।

५७. ज्येष्ठा वापी- काशीपुरा लुप्त।

(त)

५८. ताम्रवराह तीर्थ- नीलकंठ समीप लुप्त, स्नान से प्राणी को संसार सागर में नहीं डूबना पड़ता।

५९. तार्क्ष तीर्थ- लुप्त आदि केशव के सामने।

६०. तारक तीर्थ- लुप्त तारकेश्वर समीप ज्ञानवापी, संसार सागर से पार होकर पितरों को तार देता है।

६१. तुंगेश्वर कुण्ड- लुप्त, वृद्धकाल के घेरे में।

६२. ताम्र कुण्ड- लुप्त।

६३. तारकुण्ड- ओंकारेश्वर समीप लुप्त, पठानीटोला।

६४. तक्षक कूप- कबीरचौरा औघड़नाथ के तकिया समीप, स्नान से सर्पभय जाय।

(द)

६५. दिवोदास तीर्थ- मीरघाट धर्मकूप लुप्त, स्नान से मनुष्य अन्तकाल में ज्ञान हीन न हो।

६६. दुर्वासा तीर्थ- लुप्त।

६७. दारकेश तीर्थ- लुप्त दारानगर स्नान से दारुण क्लेश का नाश हो।

६८. दिलीप तीर्थ- इष्टफल की प्राप्ति, स्नान से तुरन्त पाप नाश हो लुप्त।

६९. दशाश्वमेध तीर्थ- प्रसिद्ध ज्येष्ठ शु० १ से १० तक स्नान से दस अश्वमेध यज्ञफल हो।

७०. दत्तात्रेय तीर्थ- वरनाघाट आदिकेशव समीप, गंगाजी में स्नान से योग सिद्धि प्राप्त हो।

७१. द्वारावती तीर्थ- खोजवां शंकुधारा।

७२. दधिकल्प कुण्ड- राजमंदिर शीतलाघाट गंगा में।

७३. दुर्गा कुण्ड- प्रसिद्ध नवरात्र स्नानफल दुर्गाजी।

७४. दण्डखात तीर्थ- लुप्त पियाला शहीद का कुण्ड।

(ध)

७५. धर्मतीर्थ- मीरघाट धर्मकूप में अवलोकन फल, तीर्थ स्नान से पित्रृऋण से मनुष्य मुक्त हो।

७६. धन्वन्तरि कुण्ड- वृद्धकाल जलपान से सर्वरोग प्रेतादि बाधा निवारण।

७७. ध्रुव कुण्ड- नई सड़क सनातनधर्म स्कूल में लुप्त, स्नान पित्रृ प्रेम हो।

७८. धर्मकूप- मीरघाट, धर्मेश्वर म०नं० डी. २/१० स्नान से धर्मराजपद प्राप्त।

७९. धनकूप- पिलीकोठी धनेसरामठ, स्नान से धन प्राप्त हो।

(न)

८०. नारद तीर्थ- नारदघाट, स्नान से मुक्ति प्राप्त हो, प्रथम आदिकेशव पास।

८१. नन्दी तीर्थ– ज्ञानवापी लुप्त, स्नान से शिवगण हो।

८२. नाभि तीर्थ– स्नान से ब्रह्मांड मंडप में फिर प्रवेश न हो, ब्रह्मनाल क्षेत्र में लुप्त।

८३. नारायण तीर्थ– माथाघाट, गंगा में स्नान से गर्भवास न होय।

८४. नर्मदा तीर्थ– त्रिलोचन के पीछे, अब कूप के रूप में नं० २/७९ स्नान से कभी धनहानी न हो।

८५. नैमिषारण्य तीर्थ– ढुंढिराज गली लुप्त।

८६. नृसिंह तीर्थ– गायघाट समीप लुप्त, स्नान से काल का भय दूर हो।

८७. नागेश्वर तीर्थ– भोंसलाघाट लुप्त, प्रथम गायघाट गंगा में लीन स्नान से पापक्षय हो।

८८. नरनाध्य तीर्थ– लुप्त।

८९. नरक कुण्ड– अलईपुर (नौआ पोखर) प्रसिद्ध।

९०. नागकुण्ड– प्रसिद्ध बड़ी बाजार के पास। जैतपुरा।

९१. ढुंढिराज तीर्थ– विश्वनाथ गलि लुप्त, स्नान से विघ्नों की शान्ति हो।

९२. नलकूबर कूप– कामेश्वर के समीप।

९३. नारदेश्वर कुण्ड– लुप्त भद्रेश्वर क्षेत्र।

९४. नीलग्रीव तीर्थ– लुप्त राजघाट से पूर्व स्नान से मनुष्य सदा पवित्र बना रहे।

(प)

९५. पादोदक कूप– त्रिलोचन मंदिर के अन्दर नं० २/८०, स्नान से विष्णुलोक प्राप्त।

९६. पितामह तीर्थ– लुप्त, सिद्धेश्वरी क्षेत्र।

९७. पृथुतीर्थ– सोना तालाब नाम से प्रसिद्ध पंचक्रोशी खजुरी गांव स्नान से मनुष्य पृथ्वीपति होता है।

९८. पादोदक श्वेतद्वीप तीर्थ– आदिकेशव वरणा यात्रा से भादो शु० १२ श्राद्ध १०८ वंश उद्धार।

९९. प्रह्लाद तीर्थ– प्रह्लादघाट स्नान तथा अन्नदान से विष्णु का प्रिय हो, संसार के दुर्गतिका नाश हो।

१००. पिपीलिका तीर्थ– त्रिलोचन के समीप स्नान से दरिद्र निवारण मनं० अथाह संपत्ती का स्वामी हो नं० ए०३/८७ में।

१०१. पंचगंगा तीर्थ– प्रसिद्ध कार्तिक स्नान हेमदान फल प्राणी माता के कोख में फिर न आवे।

१०२. पितामहेश्वर तीर्थ- सिद्धेश्वरी लुप्त, स्नान से मनुष्य ब्रह्मलोक को प्राप्ति हो।

१०३. पुष्कर तीर्थ- अस्सी गुरुदास आश्रम समीप मोक्ष भवन के सामने।

१०४. पिशाचमोचन तीर्थ- प्रसिद्ध अगहन शुक्ल १४ यात्रा स्नान से पितृदोष छुटे।

१०५. पद्म तीर्थ- लुप्त, आदिकेशव समीप गंगा में स्नान से पाप क्षय हो।

१०६. पर्वत तीर्थ- सिंधियाघाट लुप्त, गंगा में स्नान से सभीपर्वो के स्नान का फल हो।

१०७. पायावर्त तीर्थ- लुप्त।

१०८. पुनर्द तीर्थ- लुप्त।

१०९. पिट्टी तीर्थ- लुप्त।

११०. प्रयाग तीर्थ- दशाश्वमेध प्रसिद्ध स्नान से प्रयाग स्नान का फल प्राप्त।

१११. प्रभास तीर्थ- मानमंदिर लुप्त, स्नान से गर्भभागी नही होना पड़ता है।

११२. प्रणवतीर्थ- ओंकारेश्वर समीप स्नान से प्राणि जीवन मुक्त होता है।

११३. पिशंगिला तीर्थ- लुप्त, त्रिलोचनघाट से पूर्वोत्तर स्नान से प्राणि शिव मित्र बन जाय।

११४. प्रसन्नोदक तीर्थ- लुप्त।

११५. पाशुपत तीर्थ- पशुपतेश्वर लुप्त, स्नान से पाशुपत ब्रत का फल प्राप्त।

११६. पुष्करणी तीर्थ- अस्सी।

११७. परशुराम तीर्थ- परशुराम मोहाल लुप्त, स्नान से क्षत्रियबध का पाप छूटे।

११८. पित्रृकुण्ड- लल्लापुरा स्नान से पित्रोद्धार पित्रृपक्ष अमावस्या।

११९. पंचकुण्ड- स्नान से स्वर्ग प्राप्ति, लुप्त।

१२०. पुष्पदंत कुण्ड- बंगालीटोला पुष्पदन्तेश्वर समीप, लुप्त।

१२१. पुत्र कुण्ड- लुप्त।

१२२. पृथुककूप- ग्वालगड्डा।

१२३. पित्रृकूप- लल्लापुरा स्नान और श्राद्ध से २१ कुलोद्धार होय।

१२४. प्रीतिकेश्वर वापी- साक्षीविनायक के पीछे, लुप्त।

(व)

१२५. विधितीर्थ- लुप्त, घोड़ाघाट स्नान से मनुष्य को सूर्यलोक की प्राप्ति होती है।

१२६. विशालतीर्थ- मीरघाट स्नान से विशेषफल, लुप्त, उभयलोक की प्राप्ति।

१२७. वीर तीर्थ- सिंधियाघाट वैशाखपूर्णिमा स्नान से सकल तीर्थ स्नानफल विघ्न नाश हो।

१२८. विषपाकतीर्थ- लुप्त।

१२९. बिन्दुतीर्थ- पंचगंगा कार्तिक स्नान हेम-तिलदान पिंड अक्षुण्णपुण्य की प्राप्ति हो।

१३०. विन्ध्येशतीर्थ- लुप्त।

१३१. विश्वतीर्थ- लुप्त, मणिकर्णिका से दक्षिण स्नान से प्राणि को विश्वनाथ की भक्ति प्राप्त।

१३२. वैकल तीर्थ- लुप्त, कलशेश्वर समीप स्नान से मनुष्य का कलि काल भय जाय।

१३३. विश्वकर्मेश्वर तीर्थ- आत्माविश्वेश्वर समीप, दूसरा पीलीकोठी समीप।

१३४. विश्वेश्वरतीर्थ- सी.के. ३५/१९ में।

१३५. विमलोदकतीर्थ- पिशाचमोचन का तालाब प्रसिद्ध, स्नान से पिशाच योनि से मुक्त हो।

१३६. विदारनृसिंह तीर्थ- कामेश्वर समीप लुप्त, स्नान से सैकड़ो जन्म के पाप छूट जाते है।

१३७. विष्णु तीर्थ- लुप्त, स्नान से विष्णु लोक प्राप्त हो।

१३८. विमलोदक कूप- पिशाचमोचन स्नान से विमल ज्ञान प्राप्त प्रेतयोनि निवारण।

१३९. विरजोरक कूप- लुप्त।

१४०. विघ्नहर कुण्ड- स्नान से विघ्ननाश, लुप्त।

(ब)

१४१. बालचन्द्र कूप- औसानगंज के महल में।

१४२. वासुकी तीर्थ- प्रसिद्ध, सिंधियाघाट।

१४३. वरणा संगम तीर्थ- वरणा स्नान पितृतर्पण अन्नदान से अक्षुण्ण पुण्य प्राप्त।

१४४. वामन तीर्थ- वरणा ही, स्नान से पित्र् ऋण से मुक्त हो, विष्णु के सानिध्य हो।

१४५. बाण तीर्थ- स्नान से शिव भक्ति दृढ़ हो, लुप्त प्रह्लादघाट।

१४६. वाराह तीर्थ- दशाश्वमेध, लुप्त।

१४७. वासिष्ठ तीर्थ- संकठाघाट लुप्त, स्नान से तीन जन्म के पाप से मुक्त हो वशिष्ठ लोक में वास होय।

१४८. वैतरणी तीर्थ- राजघाट छुतहा अस्पताल के पीछे स्नान से नर्कनिवारण।

१४९. वृषेश तीर्थ- दारानगर लुप्त।

१५०. वृषभध्वज तीर्थ- कपिलधारा, सोमवती स्नान-श्राद्ध महत्फल (पितृपीठ)।

१५१. वेताल कुण्ड- ब्रणदूर होय लुप्त।

१५२. बन्दी कुण्ड- दशाश्वमेध बन्दी देवी समीप लुप्त, स्नान से महा कर्मपाश से मुक्त हो।

१५३. बकरिया कुण्ड- अलईपुर प्रसिद्ध (बक्कार्ककुण्ड) स्नान से पशुयोनि से मुक्त।

१५४. ब्रह्मतीर्थ- लुप्त, स्नान से मनुष्य ब्रह्म विद्या का अधिकारी हो। बालमुकुन्द का चौहट्टा खालिसपुरा।

१५५. ब्रह्माण्डोदर तीर्थ- लुप्त।

१५६. ब्रह्मनाल तीर्थ- मणिकर्णिका मार्ग पर लुप्त, स्नान से करोड़ो जन्म के पातक नाश हो।

१५७. ब्रह्मावर्त कूप- लोलार्क समीप लुप्त, वस्त्रापथ क्षेत्र।

१५८. व्यासकुण्ड- कर्णघन्टा स्नान से अक्षय फल।

१५९. ब्याघ्रपाद कूप- ईश्वरगंगी मार्ग पर बघवाँ।

(भ)

१६०. भवतीर्थ- लुप्त नीलकंठ।

१६१. भैरव तीर्थ- कालभैरव, स्नान से प्राणी काल और कलि को जीत ले।

१६२. भद्रतीर्थ- लुप्त।

१६३. भद्रकर्णतीर्थ- लुप्त, पंचक्रोशी रामेश्वर के निकट भुइली गांव में।

१६४. भार्गव तीर्थ- गोलाघाट लुप्त, स्नान से भार्गव लोक की प्राप्ति हो।

१६५. भीमदोलीतीर्थ- भुलेटन तालाब लुप्त, वर्तमान कूप।

१६६. भवानीतीर्थ- अन्नपूर्णा के बगल राममंदिर में लुप्त, स्नान से वांछित मनोरथ सिद्ध हो।

१६७. भागीरथी तीर्थ- लुप्त, स्मशान ललिताघाट के मध्यस्नान से ब्रह्महत्या से छूट जाता है।

१६८. भैरव कुण्ड- लाटभैरव भौम ८ स्नानफल।

१६९. भैरव कूप- कालभैरव स्नान से प्राणि भैरवीयातना रहित हो।

१७०. भुवनेश कुण्ड- लुप्त।

१७१. भीमकुण्ड- भीमचंडी में पंचक्रोशी मार्ग पर।

१७२. भद्रकूप- पूर्वाभाद्र युक्त पूर्णिमा को स्नान यात्रा से सहस्त्र गोदान फल। ओंकारेश्वर के पास।

१७३. भद्रहृद (भद्रदोह)- भदऊँ में जहां मस्जिद है लुप्त।

(म)

१७४. मणिकर्णिका तीर्थ- प्रसिद्ध, एकबार स्नान से महातीर्थो असंख्य यज्ञों बड़े बड़े पर्वों के स्नान का फल प्राप्त।

१७५. मोक्ष तीर्थ- मणिकर्णिका कुण्ड स्नान से मोक्ष हो।

१७६. मंगला तीर्थ- मंगलागौरी समीप म०न० के. २३/८६ स्नान से मंगल हो।

१७७. मुक्ततीर्थ- लुप्त, वर्तमान ज्ञानवापी स्नान से मुक्ति होती हैं।

१७८. मारकण्डेय तीर्थ- लुप्त, स्नान से अकालमृत्युनाश कर प्राणी दीर्घायु हो।

१७६. मानसरोवर तीर्थ- मानसरोवर मोहाल आंध्रआश्रम में, स्नान से विशेष फल।

१८०. मानसतीर्थ- लुप्त।

१८१. मत्स्योदरीतीर्थ- मच्छोदरीपार्क में, पोखरा स्नान से यमपुरी गमन न हो।

१८२. मुचकुन्दतीर्थ- बड़ादेव लुप्त, स्नान से मनुष्य शत्रुओं से पराजित न हो।

१८३. मान्धात्री तीर्थ- प्रयागघाट के नीचे गंगा में, स्नान से चक्रवर्ती हो।

१८४. महिषासुरतीर्थ- लुप्त, प्रहृलादघाट के उत्तर, स्नान से इच्छित फल प्राप्त।

१८५. मैत्रावारुणि तीर्थ- लुप्त, अग्नीश्वरघाट के समीप, स्नान पिण्डदान से पित्रो का प्यारा होय।

१८६. मयूखमालिनि तीर्थ- लुप्त।

१८७. मंगल तीर्थ- लुप्त, पंचगंगा बालाघाट।

१८८. मखतीर्थ- लुप्त, बालाघाट के सामने गंगा में स्नान से यज्ञ फल होय।

१८६. मरुत तीर्थ- लुप्त, स्नान से प्राणी ऐश्वर्यवान् हो।

१६०. महासिद्ध कुण्ड- भद्रवन पोखरी भदैनी।

१६१. मृकुंटतीर्थ- लुप्त।

१६२. महालक्ष्मी तीर्थ- प्रसिद्ध मिश्रपोखरा, स्नान से निर्वाण लक्ष्मी की प्राप्ति होती है।

१६३. मातृकुण्ड- लल्लापुरा, पितृपक्ष में मातृनौमी को स्नान श्राद्ध से गया से कोटि गुनाफल।

१६४. मंदाकिनी कुण्ड- मैदागिन कम्पनी बाग में।

१६५. महोदधि तीर्थ- लुप्त, स्नान से अघमहोदधि को भस्म कर डालता है।

१६६. मेनका कुण्ड- लुप्त।

१९७. मणिप्रदीप कुण्ड- वृद्धकाल के पीछे दुलीगड़ही नाम से ख्यात।

१९८. मरुत तीर्थ- लुप्त, रामघाट।

१९९. मुकुट कुण्ड- दुर्गाकुण्ड अंधविद्यालय के पीछे बादशाहगंज।

२००. मरीचीकुण्ड- लुप्त, नागकुंआ के उत्तर।

(य)

२०१. यज्ञवाराह तीर्थ- लुप्त, राजघाटकिले के सामने स्नान से राजसूययज्ञ फल होय।

२०२. योगिनी तीर्थ- चौसट्टीघाट लुप्त, स्नान से योगो की सिद्धि प्राप्त हो।

२०३. यक्षिणी तीर्थ- लुप्त।

२०४. यम तीर्थ- समीप संकठा घाट स्नान भौमबार भरणी नक्षत्र १४ को तर्पण से पितृऋण से छूटे।

२०५. यज्ञ तीर्थ- लुप्त।

(र)

२०६. रेवा तीर्थ- रेवड़ी तालाब।

२०७. रुद्रवास तीर्थ- पोखरा हरतीरथ का स्नान से कोटिरुद्र पूजा का फल प्राप्त। लुप्त।

२०८. राम तीर्थ- रामघाट लुप्त, स्नान से विष्णु लोक की प्राप्ति हो।

२०९. रेवाल कुण्ड- लुप्त।

२१०. राम कुण्ड- लक्सा के पीछे।

२११. रत्नचूडामणि कूप- वृद्धकाल मार्ग पर रत्नेश्वर समीप।

२१२. रसोदकूप- ओंकारेश्वर से उत्तर ६ मास जलपिये ब्रह्मज्ञान हो।

२१३. रुद्र सरोवरहृद- शाश्वमेध ज्येष्ठ शु० १-१० तक स्नान से अश्वमेध यज्ञ फल प्राप्त हो।

(ल)

२१४. लोलार्ककुण्ड- भदैनी स्नान से आरोग्य फल संतान प्राप्ति।

२१५. लक्ष्मीतीर्थ- लक्ष्मीकुण्ड प्रसिद्ध स्नान से हेमदान फल।

२१६. लक्ष्मीनृसिंह तीर्थ- राजमंदिर लुप्त, स्नान से निर्वाण लक्ष्मी भी वर लेती है।

२१७. ललिता तीर्थ- ललिताघाट स्नान से दारिद्र्य दुःख जाय।

(श)

२१८. शंख तीर्थ- राजमंदिर गंगा में स्नान से महा शंखाधिपति होता है।

२१६. शंखमाधव तीर्थ- शीतलाघाट गंगा में स्नान से संसार भय जाता है।

२२०. शिन्धष्ट तीर्थ- लुप्त।

२२१. शिव तीर्थ- लुप्त।

२२२. शूल तीर्थ- लुप्त, शूलटंकेश्वर समीप स्नान से रुद्रलोक प्राप्ति।

२२३. शिवगंगा अशोक तीर्थ- ईश्वरगंगी तालाब स्नान से शिवलोक प्राप्त।

२२४. शिष्य तीर्थ- लुप्त।

२२५. शंखचूड़ तीर्थ- वृद्धकाल के मार्ग पर, लुप्त।

२२६. शंखोद्धार तीर्थ- खोजवाँ द्वारावति।

२२७. श्यामादित कुण्ड- माघरवौ स्नान से महारोगनाश, लुप्त।

२२८. शुभोदक कूप- लुप्त।

२२६. शुक्रकूप- कालिकागलि मार्ग पर स्नान से मनुष्य को फिर कभी शुक्र-रज द्वारा जन्म न लेना पड़े।

२३०. शौनक कूप- लुप्त।

२३१. शेष तीर्थ- लुप्त, राजघाट के ईशानकोण में स्नान से पाप का समूह भी शेष नहीं रह पाता।

२३२. शैलाद तीर्थ- मणिकर्णिका तथा ललिता के बीच में, लुप्त।

(स)

२३३. सिद्धिहृद तीर्थ- लक्ष्मीकुण्ड स्नान से कभी जन्मभागी न हो।

२३४. सांख्य तीर्थ- लुप्त, स्नान से सांख्ययोग सिद्धि प्राप्त होती है।

२३५. सिद्ध्यष्टक कुण्ड- लोहटिया बड़े गणेश पर लुप्त।

२३६. सिन्धुसरोवरधन तीर्थ- पंचक्रोशी दीनदयालपुर।

२३७. संनिहत्यातीर्थ- कुरुक्षेत्र अस्सी या सोनिहटिया की गड़ही।

२३८. संकर्षण तीर्थ- मानमंदिर सेतुबन्धरामेश्वर लुप्त।

२३६. सप्तसागर तीर्थ- काशीपुरा लुप्त, स्नान से सातो समुद्रो में स्नान का फल हो।

२४०. स्वर्लीन तीर्थ- प्रहलादघाट लुप्त, स्नान से किया पुण्य अक्षय होय।

२४१. सारस्वत तीर्थ- गोमठ समीप लुप्त, स्नान से प्राणी समस्त विद्याविशारद हों।

२४२. संभेद तीर्थ- लुप्त।

२४३. सागर तीर्थ- लुप्त, स्नानसे मनुष्य दुःखसागर में नही डूबता।

२४४. स्कन्द तीर्थ- वागेश्वरी समीप लुप्त, स्नान से वागेश्वरी गति प्राप्त।

२४५. सूर्यकुण्ड- सूरजकुण्ड, रविवार स्नान से कुष्ठ रोग का निवारण।

२४६. सुप्रतीक कुण्ड- लुप्त।

२४७. सौभाग्योदक कूप- आदि विश्वेश्वर लुप्त, स्नान से स्त्री सौभाग्यवति हो।

२४८. समुद्रकूप- बाँसफाटक।

२४९. सिद्धवापी- सोनहटिया, स्नान से सर्व आशा की सिद्धि प्राप्त। भदैनी।

२५०. श्रीकंठकुण्ड- लुप्त, स्नान से श्रीप्राप्ति।

(ह)

२५१. हिरण्य कूप- त्रिलोचन घाट, लुप्त।

२५२. हंसतीर्थ- हरतीरथ का पोखरा लुप्त (पटा), स्नान से ब्रह्मपद प्राप्त हो।

२५३. हरिद्वार तीर्थ- अस्सीघाट स्नान से हरिद्वार स्नान फल प्राप्त।

२५४. हरिश्चन्द्र तीर्थ- हरिश्चन्द्रेश्वर समीप लुप्त, स्नान से सत्यवादी हो परलोक में अक्षय फल देता है।

२५५. हिरण्यगर्भ तीर्थ- त्रिलोचन घाट के नीचे स्नान से मनुष्य सुवर्णहीन नही होता।

२५६. हरंपाप कुण्ड- लुप्त, केदारघाट।

२५७. हयग्रीव कुण्ड- भदैनी लुप्त स्नान से मनोरथ पूर्ण हो।

(क्ष)

२५८. क्षीराब्धि तीर्थ- लुप्त, आदिकेशव समीप, स्नान से मनुष्य को क्षीर समुद्र तीरबास होता है।

२५९. क्षीर समुद्र तीर्थ- वरणा लुप्त।

२६०. क्षेमकर तीर्थ- लुप्त।

२६१. क्षोणीवाराह तीर्थ- लुप्त, स्नान से मनुष्य तिर्यग् योनि में नहीं पड़ता।

(त्र)

२६२. त्र्यभीष्ट तीर्थ- त्रिलोचनघाट वैशाख १३ से पूर्णिमा ३ दिन स्नान महाफल।

२६३. त्रिसंध्याय तीर्थ- लुप्त, अकालसंध्या दोष निवारण।

२६४. त्रिसंध्या तीर्थ- लाहौरीटोला फुटेगणेश समीप लुप्त, स्नान से तीन वेद अध्ययन का पुण्य हो।

२६५. त्रिकुण्ड- लुप्त।

२६६. त्रिभुवनकेशव तीर्थ- लुप्त, स्नान से मृत्युलोक कभी नहीं प्राप्त हो।

(ज्ञ)

२६७. ज्ञानवापी- प्रसिद्ध, स्नान से शिवलिंग का हृदय में वास हो।

२६८. ज्ञान तीर्थ- ज्ञानवापी स्नान से ज्ञान भक्ति प्राप्त।

२६९. ज्ञानहृद तीर्थ- लाहौरी टोला, लुप्त।

२७०. ज्ञानकूप- ज्ञानवापी, स्नान से ज्ञानी होय।

(अ)

२७१. अशोक तीर्थ- बुलानाला लुप्त, स्नान से मनुष्य कभी शोक सागर में नहीं पड़ता।

२७२. अस्तिक्षेप तड़ाग- हड़हा बेनिया।

२७३. अम्बरीष तीर्थ- लुप्त, वरणा, स्नान से कभी मनुष्य गर्भ भागी नहीं हो पाता।

२७४. आग्नीध्रकुण्ड- लुप्त, ईश्वरगंगी जागेश्वर के पास।

२७५. आदिगदाधर तीर्थ- लुप्त।

२७६. अविमुक्त तीर्थ- ज्ञानवापी।

२७७. अगस्त तीर्थ- अगस्तकुण्डा लुप्त, स्नान से शिवलोक प्राप्त हो।

२७८. आदित्य तीर्थ- लुप्त।

२७९. आदिकेशव तीर्थ- लुप्त, वरणा, स्नान से मनुष्य स्वर्ग में अभिषिक्त हो जाता है।

२८०. अग्नितीर्थ- लुप्त, अग्नेश्वरघाट स्नान से मनुष्य अग्निभय चला जाता है।

२८१. अमृतकुण्ड- वृद्धकाल के घेरे में भैरव समीप, स्नान से कुष्ठ जाय।

२८२. अंगारतीर्थ- अग्नेश्वरघाट समीप लुप्त, अंगार चतुर्थि स्नान से निष्पाप होय।

२८३. अरुन्धती तीर्थ- स्नान से पुंश्चलता का दोष मिटे।

(ई)

२८४. ईशान तीर्थ- बांसफाटक लुप्त, स्नान से पूर्व जन्म नही होय ।

२८५. इन्द्रद्युम्न तीर्थ- लुप्त, मणिकर्णिका समीप, स्नान से इन्द्रलोक की प्राप्ती हो ।

२८६. इक्ष्वाकु तीर्थ- स्नान से प्राणी पवित्र आत्मा होय । लुप्त ।

(उ)

२८७. उद्‌दालक तीर्थ- लुप्त, स्नान से विविध समृद्धि प्राप्त होय ।

२८८. उमा तीर्थ- गोमठ समीप लुप्त, स्नान मात्र से मनुष्य को अवश्य उमा लोक प्राप्त हो ।

२८९. उत्तरार्क कुण्ड- अलईपुर बकरियाकुण्ड प्रसिद्ध, स्नान से पशुयोनि छूटे ।

२९०. उर्वसी कुण्ड- लुप्त ।

२९१. उग्रकुण्ड- लुप्त ।

(ए)

२९२. इक्ष्याकु तीर्थ- लुप्त ।

२९३. ऐरावत कुण्ड- दुलीगड़ही समीप लुप्त ।

काशी की विशेष महत्ता

अपने सद्‌ग्रन्थों में अनेको प्रकार से काशी की महिमा का वर्णन मिलता है परन्तु फिर भी कुछ विशेष श्लोक हिन्दी सहित दिये जा रहे है ।

काया से होने वाले पापों को काटने वाली तलवार काशी कही गई हैं । संस्कृत भाषा में असी (शब्द) अर्थ तेज धार वाली तलवार बताया गया हैं । ४००० गज का १ क्रोश होता हैं । प्राचीनकाल में जब काशी का क्षेत्रफल दश क्रोश के ब्यास के वृत्ताकार में था, तब काशी की यात्राओं का क्या क्रम था उसका अब स्पष्ट प्रमाण नहीं मिलता, परन्तु जब से काशी शंखाकार हो गई है, तब से काशी के यात्राक्रमों का विवेचन पुराणों में मिलता हैं । काशी के प्रति विदेशी विद्वानों के विचार संक्षेप में हिन्दी अनुवाद ई.वी. हेवेल, ए.आर.सी.ए. प्रिंसप, गवर्नमेन्ट स्कूल आफ आर्ट, कलकत्ता-आप "बनारस" नामक ग्रन्थ में (अध्याय ५ पृष्ठ ८०-८२ में) लिखते हैं, केवल शिल्प विद्या या वास्तु विद्या की दृष्टि से ही काशी की रमणीयता का परिचय नहीं मिलता, किन्तु प्राचीन भारत के रहने सहने के ढंग और प्राचीन भारतीय रीतियों की भी काशी आदर्श है और रमणीय भी प्रतीत होती है । प्राचीन मिश्र वेविलन् निनिवृ और यूनान के लोग कैसे रहते थे इसका भी पूरा-पूरा पता काशी में चल सकता है ।

शिल्प शास्त्र के जानने वालों के लिये भी यह अच्छा स्थान है, क्योंकि यहाँ अब भी ऐसे शिल्पकार और चित्रकार विद्यमान है जो टनैग्रा के शिल्पकारों अथवा पांपिआई के चित्रकारी से कम नहीं गिने जा सकते। हम यहाँ प्रतिदिन ऐसे अनन्त विषय देखते है घाट पर मन्दिरों में अथवा सड़कों पर भी घण्टों खड़े रह कर हम संसार की प्राचीन रीतियों तथा साधारण लोगों के धार्मिक भाव और धर्म में दृढ़विश्वास का अनुभव कर सकते हैं। अपने लोगों के लिये यह धार्मिक निष्ठा सीखने की बात है।

यत्र कुत्रापि वा काश्यां मरणे स महेश्वरः।
जन्तोर्दक्षिणकर्णे तु मत्तारं समुपादिशत् ॥

(मुक्तिकोपनिषद्)

अर्थात काशी में कही भी (जल-थल-आकाश) प्राण त्यागने वाले प्राणी के दक्षिण कर्ण में परम दयालु श्री विश्वनाथ तारकमंत्र का उपदेश देते हैं।

त्रिशूल मां काशीमधिश्रित्य त्यक्त्वा सवोपि मय्येव संविशन्ति।
एष एवादेशः एष एव उपदेशः। एष एव परमो धर्मः ॥

(भीष्मजावालोपनिषद्)

मेरे त्रिशूल पर स्थित काशी नगर में प्राण त्याग कर प्राणी मुझ में ही लीन हो जाता है। यही मेरा आदेश है। यही मेरा उपदेश है। यही मेरा परम धर्म है।

काश्यां यो वै मृतश्चैव तस्य जन्म पुनर्नहि।

(लिंग पुराण)

काशी में प्राण त्यागने पर पुनर्जन्म नहीं होता।

येनैकजन्मना मुक्तिर्यस्मात् करतले स्थिता।
अनेकजन्मसंसारबन्धनिर्मो क्षिकारिणी ॥

(स्क० पु० का० खं०)

अनेको बार जन्म लेने वाले संसार बन्धन का नाश करने वाली काशी नगरी में एक बार मरने से (उसी एक ही जन्म में) प्राणि मुक्ति को अपने हाथ में प्राप्त कर लेता है।

कीटाः पतङ्गामशकाश्च वृक्षा, जले स्थले ये विचरन्ति जीवाः।
मण्डूकमत्स्याः कृमयोऽपि काश्यां, त्यक्त्वा शरीरं शिवमाप्नुवन्ति ॥

(स्क० पु० का० खं०)

अर्थात् कीट, पतंग, मशक (मच्छर), जलचर, स्थलचर, मेढक, मछली, कीड़े मकोड़े आदि महापाप योनि में भी परममंगलमयी काशीपुरी में प्राण त्याग कर मोक्ष प्राप्त कर लेते हैं।

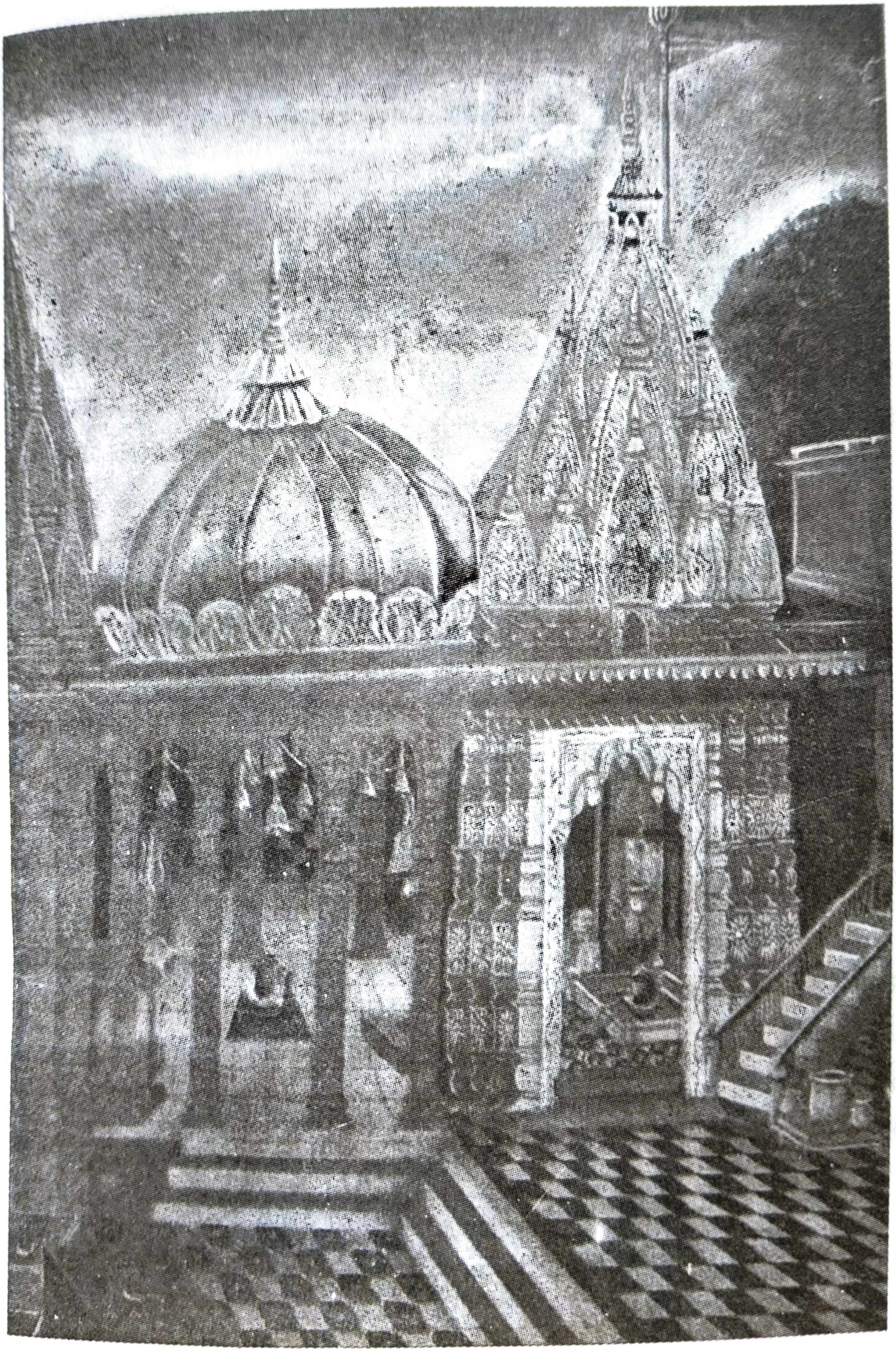

श्री विश्वनाथ मन्दिर Sri Vishwanath Temple

वाराणस्यां मृतो वापि इदं वा ब्रह्म यः पठेत् ।
एकेन जन्मना जन्तुर्मोक्षं च प्राप्नुयादिति ।।७।।
(प्राणाग्निहोत्रोपनिषद्)

जो प्राणी काशी जी में देह त्याग करता है अथवा अन्त में तारक ब्रह्म के मन्त्र को सुनता है। उसे एक ही जन्म में मुक्ति मिल जाती हैं।

गर्भ जन्म जरा मृत्यु संसार भव सागरात् ।
तारयामि यतो भक्तं तस्मात्तारोऽहमीरितः ।।

शिवजी कहते है कि गर्भवास, जन्म जरा और मृत्यु रूपी संसार सागर से मैं भक्तों को तार देता हूँ इसलिये मेरा नाम तारकेश्वर भी कहा गया है। अकारः प्रथमाक्षरो भवति, उकारो द्वितीयाक्षरो भवति, विन्दु पंचाक्षरो भवति, नाद षष्ठाक्षरो भवति, तदेव तारकं ब्रह्मत्वं विद्धि।

काशी या बनारस के प्रति अंग्रेजो के विचार

एडविन ग्रीक बज साहब, लन्दन मिशनरी सोसाइटी बनारस, अपने पुस्तक "काशी या बनारस" में (अध्याय १ पृष्ठ १ में लिखा है)। काशी या बनारस यह एक श्रेष्ठ और प्राचीन स्थान है, पवित्रता में इसके समान कोई दूसरा देश नहीं है। इसकी अमित महिमा संसार में विख्यात है। इसकी प्राचीनता तथा स्थिति का यहि प्रमाण है कि जब से इतिहास लिखना आरम्भ हुआ, उसके पहले से है, परम्परा के कथन से निश्चित होता है कि सृष्टि की रचना में इसकी रचना सबसे प्रथम हुई है, पुनः भूमण्डल इसकी चारों दिशा में रचा गया है, काशी बहुत ही प्राचीन स्थान है, इस विषय में शंका हो ही नही सकती और यह स्थान प्राचीन समय से धर्म सम्बन्धी बातों में भी विख्यात है (अध्याय २ पृष्ठ १३)।

काशी की शोभा गंगाजी में से नौका अथवा ड्फरन् बृज (राजघाट का रेलवेपुल) से अवलोकन किया जाता है तो यही आभास होता है कि भूमण्डल मात्र में ऐसा मनोहर स्थान और कोई नहीं है (अध्याय २ पृष्ठ २१), यह काशी सबके लिए सुखद स्थान है। अतएव यहाँ यात्रियों को भली प्रकार विचरने दो, (इसकी शोभा को देखकर) विस्मित होने दो (अध्यया ३ पृष्ठ ३१), संध्या समय (काशी) में गंगा के तटपर टहलना लन्दन नगर में रविवार के टहलने से अधिक (सुखदायक) है।

विश्वेश्वरदर्शनमाहात्म्य

अहं सर्वेषु लिंगेषु तिष्ठाम्येव न संशयः ।
परंत्वियं परामूर्तिर्ममलिंगस्वरूपिणी ।।१६।।

मै यद्यपि समस्तलिंगो मे बना रहता हूँ पर यह लिंग मेरी सर्वोत्कृष्टमूर्ति है इसमें कुछ सन्देह नहीं।

श्रृण्वंतु देवर्षिगणाः समस्तास्तथ्यं ब्रुवेतच्च परोपकृत्यै ।
नभूर्भुवःस्वर्गमहर्जनांतर्विश्वेशतुल्यं कचिदस्तिलिंगम् ।।४८।।
(का० खं० अ० ६६)

सुनो! हे देवर्षिमण्डलगण मै परोपकार ही के लिये यह बहुत ठीक कह रहा हूँ, भूलोक, भुवर्लोक, स्वर्गलोक, महर्लोक और जनलोक के भीतर कही पर भी विश्वेश्वर के समान कोई भी लिंग नहीं है ।

न सत्यलोके न तपस्यहो सुरा वैकुंठकैलाशरसातलेषु ।
न त्तीर्थं कचिद्वै मणिकर्णिकासम लिंगं च विश्वेश्वरतुल्यमन्यत् ।।४६।।
(का० खं० अ० ६६।)

हे ! सुरसमुह (यही तक नहीं) तपलोक, सत्यलोक, वैकुण्ठ, कैलाश और (सातो) रसातलों मे भी किसी स्थान में विश्वेश्वर के तुल्य लिंग और मणिकर्णिका के सदृश तीर्थ दूसरा नहीं हैं ।

गङ्गतीरमनुत्तमं हि सकलं तत्रापि काश्युत्तमा,
तस्यां सा मणिकर्णिकोत्तमतमा यत्रेश्वरो मुक्तिदः ।
देवानामपि दुर्लभं स्थलमिदं पापौघनाशक्षमम्,
पूर्वोपार्जितपुण्यपुंजगमकं पुण्यैर्जनैः प्राप्यते ।।

गंगातीर तो सर्वत्र ही उत्तम है । उससे भी काशी की उत्तरवाहिनी गंगा प्रशस्त है । वहाँ पर मणिकर्णिका तो उत्तमोत्तम है क्योकि वहाँ तारकेश्वर महादेव मुक्ति प्रदान करते है । देवताओं को भी वह मणिकर्णिका का स्थान दुर्लभ है और वह पापराशी को विनष्ट करने में समर्थ है । उस मणिकर्णिका को पूर्वोपार्जित पुण्य के प्रभाव से पुण्यात्मा प्राप्त करते हैं ।

स्वयंभुवोस्यलिंगस्य मम विश्वेशितुः सुराः ।
राजसूयसहस्रस्य फलंस्यात्स्पर्शमात्रतः ।।२५।।
(का० खं० अ० ६६)

हे सुरसमूह ! मेरे इस स्वयंभू विश्वेश्वर लिंग के केवल स्पर्श करने ही से सहस्रों राजसूययज्ञ करने का फल लाभ होता है ।

पुष्पमात्रप्रदानाच्च चुलुकोदकपूर्वकम् ।
शतसौवर्णिकं पुण्यं लभते भक्तियोगतः ।।२६।।

भक्तिभाव से इस लिंग पर एक चुल्लू जल चढ़ा कर एक ही पुष्प अर्पण किया जाय तो सैकड़ो सुवर्ण पुष्पों के प्रदान करने का पुण्य हो जाता है ।

पूजामात्रं विधायास्य लिंगराजस्य भक्तितः ।
सहस्रहेमकमलपूजाफलमवाप्यते ।।२७।।

इस लिंगराजकी साधारण पूजा भी यदि भक्तिपूर्वक की जाये तो सहस्रों सुवर्ण कमल के पूजन का फल मिलता हैं ।

विधाय महतीं पूजां पंचामृतपुरःसराम ।
अस्य लिंगस्य लभेतपेरुषार्थचतुष्टम् ।।२८।।

और पंचामृत इत्यादि से यदि इसलिंग की महतीपूजा करे तो धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष चारो ही पुरुषार्थ हस्तगत हो जाते हैं ।

वस्त्रपूतजलैर्लिंगं स्नापयित्वा ममामराः ।
लक्षाश्वमेधजनितं पुण्यमाप्नो तिसत्तमः ।।२९।।

हे अमर वृन्द ! मेरे इस लिंग को वस्त्र के छाने हुए शुद्ध जल से स्नान करावे तो लाखों अश्वमेधयज्ञ करने का पुण्य प्राप्त होता है ।

अर्चितेष्वेष्वहं प्रीतो भविष्यामि न संशयः ।
अस्मिन्वैश्वेश्वेरेक्षेत्रे संभोज्याः शिवयोगिनः ।।
(का० खं० अ० ९९ श्लो. १४।।)

इन लोगों के पूजन करने से मैं अवश्य ही परम प्रसन्न होता हूँ, इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है । इस विश्वनाथपुरी में शिवयोगियों को भोजन कराना चाहिए ।

कोटिभोज्यफलं सम्यग् एकैवपरिसंख्यया ।
अयं विश्वेश्वरः साक्षात्स्थावरात्मा जगत्प्रभुः ।।
(का० खं० अ० ९९ श्लो. १५।।)

यहाँ पर एक एक जनके भोजन कराने से कोटि कोटि लोगों के खिलाने का पुण्य होता है, ये ही स्थावर रूप विश्वेश्वर साक्षात जगत् के प्रभु है ।

लिंग मे विश्वनाथस्य दृष्ट्वा यश्चानुमोदते ।
स मे गणेषु गण्येत महापुण्यबलाश्रितः ।।४३।।

मेरे इस विश्वनाथ नामक लिंग का दर्शन करके जो उसकी प्रशंसा करता है वह महापुण्य बलाश्रित होकर मेरे पारिषदों में गिना जाता है ।

नित्यं विश्वेश विश्वेश विश्वनाथेति योजपेत् ।
त्रिसंध्यं तं सुकृतिनं जपाम्यहमपि ध्रुवम् ।।श्लो. ४४।।

जो सुकृतपुरुष त्रिकाल ''विश्वनाथ, विश्वेश, विश्वेश्वर'' ऐसा जपता हैं, वह मेरे चित्त में सदैव जागरूक बना रहता है ।

जैनतीर्थ काशी

ईसवी सन् के पूर्व नौवीं शताब्दि में तेइसवें तीर्थंकर भगवान् पार्श्वनाथ का जन्म भेलूपुर स्थित म०न० बी. २०/४५ में हुआ था । ऐसा प्रतीत होता है तभी से वाराणसी जैन-धर्मावलम्बियों का तीर्थस्थल कहा जाने लगा है। काशी में श्वेताम्बर और दिगम्बर दोनों ही जैन मन्दिर हैं।

इन मन्दिरों में दर्शनार्थ नित्य तीर्थयात्री आते रहते हैं । काशी में रामघाट पर श्रीपार्श्वनाथ जी ने यहीं कमठ तापस को प्रतिबोध देते हुए अर्धदग्ध स्थिति में जलते हुए सर्पयुगल का उद्धार कर अहिंसा तत्व का महत्व जनता को समझाया था । उसी स्थल पर श्वेताम्बर महावीर स्वामी का पंचायती बड़ा मंदिर म०नं० सीके. २४/५ में है। यहीं समीप में ही दूसरा श्रीपार्श्वनाथ स्वामी का मंदिर नयाघाट म०नं० सीके. २/३ में है। थोड़ी ही दूर पर तीसरा श्री ऋषभदेव जी का मंदिर पटनीटोला म०नं० सीके. २/२ में है। यहाँ से थोड़ी दूरी पर गौड़ीपार्श्वनाथ जी का मंदिर सूतटोला म०नं० सीके. २५/२७ में है । इसके समीप ही श्री आदिनाथ जी का मंदिर बालूजी का फर्श म०नं० सीके. २५/६ में है । इन्ही के समीप श्री पार्श्वनाथ जी की एक प्रतिमा है जिस पर चाँदी का पत्र चढ़ा हुआ है यह मंदिर नन्दनसाहू लेन म०नं० सीके. २४/१० में है । सातवे तीर्थंकर श्रीपार्श्वनाथ जी हुए है उनका मंदिर भदैनी म०नं० बी. २/८६ में है। यही बगल में श्वेताम्बर अनुयाइयों का मंदिर म०नं० बी. ३/७८ में है। श्री पार्श्वनाथ स्वामी का एक मंदिर चौखम्बा गोपालमंदिर के पीछे म०नं० ३७/५१ में है। इसी प्रकार पार्श्वनाथ जी का मंदिर सुड़िया म०नं० सीके. १६/२३ में स्थित है।

यहां से कुछ ही दूरी पर श्री पार्श्वनाथ जी का मंदिर मैदागिन चौराहे पर म०नं० के. ५८/६८ में है। शहर से ४ माईल की दूरी पर ग्यारहवे तीर्थंकर श्री पार्श्वनाथ जी का मंदिर सारनाथ बौद्धक्षेत्र में स्थित हैं। सारनाथ से एक माईल की दूरी पर श्वेताम्बर श्री श्रेयांसनाथ का यहा चार कल्याणक हुआ था यह मंदिर हिरावनपुर ग्राम का क्षेत्र सिंहपुरी के नाम से विख्यात हैं।

ऐसे ही आगे इसी मार्ग पर आठवें तीर्थंकर चन्द्रप्रभु का मंदिर कादीपुर स्टेशन से दो माईल गंगा के तट पर स्थित है, इसी के समीप दिगम्बर मंदिर भी उपासकों के लिये तट की शोभा बढ़ा रहा है।

जैन विद्वानों ने जैन शब्द का विशेष अर्थ बताया है उनके कथनानुसार जिन्होनें काम-क्रोधादि अठारह प्रकार के दोषों को जीत लिया है, जिन्होने ज्ञान तथा दर्शन को ढक देने वाले पापों को उभाड़ने वाले दुर्भावों या कर्मशत्रुओं को जीत लिया है उन्हें ही 'जिन' कहा गया है इस प्रकार के जिन अब तक चौबीस हो चुके हैं। चौबीस में सबसे अन्तिम महावीर जी आज से करीब २५०० वर्ष पहले हुये थे । वे क्षत्रियनाथ वंश और काश्यपगोत्र के रत्न थे आज जो जैनधर्म मिल रहा है वह इन्हीं वीर प्रभु द्वारा पुनः प्रतिपादित हुआ था । जैनधर्म के जन्मदाता

जैन सम्प्रदाय के २३वें तीर्थकांर श्री पार्श्वनाथ जी

इन्ही महात्माओं को तीर्थंकर कहा गया है। धर्मरूपी तीर्थ का निर्माण करने वाले वीतराग तथा तत्वज्ञानी, मुनिजन ही तीर्थंकर कहलाये। राग-द्वेष पर विजय पाने के कारण वर्धमान की उपाधि 'जिनजेता' थी। अतः उनके द्वारा प्रचारित धर्म जैन कहलाता है। महावीर जी के वीतरागभाव के सर्वांगपूर्ण सर्वहितवर्द्धक उपदेश को उनके प्रमुख शिष्य गौतम गणधर ने अर्धमागधी भाषा में ग्रन्थबद्ध किया था। यह जैन वाणी यतीश्वरों की भावरूप में थी। भगवान् महावीर की द्वादशांग श्रुतज्ञान कहलाती हैं।

इनमें आचारांग आदि ग्यारह अंग ग्रन्थ और बारह पूर्व उपांग गर्भित हैं। जैनों का यही आदि साहित्य था और यह सर्वांग पूर्ण था। आदि तीर्थंकर ऋषभदेव थे। ब्राह्मण धर्म में इनकी गणना चौबीस अवतारों में की गई है।

भागवत के पंचम स्कन्ध में इनको आठवां अवतार माना है। इनके अतिरिक्त तीर्थंकर के चौबीस-चौबीस माता-पिता, नौ नारद, ग्यारह रुद्र, चौबीस कामदेव (अत्यन्त सुन्दर पुरुष) ये विशिष्ट पुण्यशाली व्यक्ति भी प्रत्येक कल्प में होते हैं। ये उत्तम पदाधारी उसी जन्म में या थोड़े से जन्म लेकर परमात्मा बनने वाले होते है।

इनमें से चौबीस कामदेव उसी जन्म में मुक्त परमात्मा बन जाते हैं। इनके जैसा सुन्दर मन-मोहक रूप स्वर्ग में भी नहीं होता। जैन मान्यता के अनुसार प्रत्येक कल्प में चौबीस तीर्थंकर (आध्यात्मिक नेता), बारह चक्रवर्ती (छः खण्ड भूमि के स्वामी), नौ प्रतिनारायण (तीन खण्ड पृथ्वी के स्वामी), नौ नारायण (प्रति नारायण से तीन खण्ड पृथ्वी को जीतने वाले) और नौ बलभद्र (नारायण के बड़े भाई) इस तरह तिरसठ शलाका (उत्तम पदधारी) पुरुष होते हैं।

जैन मतानुसार हनुमान् अठारहवे कामदेव थे। ये बन्दर नहीं थे। किन्तु वानर वंशीय थे, इनके वंश के राज्यध्वज में बन्दर का चिह्न था, इसलियें इनका कुल (वंश) वानर वंश के तौर से विख्यात था। इनके पिता राजकुमार पवन थे और इनकी माता अंजना थीं। बचपन में एक दिन जब श्री हनुमान अपने मामा के विमान से बैठकर आकाश मार्ग से जा रहे थे, तब खेल में उछल कर नीचे पहाड़ पर गिर पड़ें। इससे उनकी कोई हानि नहीं हुई बल्कि वह पहाड़ ही टूट गया। इनकी हड्डियाँ वज्र की थी और वज्र के ही बैठन और वज्र का ही संहनन था। ये विद्याधर थे इसलिये जन्मजात, कुलजात और मन्त्रसिद्ध सिद्धियों से संपन्न थे। जैनमान्यता के अनुसार ये बालब्रह्मचारी नहीं थे। गृहस्थाश्रम के अन्त में राजपाठ-परिग्रह-स्त्री आदि का त्याग कर साधू हो गये और तपस्या करके श्रीराम की भाँती उसी जन्म में त्रैलोक्य पूजित अनन्तकालीन परमात्मा बन गये।

पार्श्वनाथ बड़े प्रसिद्ध हुए इनके पिता काशी के राजा अश्वसेन और माता का नाम वामादेवी था ८१७ विक्रम संवत में इनका जन्म काशी में भेलूपुर में हुआ था, इसी स्थान पर दिगम्बर पार्श्वनाथ का विवाह कुशस्थ देश की राजकुमारी प्रभावती के साथ हुआ था। इनके जन्म से पहले इनकी माता ने एक काले सर्प को अपने बगल में रेंगते देखा इसी कारण इनका

नाम पार्श्वनाथ पड़ा।

३० वर्ष की अवस्था में वैराग्य ग्रहण कर ८४ दिन तक तपस्या कर ज्ञान प्राप्त किया फिर ७० वर्ष तक पूरे भारत में घूम-धूम कर धर्म का प्रचार किया अनन्तर समेतशिखर पर निर्वाण प्राप्त किया। यह चार महाव्रतों अहिंसा, सत्य, अस्तेय और अपरिग्रह पर जोर देते थे। पर महाबीर ने ब्रह्मचर्य को भी उपादेय कहा हैं यह भी बड़े प्रसिद्ध हुए हैं। पार्श्वन।थ श्वेतवस्त्र और मुख पर पट्टी धारण करते हैं पर महावीर दिगम्बर थे। वर्धमान महावीर यह अन्तिम तीर्थंकर थे।

वैशाली बिहार के मुजफ्फरपुर के बसाढ़ ग्राम में ६५६ वी.सी. में ज्ञातृ नामक क्षत्रिय कुल में इनका जन्म हुआ था। पिता का नाम सिद्धार्थ तथा माता का नाम त्रिशाला था इनकी माता भी राजकन्या थी।

इनकी स्त्री का नाम यशोधरा देवी था इन्होने अपने बड़े भाई नन्दिवर्धन की अनुमति लेकर घर छोड़ दिया। हृदय में सच्चे वैराग्य के बीज पहले ही से विद्यमान थे।

अवसर पाकर वे अंकुरित हो उठे। तीस वर्ष की आयु में इन्होने यति धर्म ग्रहण किया। तेरह वर्ष के लगातार अभ्यास से इन्हे कैवल्य ज्ञान प्राप्त हुआ। इन्होंने मगध देश में जैनधर्म का उपदेश दिया।

यह राजगृह में रहते थे। पावापुरी में बहत्तर वर्ष की आयु में इन्होने निर्वाण प्राप्त किया। उड़ीसा के सम्राट खारवेल भी इसी धर्म में दीक्षित हुए।

मौर्यवंश के संस्थापक भारत के एक छत्र सम्राट चन्द्रगुप्त भी जैनधर्मानुयायी हो गए। भद्रबाहु और संघभद्र उस समय जैनधर्म के प्रधान नेता थे। स्कन्ध २८ RUNK उन तीर्थंकरों के नाम इस प्रकार थे -

१. आदिनाथ (ऋषभदेव), २. अजितनाथ, ३. संभवनाथ, ४. अभिनन्दन, ५. सुमतिनाथ, ६. सुपार्श्वनाथ, ८. चन्द्रप्रभ, ६. सुविधिनाथ, १०. शीतलनाथ, ११. श्रेयांसनाथ, १२. वासुपुज्य, १३. विमलनाथ, १४. अनन्तनाथ, १५. धर्मनाथ, १६. शान्तिनाथ, १७. कुन्थुनाथ, १८. अरनाथ, १६. मल्लिनाथ या मल्लिदेवी, २०. मुनिसुव्रत, २१. नमिनाथ, २२. नेमिनाथ, २३. पार्श्वनाथ और २४. वर्धमान महावीर।

वैदिक धर्म के अठारह पुराण बतायें गये हैं। उसी प्रकार जैन धर्म के भी चौबीस पुराण हैं इन चौबीस पुराणें में तीर्थंकर महात्माओं की कथाएँ है और उन्ही के नाम से इन पुराणों का नामकरण किया गया है।

स्याद्वाद का सिद्धान्त जैन तत्वज्ञान की आधार शिला है पहली शताब्दी में आचार्य उमास्वातिने 'तत्वार्याधिगम' सूत्र की रचना की उन्होंने ऐसे कई ग्रन्थ रचे, जिनमें सोमदेव का 'नीतिवाक्यामृत' नामक अर्थशास्त्र एक ऐसा ही ग्रन्थ रत्न है। महावीराचार्य का गणितशास्त्र

अपने विषय का एक ही ग्रन्थ है, और राजा अमोघवर्ष की नीतिपूर्ण 'प्रश्नोत्तर रत्नमाला' सुभाषित ग्रन्थों में अनुपम हैं। जिसका अनुवाद तिब्बतीय तथा अन्य भाषाओं मे भी हुआ है। न्याय में समन्तभद्र का 'युक्त्यानुशासन आप्तपरीक्षा' प्रमेयकमलमार्तण्ड आदि अद्वितीय ग्रन्थ हैं। इसी तरह 'महापुराण', हरिवंशपुराण' आदि पुराण ग्रन्थ अपनी निराली विशेषता रखते हैं। इसी प्रकार संस्कृत में जैनकाव्यों का महत्व अपूर्व हैं।

कवि कालिदास के 'मेघदूत' का सारा समावेश कवि जिनसेन के 'पार्श्वाभ्युदय में और कवि विक्रम के 'नेमिदूत' में बड़ी खूबी से मिलता है। भारतीय संस्कृत साहित्य में यह चमत्कारिक प्रयास अन्यत्र शायद ही देखने को मिले। ऐसे ही पवनदूत, प्राणप्रियकाव्य आदि समस्यापूर्ति के सर्वोत्तम ग्रन्थ हैं।

जिस दूत-काव्य का श्रीगणेश कवि कालिदास द्वारा हुआ था, यद्यपि 'द्विसन्धान' काव्य की समानता करने वाला 'राघवपाण्डवीय' काव्य ब्राह्मण साहित्य में भी है, परजनों में सप्तसन्धान काव्य और 'चतुर्विंशति सन्धान काव्य' जिनके एक-एक श्लोक के क्रमश सात और चौबिस अर्थ निकलते हैं। श्लेषालंकार के अनुपम और अद्भुत उदाहरण हैं। जैन सिद्धान्तों की संख्या ४५ है जिनमें ११ अंग, १२ उपांग, १० प्रकीर्ण, ६ संज्ञ, ४ मूलग्रन्थ, २ स्वतन्त्रग्रन्थ, नन्दीसूत्र और अनुयोग द्वारा माने जाते है।

१- उमास्वाती यह मगध निवासी विक्रम की पहली शताब्दी के आरम्भ में हुए। पटने में इन्होने तत्वार्थसूत्र की रचना की। इसपर समय-समय पर कई भाष्य और वृत्तियां बनी। उमास्वामी ने स्वयं इन सूत्रों पर भाष्य लिखा इस पर सिद्धसेनगणिका गन्धहस्ती भाष्य, भट्टअकलंक का राजवार्तिक तथा विद्यानन्द का श्लोक वार्तिक, इन ग्रन्थों पर प्रामाणिक भाष्य और वृत्तिया हैं। न्यायसूत्रों की तरह इन तत्वार्थसूत्रों का बड़ा ही मान है।

२- कुन्दकुन्दाचार्य यह द्रविड़ देश के विख्यात दिगम्बर जैनाचार्य थे। इनका समय भी विक्रम की प्रथम शताब्दि है। इनके चार ग्रन्थ जैनधर्म के सर्वस्व माने जाते हैं। १. नियमसार, २. पंचास्तिकायसार, ३. समयसार, ४. प्रवचनसार पिछले तीन ग्रंन्थ नाटकत्रयी के नाम से प्रसिद्ध हैं।

३- समन्तभद्र यह जैनदर्शन के सर्वमान्य आचार्य थे। यह विक्रम की षष्टशतक में हुए। इनका प्रख्यात ग्रन्थ आत्ममीमांसा है।

४- सिद्धसेन दिवाकर पंचमशताब्दि में हुए।

५- हरिभद्र अष्टमशताब्दि में हुए।

६- भट्ट्ट अकलंक आठवीं शताब्दि में हुए।

७- विद्यानन्द नवम शताब्दि में हुए।

८- हेमचन्द्र यह बारहवी शताब्दि में हुए, यह अपने समय के उद्भट विद्वान तथा

विख्यात जैनाचार्य थे। इन्होने जैन न्याय के विषय में प्रमाणमीमांसा तथा प्रमेय-बहुल इन दो ग्रन्थों की रचना की।

९- मल्लिषेणसूरि तेरहवीं शताब्दि में हुए, इनकी रचना स्याद्वादमंजरी जो हेमचन्द्र की "अन्ययोगव्यवच्छेदद्वात्रिंशिका" (बत्तीसश्लोक) की विस्तृत तथा विद्वतापूर्ण टीका है। इसमें सप्तभंगी न्याय माना गया है।

१०- गुणरत्न पंद्रहवीं शताब्दि में हुए, इन्होंने हरिभद्रषड्दर्शन समुच्चय की बड़ी सुन्दर तथा विस्तृत व्याख्या लिखी है।

भुंक्तेन केवलो न स्त्री मोक्षमेतिदिगम्बरः।
प्राहुरेषामयं भेदो महान् श्वेताम्बरै सह ॥ (जिनदत्तसूरि)

दिगम्बरों का कहना है कि (केवली) ज्ञानसम्पन्न पुरुष भोजन नहीं करता, न स्त्रियों को मोक्ष प्राप्त हो सकता है। स्त्रियों को पुरुष जन्म ग्रहण के अनन्तर ही मोक्ष प्राप्ति का विधान है।

"इकला उपजत मरत इक, दुखसुख भुगतत एक।
नरक जाय पुनि एक जिय, तथा मुक्ति हू एक ॥"

पौ० "किससे समाधि करूँ", कौन को अर्चु छोप अछोप करके, किसको बंचना दूं, भला किसके साथ कलह ठानूं, जहाँ-जहाँ देखो, तहा आत्माही हैं।" इन उदाहरणों से यह कथन सार्थक हो जाता है कि जैनों के अपभ्रंश प्राकृत साहित्य के ग्रन्थ हिन्दीभाषा के उत्पत्तिविषयक इतिहास के लिये अमूल्य सामग्री हैं। परन्तु दुःख इस बात का है न तो जैन ही अपने अमूल्य साहित्य को प्रकाशित करने में अग्रसर हैं न भारतीय विद्वान ही जैन साहित्य का अध्ययन समुचित रीति से करते हैं, जिससे उसका महत्व प्रकट हों। इस प्रकार प्राचीन जैनों का साहित्य विशाल था, उसी प्रकार बाद का साहित्य भी आज की दुनिया के लिए महत्वपूर्ण हैं।

जैन शास्त्र के सम्बन्ध में स्थानाभाव के कारण मुझे अत्यन्त संक्षेप में लिखना पड़ा मुझे खुद संतोष नहीं हुआ। क्षमा करें।

(१) 'सतशात्र' वीर, वर्ष ४० पृ० ३५३।

(२) जैनहितैषी भाग २३, पृ० ५३४।

(३) बिबुध श्रीधरकृत श्रुतावतार।

(४) 'जनरल आफ दी बिहार-उड़ीसा रिसर्च सोसाइटी' भाग ३, पृ० ४६०।

(५) 'भगवानमहावीर' पृ० २३०-२३४।

(६) "नयत्यात्मात्मैव जन्मनिर्वाणमेव वां। गुरुरात्मात्मनस्तस्मान्नान्योस्ति परमार्थतः॥"

(७) 'वीर' भाग ५, पृ० २६२।

(८) सूरीश्वर और सम्राट्' पृ० ५०-१५० तथा साउथ इण्डियन जैनिज्म भाग २, पृ० १३२।

(९) इण्डियनहिस्टोरिकल-क्वार्टली भाग २, पृ० ३०५-३०६ ।

(१०) केटलॉक आफ संस्कृत मैनुस्क्रिप्ट्स इन सी.पी., रा.व. बाबू हीरालाल द्वारा संकलित ।

(११) कमश्रबन्धु विनोद व नागरी प्रचा० सभा, भाग २, पृ० १७२-१७३ ।

(१२) दिगम्बर जैन, वर्ष १७, पृ० १२-१६ ।

सारनाथ काशी का बौद्धतीर्थ

इस आसन पर मेरा शरीर भले ही सूख जाय हड्डी, चमड़ा और मांस भले ही गल जाय, परन्तु विविध उपायों से भी दुर्लभ बोधि को प्राप्त किये बिना मैं इस आसन को छोड़कर कही न जाऊँगा ।

१२ वीं सदी में सारनाथ का नाम ऋषिपत्तन और मृगदाव था । बौद्धधर्म के संस्थापक बुद्ध थे, ये ४४८ विक्रम में कपिलवस्तु में पैदा हुये थे, इनके पिता का नाम शुद्धोदन तथा माता का नाम मायादेवी था । लुम्बिनी के वन में ताड़वृक्ष के नीचे इनके जन्म के चौथे दिन इनकी माता का देहान्त हो गया इनका पालनपोषण इनकी मौसी गौतमी ने किया था तभी से इनका नाम गौतम पड़ा । उन्नीस वर्ष की आयु में इन्होने घर त्याग दिया और कालाम गोत्र के अराड़ (अलार कालाम-पाली) मुनि से शिक्षा प्राप्त की । अराडमुनि सांख्यमतावलम्बी आचार्य थे । अश्वघोष के काव्यानुसार अराड़ से बुद्ध ने उनके उपदेशों को आधेदिन में ही सुना पर सन्तोष न हुआ, बुद्ध की पालीभाषामय जीवनी से ज्ञात होता है कि वह छह वर्षो तक शिक्षा ग्रहण करने के बाद साधन के लिए उरुबिल्व को गये । अराड़ के पास शिक्षा ग्रहण करके विशेष शिक्षा के लिए वे रूद्रकरामपुत्र (उद्दक रामपुत्त-पाली) के पास उसके आश्रम राजगृह में गये और अन्त में पच्चीस वर्ष की आयु में उन्हे ज्ञान प्राप्त हुआ, वहीं शिक्षा समाप्ति करके साधना में प्रवृत्त हुए । भगवान बुद्ध ने आसन पर बैठ कर पीपल के वृक्ष के नीचे यह निम्नलिखित संकल्प किया -

"इहासने शुष्यतु मे शरीरं त्वगस्थिमांसं प्रलयं च यातु ।"
अप्राप्य बोधिं बहुकल्प दुर्लभां नैवासनात् कायम तच्चलिष्यते ।।"

सांख्ययोग में व्यर्थ की कठोर साधना निषिद्ध है ।

ज्ञानेनैष विमुक्तास्ते सांख्याः संन्यासकोविदाः ।
शारीरं तु तपो घोरं सांख्याः प्राहुर्निरर्थकम् ।।

४५५ में काशी आये और सबसे पहले बुद्ध ने अपने धर्म का उपदेश सारनाथ में मागधी भाषा में पांच भिक्षुओं को दिया । जिनके नाम कौडिन्य, बप्प, भद्दिय, महानाम और अस्सजी था। इसे बौद्धसाहित्य में धर्मचक्र प्रवर्तन कहा जाता है । बुद्ध ने उपदेश में चार बाते बताई जिन्हे

भगवान् गौतमबुद्ध

आर्यसत्यचतुष्टय कहते है।

सत्य चार हैं। १. दुःख है, यह पहला सत्य है। २. दुःख का कारण हैं, यह दूसरा सत्य है। ३. दुःख को रोका जा सकता है, यह तीसरा सत्य है। ४. दुःख को रोकने का मार्ग है, यह चौथा सत्य है। बुद्ध ने आगे कहा संसार में दो प्रकार के मार्ग हैं, एक विषयों में लिप्त होकर सुख भोगना, गृहस्थों के लिये बुद्ध के उपदेश सिगालोवादसुत्त है। और दूसरा अनेक प्रकार के आत्मकष्टों से शरीर को पीड़ा पहुँचाना। इन दोनो से बच कर एक बीच का मार्ग है जिसे मैं मज्झिमपटिपदा कहता हूँ। इस मार्ग के आठ अंग है। इस मार्ग पर चलने से मन को शांति, संबोधि और निर्वाण मिलता है।

सारनाथ से प्राप्त एक छत्र पर खुदे हुए पाली लेख में इन आर्यसत्यों का उल्लेख है। सारनाथ में रहते हुए भगवानबुद्ध ने साठ साथियों का पहला संघ बनाया। धर्म का प्रचार करने के लिये इन्हे भिन्नभिन्न स्थानों में भेजा। यों तो सारनाथ में ही धर्म और संघ की स्थापना हुयी। बुद्ध निर्वाण के लगभग सवासौ वर्ष बाद सम्राट अशोक (२७२-२३२ ई० पूर्व) हुए। कलिंग युद्ध में मनुष्यों का विनाश देखकर वे मन में बहुत दुखी हुए और उन्होने सदा के लिये युद्ध से विरत होने की प्रतिज्ञा की। तब उनका मन बुद्ध के उपदेशों की ओर खिचा और वे एक प्रकार से बुद्ध के अनुयायी बन गए। उन्होने बुद्ध से संबन्धित पवित्र स्थानों की खोज की और उनकी यात्रा की। बुद्ध के सारनाथ पहले आने की वजह से अशोक का ध्यान इस ओर विशेष रूप से गया। वहां उन्होने कई स्मारक बनवाये, जैसे धर्मराजि का स्तूप एवं सिंह-स्तम्भ। सम्भवतः धमेखस्तूप की स्थापना भी अशोक ने की थी। चीनी यात्री फाहियान पांचवी शती के आरम्भ में सारनाथ आया था उसने यहां चार स्तूप और दो भिक्षु विहार देखे थे, तिब्बत के इतिहासकार तारानाथ का कहना है ८४,००० मठ अशोक ने बनवाये, नालन्दा बिहार की नींव अशोक ने डाली थी। सातवीं शती में हर्ष के राज्यकाल में युवान चुआङ् ने सारनाथ की यात्रा की और उसका वर्णन किया है। उसने यहां अशोक का बनवाया हुआ एक स्तूप और स्तम्भ देखा था। यहाँ हीनयान धर्म की सम्मितीयशाखा के १५ सौ अनुयायी भिक्षु रहते थे। हर्ष के कई सौ वर्षो बाद तक सारनाथ के विहार और मन्दिरों का कोई इतिहास नहीं मिलता। सन् ११९४ ईस्वी में सारनाथ को गोरी के सिपहसालार कुतबुद्दीन ने बिल्कुल नष्ट कर दिया। उसके कुछ वर्ष बाद १२२६ ई० में सम्राट महीपाल के राज्यकाल में स्थिरपाल और वसुपाल नाम के दो भाइयों ने सम्राट की प्रेरणा से काशी के देवालयों के उद्धार के साथ-साथ धर्मराजिका स्तूप और धर्मचक्र का उद्धार किया। ११ वीं सदी के अन्त में सारनाथ कलचुरी कर्णदेव के प्रभाव में आ गया था।

इसके बाद सारनाथ के वैभव का अन्त हो गया, फिर श्री अनागारिक धर्म पाल ने १९०१ में हानीलूलूकी मिसेज् फोस्टरको के ३०,००० नगद सहायता के द्वारा सारनाथ में सुन्दर विहार स्थापित किया। आधुनिक संसार को सारनाथ का परिचय उस समय मिला जब कि १७९४ ई० में काशी के बाबू जगतसिंह जो चेतसिंह के दीवान थे, इमारती समान की टोह में धर्मराजिका स्तूप कों ही उधेड़ डाला और उसके मलबे से जगतगंज मुहल्ला बनवाया। उस समय स्तूप के भीतर पत्थर की गोल पेटी में रखी हुई हरे रंग के पत्थर की एक मंजूषा मिली थी जिसमें बुद्ध की

धातुएँ थी । उन्हे गंगा में प्रवाह कर दिया गया । पत्थर का बक्सा इस समय कलकत्ते के संग्रहालय में रखा हैं । काशी के तत्कालीन अधिकारी श्री डंकन महोदय ने १७६८ ई० में इस खुदाई का वर्णन लिखा जिसे पढ़कर कर्नल मैकेजीं ने भी खुदाई की थी कुछ मूर्तियाँ मिली वो भी कलकत्ता संग्रहालय को भेज दी गयीं । सन् १८३६ ई० में श्रीयुत् कर्निघम ने सारनाथ में खुदाई की उसके भीतर से अभिलिखित एक शिलापट्ट प्राप्त हुआ और बहुत सी मूर्तियाँ मिली जो बंगाल की एशियाटिक सोसाइटी को दे दी गयी थीं ।

कर्निघम की ४० मूर्तियां और भी बहुत पत्थर का सामान ५०-६० गाड़ियाँ भरकर वरना नदी पर पुल बनाने के लिये खम्भें की नींव में लगा दिया गया । इसके बाद सन् १८५१-५२ ई० में मेजर किट्टी ने भी खोदाई कराई थी । भगवान बुद्ध ने सारनाथ में भिक्षुसंघ की नींव डाली थी । काशी के यश अपने ५४ साथियों के साथ यहीं दिक्षित हुए थे । आज वहीं भगवान बुद्ध का विशाल मन्दिर सरोवर पल्लवित वाटिकाओं और पशु-पक्षियों को सजोये हुए महाबौद्ध सोसाठटी, लिंगाथाई मंदिर, जैनमंदिर, तिब्बती बौद्धमंदिर, शिवमंदिर, वहीं समीप में अशोकस्तूप और विध्वन्स भग्नावशेष से प्राप्त मूर्तियों का संग्रहालय देखने नित्य सैकड़ों की संख्या में देशी-विदेशी पर्यटक आते रहते हैं । कुछ मिली बौद्धप्रतिमाओं से पता चलता है वज्रयान अन्तिम सीढ़ी तक पहुँच चुका था । बौद्धो के मुख्य तीन भेद हैं । महायान, हीनयान तथा वज्रयान का सम्बन्ध तन्त्र शास्त्र से है । सच कहा जाय तो बुद्ध के उस धर्म से यानि वज्रयान के बौद्धधर्म से कुछ सम्बन्ध नहीं रह गया था । मद्य-मांस और हठयोग-स्त्रियॉं इन चारो को ही वज्रयान ने मुख्य माना था । निरर्थक मन्त्रों से लोगो को इस पंथ ने भुलावे में डालने का प्रयत्न किया । इस वज्रयान में हजारों लोग सम्मिलित हुए जो बहुधा बहुत ही विभत्स और भीषण आकार वाले होते थे । इस सबके होते हुये भी उस युग की धार्मिक स्वतन्त्रता के अनुसार गहड़वाल वंश के महाराज गोविन्द देवचन्द्र का राज्य कन्नौज, अयोध्या और काशी पर हो गया था । उनकी रानी कुमारदेवी बौद्धधर्म की भक्त थी । कुमारदेवी वज्रयानी थी । उनके सारनाथ के लेख से पता चलता है कि उन्होंने सारनाथ में बौद्धधर्म अथवा वज्रयान की कितनी सहायता की। लेख के २१ से २३ वें श्लोंको में कहा गया है जम्बुकी पत्तला वालों ने सारनाथ में कुमारदेवी से प्रार्थना कीया कि धर्मात्मा अशोक द्वारा स्थापित धर्मचक्र को फिर से बनवाने अथवा मरम्मत कराने की आवश्यकता है । कुमारदेवी बनारस के लिये नई थी फिर भी उनकी प्रार्थना मान ली और बुद्ध से जम्बुकी वालों का सम्बन्ध होने से सब पत्तलिकाओं के आगे स्थान दिया । कुमारदेवी ने मरम्मत करवा दी । अथवा नई स्थापना कर के उसे वसुधारा के एक नये विहार में स्थान दिया ।

स्तूपों को लोग बड़े आदर की दृष्टि से देखते थे और उसकी पूजा करते थे । १२ वीं सदी में मित्रयोगी और जगन्मित्रानन्द एक बहुत बड़े वज्रयानी योगी हो गए हैं । इनके ग्रन्थों में 'चन्द्रराज' लेख मिलता हैं जिससे पता चलता है कि किसी राजा के लिये लिखा गया हैं, यह अनुमान है कि वह १२ वीं सदी के अन्त में उत्तरप्रदेश या बिहार का कोई राजा रहा होगा । इस

अनुमान की पुष्टि बोधगया के एक शिलालेख से भी होती है, जिसमें श्री मित्र को परमावधूत कहा गया है और यह भी बतलाया गया है कि वे काशीश्वर जयचन्द्र देव के दीक्षा गुरु थे। वे अपने समय के बौद्धधर्म के कर्णधार भी थे। ४ उपयुक्त लेख से यह पता चलता है जयचन्द्र की वज्रयान के प्रति भी रूचि थी। मध्यकालीन हिन्दू और बौद्धधर्मों में विशेष अन्तर नहीं था और हिन्दूनृपति बौद्धधर्म को भी उतनी ही श्रद्धा से देखते थे जितना अपने धर्म को, गहड़वाल युग में बनारस में विशेषकर सारनाथ में वज्रयान का प्रचार था कुमारदेवी के बिहार में एक सुरंग इस बात को साबित करती है कि उसकाल में विहारों में दुराचार काफी बढ़ गया था। श्रीराखालदास बनर्जी का तो अनुमान था कि इस मार्ग से गुप्तरूप से स्त्रियाँ विहार में दाखिल होती थी। मुहम्मद गोरी के सिपहसालार कुतुबुद्दीन ने सन् ११९४ ई० में वाराणसी की लूट के साथ सारनाथ को नष्ट कर बिल्कुल खड़हर कर दिया। भगवान बुद्ध ने ८० वर्ष की आयु में कुशीनगर (कसिया) जिला गोरखपुर में निर्वाण प्राप्त किया। भिक्षुओं का प्रथम सम्मेलन राजगृह में हुआ जिसमें बुद्ध के पट्टशिष्य आनन्द और नापित कुलोद्भूत ने बड़ा काम किया। तीन त्रिपिटक (पेटियों) का संकलन हुआ। १. सुत्तपिटक इसमें बुद्ध के उपदेश। २. विनयपिटक इसमें आचार सम्बन्धि ग्रंथ। ३. अमिधम्मपिटक इसमें दार्शनिक ग्रंथ। आगे चलकर इनके तार्किक विचारों द्वारा इनके चार भेद हो गये। १. वैभाषिक, २. सौत्रान्त्रिक, ३. योगाचार, ४. माध्यमिक (शून्यवाद)।

वसुबन्धु यह पेशावर के रहने वाले कौशिक गोत्रीय ब्राह्मण थे। जवानी में इन्होने अयोध्या को अपना कर्मक्षेत्र बनाया। इनका समय चतुर्थ शतक हैं। इनका प्रसिद्ध ग्रंथ प्रमाण समुच्चय हैं। दिङ्नाग ये बसुबन्धु के शिष्यों में थे। इनका समय पांचवी शताब्दि हैं। यह जाति से ब्राह्मण थे। शास्त्रर्थ में पटुता के कारण इन्हें 'वादीवृषभ' की उपाधि मिली थी। कुमारलात यह सौत्रान्तिक मत के संस्थापक थे। इनका समय दूसरी शताब्दि हैं। धर्मकीर्ति षष्टशतक में हुए। इनका प्रमाणवार्तिक बड़ा प्रसिद्ध ग्रंथ है। नागार्जुन यह शून्यवाद के संस्थापक थे। यह दक्षिण भारत के निवासी थे और श्री पर्वत पर रहते थे। माध्यमिक कारिका इनका प्रधान ग्रंथ है जो २७ प्रकरणों में विभक्त है। शान्ति रक्षित ८ वीं शताब्दि में हुये यह नालन्दा के बौद्ध विद्यापीठ के कुलपति थे। इनका प्रधान ग्रंथ तत्वसंग्रह है। कुमारिलभट्ट ने बौद्धन्याय का अध्ययन इन्हीं से किया था और विद्या समाप्ति पर इनके सिद्धान्तों का बड़े जोर से खण्डन किया। गुरु-निन्दा के कारण इन्होंने प्रायश्चित रूप में तूष की अग्नि में अपने शरीर को दाह कर दिया। साधारणतया लोगों की ऐसी धारणा है कि शंकराचार्य तथा कुमारिलभट्ट ने बौद्धधर्म को भारतवर्ष से जड़मूल से उखाड़ फेका, शंकाराचार्य के बाद बौद्धधर्म भारत में रहा ही नहीं। बौद्ध का अस्तित्व आठवीं शताब्दी के बाद की अनेक शताब्दियों तक यहाँ मिलता है। पालवंश के राज्यकाल में (७३० ई० से १२०० ई० के लगभग तक) बौद्धधर्म राज्यधर्म रहा। इस काल के बीच गोपाल ने उदन्तपुर में संघाराम बनवाया था और धर्मपाल ने विक्रमशिला का विश्वविद्यालय स्थापित किया था। महिपाल (९७८ ई० से १०३० ई० तक) के समय में बंगाल से 'अत्तिसा, बौद्धधर्म का प्रचार करने के लिये तिब्बत भेजे गये थे। लगभग सन् ११०० ई० में सेनवंश के

राज्य काल में प्रसिद्ध महायानी पंडित अभयाकर हुए थे। सन् १२ वीं शताब्दी तक बिहार-बंगाल में बौद्धधर्म स्थित था। मुहम्मद विनवख्तियार ने सन् ११९३ ई० में आक्रमण कर हजारों की संख्या में बौद्धधर्मानुयायियों को मार डाला। मुसलमानों के अत्याचार से और अनुयायी राजा न रहने से भिक्षुओं में डर छा गया उनमें से बहुत अपनी रक्षा के लिए तिब्बत नेपाल और उड़िसा के जंगलों में चले गये। जहाँ आज भी उनका अस्तित्व शेष हैं। कटक के पास 'सराक' में रहने वाले लोगों ने १९०१ ई० की गणना (मर्दुमसुमारी) में अपने को बुद्धधर्माविलम्बि लिखाया था। खंडगिरी में भी अनेक बौद्ध मिलते हैं, जो शून्य की उपासना किया करते है। बौद्धों का अत्यन्त ह्रास नहीं हुआ था। उसी समय में वहाँ के एक रमई पंडित ने 'शून्य पुराण' तथा अच्युतानन्द दास ने 'शून्यमाहात्म्य' नामक ग्रन्थ लिखे थे।

चैतन्यचरितामृत में भी लिखा हैं कि जब (१५१० ई० के लगभग) चैतन्य दक्षिण भारत की ओर जा रहे थे, तो उन्हे रास्ते में कुछ बौद्धधर्मावलम्बि मिले थे। तिब्बत के तारानाथ के लेखों से भी पता चलता है कि १६ वीं शताब्दी में भारतवर्ष में बौद्ध धर्म का प्रचार था। भारत से बुद्ध धर्म लुप्त होने का कारण कल्हण की 'राजतरंगिणी' के अनुसार काश्मीर में ६ ठीं शताब्दी में ही बौद्धभिक्षु शादी विवाह करने लगे थे। दूसरे चीनी यात्रि इत्सींग (६५० ई० से ७०० के लगभग) ने साफ स्वीकार किया है कि उसके समय में बौद्धधर्म ह्रास की ही ओर चलता चला जा रहा था। बौद्धधर्म का ह्रास उनकी अपनी गलतियों के ही कारण हुआ। ८ वीं शताब्दी के प्रारम्भ में बौद्धसंघारामों में असीम धनराशि इकट्ठी हो गई थी। यही उनके नाश के बाह्यकारणों में एक था। इनका ह्रास सबसे पहले सिन्ध से ही प्रारम्भ हुआ। वहाँ उनकी संख्या अस्सी फीसदी थी। वे उस समय बुद्ध की वास्तविक शिक्षा अहिंसा के मूलतत्व को भूल गये थे। केवल बाह्यरूप को ही धर्म समझ बैठे थे। वैराग्यप्रधान धर्म को उन्होने भोगप्रधान मान लिया था। इसलिए सन् ७१२ ई० में जब मुहम्मदविनकासिम का आक्रमण हुआ तो उन्होंने राजा को आधीनता स्वीकार कर लेने की सलाह दी और सिन्ध का फाटक अरबों के लिये खोल दिया। यह समझ कर की मुसलमान सभ्य है, यह उनका भ्रम था। बौद्धभिक्षु एक ही जगह सैकड़ों की संख्या में रहते थे। इसलिए मुसलमानों ने शीघ्र पहचान कर धार्मिक जोश में इन्हे मूर्तिपूजक और धनाढ्य देखकर ढूढ़-ढूढ़कर कत्ल करना आरम्भ किया। श्रमणों के नाश होने से महायान का विकास हुआ, तो लोगो ने सभी तत्वों का उद्धार करना अपना लक्ष्य बना लिया। उसकी साधना के लिये उन्होंने षट्पारमिताएँ बतलाई।

बुद्धभक्त महायानियों ने सुखावती मार्ग की आयोजना की संसार को त्रिगुणात्मक सत, रज, तम से पूर्ण समझा। उन्होंने ऐसे लोक की कल्पना की और उनका विचार था कि उस लोक में केवल सुख ही सुख हैं। उस लोक में बसने वाले ४६००० अप्सराओं के साथ विहार करते हैं और उस लोक के मालिक अमिताभ हैं। उन्हे ही उस लोक में लोगों के लेने का पूर्ण अधिकार है। बिना उनकी प्रार्थना किये उसलोक में प्रवेश नहीं पा सकता। एकबार भी आर्त होकर ध्यानपूर्वक ध्यानसूत्र का पाठ करने वाले का सभी काम बन जायगा। इन कल्पनाओं से यह दोष

आ गया कि लोग ज्ञान के मार्ग से हटने लगे । नेपाल के बौद्ध परिव्राजकों ने विवाह करना आरम्भ कर दिया ।

भिक्षु-भिक्षुणियों में शुद्ध प्रेम चला और उसी को लोग उन्नति का मार्ग मानने लगे । धीरे-धीरे वे लोग शील का परित्याग कर सांसरिकता के अंधेरे कूप में जा पड़े । इसीलिए बौद्धधर्म लोप होने की दिशा में आ गया । हिन्दुओं ने यह अनुभव किया यज्ञ-यागादि में पशुओं की हिंसा करना व्यर्थ है । शंकराचार्य ने लोगो को संगठित करने के लिए मठों की स्थापना की । हिन्दुधर्म उदारता में अग्रगण्य हैं चाहे जिस किसी भाव से ही क्यों न हो, उन्होने बुद्ध को भी एक अवतार मान लिया । यह उनके हृदय की विशालता थी । साधारण जन-समाज ने भी समझ लिया कि यदि मूर्ति पूजा ही करनी है तो चाहे वह शिव या विष्णु की हो या बुद्ध की हो बात एक ही हैं । बोधगया में आज भी बुद्ध की मूर्ति को चन्दन आदि लगाकर वैष्णवों जैसे कपड़े पहना दिये गये है । उपासना का भेद दूर कर दिये जाने पर ब्राह्मणों ने बौद्धधर्म को हिन्दूधर्म में मिला कर नाश होने से बचा लिया । भगवान बुद्ध का ८० वर्ष की आयु में कुशीनगर गोरखपुर में निर्वाण के बाद, सन् ५४३ ई० पूर्व अन्त्येष्टिक्रिया के बाद उनकी चिता में से ४ दाँत मिले । कलिंग के राजा ने इनमें से तीन को लेकर शीघ्र ही अपनी राजधानी में पहुँचा दिया । इस प्रकार उस नगर का नाम दन्तपुर रक्खा गया । सन् ३११ ई० में अनिरूद्धपुर के राजा ने सिंहलद्वीप के मध्यभाग में केण्डी के सुन्दर झील के सामने सुरम्य स्थान पर एक मंदिर का निर्माण करोड़ो की लागत से कराकर उसका नाम दन्तमंदिर रखकर भगवान बुद्ध के उस पवित्र दाँत को वहां रक्खा। बौद्ध लोगों का विश्वास है कि इस मंदिर में भगवान बुद्ध का असली दाँत रक्खा हुआ हैं। उस महापुरुष के इस चिह्नावशेष को हर प्रकार से यहाँ सुरक्षित रक्खा गया है । संसारभर के बौद्धधर्मावलम्बियों का इस पर बहुत ही प्रेम और श्रद्धा हैं और भी बहुत से दाँतों का बुद्धभगवान से सम्बन्ध बतलाया जाता है परन्तु "दालदामालिगवा" के दाँत पर हर एक बौद्ध की विशेष श्रद्धा है, जिसके कारण इसका स्थान सर्वोच्च माना जाता हैं । फिर भी हमें यह कहना पड़ेगा कि जब तक किसी आदमी में पराकाष्ठा की श्रद्धा न हो, तब तक कोई इसे मनुष्य का दाँत मानने को तैयार नहीं हो सकता, क्योकि इसका मनुष्य के दाँत से कुछ भी साम्य नहीं दिखाई पड़ता । सर एडविन आरनोल्ड, जो बौद्ध धर्म के आचार विचार के बहुत ही भक्त है, अपनी पुस्तक (हिन्दुस्तान की पुनः यात्रा) में लिखा है कि इसका मनुष्य के दाँत से नाम मात्र का भी साम्य नहीं है । यह मगर के दाँतो से ज्यादा मिलता जुलता है । पर इससे क्या ? बौद्ध लोग तो उसे बुद्ध भगवान का असली दाँत ही मानते हैं और संसार भर की चीजों की अपेक्षा इसे अधिक पवित्र मानते हैं । यह एक ऐसा स्मृति चिह्न है जिसके लिये अनेकों लड़ाइयाँ लड़ी गई, खून-खराबियाँ हुई और उसको खरीदने के लिये लोग असंख्य धन देने को तैयार थे । १६ वीं शताब्दी में इसके केण्डी में सुरक्षित आ जाने के कारण केण्डी जो पहले पहाड़ी प्रदेश का एक छोटा सा गाँव था, अब एक मशहूर शहर बन गया है । पहले हर साल इस तीर्थस्थान पर पूर्वीयदेशों से लाखों यात्री अपने जान को भी खतरे में डालकर आते थे । इस चिह्न के दर्शनार्थ

उन्हे कठिन पहाड़ी मार्ग से आना पड़ता था। ये लोग श्रद्धांजलि में सोना, चाँदी एवं बहुमूल्य जवाहरातों को श्री रूप में इस पर चढ़ाते थे। इसके सम्बन्ध में एक दन्तकथा प्रसिद्ध है कि सिंहल द्वीप के एक राजा ने इस पर एक ही तरह के ६० लाख फूल चढ़ाये थे और दूसरा नित्य प्रति १ लाख फूल चढ़ाया करता था और इसके बारे में यह भी कहा जाता है कि वह प्रतिदिन एक नवीन प्रकार का ही फूल चढ़ाया करता था। यह दाँत देखने में एक विकृत हाथी दाँत के टुकड़े की तरह है। इसकी शक्ल आयत की तरह है यह १.२५ इंच लम्बा है और अन्त में नुकीला हो गया है। केन्द्र में इसका व्यास आधे इंच के लगभग है। खास-खास उत्सवों पर ही इसको सर्वसाधारण देख पाते है। सन् १८७५ में प्रिन्स आफ वेल्स के समय और सन् १८८२ ई० में उनके पुत्रों के आगमन पर यह सब लोगों को दिखाया गया था। इसके अतिरिक्त मंदिर की सफाई एवं मरम्मत के लिये जब रुपयों की आवश्यकता होती है तब भी इसकी प्रदर्शनी की जाती हैं और तब लाखों आदमी इसके दर्शन के लिये यहां आते है। मिस गार्डन कमिगस् को इसी प्रकार की किसी प्रदर्शनी में इसे देखने का सुअवसर मिला था। आप लिखती है कि मंदिर का दृश्य अत्यन्त मनोरंजक था। लोगों की उत्सुकता एवं नाना प्रकार की रंग-बिरंगी सजावटे उस स्थान को बहुत रम्य बना रही थी। श्रद्धालु स्त्री-पुरुषों और बच्चों के समूह उस पर अपनी-अपनी श्रद्धांजली भेंट करते थे। फूल के साथ-साथ जवाहिरात, रुपये, रेशमी वस्त्र इत्यादी भी चढ़ाये जाते थे, ये सब चीजें मंदिर के एक कोने में रखी जाती थी। यहीं पर कीर्तन का भी प्रबन्ध किया गया था। उसके निकट ही एक ऊँचे चबूतरे पर एक से एक सटे पंक्तिबद्ध वृद्ध-युवक और बालक पीतवस्त्रधारण किये हुए सब पुजारी एकत्रित थे। उनके बगल में मंदिर के प्रबन्ध से सम्बन्ध रखने वाले सभी प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित थे। ये लोग एक अस्थायी वेदी के चारों ओर बैठे हुए थे वहां पर एक चांदी की मेज तथा सोने और चांदी का अठपहलू ठोस गुम्बज पतले खम्बे पर खड़ा हुआ था इसके दोनो बगल में एक छोटे से स्तूप में राजकीय बहुमूल्य रत्नजटित पदार्थ रखे हुए थे। परन्तु सभी की आँख केन्द्र की स्फटिक मूर्ति पर ही गड़ी हुई थी, जिसके अन्दर एक सुवर्णमय कमल का फूल था। इस फूल के ऊपर सुनहले तार के सहारे वह पूजनीय दाँत रक्खा हुआ था। असंख्य श्रद्धालु आदमियों की दृष्टि में यह महात्मा गौतमबुद्ध का ही दाँत है। यद्यपि इसका दर्शन केवल खास-खास अवसरों पर ही हो पाता हैं, परन्तु हर साल अगस्त के महिने में एक रत्नजटित पात्र में रखकर शहर के चारों ओर इसका जुलूस निकाला जाता है। यह ऐतिहासिक उत्सव दो हजार वर्षों से भी अधिक समय से होता आ रहा है, और इस उत्सव की गणना संसार के अद्भुत दृश्यों में की जा सकती है। इस अवसर पर मंदिर के सामने नाना प्रकार के आभूषित हाथियों का झुंड खड़ा रहता है। उन सबों में सब से सुन्दर हाथी के ऊपर हौदे के अन्दर यह पवित्र दंत रक्खा जाता हैं। इसके बाद दो सुसज्जित हाथियों पर वहां के रईस लोग अच्छी पोशाक पहन कर बैठते है। इन लोगो के नौकर सोने और चांदी के छत्र लिये पीछे बैठे रहते हैं। इसके साथ नृत्य करने वालों का भी एक समूह रहता है, जो अनेक प्रकार के नृत्य दिखाते चलते हैं। यह जुलूस लगभग एक मील लम्बा होता है। इसमें

४० हाथी रहते है सैकड़ों मशालों की रोशनी में यह जलूस आगे की ओर बढ़ता जाता है। इस जगह हिन्दू और बौद्ध-धर्म का विचित्र सम्मिश्रण दिखाई पड़ता है, क्योकि इस जलूस के साथ हिन्दू-देवताओं की मूर्तियां भी निकाली जाती है। इस विचित्र दंत का संक्षिप्त इतिहास लिखने के पूर्व "दालदामालगवा" के सम्बन्ध में कुछ कहना आवश्यक है। हाते के अन्दर बनी हुई कई इमारतों के बीच में यह मंदिर है। इसका आकार अठकोना है इन बीच की इमारतो में बहुत ही अच्छी-अच्छी चित्रकारियां है। बाहर के मंदिर में भी अच्छी चित्रकारी नजर आती है। इसमें बुद्धदेव की मूर्तियाँ विशेषतः उल्लेखनीय है। अन्दर जाने पर हम उस जगह पहुँते हैं, जहाँ भगवान् बुद्ध का पवित्र दांत रखा हुआ है इस कमरे के अन्दर मन्द ज्योति में एक चाँदी की चौकी दिखाई पड़ती हैं इसके चारों ओर मजबूत सींकचे लगे हुए है, उनके भीतर अत्यन्त सुरक्षित ढंग से यह पवित्र दांत रखा गया है। बड़े बड़े अवसरों पर यह दांत निकाल कर लोगों को दिखाया जाता है उस मंदिर में जहाँ यह रखा गया है, आस-पास के मंदिरों में नाना प्रकार के रत्न और मणि इत्यादि जड़े हुए है। इस विपुल सम्पत्ति के अतिरिक्त राजाओं की दी हुई बहुत सी बहुमूल्य चीजे हैं, जिसमें एक मरकतमणि की बनी हुई बुद्धदेव की ३ इंच लम्बी और दो इंच चौड़ी मूर्ति भी है। वहाँ के पुजारी इसकी रक्षा बहुत ही अच्छी तरह से करते हैं। उत्सवों पर बाहर निकालने पर किसी को छुने नहीं देते। कहां जाता है कि १०० वर्ष पूर्व श्याम निवासियों ने एक दूत के हाथ यह कहला भेजा था कि हम ७॥ लाख रुपये देने को तैयार हैं, यदि श्याम भेज दिया जाय, परन्तु वहां के लोगों ने इस प्रस्ताव को घृणा के साथ ठुकरा दिया। उस दूत को वह पवित्र दांत देखने की आज्ञा भी बड़ी मुश्किल से दी। उस पवित्र दांत के सामने आते ही उसने एक छोटे से कपड़े के टुकड़े का उसमें रगड़ कर तेल की शीशी में डुबा दिया, जिससे वह तेल पवित्र हो गया। उस तेल में मानों पवित्र करने की इतनी शक्ति समझी जाती थी जिससे सारे श्याम की भूमि पवित्र हो सकती थी। इस पर वहां के पुजारियों के क्रोध की सीमा न रहीं, पर वह दूत अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक उस बहुमूल्य वस्तु को लेकर श्याम को लौट गया। मंदिर के हाते में संस्कृत और पाली की पुस्तके हैं। अनेक पुस्तकों के कवर बड़े सुन्दर बने हुए हैं। किसी-किसी में तो जवाहिरात जड़ी हुई है। धार्मिक और ऐतिहासिक पुस्तकों के अतिरिक्त ज्योतिष और गणित की भी पुस्तकें है।अष्टकोण बुर्ज के ऊपर से कैण्डी की झील का मनोहर दृश्य दिखाई पड़ता हैं। यहां इस पवित्र दांत का संक्षिप्त इतिहास लिखना जरूरी है। सन् ५४३ वर्षपूर्व उनकी चिता से कलिंगनरेश अपनी राजधानी ले गये और उनका वहाँ खूब स्वागत हुआ। वहाँ के एक बौद्ध राजा ने सभी ब्राह्मणों को अपने राज्य से निकालने की आज्ञा दी। उन लोगों ने सम्राट से प्रर्थना की। सम्राट ने उस राजा को परास्त कर उन दांतों को उठा कर लाने के लिये एक सेना भेजी। कहा जाता है कि उन दांतों को देखते ही सारी सेना बौद्धधर्मावलम्बि बन गई, परन्तु वे लोग नम्रता पूर्वक सम्राट के सामने उस दांत को ले गये। वहां इसको नष्ट करने के लिये आज्ञा दी गई। ब्राह्मणों ने इसको नष्ट करने के लिये बहुत प्रयत्न किये परन्तु सभी विफल हुए। इन लोगों ने उसे अग्नि में जलाया परन्तु अग्नि के ज्वाला में से यह कमल के फूल के

आवरण सहित सुरक्षित निकल आया। उन लोगों ने दांत को हथौड़े से चूर कर देना चाहा मगर इसको कोई क्षति नहीं पहुँची तब लोगों ने इसकों हाथी के पैरो तले रौदवाया की जमीन में दांत धँस जाय फिर भी इसे कोई असर नहीं हुआ। तब सम्राट पर इसका इतना गहरा असर पड़ा कि वे बौद्ध हो गये। ततपश्चात् यह दांत कलिंग के राजा को लौटा दिया गया। परन्तु जब शत्रुओं ने उन पर आक्रमण किया तो उन्होने यह दांत अपनी पुत्री को यह कह कर दिया कि इसे छिपाकर अपने जूड़े में रख लो। उसने राजा की आज्ञानुसार ऐसा ही कर के सिंहलद्वीप की ओर प्रस्थान किया। सन् १३१३ ई० में यह सिंहलद्वीप के अनेक नगरों में एक जगह से दूसरी जगह हट-हटा कर रक्खा गया। जहां कही हटाकर रक्खा जाता था, वहीं पर एक सुन्दर मंदिर असकी रक्षा के लिये बनाया जाता था। इसके बाद मालावार के राजा ने सिंहलद्वीप के राज्य पर चढ़ाई की और वे इसको अपने यहां ले आये। परन्तु सिंहलद्वीप के राजा ने सन्धिकर इसे फिर प्राप्त कर लिया। लोगों ने बड़े उत्साह एवं उमंग से इसका स्वागत किया। इसके बाद सन् १५६० ई० में पोर्तगीज लोगों का आक्रमण हुआ। इन लोगों ने अन्य बहुत सी चीजों के साथ-साथ इस पवित्र दांत को भी लूट लिया और इसे अपनी राजधानी गोवा में लाकर रक्खा। यद्यपि बौद्ध राजाओं ने इसके लिए विपुल सम्पत्ति देनी चाहि, परन्तु पोर्तगीज अधिकारी किसी भी प्रकार के प्रलोभन मे न आ सके। कहा जाता है कि आर्च विशैपउनगौसपर ने वायसराय के आगे इसे चूर कर धूल में मिला देना चाहा परन्तु फिर भी यह नष्ट न हो पाया। क्योकि अगर यह नष्ट हो गया होता तो आज केण्डी की सुरक्षित दीवारों के अन्दर कैसे दिखलाई पड़ता बौद्धधर्म के भक्त अनुयायियों का विश्वास है कि कमल के फूल के अन्दर दैवी प्रक्रिया से यह फिर नूतन हो गया और इस प्रकार यहां के बौद्धराजाअें को पुनः प्राप्त हो गया।

संसार के सभी जगह बौद्धमतावलम्बी करीब उनकी संख्या ४० करोड़ से भी अधिक ही होगी इनके आदिग्रन्थ पाली में है और बहुत विस्तृत ही इस ग्रन्थ का नाम 'जातक' है। इन जातक ग्रन्थों में महात्मा बुद्ध के ५५० प्राचीन जन्मों की कहानियाँ संग्रहीत है। चन्द्रगुप्त मौर्य के पहले २० जातकों का जन्म हो चुका था। पिटक ग्रन्थों मे भी जातक कथाएँ उपलब्ध होती हैं, सुत्तपिटक में ३५ जातक कथाएँ संग्रहीत है, जो ईसा के जन्म से ३८० वर्ष पूर्व लिखा गया है।

सुप्रसिद्ध चीनी यात्री फाहियान ने सन् ४०० ई० में लिखा है 'अभयगिरी पर बोधिसत्व (महात्मा बुद्ध) के पिछले जन्मों के लंका में ५०० चित्र खुदे हुए है। महाकवि बाणके अपने 'हर्षचरित' में भी इन जातक ग्रन्थों का जिक्र किया है। प्रत्येक जातक में महात्माबुद्ध के एक-एक जन्म की कथा स्रग्रहीत है। इस तरह कुल मिलाकर ५५० जातक है। ये जातक २२ खण्डों में विभक्त है।

इन निपातों का विभाग पद संख्या के आधार पर है। पहले निपात में एक-एक पद्य के १५० जातक हैं। दूसरे निपात में दो-दो पद्यों के १० जातक, तीसरे और चौथे निपात में क्रमशः तीन और चार पद्यों के ५०-५० निपात है।

इसी तरह अगले निपात में पद्यों की संख्या बढती जाती है जातकों की संख्या कम होती

जाती है। इक्कीसवें निपात में ८०-८० पद्यों के सिर्फ पाँच जातक है। बाईसवे निपात में १० जातक है और पद्यों की संख्या और भी अधिक है।

जातक ग्रन्थों की ये कहानियाँ सभी प्रकार की है। किसी में बोधिसत्व शेर बनकर पैदा हुआ है, किसी में गीदड़, किसी में कौवा और किसी में मनुष्य, वह भी सभी स्थितियों का। बहुत से जातक मौलिक हैं और अनेक जातक ऐसे भी है जिनकी कहानियाँ परम्परा द्वारा पहले से चली आ रही थी सिर्फ उनमें बोधिसत्व का नाम जोड़ दिया गया।

आज से २००० वर्ष पूर्वका भारत क्या सोचता था, कैसे वायुमंडल में साँस लेता था, किन आदर्शो की रक्षा करता था। यह सब जानना हो तो जातक ग्रन्थों से बढ़कर अच्छा साधन आपको और न मिलेगा।

पाली-वाङ्मय और उसके निर्माता भदन्तशान्तिभिक्षु पालि-भाषा में तिपिटक (त्रिपिटक), उसकी अट्ठ कथाएँ तथा टीकाएँ और इने गिने फुटकर ग्रन्थ हैं। पालि में सब के सब ग्रन्थ दो सौ से कुछ ही ऊपर हैं। संस्कृत भाषा में ग्रन्थों की संख्या चालीस हजार से ऊपर पहुँच चुकी है। उसको देखते हुए पालि का साहित्यिक रूप बहुत संकुचित जान पड़ता है। जिस तरह संस्कृत में विविध विषयों के ग्रन्थ हैं, उस तरह पालि में नहीं। पालि का अध्ययन भी किसी ललित रुचि के कारण नहीं किया जाता है। केवल बौद्ध धर्म के अध्येताओं के लिए ही उसका उपयोग है। त्रिपिटक के ग्रन्थ ५ त्रिपिटक में तीन-पिटक या पिटारिया हैं। बौद्ध परम्परा के अनुसार पहला विनयपिटक है, दूसरा सुत्तपिटक (सूत्रपिटक) और तीसरा अभिधर्म (अभिधर्मपिटक)। विनयपिटक में पाँच भाग है :- १. पराजिक, २. पाचित्तिय ये दोनो सुत विमंग कहलाते है। ३. महावग्गा, ४. चुल्लवग्गा ये दोनो खन्धक (स्कन्धक) कहलाते है। ५. परिवार। सुतपिटक का विभाजन यों है -

(क) १. दीघनिकाय (दीर्घनिकाय), २. मज्झिमनिकाय (मध्यमनिकाय), ३. संयुतनिकाय (संयुक्त निकाय), ४. अंगुतरनिकाय (अकीत्तरनिकाय, एकोत्तरनिकाय) - चतुर्निकाय या चतुरागम। (ख) ५. खुद्दकनिकाय (क्षुद्रकनिकाय) - क्षुद्रक निकाय में सिंहल परम्परा के हिसाब से १५ और बर्मी परम्परा के हिसाब से १६ ग्रन्थ हैं। श्याम (थाइलैण्ड) से कम्बोज अक्षरों में मुद्रित क्षुद्रकनिकाय में कुल सात ग्रन्थ छपे हैं तथा बाकी ग्रन्थों को कदाचित प्रक्षिप्त मानकर त्रिपिटक के भीतर छोड़ दिया गया है। ये १५ ग्रन्थ यों है :-

१. खुद्दकपाठ (क्षुद्रकपाठ), २. धम्मपद (धर्मपद), ३. उदान, ४. इतिवुत्तक (इतिवृत्तक, इत्युक्तक), ५. सुत्तनिपात (सूत्रनिपात, निपात - समूह, संग्रह), ६. विमानवत्थु (विमानवस्तु), ७. पेतवत्थु (प्रेतवस्तू, वस्तूकथा), ८. थेरगाथा (स्थविरगाथा), ९. थेरीगाथा (स्थविरगाथा, स्वविरागाथा), १०. जातक, ११. निद्देस (निर्देश-व्याख्या), १२. पटिसम्भिदामग्ग (प्रतिसंवितूमार्ग ज्ञानमार्ग), १३. अपदान (अवादन-उत्तम चरित्र), १४. बुद्धवंश (बुद्धवंश), १५. चरियापिटक (चर्यापिटक, चर्य-आचरण-परहित-सेवा) इनमें से ६ से १० और १३ से १५ ये आठ ग्रन्थ

श्यामी परम्परा में उपेक्षित है । बर्मी परम्परा में मिलिन्दपञ्ह (मिलिन्दप्रश्न), सुत्तसंग्रह (सूत्रसंग्रह), पेडकोपदेश (पिटकोपदेश), नेत्तिपकरण (नेतृप्रकरण, नेतृ - नायक - मीमांसक - विवेचक)।

ये चार ग्रन्थ अधिक है । इससे स्पष्ट है कि समूचे क्षुद्रक निकाय की प्रामाणिकता पर संदेह होना कोई आज की बात नहीं है ।

लुप्त अट्ठकथाओं के नाम ये है- १. महा अट्ठकथा (सुत्तपिटक अट्ठकथा), २. महापच्चरी (अभिधम्मपिटक अट्ठकथा), ३. कुरून्दी (विनयपिटक अट्ठकथा) १४ वीं शती के ग्रन्थ सद्धम संग्रह के अनुसार । ४. चूलपच्चरी, ५. अन्धट्ठकथा, ६. पण्णवार, ७. संखेपट्ठकथा, इनका उल्लेख परिजबुद्धि और साख्यदीपिनी (विनयपिटक की समन्तपासादिका अट्ठकथाकी टीकाओं) में है ।

दीपवंश- दीपवंश में सिंहल जाति के आरम्भ से लेकर महासेन (३२५-३५२ ई०) तक का इतिहास है । बुद्धघोष ने इस ग्रन्थ से बहुत से उद्धरण दिये हैं । बिल्हेल्म गाइगर को इसकी भाषा की बड़ी शिकायत है- 'ग्रन्थकार का पालिज्ञान बड़ा अधूरा था और पढ़-लिखकर उन्होने जो (ऐतिहासिक) सामग्री जुटाई थी, वही पूरे तौरपर उनकी भाषा का सहारा थी ।'

बुद्धघोष की अट्ठकथाएँ- बुद्धघोष उत्तर भारतीय ब्राह्मण थे और राजा महानाम के समय (४५८-४८० ई०) सिंहल आए । बुद्धघोष द्वारा लिखे गए अट्ठकथाओं के ग्रन्थ -

१. समन्तपासादिका (विनयपिटक अट्ठकथा), २. सुमंगलविलासिनी (दीघनिकाय - अट्ठकथा), ३. कंखावितरणी (पातिमोक्स अट्ठकथा), ४. पंपचसूदनी (मज्झिमनिकाय अट्ठकथा), ५. सारत्थपकासिनी (संयुत्तनिकाय अट्ठकथा), ६. मनोरथपूरणी (अगुत्तरनिकाय अट्ठकथा), ७. परमत्थजोतिका (खुद्दकपाठ और सुत्तनिपात अट्ठकथा), ८. अट्ठसालिनी (धम्मसंगणि अट्ठकथा), ९. संमोहविनोदनी (विभंग अट्ठकथा), १०. पंचप्पकरणट्ठकथा (अभिधम्मपिटक), ११. धम्मपदट्ठकथा, १२. जातकट्ठवण्णना, १३. विसुद्धिमग्ग (बौद्ध आचार योग और तत्ववाद का प्रतिपादक सुन्दर ग्रन्थ) गाइगर ने इसकी बौद्ध सिद्धान्तों का विश्वकोष कहकर प्रशंसा की है। बुद्धघोष को महावंस में उत्तर भारत के बोधगया स्थान का बताया गया है ।

धम्मपालकी अट्ठकथाएँ - धम्मपाल बुद्धघोष से बहुत दिन बाद नहीं हुए । यह भारत के दक्षिणीछोर वदरतित्थ के निवासी माने जाते हैं । अनुराधापुर के महाविहार में रहकर इन्होनो भी पुरानी अट्ठकथाओं का अध्ययन किया और खुद्दकनिकाय के उन ग्रन्थों पर अट्ठकथाएँ लिखी जिनपर बुद्धघोष ने नहीं लिखी थी । इनकी सभी अट्ठकथाओं का एक ही नाम परमत्थपकासिनी है, जो खुद्दक निकाय के निम्नलिखित ग्रन्थों पर है - १. उदान, २. इतिवुत्तक, ३. विमानवत्थु, ४. पेतवत्थु, ५. थेरगाथा, ६. थेरीगाथा और ७. चरियापिटक । इन ग्रन्थों पर अट्ठकथा के अतिरिक्त इनके निम्नलिखित ग्रन्थ और माने जाते है - ८. परमत्थमंजूषा (या महाटीका)

(विसुद्धिमग्गपरटीका), ९.नेत्तिप्पकरण संवण्णना (नेत्तिप्पकरण पर टीका), १०. लीनत्थवण्णना नेत्तिप्पकरणसंवण्णना (नं० ९) परटीका, ११. लीनत्थपकासिनी, बुद्धघोष की चारों निकायो की अट्ठकथा पर टीका जो शायद लुप्त हो चुकी है । १२. जातकट्ठ कथाटीका, १३. मधुरत्थविलासिनी पर टीका, १४. अणुटीका ये तीनो भी कदाचित लुप्त हो चुकी हैं ।

धम्मपाल की अट्ठकथाओं में भी अनेक कथाएँ और अतिकथाएँ है, जिनके बारे में विण्टरनिट्ज महाशय का कहना है कि वे निस्सन्देह अतिपुरानी परम्परा के आधार पर पढ़ी गई है । यदि यह बात ठीक है है, तब जातक कथाओं और धम्मपद अट्ठकथाओं की कहानियों की तरह धम्मपाल की अट्ठकथाओं की कहानियाँ भी प्राचीन भारत के जीवन को जानने के लिए बहुत महत्वपूर्ण है । विण्टरनिट्ज इन कहानियों पर शायद बहुत मुग्ध हो गए हैं और विमानवत्थु की अट्ठकथा की कहानियों के बारे में कह दिया है कि कितनी ही बातों में मूल ग्रन्थ विमानवत्थु की कहानियों से अट्ठकथा की कहानियाँ कहीं अधिक मूल्यवान हैं ।

अन्य लेखकों की टीकाएँ और ग्रन्थ-बुद्धघोष और धर्मपाल के प्रसंग में निम्नलिखित ग्रन्थकारों और उनकी कृतियों का नाम ले लेना चाहिए । ग्रन्थकार बुद्धघोष की लिखी मधुरत्थविलासिनी का मधुरत्थपकासिनी (बुद्धवंसटीका) २ विनयविनिच्छय ३ उत्तरत्थविनिच्छय ४ अभिधम्मावतार ५ जिनालंकार (लुप्त) आनन्द की कृतियाँ अभिधम्ममूलटीका (अभिधम्म की अट्ठकथाओं पर टीका) परम्परा के अनुसार बुद्धदत्त और आनन्द दोनो ही बुद्धघोषकालीन हैं । हां, बुद्धदत्त की कृतियों के बारे में बहुत कुछ सम्भव है, ३ चूलधम्मपाल (आनन्द का शिष्य) सच्चसंखेप ४ उपसेन सद्धम्मप्पजोतिका या सद्धम्मट्ठितिका (निद्देसपर टीका) ५ महानाम सद्धम्मप्पकासिनी (पटिसंभिदामब्बटीका) ६ कस्सपमोहविच्छेदिनी, अनागतवंस (बुद्धमैत्रेयकावर्णन) ७ खेम खेमप्पकरण ८ अनुरूद्ध (५ वीं शती) अभिधम्मत्थसंग्रह (भारत में तर्कसंग्रह जिस तरह आरम्भिक तर्क के लिए पढ़ा जाता है, वैसे ही बौद्धदेशों में इसका पठन होता है । यह अभिधर्म का अत्यधिक लोकप्रियग्रन्थ है ।) परमत्थविनिच्छय, नामरूपविनिच्छय ९ धम्मसिरि (११ वीं शती) खुद्दकसिक्खा, मूलसिक्खा, महावंश (सिंहलके इतिहास के लिए दीपवंश की तरह ही महत्वपूर्ण ग्रन्थ । यह दीपवंश तथा अन्य पुरानी परम्पराओं के आधारपर लिखा गया है ।) १० महासामी (११ वीं शती) १२ महानाम (छठी शती) १३ उपतिस्स (११ वीं शती) बोधिवंश या महाबोधिवंश (अनुराधापुर में संघमित्रा द्वारा लाई गई बुद्धगया के बोधिवृक्ष की शाखा की ऐतिहासिक कहानी) इन ग्रन्थों और ग्रन्थकारों के साथ पालि-वाङ्मय का महत्वपूर्ण अंश पूरा हो जाता है । बुद्धघोष के बाद ग्यारहवीं शतीतक बस यही इनेगिने ग्रन्थकार और ग्रन्थ उत्पन्न हुए । ग्यारहवीं शतीतक के इस साहित्य में केवल एक ही प्रवृत्ति है कि टीका और व्याख्या करना । अपवाद रूप से छोटे-छोटे प्रकरण ग्रन्थ लिखे गए जो सिर्फ आरम्भिक छात्रों को त्रिपिटक के विषयों में थोड़ा सा परिचय करा सकते हैं ।

कच्चायन और उनका व्याकरण

कच्चायन ने अपने व्याकरण का ढांचा शर्ववर्मा के 'कातन्त्र' के अनुसार बनाया है। 'कातन्त्र' स्वयं ही एक अवैज्ञानिक व्याकरण है। इसकी रचना का ऐतिहासिक कारण बतलाते हुए जयचन्द्र विद्यालंकार कहते है "जब आर्य उपनिवेश भारत वर्ष के बाहर स्थापित होने लगे और अनार्यभाषी तथा फुर्सतवाले (शास्त्रान्तर रताश्चये) लोगों को संस्कृत के किसी सुगम व्याकरण की जरूरत हुई। ठीक तब (अन्दाजन ७८ ई०) पुराने ऐन्द्रपद्धति की सुगम परिभाषाएँ बर्तनेवाला कातन्त्र व्याकरण तैयार हुआ।" इसी अधूरी शैली वाले व्याकरण पर निर्भर रहकर कच्चायन ने अपना व्याकरण लिखा। पाली भाषा में सामान्य प्रवेश के अतिरिक्त यह भाषा का वास्तविक स्वरूप नहीं रखता। पाली भाषा का संस्कृत से जो ऐतिहासिक सम्बन्ध है, उसकी इसने पूरी उपेक्षा की है।

बुद्धघोष की रचनाओं में कच्चायन के पारिभाषिक शब्दों का उल्लेख नहीं दिखाई देता, अतः उनके बाद ही कच्चायन को होना चाहिए। कच्चायन का समय बहुत कुछ अनिश्चित है। कहा जाता है कि वर्मा में यह ग्रन्थ पाँचवीं शती में पहुँचा। इसके ऊपर बहुत सी टीकाएँ लिखी गई। न्यास पुरानी टीका है, जिसका दूसरा नाम मुखमत्तदीपनी है। इसके रचयिता विमलबुद्धि बारहवीं शती से पहलें के हैं और वह इस बात से प्रकट है कि १२ वीं शती के छपदने उनकी टीका पर 'न्यासप्रदीप' नाम की नई टीका लिखी।

बारहवीं शती के ग्रन्थकार और उनकी कृतियाँ - सिंहल के राजा पराक्रम बाहु के समय (११५३-११८६) स्थविर महाकस्सप के अधीन एक चौथी संगीति हुई, जिसका मुख्य प्रयोजन बुद्धघोष की अट्ठकथाओं को अध्ययन की सुविधा के लिए टीकाओं से सजाना था। उस समय बहुत सी टीकाएँ बनी, जिनमें सिर्फ एक (सारत्थदीनी) ही बची हुई है। वे टीकाएँ यों है -

१. सारत्थदीपिनी समन्तपासाविका (१८।१) की टीका, २. पठमसारत्थमंजूसा सुमंगलविलासिनी (१८।३) की टीका, ३. दुतियसारत्थ मंजूसा पपंचसूदनी (१८।४) की टीका, ४. ततिय सारत्थमंजूसा सारत्थप्पकासिनी (१८।५) की टीका, ५. चतुत्थ सारत्थ मनोरथपूरणी (१८।६) की टीका, ६. पठमपत्थप्पकामिनी अट्ठसालिनी (१८।८) की टीका, ७. दुतियपरमत्थप्पकासिनी सम्मोह विनोदिनी (१८।६) की टीका, ८. ततिय परमत्थप्पकासिनी पंचप्पकरणट्ठकथा (१८।१०) की टीका सारत्थदीपिनी की रचना सारिपुत्तने की थी। इनकी रची निम्नलिखित कृतियाँ और भी मानी जाति है- 'लीनत्थप्पकासिका' (पपंचसूदनों की टीका) और 'विनयसंग्रह'। गंधवंस के अनुसार मनोरथपूरणी की टीका सारत्थमंजूसा भी इन्ही की रचना है।

सारिपुत्त के शिष्यों के नाम और रचनाएँ यों है :- संघरखित की लिखी खुदक सिक्खा (२५) टीका इसका नाम नवटीका भी हैं, जिससे जान पड़ता है है कि यह महासय की रची

पौराण टीका के बाद की हैं । ये दोनो टीकाएँ अबतक लिखित रूप में ही है । बुद्धनाथ की लिखी विनयट्ठमंजूसा-कंखावितरणी (१८।२) की टीका वासिस्सर की लिखी मूलसिक्खा अभिनव टीका (२५) यह विमलसार की पौराणटीका के बाद की हैं, जो इसके नाम से प्रकट हैं । सीमालेकार संग्रह खेमप्पकरण (२५) टीका नामरूपपरिच्छेद (२५) टीका सच्चसंखेप (२५) टीका अभीधम्मावतार (२५) टीका रूपारूपविभाग विनयविनिच्छय (२५) टीका उत्तरविनिच्छिय (२५) टीका सुमंगलप्पसादिनी खुद्दकसिक्खा (२५) टीका ११ थूपवंस सुमंगल की लिखी अभीधम्मत्य विभावनी अभिधम्मत्य संग्रह (२५) टीका सच्चसंखेप टीका या अभिनय टीका धम्मकीत्ति की लिखी दाठावंश मेधंकर की लिखी जिनचरित बुद्धरक्खित की लिखी जिनालंकार सधम्मजोतिपाल (छपद) (सिंहल प्रवासी वर्मी, सारिपुत्तकी ही मण्डली के, (११७०-११८० ई०) १. विनयसमुट्ठानदीपनी , २. पातिमोक्खविसोधनी, ३. विनयगूढट्ठदीपनी, ४. सीमालंकारसंग्रह टीका, ५. तातीकत्थदीपनी, ६. पट्ठानगणनानय, ७. नामचारदीप, ८. अधीधम्मत्थ संग्रह (२५) संखेपटी का, ९. गंधसार (ग्रन्थानुक्रमणी) धम्मविलास (सारिपुत्त) (छपद के साथी वर्मी भिक्षु, मृत्यु तिथी १२४६) ।

इस शती में या इससे कुछ पूर्व जो एक महत्वपूर्ण ग्रन्थ की रचना हुई, वह है महावंस की टीका वंसत्थपकासिनी । सिंहल परम्परा समझने के लिए यह ग्रन्थ बहुत उपयोगी हैं । इसके कर्त्ता और समय दोनो के बारे में निश्चय से कुछ पता नहीं । ग्रन्थ में दाठोपविस्स (६७० ई० के लगभग) का उल्लेख होने से उसके पीछे की रचना हैं । १२ वीं शती के थूपवंस से वह अवश्य पहले की है और यह बात थूपवंश में उसके उद्धरणों से प्रकट है ।

तेरहवीं शती के ग्रन्थकार और रचनाएँ वेदेहथेर की लिखी (१३ वीं शती) की समन्तकूटवण्णना और रसवाहिनी (कहानियाँ) बुद्धप्पिय लिखी (१३ वीं शती), १. पंचमधु, २. अत्तनगलुविहारवंस धम्मकिति की लिखी (१३ वीं शती) की चूलवंश (महावंश का नया अंश, सिंहल प्रवासीवर्मी) १२ वीं शती तक का सिंहल इतिहास । इसमें बाद का भी इतिहास जुड़ता रहा ।

सिद्धत्य (१३ वीं शती) इनकी लिखी सारसंग्रह धम्मकिति महासामी (१३ वीं शती) उनकी लिखी सद्धम्मसंग्रहमेधकर (सिंहल प्रवासी वर्मी, १४ वीं शती) इनकी लिखी लोकप्पदीपनसार महामंगल (१४ वीं शती) इनकी लिखी बुद्धधोसुप्पत्ति इसी युग की कदाचित् दो-तीन रचनाएँ और हैं, जिनके लेखकों और उनके समय के बारे में कुछ पता नहीं । पंचगतिदीपन, सद्धम्मोपायन तेलकटाहागाथा । १५ वीं शती के बाद वर्मी भिक्षुओं ने अभिधर्म के अध्ययन में कुछ चुस्ती दिखलाई, फलतः कितने ही छोटे मोटे ग्रन्थ लिखे गए :- अरियवंस (१४४२-६८) १ मणिसार मंजूसा (अभिधम्मत्थविभाविनी, २८) टीका २ मणिदीप (अट्ठसालिनी टीका) ३ जातकविसोधन सद्धम्मपालसिरी (१५ वीं शती) नेत्तिभावनी (नेत्तिप्पकरण टीका) सीलवंश (१५ वीं शती) की लिखी बुद्धालंकार (काव्य) रट्ठसार (१५ वीं शती) की लिखी कायविरतिगाथा सद्धम्मालंकार (१६ वीं शती) की लिखी पट्ठानदीपनी महानाम (१६ वीं शती)

की लिखी मधुसारत्थदीपनी (मूलटीका, २५ की टीका) बुद्धघोष (१६ वीं शती) की लिखी मनुसार (धर्मशास्त्र) तिपिंटकालंकार (१७ वीं शती) की लिखी १ वीसतिबण्णना (अट्ठसालिनी, १८८, की आरम्भिक गाथाओं की टीका) २ यसवड्ढनवत्थु ३ विनयसलंकार (विनयसंग्रह, २७, की टीका) तिलोकगुरु (१७ वीं शती) की लिखी - १. धातुकथा टीकाबण्णना, २. धातुकथा अनुटीकाबण्णना, ३. यमकबण्णना, ४. पट्ठनबण्णना सारदस्सी (१७ वीं शती) की लिखी धातुकथा योजना महाकस्सा (१७ वीं शती) की लिखी अभिधम्मत्थगंठिपद वाणाभिवंस (१८ वीं शती, की लिखी पेटकालंकार, नेत्तिप्पकरण, १५, वर्मा के संघराज) टीका २ साधुविलासिनी ३ चतुसामणेखत्थु, राजाववादवत्थु, आदि कथाएँ ४ राजाधिराजविलासिनी (महाराज वोदोपया की जीवनी) ५ माललंकार (बुद्ध की जीवनी) पंचासामी (१८६१ ई०) १ सासनवंस (बौद्धधर्म का इतिहास, वर्मा में रचित) १६ वीं शती के अज्ञात नामवाले ग्रन्थकारों की रचनाएँ ये हैं - नलाटधातुवंय, छकेसाघतवंस, संदेसकथा, सीमाविवाद, विनिच्छय कथा, गंधवंस (पालिग्रन्थों की सूची, वर्मी में रचित)। पालि-भाषा के शब्दशास्त्र और आलंकारिक इन ग्रन्थों के अतिरिक्त सिंहल और वर्मा में व्याकरण, कोश, छन्द और अलंकार शास्त्र पर कुछ ग्रन्थ लिखे गए। व्याकरण में कच्चायन का जिक्र हो चुका है। बाद में सिंहल में परक्कमबाहु प्रथम (११५३-११८६ ई०) के समय में अनुराधापुर के थूपाराम के भिक्षु मोग्गलागने एक और व्याकरण लिखा मोग्गलान व्याकरण वृत्ति और पंचिका के साथ विद्यालंकार परिवेश से (१६३६ ई०) में छप चुका है।

जिसमें चन्द्रगोमिनके व्याकरण के सहारे मुख्य ढाँचा बनाया गया है। इसके अतिरिक्त अग्गवंस (बर्मीभिक्षु) ने सद्दनीति नामक एक और- व्याकरण ग्रन्थ (११४५ ई०) लिखा गया है। जो कच्चायन पर आधारित होते हुए भी बड़ी विशद शैली में लिखा गया है। इन तीनों व्याकरणों के ऊपर फिर कितने ही प्रकरण ग्रन्थ और प्ररिवार ग्रन्थ है जिनका प्रयोजन केवल छात्रों को सहायता देना है। इन ग्रन्थों का शास्त्रीय मूल्य बहुत कम है। कोषों में 'अभिधानप्पदीपिका' नामक एक कोष मोग्गलान का लिखा हुआ है, जो परक्कमबाहु प्रथम के समय का है। बारहवीं शती के संघरक्खित के रचित दो ग्रन्थ वुत्तोदय (वृत्तोदय) और सुबोधालंकार छन्द और अलंकार पर हैं जिनमें मौलिकता नहीं है। जर्मन पण्डित एम. विण्टरनिट्ज ने अपने सुन्दर ग्रन्थ 'भारतीय वाङ्मय का इतिहास' मूल ग्रन्थ जर्मन भाषा का है। अंगरेजी अनुवाद कलकत्ता विश्वविद्यालय से १६३३ ई० में छपा है और प्राप्य है। २ लन्दन से छपा है और प्राप्य है १६३३ में। ३ लंदन से १६२८ ई० में छपा है और दुर्लभ हो चुका है। ४ लन्दन से १६०६ में छपा है और दुर्लभ हो चुका है। ५ मूलग्रन्थ जर्मन भाषा का है। अंगरेजी अनुवाद १६४३ ई० में कलकत्ता विश्वविद्यालय से छपा है। ६ विस्तार के लिए देखिए धर्मानन्द कोसम्बी का लेख, धर्मदूत, अक्टूबर, १६४२। ७ सुतविभाग और परिवार का हिन्दी-अनुवाद अभी नहीं हुआ है। राहुलसांकृत्यायन ने प्रतिमोक्षसूत्र, महबग्ग और चुल्लबग्ग का अनुवाद 'विनयपिटक' शीर्षक से किया है। ग्रन्थमहाबोधि-सभा, सारनाथ से १६३५ ई० में छपा है। पाराजिकों का विवरण भी

उक्तलेखक ने बुद्धचर्या (त्रिपिटकके संकलित अंश) के पृष्ठ ३०८ से ३२१ में अनूदित किया है।

बुद्धचर्या एक बड़ा ही सुन्दर संकलन है। इसमें बुद्धजीवन, धर्म और उस समय की प्रधान भौगोलिक और ऐतिहासिक बातों का भी अच्छी मात्रा में संकलन है। संवत् १६८८ में स्व. शिवप्रसाद गुप्त ने काशी से इसका प्रकाशन किया था। दीधनिकाय का हिन्दी अनुवाद जगदीश काश्यप और राहुल सांकृत्यायन ने किया है। मज्झिम निकाय का अनुवाद राहुल सांकृत्यायन ने किया है। दोनों ही महाबोधि सभा सारनाथ ने प्रकाशित किय हैं। ज. का. ने संयुक्तनिकाय का अनुवाद कर डाला है, जो महाबोधि सभा में पड़ा है।

धम्मपद की संस्कृत छाया भाषानुवाद सहित राहुल सांकृत्यायन द्वारा भाषानुवाद सहित आनन्द कौसलायन द्वारा सम्पादित कराकर महाबोधि सभा ने छापा है। जातक अट्ठकथा का अनुवाद आनन्द कौसलायन कर रहे है। तीन भाग छप चुका है। अगली तीन या चार जिल्दों में ग्रन्थ पूरा हो जायगा। प्रकाशन हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग की ओर से है।

उदान का हिन्दी अनुवाद जगदीश कश्यप ने किया है, जो महाबोधि सभा सारनाथ से १६३२ में छप चुका है। नागरी संस्करण डा० पी.वी. बापट पूना १६४० ई०। ११, १२ तीनो संगीतियों और त्रिपिटक के लेखबद्ध होने की कहानी के लिए विनयपिटक का चुल्लवग्ग, बुद्धघोष की विनय अट्ठकथा समन्त पासादिका की निदान अट्ठकथा देखनी चाहिए।

इनका हिन्दी अनुवाद राहुल सांकृत्यायन की बुद्धचर्या के ५४८ से ५८० पृष्ठों में है। महावंश के ३-५ अध्याय भी द्रष्टव्य है। हिन्दी अनुवाद के लिए आनन्द कौसल्यायन का महावंश (हिन्दी साहित्य सम्मेलन से प्रकाशित) देखिए।

दीपवंश ४-६ अध्याय और कथावत्थु प्रकरण की अट्ठकथा का उपोद्धात भी द्रष्टव्य है। बुद्ध के बाद बौद्धों में किस तरह सम्प्रदाय भेद होते गए, इसके जानने के लिए कथावस्तु प्रकरण का उपोद्धात (निदानट्ठ कथा) बहुत महत्वपूर्ण हैं। देखिए, विण्टर निट्ज का इण्डियन लिटरेचर, भाग २, पृष्ठ ७७ तथा टिपणी १-२।

मूलपाली (नागरी संस्करण) आ०डी० वड्डेकरने किया है, जिसका प्रकाशन १६४० ई० में बम्बई विश्वविद्यालय से हुआ है।

जगदीश कश्यप द्वारा कृत हिन्दी अनुवाद का प्रकाशन उ० कित्तिमा ने १६३७ में सारनाथ से किया है।

नागरी संस्करण (डा० पी.वी. बापट पूना १६४२ ई०) मोग्गलान व्याकरण वृत्ति और पंचिका के साथ विद्यालंकार-परिवेण से (१६३१) में छप चुका है।

देखे विष्णुपुराण, तृतीय अंश, अध्याय १८ तथा भागवतपुराण स्कन्ध १, अध्याय ३, श्लोक २४ और स्कन्द २, अध्याय ७ श्लोक ३७। देखे 'दर्शन-दिग्दर्शन' (बुद्धधर्म प्रकरण), और 'भारतीय दर्शन की आलोचना', 'विशाल भारत', मार्च १६४६।

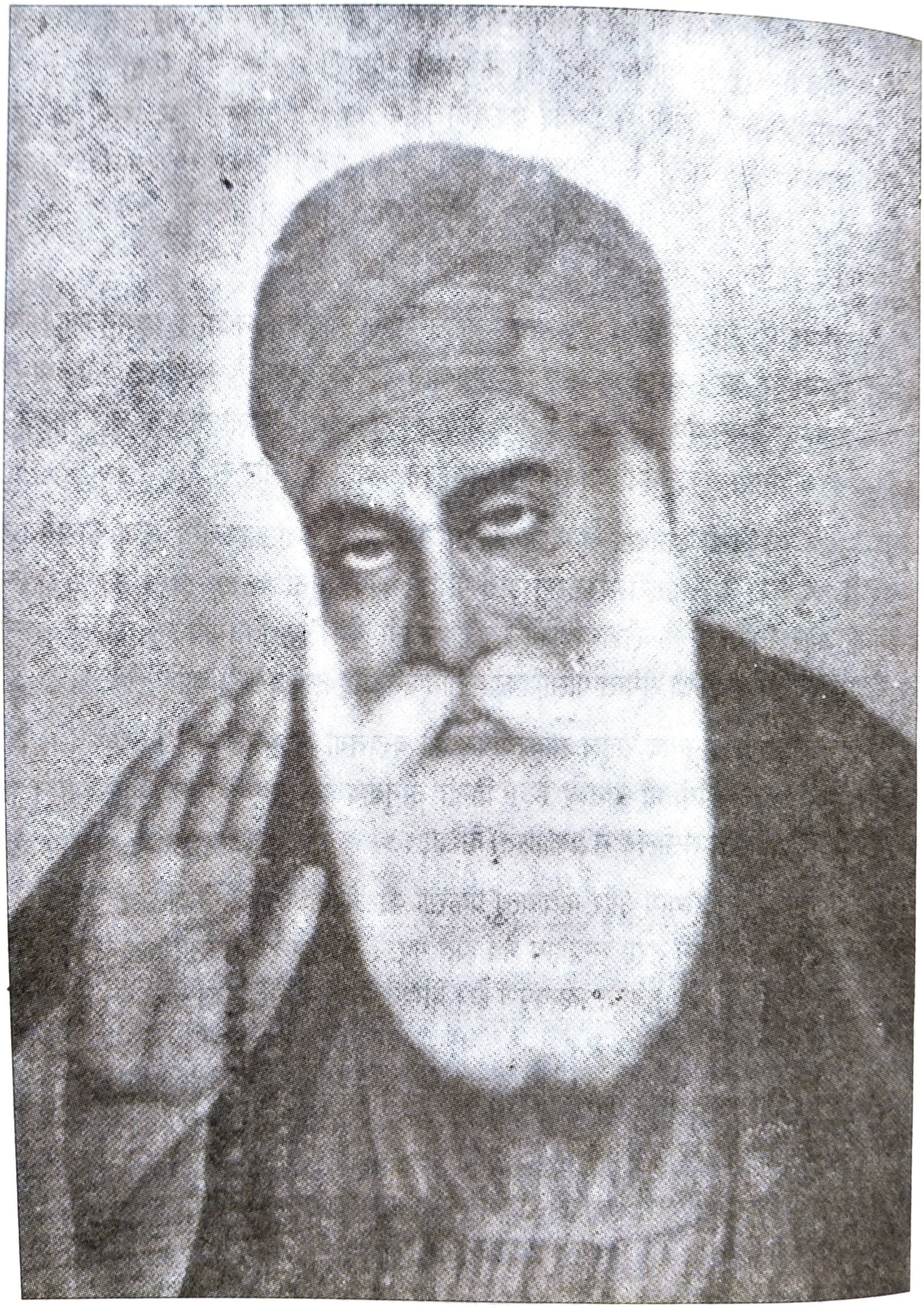

श्री गुरुनानक देवजी

सिक्खों के गुरुद्वारे

काशीपुरी में सिक्ख धर्म के प्रवर्तक गुरु नानकदेवजी गुरु तेगबहादुरजी एवं गुरु गोविन्द सिंहजी पधारे थे।

सिक्ख धर्म के व्यास भाई गुरुदास और दशमेश पिता द्वारा भेजे गए प्रथम पाँच निर्मल सन्तों ने भी इस पुरी को अपना आवास बनाया था। विक्रम संवत् १५६३ महाशिवरात्रि के पावन पर्व पर गुरुद्वारा गुरुबाग गुरु नानकदेवजी का आगमन काशीपुरी में हुआ था। आप पण्डित गोपाल शास्त्रीजी के लक्सा स्थित बाग में रुके। यहाँ रह कर आपने अपने उपदेशामृतों से जनता को प्रभावित किया। जिसके फलस्वरूप पण्डित गोपाल शास्त्रीजी ने अपना बाग गुरु नानकदेवजी को समर्पित कर दिया। यही बाग गुरुबाग के नाम से प्रसिद्ध है। इसी स्थान पर गुरुद्वारा बना दिया गया है।

गुरुद्वारा बड़ी संगत नीचीबाग

आसभैरव (नीचीबाग) में गुरु नानकदेवजी के अनुयायी कल्याणजी रहते थे। सिक्ख सम्प्रदाय के नवम् गुरु तेगबहादुरजी १६६६ ई० में काशी आगमन पर यही रुके थे। यही पर स्थित गर्भगृह में आपने १३ दिन तक तपस्या की थी। एक दिन ग्रहण के अवसर पर बाबा कल्याणदासजी ने गुरु तेगबहादुरजी से गंगा स्नान के लिए कहा। इस पर गुरुजी ने घर के भूमि में लगी एक शिलाको खुदवा दिया। शिला के हटते ही गंगा की निर्मल धारा बह चली। यह स्थल बाऊली साहब के नाम से प्रसिद्ध है और इसके जलको अमृत मानकर श्रद्धालु जन ग्रहण करते हैं। गुरु तेगबहादुरजी ने अपना मलमल का एक चोला (कुर्ता) तथा चरणपादुका भाई कल्याणजी को प्रदान किया। जो यहां पर मौजुद है। पटना साहिब से आनन्दपुर साहिब जाते समय सातवर्षीय गुरु गोविन्द सिंहजी ने भी यहाँ निवास किया था और आपने अपना मखमली (जूता) इस संगत को प्रदान किया जो आज भी सुरक्षित है।

यहाँ पर गुरु तेगबहादुरजी और गुरु गोविन्द सिंहजी तथा माता साहिब देवजी के हुक्मनामे भी सुरक्षित हैं। यहीं पर एक गुरुद्वारा बना जो उदासी महन्तो के अधिकार में था। सिक्खों ने बड़ी कठिनता से इसे इनके कब्जे से मुक्त करा कर सन् १९५० ई० में इसका जीर्णोद्धार किया।

काशीवास के काल में गुरु तेगबहादुर सिंहजी ने जगतगंज धूपचण्डी के श्रद्धालुजनों के निवेदन पर जगतगंज त्रिमुहानी पर एक मकान में रह कर सतसंग किया। यह मकान भी गुरुजी को समर्पित कर दिया। उपयुक्त तीनों स्थान का प्रबन्ध गुरुद्वारा प्रबन्ध कमेटी करती चली आ रही है।

विश्वेश्वरगंज के समीप जतनबर मुहल्ले में चेतनमठ स्थित है यहां छठवें गुरु हरिगोविन्द साहबजी के समय गुरु घराने के व्यास भाई गुरुदास महाराजजी काबुल से आकर

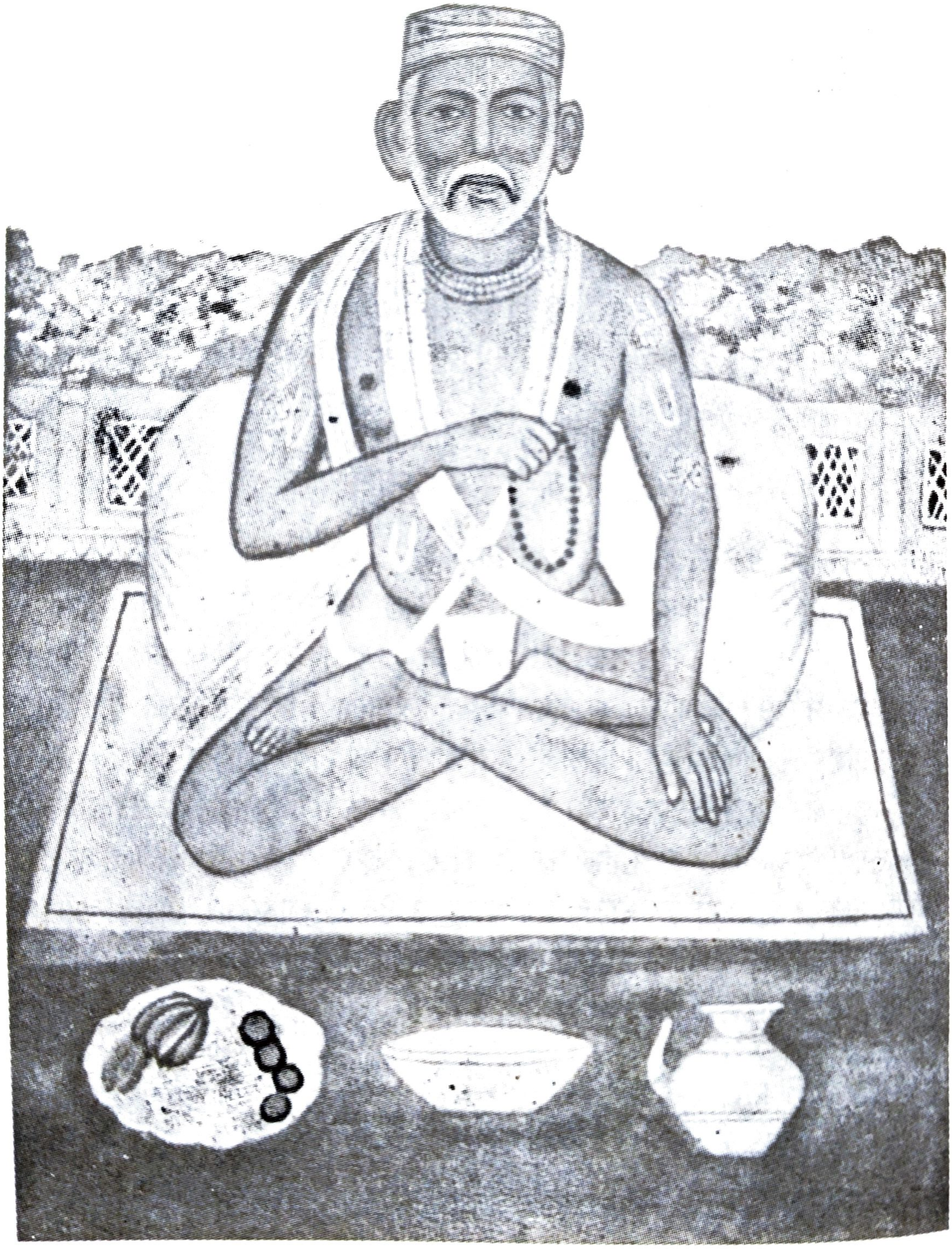

श्री विष्णुस्वामी सम्प्रदाय के प्रथम प्रवर्तक
श्री १००८ रणछोड़दास जी महाराज सतुआ बाबा

काशी में यहीं ठहरे थें। इनसे प्रभावित होकर उस समय के काशीनरेश ने यह स्थान इन्हें समर्पित कर दिया।

गुरु गोविन्द सिंहजी ने आनन्दपुर साहिब से अपने पांच शिष्यों को भगवा कपड़ा पहना कर संस्कृत विद्याध्ययन के लिए भाई गुरुदासजी के पास भेजा था। आजतक इस स्थान में निर्मल संस्कृत विद्यालय चल रहा है। यह स्थान निर्मल संतो के प्रबन्ध में है।

इस प्रकार काशी सिक्खों का भी मुख्य धार्मिक स्थान है। यहाँ दूर-दूर से सिख यात्री इन स्थानों के दर्शनार्थ आते रहते है।

काशी संत-महात्माओं का साधनाकेन्द्र

१. संत स्वामी रामानन्दजी, सन् १३०० ई०, निवास पंचगंगाघाट।
२. संतकबीरदास, सन् १३६६ ई०, निवास लहरतारा ग्राम।
३. भक्त रैदास, सन् १३८२ ई०।
४. संत बाबा मलूकदास, सन् १५७५ ई०।
५. संत गोस्वामी तुलसीदास, वि०सं० १६३३, सर्वप्रथम निवास प्रह्लादघाट।
६. संत एकनाथ, सन् १५८३ ई०, निवास पंचगंगाघाट।
७. श्री वल्लभाचार्य, सन् १४७८ ई०।
८. श्री तैलंगस्वामी, वि०सं० १७४५, निवास पंचगंगाघाट।
९. संत श्रीकाष्ठजिह्वा स्वामी, सन् १८५० ई०, निवास रामनगर।
१०. जगद्गुरू शंकराचार्य, सन् ७८८ ई०, निवास मणिकर्णिका पश्चात गणेशमहाल।
११. श्रीधरस्वामी, ११ वी शताब्दी, निवास पंचगंगाघाट।
१२. स्वामी रामेश्वर योगी, वि०सं० १६०० के समकक्ष, निवास नाटीइमली।
१३. नृसिंहसरस्वती, सन् १४०८ ई०, निवास पंचगंगाघाट।
१४. गुरु नानकदेव, सन् १५०६ ई०, निवास लक्सा गुरूबाग।
१५. संत सुन्दरदास, सन् १६३३ ई०, निवास अस्सीघाट।
१६. बाबाकिनाराम, वि०सं० १६८४, निवास भदैनी।
१७. दादूराम संत, संवत् १६६३, निवास अस्सीघाट।
१८. संतज्ञानेश्वर, संवत् १३३२ वि०सं०।
१९. संत निर्मलदासजी, सन् १७११ ई०, निवास लाहौरीटोला।
२०. संत बुलाल साह, सन् १७५५ ई०।
२१. स्वामी विवेकानन्द, सन् १९०२, निवास प्रमदा मित्र और कालीकृष्ण ठाकुर
२२. स्वामी भास्करानन्द, सन् १८३३ ई०, निवास दुर्गाकुण्ड।
२३. सतुआबाबा, सन् १८२८ ई०, निवास मणिकर्णिकाघाट।
२४. स्वामी विशुद्धानन्दजी, सन् १८६४ ई०।

२५. योगी श्यामाचरण लाहिड़ी, ७२ वर्ष तक रहें।
२६. स्वामी ब्रह्मानन्द, सन् १६३२ ई०, निवास केदारघाट।
२७. श्री हरिहरबाबा, सन् १६४६ ई०, निवास अस्सीघाट।
२८. स्वामी मनीषानन्द जी, सन् १८५५ ई०, निवास टेढ़ीनीम।
२६. स्वामी चिदम्बरानन्द, सन् १६२२ ई०, निवास कमच्छा।
३०. स्वामी वीतरागानन्द, वि०सं० १८६६, निवास वनपुरवाँ गाँव वाराणसी।
३१. स्वामी सच्चिदानन्द, निवास राजघाट।
३२. महिला संत मौजी बाबा, सन् १८५६ ई०।
३३. योगिराज ज्ञानानन्द, सन् १८४५ ई०, निवास लहुराबीर।
३४. मौनीबाबा, सन् १६१२ ई०, निवास शीतलाघाट।
३५. शंकर स्वामी (खिचड़ी बाबा), सन् १६३६ ई०, निवास दशाश्वमेध घाट।
३६. केना ब्रह्मचारी, सन् १८५५ ई०, निवास मानमन्दिर घाट।
३७. नागाबाबा, सन् १८६० ई०, निवास दशाश्वमेध घाट।
३८. संतज्ञानेश्वर, १२६२।
३६. बाबाटीकमदास, सन् १८०० ई०, निवास कमच्छा।
४०. श्रीस्वामीप्रेमानन्द तीर्थ, सन् १८७१ ई०, निवास लक्ष्मीकुण्ड।
४१. स्वामीपद्मनाभ, सन् १२६६ ई०।
४२. स्वामी श्रीविश्वाराध्यजी, ६ ठीं शताब्दी, निवास जंगमबाड़ी।
४३. ऊर्ध्वबाहुस्वामी, १२ वीं शताब्दी, निवास सारनाथ।
४४. बाबा खराबदास, १८ वीं शताब्दी, निवास गंगा उसपार।
४५. संत सिद्धगिरि, १८ वीं शताब्दी, निवास ललिताघाट।
४६. कुमारस्वामी, १६ वीं शताब्दी, निवास केदारघाट मानसरोवर।
४७. अपारनाथ, १६ वीं शताब्दी, निवास विश्वनाथगली।
४८. स्वामी सतगुरुदयाल, सन् १८५० ई०, निवास गढ़वाघाट गुफा में।
४६. पौहारी बाबा, १७ वीं शताब्दी।
५०. गोसाई दीनदयालगिरी, १८ वीं शताब्दी, निवास गायघाट।
५१. स्वामी गोविन्दानन्द, १७ वीं शताब्दी, निवास टेढ़ीनीम।
५२. स्वामी सरस्वतीदास जी, निवास संखुधारा।
५३. योगी श्रीहरिनारायणब्रह्मचारी, सन् १८६२ ई०, निवास देवनाथपुरा।
५४. श्री गंगाप्रकाशब्रह्मचारी, सन् १६६८ ई०, निवास अस्सीघाट।
५५. श्री गुरुनाथअवधूत, सन् १६५०, निवास अगस्तकुण्ड।
५६. श्रीवामनस्वामी, संम्वत् १८६६।
५७. औघड़बाबा जैनारायण, २० वीं शताब्दी, निवास सेनपुरा औघड़नाथ का तकिया।

५८. चैतन्यमहाप्रभु, १४८५-१५२७, निवास जतनबड़ चैतन्यमठ।
५९. रामानन्द, १३००-१४००, निवास पंचगंगातट।
६०. गोस्वामीतुलसीदास जी, का जन्म १५५४ कोई कोई १५३२ कहते है। मृत्यु १६८० कोई कोई १६२३ कहते है।
६१. बल्लभाचार्य, १४७६-१५३१, निवास हनुमानघाट।
६२. रामदासजी शिवाजी के गुरु, १६३४।
६३. श्रीमदाद्यशंकराचार्य, खि. ६५६।
६४. श्रीरामकृष्ण परमहँस, सन् १८६८, निवास केदारघाट बापुली भवन।

पण्डितराज जगन्नाथ

पण्डितप्रवर मेरूभट्ट के पुत्र पण्डितराज जगन्नाथ अपने सहपाठी शाहजहाँ के पुत्र दाराशिकोह के आमन्त्रित किये जाने पर दिल्ली जाकर के शाहजाहाँ के सभा पण्डित हो गये थे। शहजहाँ ने भी उन्हे साम्राज्य पण्डित, कविराज इत्यादि उपाधियों से विभूषित किया। 'दाराशिकोह' के महल के एक भाग में इनका निवास स्थान था।

खृष्टाब्द १६५७ वर्ष में पुत्र औरंगजेब ने अपने पिता शाहजहाँ को जेल में डाल दिया, तब पण्डितराज ने मथुरा जाकर के निवास करते हुए दिल्लीपति की छत्रछाया में पूरी आयु बिता दी इसी कारण पश्चाताप रूप तपस्या करते हुए यमुना तट पर (१६७४) देह त्याग दिया। पण्डितराज जगन्नाथ के विषय में विद्वानों से लेकर स्त्री और बच्चों ने प्रसिद्ध पण्डितराज के अभ्युत्थान को न सहन करने वाले अभिमानी पण्डितों ने विद्वानों के विपरीत यवनी परिणय विषयक लज्जाजनक प्रत्यारोप पागलपन ही उनका माना था। किन्तु जो 'अप्पथ्या' दीक्षित भट्टोजी दीक्षित आदि श्रेष्ठ विद्वानों के द्वारा 'यह यवन है' ऐसा कह करके पण्डितराज का बहिष्कार किया।

ऐसा सुना जाता है। वह तो यवन संसर्गादिमूलक ही है। स्वभाव से कठोर म्लेच्छवस्त्र से ढके हुए अपनी दासियों के भी मुखों पर हिन्दुओं के नयनपात को नहीं सहन करते थे तो फिर किस प्रकार यवन सम्राट काम से परिपूर्ण मनवाले ब्राह्मण पण्डितराज को अपने सामने ही अपनी कन्याविषयकी प्रार्थना से प्रसन्न होता हुआ उनको अपनी कन्या दे कर अपने यवन के श्रेष्ठत्व का तिरस्कार कर यवनी नवनीत कोमलांगी इत्यादी इनके श्लोक, उनके कवितारत्न मंजूषा भामिनी विलास और अन्य ग्रन्थों में उपलब्ध नहीं होते है। सार्वभौम म्लेच्छाधिपति दिल्लीश्वर प्यासाही सभा में अपनी कन्या द्वारा लाया हुआ जल नहीं पीता। अथवा सूर्य को न देखने वाली राजकन्या दासी की तरह शिर पर स्वर्णकलश रख कर के सभा में न ले जाति। इन्हीं कारणों से पण्डितराज विषयक यवनी परिणयरूप कथा आकाश कुसुम की तरह प्रतीत होती है और भी वृद्धावस्था में काशी में बावन सीढ़ियों से निर्मित दुर्गाघाट पर स्थित होकर

म्लेच्छ के घर में निवासकालिक उन्ही के द्वारा विरचित गंगालहरी श्लोकों के द्वारा भागीरथी की स्तुती की, प्रसन्नहृदयवाली भागीरथी होती हुई यवनी के सहित पण्डित जगन्नाथ को हाथों में लेकर अपने जलरूपी शरीर में विलय कर के पवित्र किया, ऐसी वार्ता भी यवनी परिणय विषयक दंत कथा ही मात्र है।

पण्डित जगन्नाथ के द्वारा विरचित "रसगंगाधर और दूसरे प्रबन्ध-काव्यों में गंगालहरी श्लोक उपलब्ध मात्र है। अर्थात अन्यप्रबन्धादि ग्रन्थों में स्पष्टता से नहीं प्राप्त होते हैं।

मथुरा विषयक उनका निधन राजकीय इतिहास में वर्तमान हैं। इसके पश्चात १६५८ खृष्टाब्दवर्ष में औरंगजेब सम्राट बना। उसने खृष्टाब्द १६६६ वर्ष के सितम्बर महीने में आगरा नगर के दुर्ग के एक देश में कपाट से बन्दी किया। शिवाजी महाराज छद्मवेश में उसदुर्ग से निकल कर काशी में स्नानादि करके अपनी राजधानी को चले गये। काशी आगमन और तीर्थ स्नानादि का हलान्त 'मुन्तखबुल्-लुबाब' नामक यवन ग्रन्थ से प्राप्त होता है और यह वृतान्त लेखक भाना नामक आयुर्वेद चिकित्सक ब्राह्मण ने खपना वृतान्त सूरत गगर में लिखा था उसी से प्राप्त होता है और वही यह वृतान्त उसकी भाषा शैली में यहाँ अनुवाद किया गया है।

आद्यशंकराचार्य का काशी आगमन

आद्यशंकराचार्य का जन्म कलि के ३५०१ वर्ष पहले केरल प्रदेश के कालटी वर्तमान तिरुवितां कूर 'ट्रावनकूर', रियासत की उत्तरी सरहद पर वृषपर्वत के निकट पूर्णा नदी के तट पर बसा हुआ एक छोटा सा गाँव है। पुराने ज़माने में यह गाँव कोच्चिन के राजाओं के अधिकार में था। (कालटी) को मलयालम भाषा में पावों तले होता है। शंकराचार्य का ६५६ ई० में कैप्पाल्लिनामक नम्बूदिरी ब्राह्मण के घर जन्म हुआ था।

आचार्य शंकर के पिता का नाम शिवगुरु माता का नाम आर्याम्बासती अथवा विशिष्टा देवी था। बुद्ध के कई शताब्दी पश्चात लगभग ५४७-४८७ खृष्टाब्द पूर्व ही शंकराचार्य का जन्म माना गया है। क्योंकि भारत आये चीनी यात्रियों ने शंकराचार्य के नाम का जिक्र नहीं किया है। इत्सिंग का समय ६७३-९५ ई० शुभाचीन १०० वर्ष ईसा के पूर्व, फाहियान ३९९-४१४ ई०, हिउएनसांग, युवानूच्वांग ६३०-६४५ ई०, ईत्सिंग ६७३-६९५ ई०, भारत आया था, उस समय शंकराचार्य बालक थे।

शंकराचार्य का जन्म राजा चेरू-पेरूमान के समय का उल्लेख है। इतिहास से मालूम होता है कि राजा चेरूपेरूमान ने मक्का की यात्रा कीया था और इस राजा की कब्र मक्का में है यहाँ के शिलालेख से २१६ हिजरी यानी सन् ८३८ ई० का समय प्रतीत होता हैं। कुछ का कहना हैं शंकराचार्य का जन्म सन् ७८८ में हुआ था। ऐतिहासिक वर्णन है कि दक्षिणपथ चालुक्यवातापि वंशीय पुलकेशिन के पुत्र विक्रमादित्य के समय सन् ६७० ई० में उनके राज्यशासनके चौदहवे

श्रीमद्आद्य जगद्गुरु शंकराचार्य

वर्ष में आद्यशंकराचार्य हुए थे। जुलाई मास सन् १६२ ई० में प्रकाशित 'स्वधर्म प्रकाशिनी' नामक पत्रिका में एक ताम्रपत्र की नकल प्रकाशित हुई थी उसमें यह ताम्रशासनदानपत्र महाराज सुधन्वाद्वारा शंकराचार्य को युधिष्ठिर सम्वत् २६६३ में दिये जाने का उल्लेख है।

शंकराचार्य के गुरु गोविन्दपादने नर्मदा के तटपर शंकर को सन्यास की दिक्षा दी। दिक्षीत हो विद्याध्ययन के पश्चात भारत भ्रमण कर अद्वैतवाद का प्रचार करने निकले। बड़े बड़े महारथियों को शास्त्रार्थ में परास्त किया। कन्याकुमारी से काश्मीर तक भ्रमण कर मण्डनमिश्र को परास्त करने के लिए माहिष्मतीनगरी (प्रयाग) गये। वहां जल भरनेवाली नागरिक स्त्रियों से शंकराचार्य ने पूछा 'मण्डन' का घर किस तरफ है वे बोलि जिस द्वारपर पिंजरे में बैठी मैना 'वेदस्वतः प्रमाण है या परतः प्रमाण है'। 'फल को देनेवाला कर्म है या ईश्वर'। तथा 'जगत् ध्रुव है या अध्रुव' इस बात पर विचार कर रही हो, उसे ही आप मण्डन का घर जानिये।

स्वतः प्रमाणं परतः प्रमाणं कीराङ्गना यत्र गिरं गिरन्ति।
द्वारस्थनीडान्तरसंनिरूद्धा जानीहि तन्मण्डनमिश्रधाम ॥
फलप्रदं कर्मफलप्रदोऽजः कीराङ्गना यत्र गिरं गिरन्ति।
द्वारस्थनीडान्तरसंनिरुद्धा जानीहि तन्मण्डनमिश्रधाम ॥
जगद् ध्रुवंस्याज्जगदध्रुवंस्याद् कीराङ्गना यत्र गिरं गिरन्ति।
द्वारस्थनीडान्तरसंनिरुद्धा जानीहि तन्मण्डनमिश्रधाम ॥

शंकराचार्य मण्डनमिश्र के घर गये और शास्त्रार्थ की चुनौती दी। मण्डन मिश्र मीमांसक थे और शंकराचार्य अद्वैतवादी थे। मण्डनमिश्र शंकराचार्य को देखकर बोले।

कन्थां वहसि दुर्बुद्धे गर्दभेनापि दुर्वहाम्।
शिखायज्ञोपवीताभ्यां कस्ते भारो भविष्यति ॥

मीमांसको के विचार से वेद स्वयं प्रमाणभूत है उनकी प्रामाणिकता सिद्ध करने के लिये किसी दूसरे प्रमाण की आवश्यकता नहीं क्योकि वह स्वयं अपौरूषेय है। परन्तु नैयायिकों के विचार में ईश्वरकतृक" होने से वेद पौरूषेय है।

अतः वह परतः प्रमाण है। इस विषय में न्याय और मीमांसा के मत का विरोध है। कर्म के विषय में मीमांसा और वेदान्त में पर्याप्त मतभेद है। मीमांसाकों का कहना है कि फल देने की शक्ति कर्म में है। वेदांतियों का कथन है कि अचेतन होने से फल का दाता नहीं हो सकता। इसलिए चेतन ईश्वर की इस कार्य के लिये कल्पना की जाती है।

जगत् के विषय में भी मीमांसा और वेदान्त में भिन्न विचार है मीमांसको की सम्मति में वह जगत् ध्रुव 'नित्य' है। वेदान्त के मत से यह जगत अध्रुव 'कल्पित' है। मण्डन का पक्ष कमजोर देखकर उनकी विदुषी स्त्री 'भारती' बोली मै उनकी अर्द्धांगिनी हूँ मुझे परास्त करने पर मेरा पति

परास्त समझा जायेगा।

कामशास्त्र के रहस्य को जानने वाली भारती ने शंकराचार्य से यह प्रश्न किया काम की कलायें कितनी होती है ? इनका स्वरूप कैसा है ? किस स्थान पर से वास करती है ? शुक्ल और कृष्णपक्ष में उनकी स्थिति कहां-कहां रहती है ? युवती में तथा पुरुष में इन कलाओं का निवास किस प्रकार से होता है ?

कलाः कियन्त्यो वद पुष्पधन्वनः किमात्मिकाः किं च पदं समाश्रिताः ।
पूर्वे च पक्षे कथमन्यथा स्थितिः कथं युवत्यां कथमेव पूरूषे ।।

यह सुन नैष्ठिक ब्रह्मचारी शंकराचार्य घबराये और बोले देवी ! इसका उत्तर एक पक्ष के बाद दूँगा। अचानक उस देश के राजा अमरूक की उसी समय मृत्यु हो गई। आचार्यपाद ने अपने शिष्यों से कहा मैं अमरूक के शरीर में प्रवेश करता हूँ मेरी देह की रक्षा करना। यह कहते ही अमरूक के शरीर में प्रवेश कर गये (इस कला का नाम परकाया प्रवेश है) शंकराचार्य से पहले 'मत्स्येन्द्रनाथ' ने गोरखनाथ को अपने शरीर की रक्षा में नियुक्त कर स्वयं सिंहलद्वीप के किसी राजा के शरीर में प्रवेश किया था।

शंकराचार्य एक पक्ष के बाद आये और भारती को उत्तर दिया। तब उसका पति मण्डन शंकराचार्य का शिष्य हुआ और उनका नाम सुरेश्वराचार्य रखा, बड़े-बड़े दार्शनिक विद्वान शंकराचार्य के प्रौढ़ पाण्डित्य का पता वेदान्त दर्शन के प्रथम चार सूत्रों के भाष्य से ही बतलाते है।

शंकराचार्य ने माया और अविद्या में कोई भेद नहीं माना पर पंचदशी के रचयिता माधवाचार्य (विद्यारण्य) ने दोनों में भेद माना है उनका कहना है कि सत्व-रज और तम की साम्यावस्था को प्रकृति कहते है। उसके दो भेद हैं माया और अविद्या। माया से आच्छादित ब्रह्म को ईश्वर कहते है और अविद्या से आच्छादित ब्रह्म को जीव कहते हैं।

कार्योपाधिरयं जीवः कारणोपाधिरीश्वरः ।

आद्य शंकराचार्य ने वैदिकधर्म का उद्धार किया। यह भगवान शंकर के अवतार थे। इनके गुरु गोविन्दपाद और परम गुरु गौड़पाद थे। इनके शिष्यों में ये प्रसिद्ध हैं। पद्मपादाचार्य, त्रोटकाचार्य, हस्तामलकाचार्य।

अष्टवर्षे चतुर्वेदी द्वादशे सर्वशास्त्रवित् ।
षोडशे कृतवान् भाष्यं द्वात्रिंशे मुनिरभ्यगात् ।।

आचार्य शंकर ने श्री व्यासकृत सूत्रों पर भाष्य लिखा। व्यासद्वारा रचित ब्रह्मसूत्र के प्रसिद्ध भाष्यकार, शंकरशारीरक भाष्य-अद्वैतभास्कर भाष्य-भेदाभेद रामानुज-श्रीभाष्य-गीताभाष्य, विशिष्टाद्वैत् निम्बार्क-वेदान्तपारिजात-द्वैताद्वैत, वल्लभ-अणुभाष्य-शुद्धाद्वैत,

विज्ञानभिक्षु-विज्ञानामृतभाष्य-अविभागाद्वैत, ब्रह्मसूत्रभाष्य, दशों उपनिषदों के भाष्य, विष्णुसहस्त्रनाम भाष्य, सनत्सुजातीय भाष्य, हस्तामलकी भाष्य, ललितत्रिशती भाष्य, सूत्र भाष्य, उपनिषद भाष्य, माडुक्यकारिका भाष्य और उन्होने कई स्तोत्रो और मंत्रशास्त्र की रचना की। विवेक चूड़ामणि, उपदेशसाहस्त्री, अपरोक्षानुभूति जिनकी संख्या २६ हैं सौन्दर्यलहरी और शिवानन्दलहरी। ये आचार्य रचित ग्रन्थ हैं।

अन्यथावेदवाक्यानि व्याख्यातानि कुबुद्धिभिः ।
न सर्वज्ञं विना तेषां सूत्राणां सम्प्रकाशकः ।।
अतस्त्वं सर्वशक्तित्वात्सर्वज्ञत्वाच्च भो मुने ! ।
यथा श्रुतीनां सर्वासां परब्रह्मणि निष्ठता ।।
तथाऽद्वैतपरं भाष्यं कुरूष्वाभिनिवेशतः ।
श्रुतिसूत्रेतिहासानां व्याख्या निर्माय यत्नतः ।।
सम्प्रदायकवदांमार्ग प्रकाश्यस्तेऽधुनायते ।
त्वयाकृतानि भाष्याणि प्रचरिष्यन्ति सर्वतः ।।
पद्मयोनिसभामध्ये यास्यन्ति परिनिष्ठताम् ।

(सं० श० सा०)

गुरू गोविन्दपाद की आज्ञा पाकर शंकराचार्य शक सं० ७२० में काशी आकर प्रथम मणिकर्णिकाघाट के पास ठहरे। अहोबल क्षेत्र निवासी माधव द्विज के पुत्र विष्णुशर्मा नाम के ब्रह्मचारी को संन्यास प्रदान कर श्री सनन्दन नाम देकर काशी में अपना प्रथम शिष्य बनाया।

चिद्विलास में ऐसा उल्लेख है। ये ही पद्मपाद नाम से प्रसिद्ध हुये। एक समय सनन्दन गंगा के उस पार में थे और गुरू के बुलाने पर इस पार आना चाहते थे, गंगा की धारा तेज थी, कोई नाव भी न मिली, गुरु की कृपा से जो संसार सागर को पार कर सकता है। वह क्यों गंगा नदी पार नहीं कर सकता इस दृढ़ अनन्य गुरुभक्ति से उन्होनें गंगा में पैर उठा कर रखा और गंगा माता ने कमल पुष्प (हरपद की जगह में) आविर्भाव किया और सदानन्द ने गंगा को पार बड़ी सुविधा से किया। इसी कारण उनका नाम श्री पद्मपाद हुआ। वेदव्यास वृद्धब्राह्मण के रूप में आचार्य शंकर से शास्त्रार्थ करने काशी आये थे, शंकराचार्य को श्री व्यासजी से काशी में १६ वर्ष की आयु का आशीर्वाद प्राप्त हुआ इस प्रकार शंकराचार्य की आयु ३२ वर्ष की हुई।

शंकराचार्य नित्य प्रातःकाल गंगास्नान कर नित्यकर्म के बाद विश्वनाथ का दर्शन, पूजन करने के बाद विद्वानों के साथ वेदान्त पर चर्चा और प्रवचन करते थे। शंकराचार्य के ब्रह्मसूत्र के भाष्य से सभी काशी के पण्डितगण प्रभावित थे। एक दिन अपने विद्यार्थियों के साथ दोपहर के समय मार्ग से जाते समय उनके सन्मुख चार भयंकर कुत्तों के साथ एक विशालकाय चाण्डाल को खड़ा देखकर आचार्य शंकर ने उसे दूरहट जाने को कई बार कहा- "दूरीकतुंवांच्छसि" पर किसे "ब्रूहिगच्छगच्छेति" कहकर चाण्डाल ने कहा कि आत्मा को असंग, चिद्रूप, आनन्दरूप, पवित्र,

भेदरहित व सर्वव्यापक ऐसा श्रुतियों में कहते है। जब वह एक ही आत्मा सब में विद्यमान है तब आप हटाते किसको हैं। व्यापक में हटाना और दूर होना नहीं बनता है। यदि आप कहिए कि आत्मा में भेद नहीं है किन्तु हमारे और तुम्हारे शरीर के ही भेद हैं तो शरीरों का भेद भी नहीं बन सकता है क्योंकि पंचमहाभूतों द्वारा रचित शरीर (अन्नादिक) आप का और मेरा भी है। तथा "षट्विकार व ऊर्मियों का संग्रह एवं जड़ता और अनित्यता भी हमारे और तुम्हारे शरीर में बराबर ही है। जब हमारे तथा तुम्हारे आत्मा और शरीर का भेद नहीं है तब फिर आप कैसे दूर जाने को कहते है"।

उस चाण्डाल ने फिर कहाः- "हमारे अन्दर जो चाण्डाल अहंकार रूप घुसा हुआ है उसे आप निकालते नहीं बल्कि बाहर के चाण्डाल को हटाना चाहते हैं तो इससे बढ़कर और क्या अज्ञान होगा"।

उस चाण्डाल स्वरूप विश्वनाथ के ऐसे वचनों को सुनकर स्वयं शंकराचार्य ने चाण्डाल को देवता-स्वरूप मानकर उत्तर दिया कि आप जो भी कहते हैं वह सब सत्य है क्योंकि पुरुष सम्पूर्ण जगत् को आत्मारूप ही समझता है जिसकी ऐसी बुद्धि है, कि मैं आनन्द स्परूप व नित्यमुक्त हूँ। जिस पुरूष में रागद्वेष की भावना नष्ट हो गई है तथा सब प्राणियों में एक-सी आत्मदृष्टि पैदा हो गई है वे सब हमारे गुरु हैं, ऐसा मेरी भावना है"। चाण्डाल के रूप में आये हुये व्यक्ति के बदलें शंकराचार्य ने आशुतोष श्रीमहादेव जी को वहां स्थित देखा और उनके साथ चारों कुत्तों के बदले चारों वेदों को भी खड़े हुए देखा। तब उन्होने स्वयं उनकी स्तुती की, श्री आशुतोषभगवान् शंकर उन्हे वेदव्यास रचितसूत्रों का भाष्य रचने एवं धर्म प्रचार करने की आज्ञा देकर स्वयं अन्तर्ध्यान हो गये।

इस प्रकार काशीजी में शंकराचार्य को श्रीविश्वनाथ का चाण्डालरूप में दर्शन एवं सम्भाषण हुआ। काशी के दक्षिण भाग में शंकराचार्य ने एक मठ निर्माण कराकर श्री निरंजनेश्वर महादेव की तथा दक्षिण काली की मूर्ति एक कुटिया में स्थापित कराकर सुमेरूमठ नाम रखा यह मठ आज भी जीर्णावस्था में गणेशमहाल में स्थित है। शंकराचार्य अपने ३२ वर्ष की अवस्था में शक ६४२ वि०सं० ७७७ में हिमालय पर जाते हुए देखे गये मगर कुछ लोगों का मत है कि सन् ८२० में हिमालय सिधारे। मगर उनकी मृत्यु रिषापेरू मंदिर के प्रांगण में हुयी वहीं शंख चक्रान्कित वेदिका बनी है।

संत श्री गोस्वामी तुलसीदास

महात्मा तुलसीदास का जन्म सन् १५५४ ई० वि.सं. १६११ में है पर कुछ लोग सन् १५३२ भी कहते है, उनके पिता का नाम आत्माराम और माता का नाम हुलसी था। उन्होने मानस की रचना सं. १६३१ में की आत्माराम शुक्ल अपनी माता के कहने पर अपनी ननीहाल के सूने

श्री गोस्वामी तुलसीदासजी

घर में रामपुर से आकर सोरों रहने लगे थे, तुलसीदास के नाना कौडिन्य गोत्रिय अयोध्यानाथ दुबे ज्योतिषी थे इनका निवास स्थान का नाम तारी (तालि, जिला एटा) था। रामपुर से यहाँ आने का कारण यह था कि गोस्वामीजी की चाची ने जिनका नाम चम्पा था अपनी सास (अर्थात् तुलसीदास की दादी) को कटुवचन कहे थे।

यो तो सोरों सामग्री के रामचरितमानस (१६४३ वि.), दोहारत्नावली, नन्ददास के भ्रमरगीत की पुष्पिका (१६७३ वि.) कृष्णदास कृत वंशावली, सूकरक्षेत्र माहात्म्य (१६७० वि.) वर्षफल (१६५७ वि.), नाभादास का भक्तमाल, प्रियादास और सेवादास की टीकाएँ, अष्टसखामृत, बावनरचनामृत, २५२ वैष्णवन की वार्ता, श्री गुसाईजी के सेवक चारिअष्टछापी तीन की वार्ता, (१६६७ वि.) आदि अनेक पुस्तकों से गोस्वामी तुलसीदास और रत्नावली का बहुत कुछ परिचय मिलता है।

किन्तु गोस्वामीजी का क्रमबद्ध जीवनचरित मुरलीधर चतुर्वेदी की रत्नावली चरित (१८२६ वि.) में मिला है। अविनाशरायकवि का 'तुलसीप्रकाश, तो और भी अधिक प्रकाश डालता है, (१) अविनाशराय का "निद्धिरससिंधुईदु" अर्थात १४६६ शक संवत् रत्नावली के 'सागरशरस ससीरतन' अर्थात् विक्रमसंवत् १६०४ से मेल खाता है। (२) अविनाशराय ने तुलसीदास की उपमा चन्द्रमा से दी है। हो सकता है 'सूरसूरतुलसी ससी' नामक उक्ति का उन पर प्रभाव हो, अथवा उनके कारण उस उक्ति का प्रादुर्भाव हुआ हो।

इस विषय में निश्चयात्मक रूप से कुछ नहीं कहा जा सकता अविनाशराय गोस्वामी तुलसीदास के समय के थे और केशवदासजी से भी बहुत प्रभावित थे। (३) अविनाशराय लिखते हैं कि गोस्वामी तुलसीदास ने 'राजा' नामक किसी भक्त साधु के नामपर राजापुर की नींव डाली थी और उसका नामकरण किया था। (४) अविनाशराय ने 'तुलसीप्रकाश' को पौषकृष्ण द्वितीया शुक्रवार शक १५४२ संवत् (अर्थात् वि० संवत् १६७७, तदनुसार १ दिसम्बर १६२० ई०) में गोस्वामीजी की मृत्यु से तीन वर्ष पहले लिखा था। राजापुर संयुक्तप्रांत के बाँदा जिले में स्थित है। इसका इतिहास निम्नलिखित गजेटियरों में मिलता है- (१) एडविन टी० एटकिनसन-कृतस्टेटिस्टिकल डिस्क्रिपशन एण्ड हिस्टोरिकल एकाउण्ट आफ दि नार्थ वेस्टर्न प्राविंस आलइण्डिया, जिल्द १, बुन्देलखण्ड, इलाहाबाद सन् १८७४ ई० पृष्ठ ५७२-३ (२) डब्ल्यू-डब्ल्यू हन्टर कृत इम्पीरियल गजेटियर आफ इण्डिया, जिल्द ११, द्वितीय संस्करण, पृष्ठ १८८६ (३) इम्पीरियल गजेटियर आफ इण्डिया यू० पी० २ प्राविशल सीरीज, कलकत्ता, १६०८, पृष्ठ ५० (४) डिस्ट्रक्ट गजेटियर्स आफ दि यूनाइटेड प्रविंसेज, जिल्द २१, बाँदा, १६०६, पृष्ठ २८५-६ उक्त सभी गजेटियर्स का आशय यही है कि मुगल सम्राट अकबर के समय रामचरित मानस के रचयिता गोस्वामी तुलसी नाम के संत एटा जि० के सोरों नामक स्थान से यमुना किनारे उस जंगल में आए जो अब राजापुर नाम से विख्यात है। वहाँ कुछ समय तक उन्होनें निवास किया। उनके पुण्य प्रताप से जनसमुदाय यहां आकर्षित होने और बसने लगा। राजापुर की नीव डालते समय गोस्वामी जी ने अनेक नियमों की घोषणा की,

से कुछ का पालन तो आज तक हो रहा है ।

किन्तु उक्त गजेटियरों से कुछ पता नहीं चला के गोस्वामीजी ने 'राजापुर' नाम क्यो पसन्द किया कदाचित रामपुर नाम अधिक अभीष्ट होता क्योकि वह भगवान् रामचन्द्र के अनन्यभक्त थे । इस विषय में अविनाशराय नामक एक कवि ने अच्छा प्रकाश डाला है । यह एटा जिले के रहने वाले थें, विशेषकर ओरछें में जहाँ इनका बड़ा सम्मान होता था ।

वह तुलसी प्रकाश, नामक अप्रकाशित ग्रन्थ में संवत् १६७७ वि. में अर्थात गोस्वामी जी की मृत्यु से तीन वर्ष पहले लिखते है कि मैने गोस्वामीजी के दर्शन कए और गोस्वामी जी ने 'राजा' नामक एक साधु के नामपर 'राजापुर' की स्थापना की जो उनके पुण्य प्रताप से दूसरा नैमिषारण्य बन गया था ।

उक्त विषय पर हमारे दो सुझाव है- (१) पहले राजापुर में यमुनाजी की मिट्टी में जो कालेपाषाण की प्रतिमा मिली है जिसे भ्रम से तुलसीदास की समझ लिया गया है और जिसका चित्र डा० माताप्रसाद गुप्त ने अपने 'तुलसीदास' नामक महाकाव्य ग्रन्थ के आरम्भ में दिया है, वह तुलसीदास जी की नहीं हो सकती । क्योकि प्रतिमा काली है, गोस्वामी जी गोरे और सुन्दर थे । हमारा अनुमान है कि वह प्रतिमा वास्तव में उक्त "राजा" नामक साधु की है । कदाचित् उनका रंग श्याम रहा होगा । देखा जाता है श्याम वर्ण की प्रतिमा श्याम और शुक्ल वर्ण की प्रतिमा शुक्ल बनाई जाती है ।ऐसी स्थिति में इस प्रतिमा को गोस्वामीजी की प्रतिमा घोषित कर देना एक कल्पना मात्र है । (२) हमारा दूसरा सुझाव यह है कि यह उल्लेख रामचरितमानस के तापस प्रसंग पर भी प्रकाश डालता है । 'तापस प्रसंग' के तापस को स्वर्गीय पं० रामचन्द्र शुक्ल और चन्द्रबली पाण्डेय ने तापस को तुलसीदास की संज्ञा दी है, जबकी उसका तो 'राजासाधु' होना ही अधिक संगत है । अविनाशराय ने राजापुर के अतिरिक्त सिहँड़ा-कालिंजर और ओरछा का भी उल्लेख किया है । अविनाशराय शिवराय के पुत्र और तारी के रहनेवाले थे 'कर्णविलास' के रचयिता कान्हाराय ब्रह्मभट्ट भी तारी के रहनेवाले थे । एक ने अपने को जहाँगीरकालीन बताया है, दूसरे ने शाहजहाँकालीन । किन्तु दोनो ही ने कर्णसिंह सोरंकी का उल्लेख किया है । सम्भवतः कान्हाराय अविनाशराय के वंशज हों । अविनाशराय बहुत घूमे थे, उनका सर्वत्र आदर होता था विशेष ओरछा में उनकी रचना में प्रवाह प्रसाद और लालित्य है ।

गोस्वामीजी जब भ्रमण के लिए निकले तो उन्होने सर्वप्रथम वि० संवत १६३३ में काशी आकर प्रह्लादघाट पर अपना निवास स्थल बनाया कुछ समय वहाँ रहकर पुनः काशी से बाहर चले गये ।

वर्षोबाद फिर काशी आकर गोस्वामीजी ने वाराणसी के उत्तरांचल मुहल्ला हनुमानफाटक में रह कर उपासना के लिये उछलकर भागने की मुद्रा में बालरूप हनुमानजी का अत्यन्त मनोरम विग्रह अपने कर कमलों द्वारा स्थापित किया । वर्षो वही रहकर मानस के बालकाण्ड को पूर्ण किया, वह स्थल मंदिर के प्रांगण में आज भी बन्द कोठरी के रूप में सुरक्षित है । पुनः उन्होने कुछ

समय पश्चात् दारानगर में रहकर एक और हनुमान् की स्थापना की। कुछ दिनों पश्चात् तुलसीदास ने गोपालमंदिर के पीछे रहकर विनयपत्रिका की रचना की यह स्थान आज भी दर्शनार्थियों के लिए सुरक्षित है।इस भीड़वाले स्थान से उबकर तुलसीदास जी प्रह्लादघाट के ही एक मुहल्ले भरद्वाजी टोला में जाकर एक ही कोठरी में पांच छोटे बड़े क्रम से हनुमान् मुर्तियों की स्थापना कर रहने लगे थे। वह स्थान आज भी सुरक्षित है, तुलसीदास जी वाली कोठरी मंदिर विस्तार के लिए तोड़ दी गयी।

तुलसीदासजी सतसंग में भाग लेने कर्णघन्टा नित्य जाया करते थे वही तुलसीदास को ब्राह्मण के वेश में हनुमान् का साक्षात्कार हुआ था, उसी स्थल पर भी उन्होनें बालरूप हनुमान् की स्थापना की, ऐसा कहा जाता है। एक बार तुलसीदासजी मणिकर्णिका जा रहे थे एक स्त्री रुदन करती उसी मार्ग से जा रही थी रुदन सुनकर तुलसीदास का ध्यान आकृष्ट हुआ उन्होने स्त्री को बुलाकर रोने का कारण पूछा और उसे सौभाग्यवति का आशीर्वाद दे डाला तब स्त्री ने बताया आगे मेरा ही पति दाह संस्कार के लिये ले जाया जा रहा है, उन्होने तत्काल लाने का आदेश दिया और पुनः जीवित कर दिया। इस घटना के बाद ब्रह्मस्रोत्रिका नदी के तट पर एक वृक्ष के नीचे बालरूप हनुमान् की प्रतिष्ठा की। इस स्थल का वर्तमान नाम ब्रह्मनाल है।

कुछ वर्षो बाद तुलसीदासजी ने साधनास्थल अस्सीघाट पर बनाया वहीं रहकर अस्सीनाले के उसपार वन था वही भ्रमण के लिए लोग एकत्र होते थे वही तुलसीदासजी भी नित्य जाया करते थे और भक्तो के बीच रामकथामृत की चर्चा करते थे। तुलसीदास के आग्रह पर भक्तों ने तुलसीदास द्वारा कलि में नाना संकट से ग्रसित लोगों का संकट दूर करने के लिये वही संकटमोचन हनुमान् नाम से प्रतिष्ठा की। अस्सीघाट के साधनास्थल पर उनकी पादुका और उनके नौका का एक खण्ड आश्रम में सुरक्षित हैं। उनके द्वारा प्रतिष्ठित बालरूप में गुफा के हनुमानजी के नाम से प्रसिद्ध है। भवन के ऊपर राम-लक्ष्मण-जानकीजी विराजमान है। तुलसीदास यहीं शरीर त्यागने का निश्चय कर यहीं स्थाई रूप से रहने लगे।

संवत् सोलह सौ असी, असीगंगा के तीर। श्रावणश्यामा तीजशनि, तुलसी तजौ शरीर।।

इस प्रकार पंच रचित शरीर शून्य में विलीन हो गया।

धर्मसंघ के संस्थापक श्रीस्वामी करपात्रीजी

स्वामी करपात्रीजी का जन्म उत्तरप्रदेश के प्रतापगढ़ जिले के भटनी नामक ग्राम में श्रावण शुक्ल द्वितीया को सं. १९६४ सन् १९०७ ई० में हुआ था। इनके पूर्वज गोरखपुर जिले के अझौली गाँव के निवासी थे। परन्तु कालान्तर में कालाकाकर के राज स्वामीजी के पितामह को भटनी प्रतापगढ़ ले गये जहाँ जा कर वे बस गये। स्वामीजी सरयूपारीण ब्राह्मण थे। इनके पिता का नाम पं० रामनिधि ओझा था। वह बड़े ही सात्विक तथा धार्मिक व्यक्ति थे इन्हें ३ पुत्र हुये कनिष्ठ पुत्र का नाम हरनारायण था। यही हरनारायण स्वामी करपात्री के नाम से प्रसिद्ध हुये।

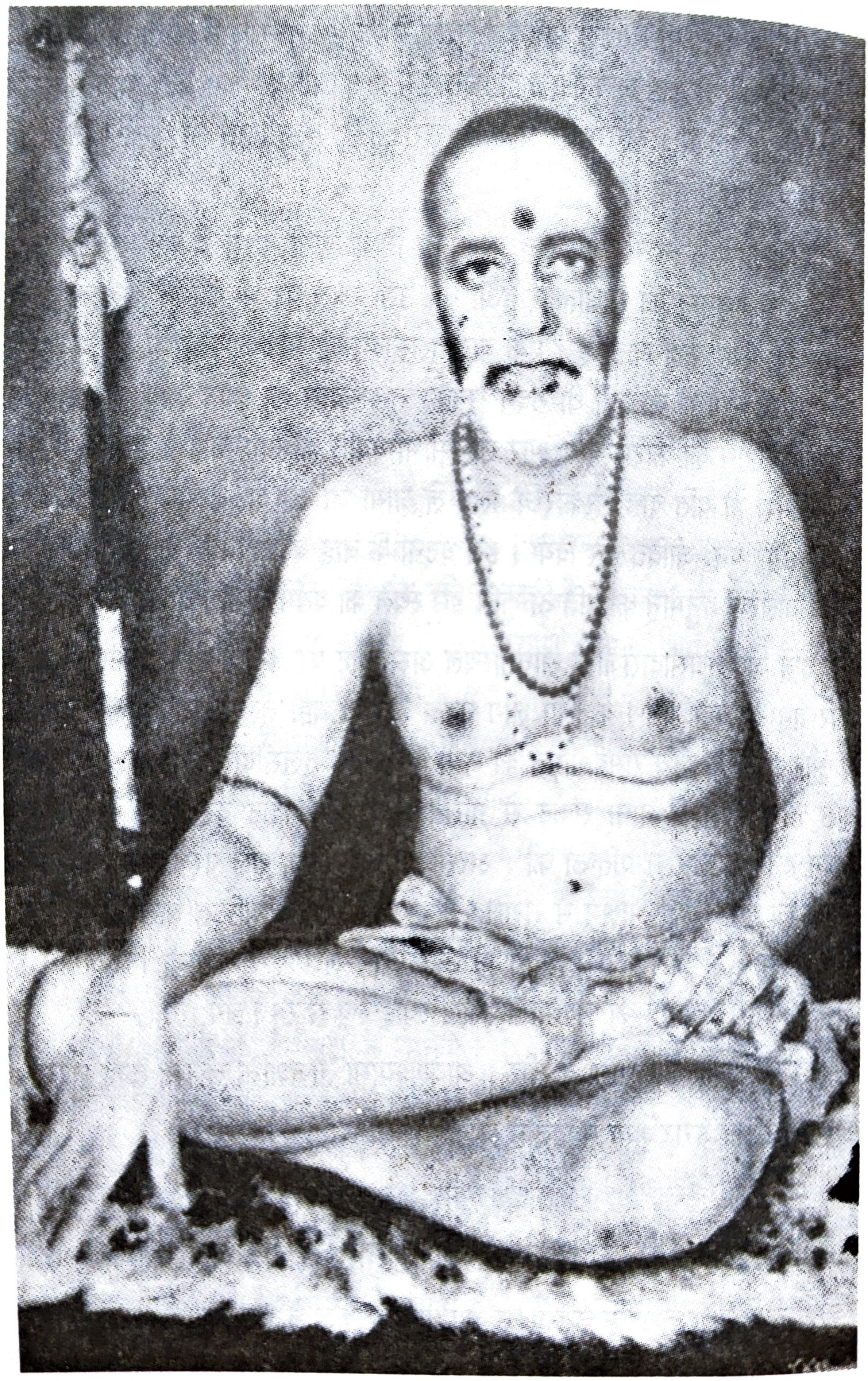

अनन्तश्रीविभूषित स्वामी श्री करपात्रीजी

गाँव की प्रारम्भिक शिक्षा समाप्त करने के बाद पिता ने इन्हे संस्कृत पढ़ाने का निश्चय किया और उन्हें घर पर ही प्रथमा परीक्षा के पाठ्यग्रंथों को पढ़ाना आरम्भ कर दिया। तीव्र बुद्धि के कारण हरनारायण ने शीघ्र ही संस्कृत का साधारण ज्ञान प्राप्त कर लिया। परन्तु इन्होनें किसी विद्यालय में विधिवत् अध्ययन नहीं किया।

यह बार-बार घर छोड़ कर भाग जाते, एक दो बार इनके भाई और पिता इन्हे खोज कर घर ले आये परन्तु इनका मन घर में नहीं लगता था। पिता ने यह देखकर पास के ही खण्डवा नामक गाँव में इनका विवाह कर दिया। परन्तु विवाह के पश्चात् भी राग उत्पन्न न हो सका। घर छोड़ कर भागने का इनका क्रम जारी रहा। पिता ने इन्हे रोकना व्यर्थ समझ कर इनसे कहा कि सन्तानोत्पत्ति के बाद तुम घर छोड़कर जा सकते हो। सत्रह वर्ष की अवस्था में सन् १६२४ ई० में इन्हे एक कन्या उत्पन्न हुई। इस प्रकार पिता की आज्ञापालन कर हरनारायण ने बूढ़े पिता और माता, स्त्री-अबोध पुत्री को छोड़ कर परिवार से सदा के लिये अपना नाता तोड़ लिया और चल पड़े, परन्तु इन्हें कहां जाना है क्या करना है स्वयं पता नहीं था। अनेक दिन की पैदल यात्रा कर प्रयाग के समीप कुटेश्वर गाँव में पहुँचे।

वहां एक महात्मा से साक्षात्कार हुआ और उनसे दीक्षा लेने की बात कही मगर बाबाजी ने इन्हे नरवर जाकर अध्ययन करने की सलाह दी और कहा जाओं तुम पर माँ सरस्वती की विशेष कृपा रहेगी। प्राचीनकाल से नरवर संस्कृत-विद्या का केन्द्र रहा। आज भी सांगवेद विद्यालय स्थित है। उन दिनों वहां पर परम वीतराग तपस्वी षट्दर्शनाचार्य स्वामी विश्वेश्वराश्रम विराजमान थे। उन्ही के चरणों में हरनारायण ने केवल १३ मास विद्या का अध्ययन किया। हरनारायण ब्रह्मचारी के रूप में नेत्र बन्द कर ही प्रायःपाठ श्रवण करते थे, कुछ विद्यार्थियों के शिकायत करने पर श्री विश्वेश्वराश्रमजी ने पाठ पूछा तो हरनारायण ने कई दिन का पाठ सुनाकर कुछ आगे का पाठ भी सुनाया एवं कुछ अपूर्व पदार्थ का निरूपण भी किया। इस अलौकिक प्रतिभा को देखकर पं० स्वामी विश्वेश्वराश्रमजी ने कहा कि अब आप तपस्या करने ऋषिकेश जाओं। अस्तु हरनारायण ने हिमालय का आश्रय ग्रहण कर घोर तपस्या की। उसी समय इनका नाम करपात्री पड़ गया क्योंकि ये परम वीतराग एक कौपीन में ही रहते थे, तथा 'कर' को ही पात्र बना कर शास्त्रीय नियमों से भिक्षा ग्रहण करते थे। इसके बाद इनके अपूर्व पाण्डित्य को देखकर श्री ब्रह्मानन्द सरस्वतीजी ने हरनारायण को विधिवत संन्यास देकर हरिहरानन्द सरस्वती नाम से विभूषित किया। धीरे-धीरे स्वामी हरिहरानन्दजी की कीर्ति भारतवर्ष में व्याप्त हो गई। जनता ने इन्हे धर्मसम्राट की उपाधि से विभूषित किया। इसके बाद स्वामी श्रीकरपात्रीजी ने ज्योतिषपीठ का उद्धार किया, जो कि लगभग २० वर्षो से बिना शंकराचार्य के ही था, उस पीठ पर उन्होने ब्रह्मानन्द सरस्वती जी को ही शंकराचार्य बनाया तथा ब्रह्मानन्दजी के बाद परम वीतराग तपस्वी पं० स्वामी कृष्णबोधाश्रमजी जो धर्मसम्राट् करपात्रीजी के अभिन्न आत्मीय सहयोगी तथा सर्वस्व थे। इसके बाद स्वामी श्रीकरपात्री जी ने काशी सुमेरूपीठ ऊर्ध्वाम्नाय का भी उद्धार किया। इस पीठ पर उन्होने सर्वप्रथम महादेव शास्त्रीजी को

संन्यास देकर शंकराचार्य पद पर आसीन किया तथा श्री करपात्रीजी की आज्ञा से ही पं० चन्द्रशेखरजी ने पुरीपीठ का शंकराचार्य पद ग्रहण किया। ये ही श्री निरंजनदेव तीर्थजी के नाम से प्रसिद्ध थे। स्वामी जी ने अनुभव किया कि अंग्रेजी सरकार सभ्यतासंस्कृति पर तथा सनामन-धर्म की मान्यताओं पर कुठारघात कर रही है। इसको देखकर उनका हृदय करुणा से भर गया और उन्होने कुछ करने का निश्चय किया तब उन्होनें धर्मसंघ की स्थापना की साथ ही राजनीति में भाग लेने के लिये उन्होनें रामराज्य-परिषद की स्थापना की। इस प्रकार धर्मसम्राट स्वामी करपात्रीजी ने धार्मिक राजनीति के क्षेत्र में एक क्रान्ति मचा डाली, हिन्दूकोडबिल का विरोध किया, अनेक बार जेलों में जाना स्वीकार किया। अस्तु वे केवल वक्ता ही नहीं थे अपितु एक कुशल सर्वशास्त्रपरायण शास्त्रार्थी पण्डित भी थे। पण्डितवर्ग उनकी दार्शनिक युक्तियों को देखकर शिष्यत्व स्वीकार कर लेते थे। उन्होने घूम-घूम कर शास्त्रार्थ किये, धर्म की पुनः जागृति पैदा की। स्वामीजी ने शतकोटिहोमात्मक चण्डी-यज्ञ सर्वप्रथम दिल्ली में किया उसके बाद कानपुर, वाराणसी, विन्ध्याचलादि क्षेत्रों में यज्ञों की धूम मचा दी। अस्तु वे ज्ञान तथा भक्ति के आचार्य थे। वृन्दावन, अयोध्या में असंख्य वैष्णवों की भीड़ उनके प्रवचन सुनने के लिये उमड़ पड़ती थी। वाराणसी में तो विद्वानों की भीड़ बराबर लगी रहती थी। वाराणासेय संस्कृत विश्वविद्यालय में तथा हिन्दू-विश्वविद्यालय में उनका प्रवचन प्रायः होता रहता था। अस्तु उन्होंने बहुत से संस्कृत ग्रन्थों का हन्दिी भाषा में प्रणयन किया। जिसमें वेदार्थपारिजात तो आज भी आचार्य परीक्षा में चलता है। उनके ग्रन्थों में दार्शनिक-तान्त्रिक्-राजनैतिक आदि के सिद्धान्तों का भी निरूपण प्राप्त होता है। अस्तु उनका आन्तरिक जीवन बड़ा ही शिक्षाप्रद तथा लोककल्याणकारी था उन्होनें पंचक्रोशी की विधिपूर्वक परिक्रमा प्रारंभ की जो आज भी चल रही है। वे नित्य १ बजे जागते थे ३ बजे भ्रमण करते-करते चण्डी पाठ कर लेते थे और त्रिकाल भजन-पूजन में भी अधिक समय व्यतीत करते थे। आप का अवसान ७ फरवरी १९८२ को हो गया।

बाबा संत कबीरदास

काशी में लहरतारा नामक ग्राम में संत कबीर का जन्म ई० सन् १३३६ वि. सम्वत् १४२६ में हुआ था। इनकी जन्म कथा साधारण प्राणियों के समान नहीं थी बल्कि बड़ी आश्चर्यपूर्ण कही जाती है।

इनके जन्म के बारे में अनेक विद्वानों ने तरह-तरह की कल्पनाएँ और किंवदन्तियां प्रचारित की है फिर भी आजतक कबीरजी के माता-पिता का ठीक-ठीक पता नहीं चलता।

कहते हैं, काशी का नीरू नामक जुलाहा अपनी पत्नी नीमा को विदा कराकर लौट रहा था कि मार्ग में उन्हे एक बच्चे के रोने की ध्वनि सुनाई पड़ी। नीमा का हृदय हठात् उधर आकर्षित हो गया। दोनों तालाब की ओर चल पड़े। नीरू ने देखा कि कमल के फूलों के बीच एक सुन्दर बालक लेटा हुआ हाथ पैर हिलाते हुए खेल रहा है। नीमा और नीरू के पास पहुँचने पर बच्चे

बाबा संत कबीरदास

ने रोना बन्द कर दिया। नीमा के हृदय में ममता का सागर उछल पड़ा उसने पति से उसे उठाकर घर ले चलने का आग्रह किया। पहले तो नीरू ने इन्कार कर दिया और उस पर क्रुद्ध हुआ किन्तु जब उसने नीमा के गोद में शिशु की मनमोहक छवि को देखा तो उसका हृदय करुणा से पूर्ण हो गया। वह उसे प्रसन्नतापूर्वक घर ले आया और उसका पालन-पोषण करने लगा। आगे चलकर कबीर पंचगंगा घाट पर स्वामी रामानन्दजी के शिष्य बने। कबीरजी साधु-सन्तों और ज्ञानियों की संगत में रहने लगे। अपनी ईश्वर-भक्ति और साधना के बलपर सन्त कहलाए। ईन्होंने समस्त उत्तर भारत में निर्गुण ब्रह्म की उपासना का उपदेश देकर लोगों को सत्यमार्ग की ओर चलने की प्रेरणा दी। उनकी साखियां और पद आज भी जन कल्याण कर रहे है। कबीरदास के रचित कबीरबीजक-कबीरसाखी अति प्रसिद्ध है।

समर्थ गुरु रामदासजी

छत्रपति शिवाजी महाराज के गुरु समर्थ गुरु रामदासजी का जन्म जाम्ब ग्राम (औरंगाबाद दक्षिण) में चैत्रशुक्ल ६ संवत् १६६५ को हुआ था। आप का पूर्व नाम 'नारायण' था। आप के पिताजी का नाम पं० सूर्यजी पंत तथा माता का नाम रेणुबाई था। समर्थ गुरु रामदासजी ने कुछ समय तक इस पंचगंगा क्षेत्र में निवास किया है। गुरुजी मंगलागौरी के पश्चिम रामघाट जानेवाले मार्ग में भीखाराम के राममंदिर में रहते थे। आपने श्रीमंगलागौरीजी के मन्दिर में उत्तर पश्चिम कोण में रामभक्त हनुमानजी की मूर्ति स्थापित की है। प्रतिवर्ष चैत्र और आश्विन (कुआर) के नवरात्र में उक्त मंदिर से प्रतिदिन प्रातःकाल समर्थ गुरु रामदासजी का चित्र ताम-झाम पर रखकर गाने-बाजे के साथ उक्त हनुमानजी के समक्ष लाया जाता है। कुछ देर भजन आदि करने के पश्चात् उसी प्रकार पुनः चित्र को राम मंदिर में लाया जाता है। समर्थ गुरु रामदासजी महाराज भगवान् राम के अनन्य भक्त थे। उनके अनुसार इस संसार में वही व्यक्ति धन्य है जो कि सदैव भगवान के कार्य में अपने शरीर को लगाये रख कर कष्ट देता है, सदा राम-नाम का अखण्ड उच्चारण करता रहता है। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीरामचन्द्रजी का ऐसा दास ही इस संसार में धन्य होता है। रामनाम की महिमा का उपदेश देते हुए आपने कहा है कि किसी नाम मन्त्र की तुलना रामनाम से नही की जा सकती। यह बात भाग्यहीन तथा क्षुद्र मनुष्य की समझ में नहीं आती। देवाधिदेव महादेवजी भी विषपान के पश्चात् उससे उत्पन्न होने वाले दाह (कष्ट) को नाश करने के लिये औषधिरूप में रामनाम का अखण्ड उच्चारण करते हैं। तब साधारण मनुष्य के लिये रामनाम के उच्चारण की महिमा का क्या वर्णन किया जाय। समर्थ गुरु रामदास रचित ग्रन्थ 'दासबोध', 'मन के (मनाचे) श्लोक' अति प्रसिद्ध है।

समर्थ गुरु रादमादजी का देहावसान माघकृष्ण ६ सं. १७३६ को हुआ था।

काशी में दिगम्बर-संत श्रीहरिहरबाबा

श्रीहरिहरबाबा २० वीं सदी के दिगम्बर सिद्ध सन्तों में से एक थे। इनके जन्म के सम्बन्ध में पता नही चलता। इनका जन्मस्थान बिहार प्रांत के छपरा जिले के जाकर ग्राम में एक

श्री हरिहर बाबा महाराज

प्रतिष्ठित सरयूपारीण ब्राह्मणकुल में हुआ था। इनके बचपन का नाम सेनापति था।

आप राम के सगुणोंपासक भक्त थे। आप नित्य गंगा के उस पार शौचादि क्रिया के लिये जाया करते थे उनके साथ २-४ भक्त भी रहते थे भक्तों की प्रत्यक्ष देखी घटना इस प्रकार है-

एक दिन बाबा नाव से उतर कर ज्योंही आगे बढ़े ही थे कि उनके पाँव में एक नागफनी का काटा जा चुभा। बाबा वही पाँव थामकर बैठ गये। भक्तों ने तुरन्त बाबा के पाँव का काँटा बाहर किया वह काँटा आधा इन्च अन्दर था बहुत रक्तस्राव हुआ। बाबा ने भक्तों को आश्वासन देते हुए कहा घबडाओं नहीं नागफनी आज के बाद से काशी से नेस्तनाबूद हो जायेगी। तो ऐसा ही हुआ कि धीरे-धीरे वह समाप्त ही हो गई जो देखने को भी नही मिलती। जो उसपार नागफनी का जंगल सा ही था। बाबा के स्थान पर भक्तों द्वारा अखण्ड रामधुन का कीर्तन हर समय हुआ करता था। ये आजीवन माँ भगवती गंगा की गोद में नाव पर रहते थे। कहा जाता है कि १५० वर्ष की आयु में रामध्वनि करते हुए वि.सं. २००६ आषाढ़शुक्ल पंचमी तदनुसार सन् १६४६ को भगवती गंगा की गोद में निर्वाण पद प्राप्त किया। अस्सी संगम पर उनका आश्रम है जहाँ आज भी संकीर्तन होता है, और उनके शिष्य ३५-३६ वर्षों से भूमिगत रहते हुये साधना में रत है।

काशी के संत श्रीतैलंगस्वामी

दक्षिण प्रदेश के विजियाना हुलिया नगर के एक धनी ब्राह्मण के घर संवत् १६६४ के पौषशुक्ल ११ को आपका प्रादुर्भाव हुआ था। आपकी माता का नाम विद्यावती तथा पिता का नाम नृसिंहधर था। शिव की कृपा से इन्हे यह पुत्र-रत्न प्राप्त हुआ था। माता शिवराम तथा तैलंगधर नाम से उन्हे पुकारते थे।

बाल्यकाल से ही स्वामीजी अत्यन्त भाउक स्वभाव के व्यक्ति थे। दूसरों के दुःख से शीघ्र रो पड़ते थे। ६ वर्ष में आपका यज्ञोपवीत हुआ था। आरम्भ से ही स्वामीजी वैरागी थे उनकी ४० वर्ष की अवस्था में माता का देहान्त हो गया था और ५० वर्ष की अवस्था में पिता का स्वर्गवास हो गया।

माता के मृत्युपरान्त लंगोटी धारण कर १० वर्ष तक वहीं श्मशान में माता की चिता की राख स्वामीजी अपने सम्पूर्ण शरीर में लगा कर वहीं पड़े रहे। श्मशानेश्वर के सानिध्य में आपने विभिन्न सिद्धियां प्राप्त की थी। आपने तीर्थाटन के लिए भारत के सभी प्रमुख तीर्थो में भ्रमण किया था। स्वामीजी मानसरोवर, कैलास, तिब्बत तक भ्रमण कर आये थे। स्वामीजी के जीवन के चमत्कारों को प्रायः सभी भारतवासी जानते हैं। अपनी सिद्धि के बल पर वह असाध्य कार्य भी कर डालते थे। एकबार स्वामीजी नर्मदा के तटपर सात दिन तक माता भगवती की आराधना की। तब उन्हें एक महापुरुष का दर्शन हुआ और उनकी सारी समस्याओं का हल हो गया। ७८ वर्ष की अवस्था में सं. १७४२ में आपने भगीरथ स्वामी से दीक्षा ली। आपने आठों

महात्मा श्री तैलंग स्वामी

सिद्धियों को प्राप्त कर काशी में बिन्दुमाधव मंदिर के सन्निकट अपना निवासस्थान चुना। पंचगंगा में स्नान कर नित्य स्वामीजी रात्रि में श्रीकालभैरव की शयन आरती में नियम से सम्मिलित होते थे। स्वामीजी के पंचगंगा स्थित मंदिर में उनकी उपासना सम्बन्धित शक्तियंत्र आज भी विद्यमान है। २८० वर्ष की अवस्था प्राप्त कर आज से ८५ वर्ष पूर्व समाधिस्थ हुए थे। स्वामीजी के चमत्कारों की चर्चा आज भी काशी के वयोवृद्ध करते रहते हैं। स्वामीजी के पंचगंगा स्थित मंदिर के मध्य आज भी एक भव्य विशाल शिवलिंग है, जिसे स्वामीजी को पंचगंगाघाट स्नान के समय मिला था उसे लाकर अकेले आश्रम में रक्खा था यह वही शिवलिंग है जिसे पांच छह आदमी मिलकर भी नहीं उठा सकते हैं। बाबा ने एक बृहद अर्घे का निर्माण करा कर स्वतः उस लिंग को स्थापित कर पंचगंगेश्वर नाम रखा था।

स्वामीजी के अनुयायी इसे तैलंगेश्वर नाम से पूजा करते कराते आ रहे है। बाबा के आश्रम के मध्य में पहले एक गड्ढा था। लोगों का कहना है कि जब कभी बाबा उस गड्ढे में आकर बैठ जाते थे तो उनके भक्त लोग हजार छिद्र वाला घड़ा उनके मस्तक के ऊपर टाँग देते थे उसमें लोग पंचगंगा से जल ला-ला कर हजारे में छोड़ते थे। इस तरह जल हजारे के छिद्र से गिरकर बाबा के शरीर पर पड़ता था और लोग अपने मन में यह कल्पना करते थे कि मानों वे साक्षात विश्वनाथ का अभिषेक कर रहे हैं।

बाबा ने काशी में रहकर जो-जो चमत्कारिक लीलाएँ की है उसको काशी की जनता अच्छी प्रकार जानती हैं। बाबा के सम्बन्ध में अनेक किंवदन्तियां प्रचलित हैं जिनमें से कुछ नीचे उद्धृत हैं-

एक बार की बात हैं बाबा मणिकर्णिकाघाट पर गर्मी के महीने में तपते हुए बालूपर सोये पड़े थे कि रामकृष्णपरमहंस काशी आकर मणिकर्णिका देखने की लालसा से वहा आये तो क्या देखा जिस पर कोई पांव रखकर एक मिनट खड़ा नहीं हो सकता वहां एक स्थूलकाय महात्मा लेटा पड़ा है। रामकृष्ण ने समीप जाकर बड़ा मानकर बाबा का सम्मान किया और स्वयं खीर बनाकर ले आये भोग लगाया। रामकृष्ण परमहंसजी बाबा से बड़े प्रभावित थे।

किसी विशेष अतिथि के साथ महाराज काशीनरेश नौकाविहार करते पंचगंगाघाट बाबा का दर्शन करने के लिये चले आये उस समय बाबा घाट पर जल में आसन मारे बैठे थे। महाराज की नाव तट से कुछ दूर थी बाबा बैठे ही बैठे पानी में बढ़ते गये और नौका के पास पहुँच गये तथा उछल कर नाव पर जा बैठे। बाबा ने महाराज के अतिथि के हाथ से उनकी रत्नजटित तलवार ले ली और उसे वही गंगा में डाल दिया। अतिथि महोदय कुछ अन्यमनस्क से दिखे तो महाराज काशीनरेश ने उन्हें धैर्य रखने को कहा, थोड़ी ही देर में नौका घाट किनारे आ गई बाबा ने नाव पर बैठे-बैठे जल में हाथ डालकर एक ही तरह की दो तलवारें निकाली और अतिथि महोदय से अपनी तलवार पहचान कर लेने को कहा परन्तु उन्होनें तलवार पहचानने में अपनी असमर्थता प्रकट की। बाबा ने तत्काल कहा कि जब आप नाशवान वस्तु को नहीं पहचान पाये

तो आप ईश्वर को कैसे पहचानोगें। बाबा ने राजा की तलवार उन्हे दे दी दूसरी जल में डाल दी।

बाबा के भक्त उन्हें मृत्युंजय महादेव भी मानते थे। इस संबन्ध में लोगों ने बताया कि एक बार बाबा को लोग भोग लगा रहे थे कि बाबा को उल्टी होने लगी। जिसमें दही और चूड़ा निकला, इस पर भक्तगण आश्चर्यचकित होकर विचार करने लगे कि बाबा ने यहाँ तो दही-चूड़ा खाया नहीं फिर यह कैसे निकला। इस पर बाबा ने कहा कि मृत्युंजयमहादेव में एक भक्त ने दही-चूड़ा चढ़ाया है चूड़ा में लगी धान की भूसी मेरे गले में अटक गई फलतः उल्टी हो गई। कुछ लोगों ने सीधे महामृत्यंजय के मंदिर में जाकर देखा वहां उन्हें चढ़े हुए चूड़े में धान की भूसी मिली बाबा का कहा हुआ सत्य निकला तब से लोग उन्हे मृत्युंजय भी मानने लगे।

बाबा को लोग साक्षात् सचल विश्वनाथ कहते थे। इस विषय की एक घटना इस प्रकार है। बाबा कुछ समय दशाश्वमेधघाट पर प्रतिदिन लेटे रहते थे, उसी मार्ग से एक स्त्री नित्य बाबा विश्वनाथ का दर्शन व पूजा करने जाया करती थि। उसे नित्य बाबा सोये मिलते थे और वह बाबा को देखकर यही कहती रही कि नंगे पड़े रहने से किसी को सिद्धि नहीं मिलती। इस प्रकार कहती हुई वह नित्य चली जाती थी। एक दिन स्वप्न में भगवान् विश्वनाथ ने उस स्त्री से कहा कि उस बाबा की सेवा करो जिसकी तुम अवहेलना करती हो वही तुम्हारे पति के प्राणों की रक्षा कर सकते है। बस क्या था। दूसरे दिन उसने जाकर बाबा को वैसे ही पड़ा देखा। उनकी वहीं नित्य पूजा करने लगी। एक दिन बाबा ने लोलार्ककुण्ड में बिल्वपत्र का भस्म निकाल कर उसे दिया और कहा कि इसे ले जाकर अपने पति के घावों पर लगा दे ठीक हो जायगा। उसने वैसा ही किया और उपका पति ठीक हो गया। अतः यह स्पष्ट लोगों के भाव थे कि बाबा मृत्युंजय और विश्वनाथ दोनों थे।

बाबा नित्य रात्रि में शयन आरती के वक्त श्रीकालभैरव के मंदिर में जाते थे। मार्ग में काठ की हवेली से घूमने पर वही एक दूध की दुकान थी। कहते है कि उसकी मालकिन अपनी दुकान पर सारे दूध को खूब औटाकर गरम रखती थी। जब तक बाबा शयन आरती देख कर नहीं लौटते थे तब तक बुढ़िया मार्ग में खड़ी रहकर बाबा की प्रतीक्षा करती रहती थी। बाबा के मंदिर से लौटने पर हाथ जोड़कर भोग लगाने को कहती थी। जिस दिन मन में आ जाता था उस दिन बाबा खौलते हुए दूध की कढ़ाई को उठा कर पी जाते थे चाहे २० सेर या ४० सेर दूध क्यों न हो और वहीं पीकर अपने स्थान की ओर चल देते थे। तब वह बुढ़िया अपने को धन्य मानती थी। जिस दिन बाबा दूध नहीं पीते थे। उस दिन बाबा के जाते ही उस महालवासी गलियों से आदमी पर आदमी निकलने लगते थे और सारा दूध उसका खरीद कर ले जाते थे। मालूम होता है लोग इस कृपा की प्रतीक्षा में रहते कि यदि बाबा दूध नहीं पीये तो उसे वे लोग बाबा का प्रसाद समझकर तुरन्त ले लेते थे। इस प्रकार सारा दूध हाथों-हाथ बिक जाता था। उक्त कथन से अथवा बाबा की कृपा से उनके गण ही आकर भक्त बुढ़िया का सारा दूध बारी बारी से ले जाते

थे। इस रहस्य को कोई भी नहीं जान सका क्योंकि आस-पास वालों को तो अच्छी प्रकार बुढ़िया जानती थी जो थोड़े ही लोग थे पर अधिकांश लोग अनजाने होते थे।

कुछ वर्ष पहलें तक उस भक्त बुढ़िया दूधवाली के खानदान के लोग बाबा के मंदिर में नित्य आधासेर दूध बाबा की मूर्ति को भोग लगाने के लिए भेजते रहे।

एक बार तैलंगस्वामीजी कीनाराम के स्थान सोनारपुर से आगे शिवाला महाल के सामने गये वहां जाकर बाबा, कीनारामजी के सिंहासनपर बैठ गए जो उस वक्त खाली था। यह देख उनके शिष्यों को यह अच्छा नहीं लगा मगर बाबा कीनाराम ने इशारे से मना किया। दोनों महात्माओं में आपस में बातें होने लगी। कीनाराम ने अपने शिष्य को संकेत किया, शिष्यों ने पांच घड़े मदिरा के तैलंगस्वामी के सामने लाकर रख दिये। बाबा ने पांचों घड़ों की सुरा को पी लिया और वहां से चल दिये। इस पर कीनाराम ने बाबा के पीछे अपने शिष्यों को भेजा। कहा कि यह महात्मा अधिक पी गये है "कहीं गिर न जायँ, जाकर उन्हे उनके स्थान तक पहुँचा दो।" बाबा वहाँ से चलकर अस्सीघाट पर पहुँचे। गंगाजी में उस समय बाढ़ थी। बाबा बढ़ी गंगाजी में कूद गये अस्सीघाट से कूदकर पंचगंगाघाट पर निकले और घाट पर ही आसनबद्ध बैठ गए। जब कीनाराम के शिष्य उन्हें वहाँ देखने पहुँचे तब स्वामीजी को वहां पाया। ये शिष्य कीनाराम के दुबारा कहने पर पता करने पंचगंगा आये थे। वैसे वह तो समझ ही गये थे कि बाबा कीनाराम इनका सम्मान करते थे।

एक बार काशी में दूध व दही का अकाल पड़ गया था। उस समय एक दिन बाबा ने अपने स्थान के बाहर चबूतरे पर बैठकर एक अथरी दही मंगवाई और उसमें से एक पुरवे से काट काटकर जितने भी लोग आये सबके हाथ दही बेचते गये। जिसने एक पैसे का माँगा उसे वही एक पुरवा दही और जिसने आठ आना या एक रुपये का मांगा उसे वही एक पुरवा दही देते थे। उस दिन बाबा से हजारों आदमियों ने शाम तक दही खरीदी पर बाबा की वहीं एक अथरी ही दही रही। अन्त में उसमें से भी आधी अथरी दही बची ही रह गई थी पर वहां कोई लेने वाला ही नहीं बचा था। दूसरी ओर उधर जो लोग दही लेकर गये उनके घर पहुचते ही जिसने एक पैसे की ली थी उसे वही एक पुरवा ही, जिसने अधिक की ली उसके वहां उसी अनुपात से अधिक दही हो जाती थी।

एक बार बाबा अपने मठ के द्वार पर बैठे थे भक्त लोग उनके मस्तक पर जल चढ़ाते रहे। इतने में एक बाहरी आदमी ने वह दृश्य देखकर अपने मन में सोचा कि इस भयंकर जाड़े के समय महात्मा पर जल चढ़ाया जा रहा है, अपने पास का नया ऊनी दुशाला बाबा के शरीर पर डाल दिया। बाबा ने शरीर हिलाकर उसे गिरा दिया। उस व्यक्ति को यह देख बहुत कष्ट हुआ कि मैने श्रद्धा से बाबा के ऊपर ओढ़ाया और बाबा ने उसे गिरा दिया, बाबा ने उसके मनस्थिती को समझकर बगलवाली दालान में बैठे अपने शिष्य मंगलजी भट्ट को संकेत किया। भट्टजी उसी दालान के पश्चिमवाली छोटी कोठरी में गये और उसमें से उसी रंग के ८-१० दुशाले बाबा के

सामने लाकर रख दिये। सभी दुशालों को उठाकर वहाँ बैठे ब्राह्मणों को स्वयं ओढ़ाया। यह कौतुक देखकर वह सज्जन बाबा के चरणों पर गिर पड़ा और अपनी भावनाओं के लिए क्षमा याचना की।

श्री बाबा नरहरिदास :- ४०० वर्ष पूर्व महाराष्ट्र के महान संत श्रीनरहरिदास जी इसी स्थान के उत्तरभाग में अपनी उपासना के लिये योगिराज श्रीकृष्ण भगवान् की मूर्ति की स्थापना कर इसी स्थल को अपना स्थाई निवास बनाया था यह स्थान आज भी बड़ा पवित्र माना जाता है।

पंचगंगा मार्ग पर स्थित मंदिर के मुख्यद्वार से अन्दर जाकर बाबा के कमरे में एक भव्य विशाल चित्र लगा है तथा पास में बाबा तैलंगस्वामी की प्रायः सभी उपयोग में आने वाली सामग्री सुरक्षित भक्तजनों के दर्शनार्थ रखी है। इन वस्तुओं में पद्म के आकार का विशाल यंत्र, खड़ाऊँ, बाबा का मुकुट, रुद्राक्ष का कमण्डल, जप की माला और कुछ यंत्र आदि हैं। बाबा तैलंगस्वामी की आराध्यदेवी 'मंगलाकाली' थी वह तेजोमय मूर्ति कुछ बोलने की मुद्रा में दर्शनीय है। वहीं बगल में भैरव भी विराजमान हैं और बाबा स्वतः पूर्णांग मूर्तिमान होकर पाषाणरूप में स्थित है। बाबा का समाधिस्थल सीढ़ियों द्वारा नीचे जाने पर हैं जब बाबा समाधि के लिए नीचे जाया करते थे तो श्रीमंगलाकाली भी बाबा के पीछे-पीछे जाकर नीचे बाबा के पीछे खड़ी रहती थी। आज भी लोग बच्चों की नजर, डरे हुये बालकों को लेकर पुरुष-स्त्रियों की भीड़ रहती है और भक्त लोग तरह-तरह की मनौतियां मानते हैं। भक्तलोग आज भी उनपर विश्वास कर मूर्ति का दर्शन कर अपने को धन्य मानते हैं। बाबा दुखियों के दुःख को सुनकर उनकी रक्षा करते हैं।

काशी के अघोर संत बाबा कीनाराम

बाबा कीनाराम का जन्म सन् १६८४ ई० में वाराणसी जिले के चन्दौली तहसील के रामगढ़ ग्राम में हुआ था। बचपन से ही बाबा साधना में रुचि रखते थे। वे हमेशा एकान्त में रहते कम बोलते और लोगों से दूर रहते थे। निरंतर भगवान् राम का ही नाम मुख पर रहता था। कीनाराम के इस स्वभाव को देख कर चिन्ता हुई। घर वालों ने बचपन में ही उनका विवाह कर दिया मगर गौने के पहले ही पत्नी का स्वर्गवास हो गया। वे कुछ ही दिनों में परिवार से अलग हो गये और संयोगी वैष्णव शिवाराम के संरक्षण में अघोर-साधना करने लगे। तंत्र-साधना के कुल सोलह मार्ग हैं और उन सोलह मार्गो के अलग-अलग सम्प्रदाय भी हैं। (घोर) का अर्थ हैं संसार, अघोर का तात्पर्य है जो संसार में रहते हुए भी संसार से पूर्णतया विरक्त् हैं।जहाँ तक 'पंच-मकार' का प्रश्न है, वह तांत्रिक-साधना का आधार अवश्य हैं, लेकिन साधना के रूप में नहीं। वास्तव में पंच-मकार का रहस्य अत्यन्त गम्भीर हैं, जिसे सब लोग नहीं समझ सकते और यह न समझने का ही परिणाम है कि आज तंत्र-मंत्र और उसकी साधना के नाम पर चारों तरफ अनाचार, व्यभिचार फैला हुआ हैं। उस समय ऐतिहासिक संघर्ष के कारण इससे भी अधिक अनाचार व्यभिचार फैला हुआ था। यह सब बाबा कीनाराम से देखा नहीं गया। उन्होंने अघोर साधना के विशुद्ध रूप को समाज के सामने लाने का संकल्प किया।

अघोर-संत श्री बाबा कीनाराम

अपने इस प्रयास में उन्होनें वैष्णव और अघोरजनों को एक में मिला कर एक तांत्रिक साधना का निर्माण किया, जिसमें 'नारी' का सर्वथा निषेध किया । कामवासना को साधना के किसी भी अंग में आश्रय नहीं दिया था । साधक के लिये ब्रह्मचर्य अनिवार्य था । सारी साधना का मूलाधार एकमात्र ब्रह्मचार्य ही था । उस समय काशी के आध्यात्मिक वातावरण में संत तुलसीदास के भक्ति रस का सौरभ फैला हुआ था । बाबा कीनाराम ने अपनी उस अभिनव अघोरसाधना का केन्द्र काशी को ही बनाया और यहीं आकर उन्होनें अपनी साधना पूर्ण की । काशी में उस समय बहुत बड़े अघोरसाधक संत कालूराम थे ।

उन्हें कई प्रकार की उच्चसिद्धियां प्राप्त थीं । हरिश्चन्द्रघाट से थोड़ी ही दूर पर 'क्रीं' कुण्ड नाम का एक तालाब था उसी के तट पर वह निवास करते थे और नित्य अर्धरात्री से भोर तक श्मशान में ही विभिन्न प्रकार की शव साधना किया करते थे । बाबा कीनाराम ने उनकी चर्चा सुन कर साधनास्थल श्मशान पर ही मिलने का निश्चय किया । एक दिन अपने शिष्य बीजाराम के साथ श्मशान पहुँचे तो कीनाराम ने देखा, बाबा कालूराम के चना छिड़क कर कुछ बुदबुदाते ही उनके चारों तरफ खोपड़ियां कठपुतली की तरह आकर उनके पास इकट्ठी हो गई और चना खाने लगी इस दृश्य को देख कीनाराम शिष्य के साथ वापस आ गये, दूसरे दिन शिष्य को लेकर कीनाराम वहीं एक वृक्ष के नीचे खड़े हो गए, कुछ ही क्षणों में कालूराम ने नित्य की तरह चना बिखेर दिया लेकिन खोपड़िया अपनी जगह से हिली नहीं तो उन्होने आवाज लगाई सुना नहीं रे तब भी खोपड़ियां नहीं हिली तो संत कालूराम ने आश्चर्य से चारों तरफ देखा पीपल के नीचे कीनाराम पर पड़ी तो वे समझ गये कि निश्चय ही यह कोई सिद्ध चमत्कारी पुरुष है इन्होने ही अपनी शक्ति से खोपड़ियों को रोका है । कीनाराम ने आगे बढ़कर कहा बाबा यह क्या खेल खेल रहे हैं । उठिये आश्रम चलें । कालूराम ने अपने पेट पर हाथ फेरते हुए कहा "मुझे बड़ी भूख लगी है । मछली खिलाओगे ?" यह सुनकर बाबा कीनाराम गंगा के किनारे गये और जोर से चिल्ला कर बोले "अरे गंगिया, एक मछली तो दे जा ।" इतना कहना था कि पानी में से एक बड़ी-सी मछली अपने आप कूद कर बाहर आ गई, उसे चिता की आग में भूनकर तीनो ने खाया, तृप्त होकर संत कालूराम उठ खड़े हुए । अपने आश्रम की ओर बढ़े तो आगे सहसा उनकी नजर गंगा में बहती हुई किसी चीज पर पड़ी । कीनाराम को आंखों से संकेत करते हुए बोले 'देख ! कोई मुर्दा आ रहा है ' कीनाराम ने कहा- 'नहीं बाबा ! मुर्दा नही जिन्दा है वह ।' कालूराम बोले- 'अगर जिन्दा है तो बुला ले ।' कीनाराम ललकार कर बोले- 'अरे इधर आ रे।' इतना सुनते ही मुर्दा बहता हुआ किनारे आया, फिर उठ बैठा और बाबा की ओर ताकने लगा । कीनाराम डपट कर बोले- 'अबे मुंह क्या देखता है ? जा अपने घर जा ।' मुर्दा जब जिन्दा होकर अपने घर पहुँचा तो उसने अपनी माँ को अपने जीवित होने की सारी कथा बतलाई, जिसे सुन कर उस द्रवित मां ने बाबा कीनाराम को अपना बेटा समर्पित करते हुए कहा- "महाराज, आपने इसे जीवनदान दिया है अब आप ही इसे अपने चरणों में स्थान दीजिये।" कीनाराम ने उसे अपना शिष्य बना लिया और उसका नाम रामजियावन रखा । थोड़े समय बाद कीनाराम ने

सन्त कालूराम को अपना गुरु बना लिया।

बाबा कीनाराम पूरे तीस वर्षो तक क्रीं कुण्ड पर संत कालूराम के साथ रहे। रामजियावन भी अपने गुरु और बाबा की सेवा में बराबर लगा रहा। बाद में वह भी बड़े सिद्ध पुरुष हुए। क्रीं कुण्ड वाराणसी स्थित शिवाला मुहल्ले में स्थित हैं। उस समय वहां घनघोर जंगल था। आबादी नाममात्र की थी। कुण्ड के ठीक सामने गंगातट पर काशीनरेश बलवन्त सिंह का शिवाला महल था। संत कालूराम और बाबा कीनाराम की साधना शक्ति से महाराज काफी प्रभावित थे और उनके प्रति श्रद्धा थी। उन्होनें अपने ९६ गांवो से ९६ रुपये वार्षिक पूजा अर्चना के लिये नियत कर दिया था। एक बार बाबा कीनाराम किसी गांव से गुजर रहे थे। अचानक एक बुढ़िया के रोने की आवाज सुनकर वे रुक गये जब बुढ़िया से रोने का कारण पूछा तो पता चला कि लगान न जमा करने से जमींदार के गुमास्ते उसके लड़के को पकड़ ले गये है और अब वे उसे तबतक मारेंगे जबतक कि वह बेहोश न हो जायेगा। कीनाराम ने जमींदार से प्रार्थना कीया कि वह लड़के को छोड़ दे, मगर जमींदार इसके लिए तैयार नहीं और बोला अगर दर्द है तुम्हारे मन में तो तुम्ही बकाया रुपया चुका दो। कीनाराम ने फिर समझाया, पर जमींदार ने एक नहीं सुनी और फटकारते हुए कहा- 'जाओ अपना रास्ता नापो। मांगे भीख पूछे घर की जमा।' बाबा हँस कर वहीं बैठ गये। आखिर जब लड़के पर पहला कोड़ा पड़ा जो जमींदार अपनी पीठ पर कोड़े की चोट से चिल्लाने लगा। तबतक दूसरा कोड़ा पड़ा। चीत्कार करते हुए जमींदार ने लड़के को छोड़ा और वह दर्द से छटपटा रहा था। जब कपड़े उतारे गये तो जमींदार की पीठ पर तीनों कोड़ों के नीले निशान बने हुए थे और उस लड़के की पीठ बिल्कुल अछूती थी उसपर कोड़ा लगने का कोई निशान नहीं था। जमींदार बाबा के चरणों पर गिरकर क्षमा मांगने लगा। बाबा क्षमाकर चलने लगे तो बुढ़िया ने उनका चरण पकड़ लिया और रोती हुई कहने लगी "महाराज आपने मेरे लड़के की जान बचाई अब यह बालक मेरा नहीं आपका है। आप इसे अपना शिष्य बना कर चरणों में स्थान दीजिये।

बाबा ने बुढ़िया को काफी समझाया, मगर वह अपनी जिद से टली नहीं। अंत में बाबा ने लड़के को शिष्य बना लिया। उसी का नाम रखा था बीजाराम। बीजाराम आजीवन अपने गुरु की सेवा में रहे और उनके बाद वहीं उनकी गद्दी पर बैठे। बीजाराम को लेकर बाबा ने समस्त भारत की यात्रा की और सभी शक्तिपीठों का दर्शन किया। सभी तीर्थो में भ्रमण किया।

अंत में तांत्रिकों के तीर्थराज गिरनार पहुँचे। वहाँ उन्होने बीजाराम के साथ कठोर साधना की, जिसके फलस्वरूप भगवान् दत्तात्रेय ने उन्हे दर्शन दिया। उसके बाद गुरु-शिष्य जूनागढ़ चले गये वहीं भिक्षाटन करने लगे। उन्हे नवाब का यह कानून नहीं मालूम था कि जूनागढ़ में साधुओं को भीख मांगना मना है। वहाँ के सिपाहियों ने गुरु शिष्य को पकड़ कर कारागार में डाल दिया, जहाँ पहले से ही साधु कैद थे। बाबा से चक्की पीसने के लिये कहा गया। वे मस्ती से जमीन पर लेटे हुए थे। सिपाहियों ने उन्हे डाट कर कहा "उठ चक्की पीस।" बाबा ने ऊँचे

स्वर में कहा- 'तू ही क्यों नहीं पीस लेता ?' यह सुनकर सिपाहियों ने लातों से मारा, लेकिन वह लात कीनाराम को न लगकर चक्की से जा टकराई सिपाही पैर पकड़ कर बैठ गया। पैर लगते सारी चक्कीयां अपने आप चलने लगी और चक्कियों से आटा पिस कर बाहर आने लगा। नवाब ने यह सुना तो उसे घोर आश्चर्य हुआ। वह दौड़ा-दौड़ा आया बाबा का पेर पकड़ कर क्षमा मांगने लगा और बाबा के साथ सभी साधुओं को छोड़ दिया। उसीके बाद कानून भी खत्म कर दिया।

वहाँ से बाबा उज्जैन आये कुछ समय वहीं रहकर क्षिप्रा नदी के तट पर अभिनवग्रंथ की, उस पुस्तक का नाम विवेकसार रक्खा। फिर वह मुत्यूपर्यन्त काशी में ही रहे।

बाबा कीनाराम अपने दोनों शिष्यों को अघोरमार्ग में पूर्ण सिद्ध कर देना चाहते थे, पहले बाबा ने शिष्य रामजियावन को साधना प्रारंभ कराई। तंत्र के जितने मार्ग, उनमें अघोरमार्ग की साधना अत्यन्त कठिन है। वैसे अघोरी बहुत है मगर अघोरसाधक बहुत ही कम होते हैं। अघोरसाधक के मूल आधार 'रज' और 'बिन्दु' है 'रज' स्त्री तत्व का और 'बिन्दु' पुरुष तत्व का प्रतीक है। अघोर साधना का एकमात्र लक्ष्य है- कुण्डलिनीजागरण, तत्पश्चात् कुण्डलिनीसिद्धी और इस लक्ष्य की पूर्ति होती है दोनो तत्वों के संयोग से। इसी स्थान पर तंत्र के विभिन्न मार्गो में भी नारी की आवश्यकता का अनुभव होता है जहाँ भौतिक जगत में दोनों तत्वों के संयोग से जीवसृष्टि होती है, वहीं दूसरी ओर आध्यात्मिक लाभ भी होता है। अघोरमार्ग में 'रज' का प्रतीक लालवस्त्र है और 'विन्दु' यानी वीर्य का प्रतीक है सफेदवस्त्र। बाबा ने सर्वप्रथम रामजियावन को रज का प्रतीक लाललंगोट पहनाया और कहा, "अघोर सन्यासी को श्मशान में साधना करनी चाहिए, मगर इसका तात्पर्य यह नहीं कि 'श्मशान' का अर्थ वहीं हों। श्मशान पांच हैं- मूंज की खाट, एकान्त में स्थित पीपल का वृक्ष, वेश्या का बिस्तर, अपनी पत्नी के साथ सहवास की शैया और चिता जलने का स्थान। पांच महाश्मशानों की तरह ही पांच प्रकार के मांस भी हैं- सूकर, मछली, मनुष्य, गिद्ध और कौवे का मांस। ये पांच मांस हैं, जिसका प्रयोग साधना की दृष्टि से किया जाता है अघोरमार्ग में।

इन पांचों प्रकार के मांसों में विभिन्न प्रकार के तत्व हैं। प्रकृति में भी पांच तत्व हैं जिनका प्रतिनिधित्व वे विभिन्न तत्व करते हैं साधकगण प्रकृति के तत्वों पर विजय प्राप्त करने के उद्देश्य से क्रम से उन मांसों का सेवन करते हैं। बाबा कीनाराम के निर्देशन में लगातार कई वर्षोतक रामजियावन शारीरिक साधना करते रहे और समाधि का भी अभ्यास करते रहे।

एक दिन रात्री का समय था। चारों तरफ घोर अंधकार फैला हुआ था। हरिश्चन्द्रघाट के महाश्मशान पर कई चिताएँ एक साथ जल रही थीं चारों तरफ सन्नाटा छाया हुआ था। बाबा रामजियावन को लेकर उसी समय वहां पहुँचे। बाबा के गले में सांप की हड्डियों की माला झूल रही थी और हाथ में लम्बा सा एक भयानक त्रिशूल था। उनका चेहरा उस समय काफी भयानक लग रहा था। रामजियावन के गले में सूअर के हड्डियों की माला पड़ी थी और उनका शरीर

पूरी तरह नग्न था। श्मशान में आकर वे बैठ गये और गुरु-चेला शरीर में काफी देरतक चिता की भस्म रगड़ते रहे। बाबा ने दो खोपड़ी देकर कहा, "जा भर ला।" रामजियावन ने दोनों में पानी भरकर ला दिया। बाबा ने दोनो खोपड़ियों पर फूक मारी फिर चिल्ला कर बोले, "ले पी जा सब" खोपड़ी का पानी महक रहा था। वह जल शराब में बदल चुका था। रामजियावन झटके से पूरी शराब पी गये। दूसरे ही क्षण आसव की तेजी से झंझना उठे। बाबाने गांजा बनाया दोनों ने पीया पीकर चिता की परिक्रमा कर मंत्र पढ़ने लगे। फिर वहीं बैठकर समाधि लगा ली। सुबह रामजियावन से बाबाने पूछा भूख लगी है, रे ? पर चारों ओर देखकर जोर से पुकारा "परेतवा रे करे हरामी कहां गई ले।" पीपल के पेड़ के नीचे कोई धम्म से कूद पड़ा। रामजियावन का सारा शरीर कांप उठा। वह एक काली सी छाया थी, उसका रंग काला पैर काफी लम्बे थे हँसता हुआ खड़ा हो गया। बाबा ने कहा, अरे पुजरिया आज क्या भोग लगायेगा ला मुझे खिला। इतना सुनते ही गंगा में कूद पड़ा कुछ ही क्षणों में अपने कन्धे पर एक बालक का शव लिये हुए बाहर आकर बाबा के सामने रखकर नाचने लगा। बाबाने शव को श्मशानेश्वर महादेव के निकट लाकर रख दिया और बैठकर मंत्र पढ़ने लगे। तो वैसे ही अनेक आकृतियां प्रकट होने लगी कुछ प्रेत और प्रेतिनियां भी थी। जो सभी मिलकर नाचने और गाने लगी और उसी बीच बाबा की आराधना भी चलती रही फिर शव से उतर कर श्मशानेश्वर को प्रणाम कर त्रिशूल से शव को टुकड़े-टुकड़े कर डाला और सब प्रेतों को मांस खिलाने लगे। सब खा चुके तो बाबाने स्वयं शिष्य के साथ मांस ग्रहण किया। फिर नित्य की भांति आश्रम चले गये। बाबा के निर्देशन में शिष्य की श्मशान साधना चलती रही।

बाबा ने रामजियावन को एक मंत्र देकर कहा जा श्मशान में बैठकर इस मंत्र का जप कर चाहे कितना ही विघ्न क्यों न पड़े चाहे कितनी बाधा क्यों न आये और चाहे कितना ही भय लगे, पर जाप मत बन्द करना।

इस चेतावनी के बाद बाबा ने समझाते हुए आगे कहा "मानव शरीर एक किले के समान है, जिसके नौ फाटक हैं। उन्हे साध लेना और कर्मेन्द्रियों तथा ज्ञानेन्द्रियों को अपने अधिकार में करके उनपर शासन करना ही एकमात्र अघोर साधना है और इन्हें पूर्णतया नियन्त्रितकर लेना ही एकमात्र अघोरसिद्धि हैं।" गुरु से मंत्र ले श्मशानेश्वर महादेव के पास मंत्रजप करने लगे। अचानक ऐसा लगा कि आकाश से कोई वाद्यों के साथ नूपुर खनकाती पास आ रही है और पीछे खड़ी हो गई। उन्हे लगा बहुत युवतियां घेरे बैठी है। एक ने उन्हे आलिंगन कर लिया और वासनापूर्ण क्रिया करने लगी और नृत्य करने लगी। ये सब शान्त होते ही ऐसा लगा जैसे दहाड़ते हूए शेरों का झुण्ड और पागलों की तरह दौड़ते हाथियों का समूह दिखाई दिया। शेर उनपर आक्रमण कर रहे थे हाथी कुचनल देने के लिए उनकी ओर बढ़ रहे थे और भयानक आकृति रूपरंग वाले आक्रमण करते दिखाई दिये। कुछ ही देर बाद एक विषधर कालासर्प रामजियावन को बार-बार डँसने लगा। फिर भी जप उन्होनें बन्द नहीं किया। सर्प सर पर चढ़कर नाक में घुसने लगा आधा चला गया भय के साथ पीड़ा भी होने लगी तो रामजियावन ने

पूछ पकड़कर बाहर खीचना चाहा मगर बाहर आने के बजाय अन्दर ही चला गया। डरते-शर्माते आश्रम लौटे तो बाबा ने कहा अगर जाप बन्द नहीं करते तो तुम्हे अनोखी सिद्धि प्राप्त हो जाती। पछताओ नहीं प्रयास जारी रक्खों फिर कोई विघ्न पैदा न हो। रामजियावन बाबा को प्रणाम कर फिर श्मशान लौट आये। १७७० में महाराज बलवंतसिंह की मुत्यृ के बाद उनके एकामत्र उत्तराधिकारी चेतसिंह गद्दीपर बैठे। चेतसिंह का व्यक्तित्व काफी रोबीला था। उनमें सभीगुण थे उन्होने शिवालाघाट महल में एक शिवमंदिर की स्थापना की शिवलिंग के प्राणप्रतिष्ठा का आयोजन वैदिक विद्वानों पण्डितों के सानिध्य में चल रहा था। कीनाराम के आश्रम का फाटक किले के सामने था। चेतसिंह अघोरसाधना से घृणा करते थे। चेतसिंह ने कहला दिया कि आज के दिन कीनाराम किले में न आये, बाबा को ये खबर मिली जब उन्होने शरीर में सारे भस्म पोते और मदिरापान कर हंसते हुए मंदिर के प्रांगण में पहुंच गए। बाबा के हाथ में शराब की बोतल दूसरे हाथ में मुर्दे की टांग थी। महाराज देखते ही क्रोधित हो उठे और सिपाहियों को बुलाकर कहा निकाल दो बाहर किसकी हिम्मत थी जो बाबा को छूता। बाबा क्रोधित हो बोले जा आज से तेरे वंश में कोई आज्ञा मानने वाला नहीं होगा। तू निस्संतान होगा। तेरे ये आज्ञाकारी सारे है ये भी विगैर संतान के ही मरेंगे और मंदिर की ओर देखकर बोले ये म्लेच्छों के हाथ चला जायगा यहां कौवे कबूतर वीट करेंगे। यह सुन सभी स्तब्ध हो गये। बाबा टांग लिये हुये लौट गये। बाबा की वाणी सत्य हुई। महाराज को अंततः पुत्र नहीं हुआ। सभी कर्मचारियों को भी पुत्र लाभ नहीं हुआ, शीघ्र ही महल मंदिर अंग्रेजों के हाथ चला गया और महल पर कब्जा कर लिया कुछ ही दिनों के भीतर वहां कौवे चमगादड़ वीट करने लगे, आज भी यही स्थिति बनी हुई है।

मूर्ति प्रतिष्ठा के समय चेतसिंह के मंत्री बख्शी सदानन्द भी उपस्थित थे। अवसर पाते ही वह नंगे पांव बाबा की ओर श्राप से मुक्ति पाने के लिए क्षमा माँगने लगे। बाबा बोले- "सदानन्द तुम अपने पुत्रों के नाम के साथ हमेशा आनन्द शब्द लगाते रहना। जब तक लगाते रहोगे, तुम्हारा वंश चलता रहेगा और परिवार में सर्वदा आनन्द रहेगा।" आजतक बख्शी सदानन्द के वंशज अपने पुत्रों के नाम आनन्द पर ही रखते आये है। डा० सम्पूर्णनन्द इसी वंश परंपरा के थे। उन्होने अपने पुत्र का नाम सर्वदानन्द रखा था। काशी के लक्ष्मीकुण्ड स्थान पर एक प्राचीनमठ था। वहां वार्षिक भण्डारा हुआ करता था उस भण्डारे में सैकड़ो वैष्णव और विभिन्नसम्प्रदायों के साधु-ब्राह्मण भोजन करते थे। उस भण्डारे में तरह-तरह के पदार्थ बनाये जाते थे इसी से वहां के बाबा विख्यात थे। मगर उन्होने अपने भण्डारे में कीनाराम को कभी नहीं आमंत्रित किया। एकबार कीनाराम स्वयं पहुँच गये। मठ के बाहर वृक्ष के नीचे बैठ गए। उनके कन्धेपर एक मरी हुई बिल्ली थी। मठ में साधु-ब्राह्मण भोजन के लिये बैठाये जा रहे थे पंक्तियों में और सबके सामने परोसा पदार्थ मांस-मछली पानी-शराब हो गया। उसी वक्त आकर किसी व्यक्ति ने बताया बाहर कीनाराम बैठे हैं, उन्हे नहीं बुलाया गया इसी से वह क्रुद्ध हैं। कुछ साधु बाबा को बुलाने गये तो बाबा बिल्ली का मांस खा रहे थे उन साधुओं को दिखाई

दिया कि बाबा मिठाई पूड़ी खा रहे है । साधुओं ने बाबा से भण्डारे में चलने को कहा तो बाबा नहीं उठे । अतः बाध्य होकर मठ के प्रधान महंत को आना पड़ा और क्षमा मांगी और बाबा को ले गये । वहां जाकर कीनाराम ने कहा, आप लोग पतितपावन सीताराम कहते है, मगर इसका मर्म भी समझते है आपलोग, वह पतितों का उद्धारक है पतित पावन है, वहां अपने को भुलाकर अपनी समस्त इन्द्रियों को समेट कर यदि साधक मात्र उसकी प्राप्ति के लिए अपने को पतित बनादे तो क्या वह राम अपने भक्त को पावन करने के लिए स्वयं नहीं दौड़ पड़ेगा । यही अघोर साधना का रहस्य है । यह मत भूलिये अघोरी स्यवं भगवान शिव थे । जब शिवने ब्रह्मा का गला काट दिया तो हत्या से निर्मित रूप अघोरी का हुआ । वहीं से अघोर-साधना का जन्म हुआ स्वय्र शिव अघोरेश्वर है । ऐसा कहकर बाबा पंक्ति में बैठे और सामग्री रखी गई । बाबा ने ज्यों ही हाथ लगाया सारी सामग्री यथावत हो गई ।

ऐसे ही एक दिन कीनाराम ठहलते हुए शिवालाघाट पहुँचे, संयोग से राजा साहब भी महल से निकले ही थे कि बाबा को देख रूक गये, बाबा ने कहा आज बहुत भूख लगी है कुछ खिलाइये। अभी ठहरो तुम्हारा भोजन मंगवाता हूं, व्यंग से कहा, बख्शी मंत्री आनन्द को आज्ञा दी, सदानन्द उधर गंगाजी की तरफ एक सड़ी गली लाश पड़ी है बहुत दुर्गन्ध है डोमो से मंगवा कर इसे खाने के लिए दे दो । मंत्री ने कहा महाराज मुझे शूली पर चढ़वा दें परन्तु यह आज्ञा मत दीजिये, बाबा ने कहा सदानन्द यह जो कह रहे है वैसा ही करो । बाबा पल्थी मार कर बैठ गये। लाश लाकर रख दी गई, बाबा ने अपना दुपट्टा उतार कर मुर्दे पर डाल दिया कुछ ही क्षणों में शव की जगह विभिन्न प्रकार के पकवान रचे रखे थे । बाबा का यह चमत्कार देखकर चेतसिंह चरणों पर गिर पड़े और भूलों के लिये क्षमा मांगने लगे । तो बाबा ने कहा नहीं अब तुम राजा नहीं रह सकते और तुमको यही सदानन्द गद्दी से उतारेगा । यह राज पाट नष्ट हो जायेगा । सदानन्द चरण पकड़ कर बोले श्राप के द्वारा मुझे भस्म कर डालिये परन्तु नमक हरामी मुझ से मत करवाइये । बाबा कीनाराम राजा से बोले तुम्हारे विषय में जो कह दिया वह सत्य होगा ही तुम अब राज नहीं कर सकते, मगर इतिहास में तुम अमर रहोगे और यह सदानन्द बराबर तुम्हारी मदद करेगा । तुम्हारा यह राज्य खण्डित होकर भी विद्यमान रहेगा । कहने की आवश्यकता नहीं कि बाबा की सारी बातें सत्य सिद्ध हुई । अगस्त १७८१ में अंग्रेजों और चेतसिंह में ठन गई बारेन हेस्टिंग्स ने काशी पर आक्रमण किया । चेतसिंह उस आक्रमण का मुकाबला न कर सके और ग्वालियर की ओर भाग गए । फिर वह कभी वापस नहीं लौटे और एक दिन वहीं उनकी मृत्यु हो गई । अंग्रेजो ने सब लेकर ३ परगनों का काशी-राज बलवंत सिंह के नाती को दिया ।

चेतसिंह के बाद अंतिम राजा श्री विभूतिनारायण सिंह हुए । बाबा कीनाराम के कथनानुसार १५ अगस्त १९४९ को काशीराज्य स्वतंत्र भारत में मिला लिया गया और इस विलीनीकरण की व्यवस्था कराई थी बख्शी सदानन्द के वंशज डॉ० सम्पूर्णानन्द ने, उस वक्त मंत्री थे, बाद में मुख्य मंत्री बने । इस वंश में नाम के साथ आनन्द लगा रहता है जैसे - परिपूर्णानन्द, सदानन्द, सम्पूर्णानन्द । यह आज्ञा बाबा कीनाराम ने दी थी ।

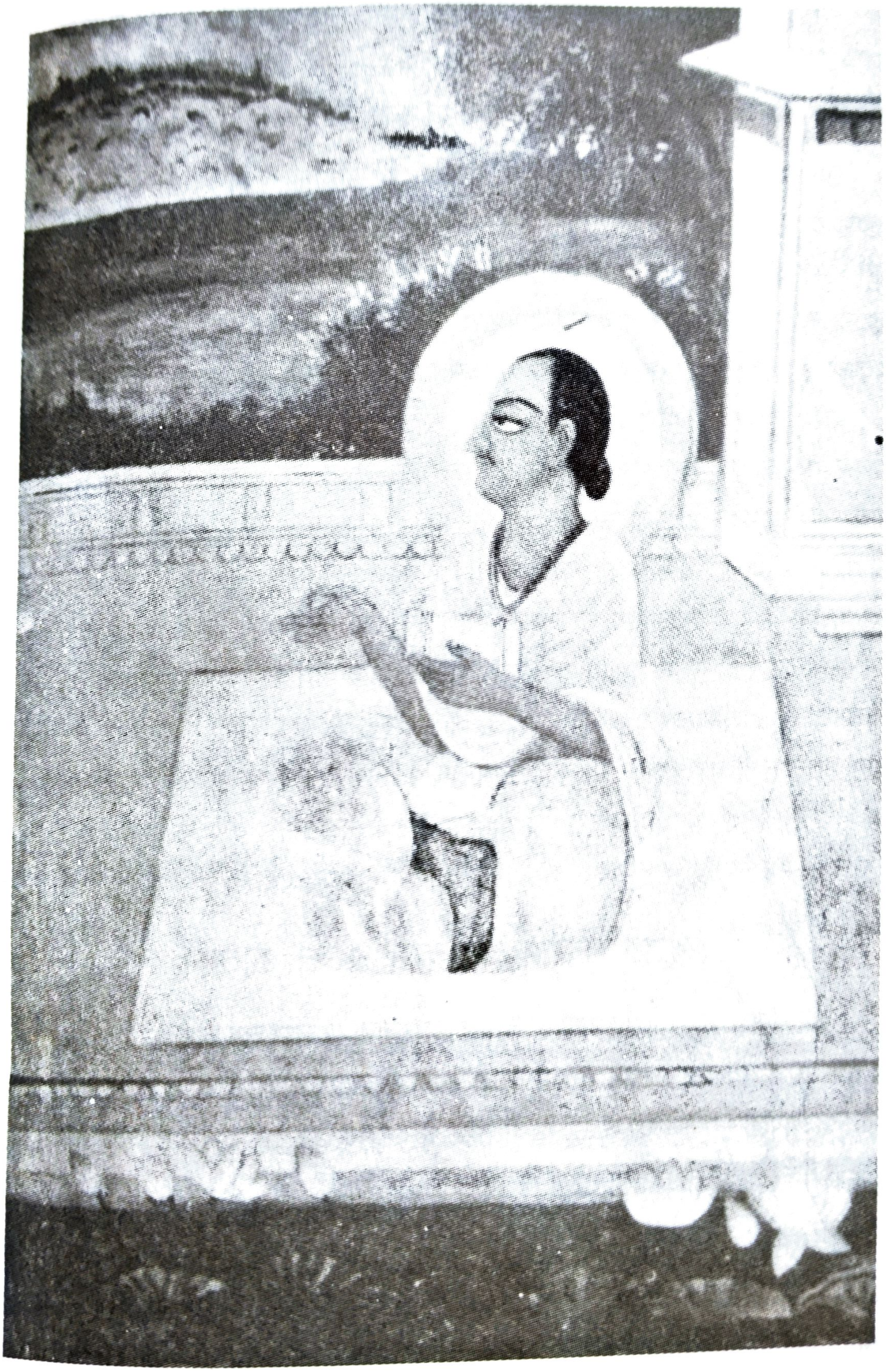

पुष्टिमार्ग के प्रवर्तक श्री १००८ वल्लभाचार्य जी महाराज

वैष्णवधर्मावलम्बियों का तीर्थस्थल काशी

शुद्धाद्वैत महाप्रभु श्रीवल्लभाचार्य का जन्म वि. संवत् १५३५ वैशाख कृष्ण ११ को मध्यप्रदेश के रामपुर चम्पारन में अपने मामा के घर हुआ था।

आचार्य वल्लभ के पिता श्री लक्ष्मण भट्ट प्रकाण्ड विद्वानों में गिने जाते थे। यह तैलंग ब्राह्मण थे। आप काशी में एक सोमयज्ञ में भाग लेने सपत्निक दक्षिण से काशी आ रहे थे कि मार्ग में ही वल्लभाचार्य का जन्म रामपुर चम्पारण में अपने मामा के घर हो गया। श्री लक्ष्मण भट्ट ने काशी आकर आचार्य का जन्मनाम गोपिनाथ रक्खा। पिता ने वल्लभ के ११ वर्ष की अवस्था में यज्ञोपवीत कराकर काशी के माधवेन्द्रपुरी से वेदशास्त्र का अध्ययन कराकर ब्रह्मवाद के प्रचार हेतु भारत-भ्रमण करने भेज दिया। कुछ दिनों बाद आचार्य बल्लभ ने पुनः काशी आकर मणिकर्णिका पर गंगास्नान के बाद जतनवर में रहकर शुद्धाद्वैत का प्रचार किया। साथ-साथ आपने ८४ ग्रन्थों का निरूपण भी किया। काशी मे ही वि०सं०१५६१ में पं० देवभट्ट की कन्या से आचार्य वल्लभ का विवाह हुआ। काशी में ही वि०सं० १५७२ पौषकृष्ण ६ को श्री वल्लभचार्य के पुत्र विट्ठलनाथ का जन्म हुआ। सन् १५८७ ई० में काशी में हनुमानघाट पर गंगास्नान करने के समय समाधिस्थ अवस्था में आचार्य वल्लभ का स्वर्गवास हो गया। काशी में आचार्यद्वारा आराध्यस्वरूप श्रीमुकुन्दरायजी का मंदिर स्थित है। समीप में पाण्डवों द्वारा सेवित श्रीगोपाललालजी का विशाल मंदिर है। सम्वत् १७८७ वि. में श्रीगोपालजी काशी पधारे एवं सम्वत् १८८४ वि. में श्रीमुकुन्दरायजी गोपालमंदिर के नवनिर्माण के पश्चात श्रीगोपाललालजी सम्वत् १८३४ वैशाखशुक्ल अक्षय तृतिया को वर्तमान मंदिर में पधारे।

काशी में रामकृष्ण परमहंस का आगमन

पुर्वी बंगाल की रानी रासमणी के दामाद मधुर बाबू के साथ जब तीर्थ करने के लिए निकले थे तब उस समय सन् १८६८ ई० में काशी आए थे तथा काशी में केदारघाट पर स्थित स्वर्गीय आनन्दा बापुली (राजाबाबू) के मकान में ठहरे थे। इसका उल्लेख रामकृष्ण मिशन से सम्बंधित पुस्तक "कथामृत" के द्वितीय खण्ड में उद्धृत है।

श्रीरामकृष्ण परमहंसदेवजी के चरण से स्पर्श किया हुआ काष्ठपादुका तथा चंदनकाठ की चौकी जिस पर वे बैठे थे, वह आज भी बापुली भवन के पूजागृह में प्रतिष्ठित है। उक्त पादुका और चौकी की प्रतिष्ठा इसी परिवार के स्वर्गीय डा० विनय प्रसाद बापुली ने किया था और तब से बराबर यह स्थान एक तीर्थ की तरह माना जाता है। इस स्थान को देखने के लिए देश और विदेश के यात्री आते रहते हैं। उस पादुका की नित्य पूजा आदि वर्तमान स्वर्गीय डा० विनय प्रसाद बापुली की धर्मपत्नी श्रीमती राधारानी बापुली कर रही है। प्रतिवर्ष बापुली परिवार श्रीरामकृष्ण परमहंसदेव की पुण्य जन्मतिथि पर सामूहिक भजन कीर्तन का आयोजन करता है।

काशी नगरी की ऐतिहासिक और पौराणिक पृष्ठभूमि

काशी शब्द का प्रथम उल्लेख अथर्ववेद की पैप्पलादशाखा ४।७।१ में और शतपथ १३।५।४।२१ में आता है। अग्निपुराण के ३।५।२० में काशी के अनेक नाम पाये जाते है। उदयजातक में सुरूधन (सुरक्षित), सुतसोमजातक में सुदर्शन (दर्शनीय), सोड़दण्डजातक में ब्रह्मवर्द्धन, खण्डहालजातक में (पुष्पवती), युवजयजाजातक में रम्भनगर (सुन्दरनगर), जातक ४।११६ शंखजातक में मोलिनी (मुकुलिनी), जातक ४।१५ में इसे काशरनगर और काशीपुर के नाम से भी जानते थे, (जातक ५।५४, १६५) धम्मपद अट्ठकथा १।६७ अशोक के समय राजधानी का नाम पांतलि था (जातक ३।३६) वैदिकयुग में स्थानवाचक प्रथा के अनुसार काशी के राजाओं को काश कहकर संबोधित करते थे।

शतपथब्राह्मण में काशीराज धृतराष्ट्र का नाम आया है। (वैदिक) बौद्धग्रन्थो काशी विदेहशब्द का प्रयोग कौशीतकी उपनिषद में (४।१) सबसे पहले आता है। बृहदारण्यक ३।८।२ में गार्गी अजातशत्रु को काशी अथवा विदेह का राजा कहती है। शांखायन श्रौतसूत्र में (१६।१६।५) जलजातकर्णी को काशीकोशल और विदेह के राजाओं का पुरोहित कहा गया हैं।

बौधायनश्रौतसूत्र (२१।१३) में काशी और विदेह का पास में उल्लेख हुआ है। काशीकोशल का प्रथम उल्लेख गोपथब्राह्मण (१।२।९) में हुआ है, काशी की स्वतंत्र राज्यसत्ता नष्ट हो जाने पर और उसके कोशल में मिल जाने पर काशीकोशल साथ-साथ आने लगे।

महाभाष्य में काशीकोसलिया काशीकोशल उदाहरण में काशी और कोशल जनपदवाची शब्दों का जोड़ा बनाया गया है। (जातक ३।३६) में वाराणसी के भिन्न भिन्न नाम हैं।

आर्यो द्वारा काशी पर अधिकार ई० पूर्व १००० के बहुत पहलें हुआ, ऐतरेथ ब्राह्मण (७।१७।७)।

पुराणों में काशीवंश के दो उद्गम दिये गये है। सात पुराणों में ब्रह्म ३।६३, ११६-१४१, वायुपुराण-१६।२३-२८ इत्यादि के अनुसार यह वंश अयु के पुत्र से आरम्भ हुआ। इसके अनुसार इस वंश के पहले चार राजा क्षत्रवृद्ध, सुहोत्र, काश और दीर्घतपस हुए। ब्राह्म और हरिवंशपुराण इस वंश की भिन्न उत्पत्ति बतलाते हैं जिसमें सुहोत्र और पौरववंश के सुहोत्र को एक ही बताया गया है। इसके अनुसार सुहोत्र वितथ का पुत्र था। इस प्रकार से काशीवंश की उत्पत्ति सुहोत्रपौरव से हुई।

इस दूसरी अनुश्रुति के अनुसार इसवंश के प्रथम चार राजगण क्रमशः वितथ, सुहोत्र, काशिक और दीर्घतपस हुये। दिवोदास के बाद उनके भाई अष्टरथ काशी की गद्दी पर आये, प्रतर्दन दिवोदास के पुत्र थे।

पार्जिटर इंडियनहिस्टोरिकल ट्रेंडिशन ५।१०।१, लंडन १९२२। श्री पार्जिटर ने काशीवंश की निम्नलिखित तालिका पुराणों के आधार पर दी है-

(१) मनु, (२) इला, (३) पुरुरवा, (४) आयु, (५) नहुष, (६) क्षत्रवृद्ध, (७) ?, (८) ?, (६) सुहोत्र, (१० तथा ११) ?, (१२) काश, (१३) ?, (१४) ?, (१५) दीर्घतपस (१६) ?, (१७) धनव, (१८) ?, (१६) धनवन्तरी, (२०) ?, (२१) केतुमंतप्रथम, (२२) ?, (२३) भीमरथ, (२४) ?, (२५) दिवोदासप्रथम, (२६) अष्टरथ, (२७ से ३७) ?, (३८) हर्यश्व, (३६) सुदेव, (४०) दिवोदास द्वितीय, (४१) प्रतर्दन, (४२) वत्स, (४३) अलर्क, (४४) ?, (४५) सत्रति, (४६) सुनीथ, (४७) ?, (४८) क्षेम, (४६) ?, (५०) केतुमंत द्वितीय, (५१) ?, (५२) सुकेतु, (५३) ?, (५४) धर्मकेतु, (५५) ?, (५६) सत्यकेतु, (५७) ?, (५८) विभु, (५६) ?, (६०) सुविभू, (६१) ?, (६२) सुकुमार, (६३) ?, (६४) धृष्टकेतु, (६५) ?, (६६) वेणुहोत्र, (६७) ?, (६८) भर्ग, (६६ तथा ७०) ?, (७१) पौरवस, (७२) जन्हू, कोशीतकी उपनिषद् में एस०वी०ई० १।३००-७१५, १००-५ काशी के दार्शनिक राजा अजातशत्रु का उल्लेख हैं।

अति प्राचीनकाल से काशी के राजा चन्द्रवंशी होते आये है, परन्तु हमें वर्तमान श्वेतवाराहकल्प के वैवस्वत मन्वन्तर की बातें देखनी हैं। इस सम्बन्ध में पुराणों से ज्ञात होता है कि चन्द्रवंशीय राजा मनु के पौत्र ऐल पुरुरवा के सातवी पीढ़ीं में उत्पन्न-वंशज 'काश' राजा ने यहां पर स्वतन्त्रराज्य आरम्भ किया।

इस मन्वन्तर में चन्द्र के पुत्र बुध और बुध के पुत्र पुरूरवा हुए, पुरूरवा की पांचवीं पीढ़ी में 'काश' नाम के राजा हुए उन्ही के अधिकार में यह भूमि थी इसलिये काशी कहलाई और तब से यह वंश 'काशेय' वंश कहलाने लगा। काशकी छठवीं पीढ़ीं में महाराज हर्यश्व हुये। उनके पुत्र सुदेव हुये। सुदेव के पुत्र सम्राट दिवोदास हुए। जिन्होने इन्द्र की आज्ञा से वाराणसी बसाई। नए शिक्षितों के मत से प्राचीन वैदिक वाङ्मय ऋग्वेद माना जाता है। ऋग्वेद में काशी का वर्णन अ. ७ अष्टक ५ मंडल ७ वर्ग ६ ऋचा ३ में पाया जाता हैं।

पुराणों में ऐलपुरुरवा राजा की राजधानी प्रतिष्ठान (प्रयाग के पास झूसीं) कही गई है। आइने अकबरी से सन् १५८४ ई० में इलाहाबाद के किलें का निर्माण हुआ और जौनपुर से राजधानी उठकर इलाहाबाद चली गयी। वेद और पुराण इनका समन्वय करने से प्रयाग से सन्निहित काशी नगरी पर उसीका अधिकार था, यह कल्पना अनुचित नहीं मालूम होती। शतपथ ब्राह्मण और उपनिषदों में तो स्पष्ट ही काशी और काशी के राजाओं के नाम पाये जाते हैं। ऐसी एक भी स्मृति या पुराण नहीं है जिसमें काशी का नाम या माहात्म्य देखने में न आता हो। चन्द्रवंशी क्षत्रियों के अधिकार में यह राज्य महाराज जयचन्द्र के समय तक था।

इनकी अट्ठाइस पीढ़ियों के बाद काशी पर कौशलों का अधिकार हुआ। फिर यह मगधों के आधीन हुई, बाद क्रमशः नंद, मौर्य, शुंग, कण्व, कनिष्क, भारशिव और गुप्त इनका स्वामित्व ईसा की छठवीं शताब्दी के अंत तक रहा। सातवीं शताब्दी में यह हर्षवर्धन के आधीन हुई। आठवीं शताब्दी के अन्त में गौड़राजा धर्मपाल इसके अधिकारी हुए। सन् ६१६ ई० में राष्ट्रकूट राजा इन्द्रायुध का इस पर अधिकार हुआ। सन् १०१५ ई० से १०४१ ई० तक गांगेयदेव और

उसके पुत्र राजा कर्णदेव ने राज्य किया। ग्यारहवी शताब्दी के अन्त में काशी गहडवालवंशी चन्द्रदेवकी राजधानी हुई। सन् ११९४ ई० में चन्द्रदेव को हराकर शाहाबुद्दीन गोरी ने काशी नगरी पर अपना अधिकार स्थापित किया। सन् १०३४ ई० में नियातल्तगीन ने काशी को खूब लूटा और उसके पहले महमूद गजनी के भारत पर कई आक्रमण हो चुके थे। सन् १०२६ ई० में सोमनाथ का मंदिर लूटा। हसननिजामी अपनी पुस्तक ताजिलम आसीर में लिखते हैं विश्वनाथ मंदिर तोड़कर गोरी गजनी को चला गया। अपने सेनापती कुतुबुद्दीन के ऊपर भार छोड़कर। कुतुबुद्दीन ऐबक को अलीगढ़ में राजपूतों के विद्रोह को दबाने के लिए वहाँ जाना पड़ा और बनारस की हुकूमत अपने एक बड़े आला अफसर के हाथ सुपुर्द किया जिसने बनारस से मूर्ति पूजा हटाने का पूरा प्रयत्न किया। इस सूबेदार का नाम सैयद जमालुद्दीन था। उसी ने बनारस का जमालुद्दीनपुरा बसाया। बनारस कुछ दिनों बाद मुसलमानों के हाथ से निकल कर स्वतंत्र हो गया और उसी समय पुनः विश्वेश्वर के मंदिर का निर्माण उसी स्थान पर मुस्लिमकाल में हुआ। कुछ दिनों बाद कुतुबुद्दीनऐबक को बनारस दुबारा सन् ११९७ ई० में फतह करना पड़ा। कुतुबुद्दीद के राज में बनारस का सुबेदार मुहम्मद बाकर था।

कुतुबुद्दीन की फौजों ने बनारस में काफी तबाही मचा दी और मंदिर के अमलों से बनारस में कई मस्जिदें बनवाई गई। हनुमानफाटक पर अढ़ाई कंगूरे की मस्जिद इस मस्जिद का गुंबद दर्शनीय है। मस्जिद का निचला भाग मंदिर के मलबे से बना है।

इसके दूसरे मंजिल में सन् ११९० ई० का संस्कृत में लेख है जिसमें कुछ मंदिरों और इमारतों के बनने का उल्लेख है, यह मस्जिद तेरहवीं सदी की बनी है। चौखम्बा मुहल्ले की चौबीस खम्बों वाली मस्जिद इसी युग की मालूम पड़ती है, गुलजार मुहल्ले में मकदूम साहब की कब्रगाह के उत्तर और पश्चिम ओर वाली दालानें भी मंदिर के स्तम्भों से बनी है। भदऊ मुहल्ले की भी मस्जिद मंदिरों के सामान से बनी हैं। राजघाट पर मस्जिद में एक दालान १५० फुट लम्बी और २५ फुट चौड़ी है उसके खम्बे गहड़वाल युग के या इसके और पहिले के है। वहीं पलंग शहीद के पास ढूहे पर चार खम्बों वाली इमारत है जिसकी छत पर मूर्तियां बनी हैं यह भी तेरहवीं सदी की बनी हैं।

काशी का प्राचीन अविमुक्तेश्वर मंदिर ज्ञानवापी के उत्तरी फाटक के समीप स्थित था जिसे नियाल्तगीन ने १०३३ ई० में ध्वस्त कर दिया, उसी स्थान पर अभी वर्तमान ३ कब्रे बनी है। क्रमशः कुतुबुद्दीन के बाद सन् १२११-१२२६ में शमसुद्दीन इल्तुतनिश दिल्ली के गद्दीपर बैठा, बैठते ही बनारस और अवध की बगावत का सामना करना पड़ा मगर इल्तुतनिश बगावत का सामना न कर सका, उसके बाद बगावत को कुचल कर रजिया सुल्तान शासक हुई, उसने अपने राज्यकाल सन् १२३६ से १२४० ई० में पुनः मंदिरों को ध्वस्त कर मस्जिदे बनवाना शुरू किया। पता चलता है इल्तुतमिश के राज्यकाल में पुनः विश्वेश्वर का मंदिर बना, उस युग के गुजरात के प्रसिद्ध सेठ वस्तुपाल द्वारा बनारस में विश्वनाथ की पूजा के लिये एक लाख रुपये भेजने का उल्लेख प्रबन्धकोष नामक ग्रंथ के परिशिष्ट १३२ में है। दिल्ली की गद्दी पर गयासुद्दीन बल्वन ने

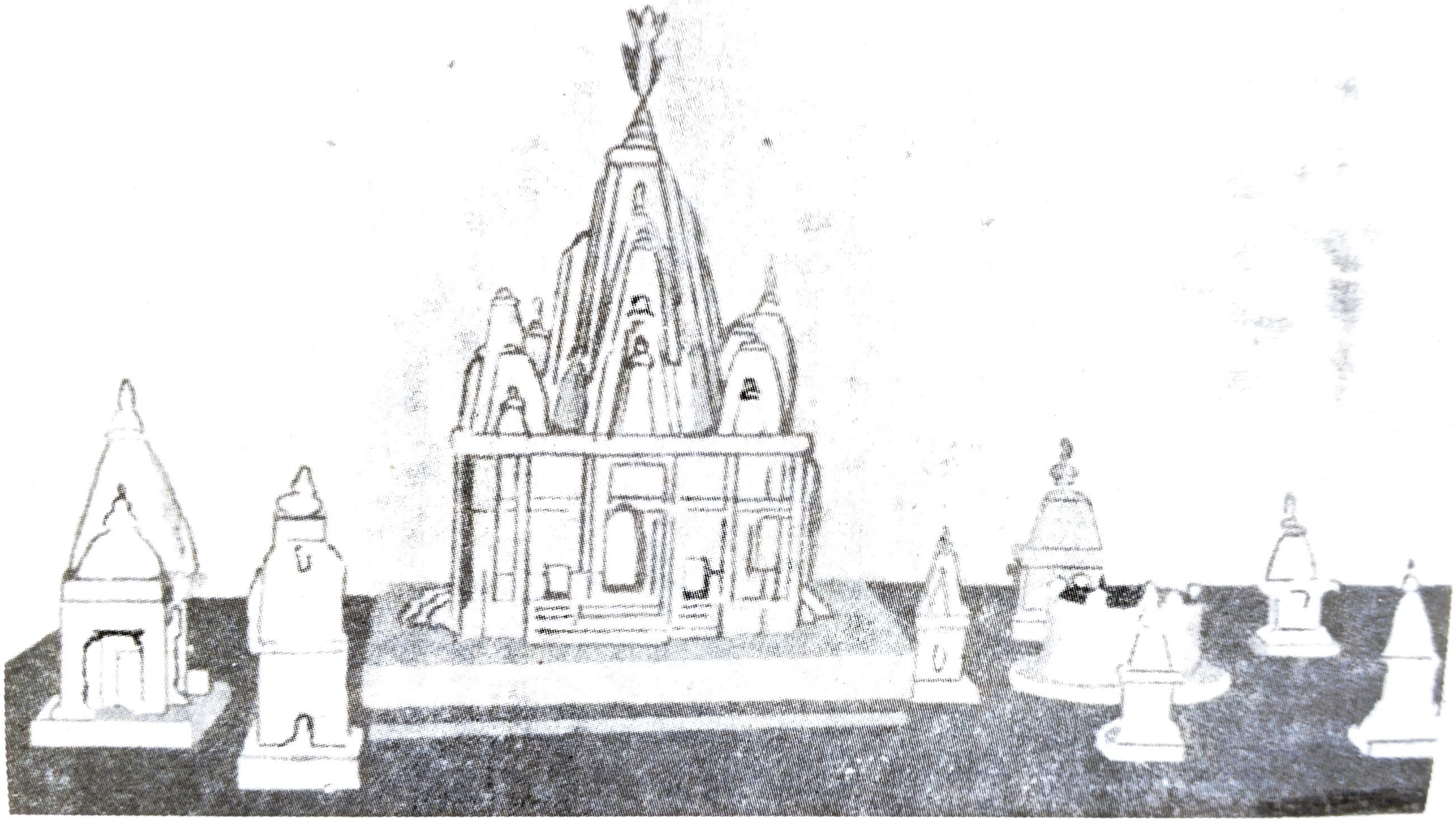

ज्ञानवापी प्रांगण में राजा टोडरमल द्वारा सन् १५८५ई० में निर्मित काशी विश्वनाथ मंदिर

१२६६ से सन् १२८७ ई० तक राज्य किया। इस वंश में सबसे प्रतापी बादशाह अलाउद्दीन खिलजी हुआ। इसका शासनकाल सन् १२६६ से १३१६ प्रसिद्ध है। उसने हिन्दुओं को मटियामेट करने की पूरी कोशिश की। वह मूर्तिपूजा का कट्टर शत्रु था। इसके राज्य के प्रथम वर्ष में बनारस में पद्मेश्वर नाम का मंदिर बना। इस बात का पता जौनपुर के लालदरवाजा मस्जिद से मिले एक लेख से चलता है। लालदरवाजा मस्जिद सन् १४४७ ई० में बनवाई गयी। लेख निम्नलिखित हैं- १२९६ ई० से १४४७ ई० तक पद्मेश्वर का मंदिर वाराणसी में बना रहा।

तस्यात्मजः शुचिःधीरः पद्मसाधुरयं भुवि।
काश्यां विश्वेश्वरद्वारि हिमाद्रिशिखरोपमम्॥
पद्मेश्वरस्य देवस्य प्रसादमकरोत् सुधी।
ज्येष्ठेमासि सितेपक्षे द्वादश्याम्बुधवासरे।
लिखितेयं सदाभाति प्रशस्तिः खीष्टवत्सरे॥ स० १३५३

अर्थात पद्मसाधु ने काशी विश्वनाथ के सामने सन् १२९६ ई० में पद्मेश्वर का मंदिर बनवाया। इस लेख से दो बातों का पता चलता है एक तो यह कि उस समय भी नव मंदिर बन सकते थे। पद्मेश्वर का मंदिर आदि विश्वेश्वर से उत्तर कुन्दीगढ़टोला वर्तमान कतवारखाना पर स्थित रहा। बनारस से मिले दूसरे प्रमाण से पता चलता है कि मणिकर्णिकेश्वर के मंदिर की स्थापना सम्वत् १३५९ आषाढ़ बदी ११ भौमवार २४ बप्रैल सन् १३०२ में वीरेश्वर नाम के व्यक्ति ने की 'कुट्टनीमतम्' नामक ग्रंथ में जिस शिवालय का वर्णन काश्मीर के राजा जयापीड के मंत्री दामोदर गुप्त ने सन् ७७९ से ८१३ ई० के बीच किया था इसमें उज्जयिनी का राजकुमार समरभट्ट वाराणसी आने पर जिस मंदिर में गया वह आदि विश्वेश्वर का स्थान था उस मंदिर को अम्बर के राजा जयसिंह ने बनवाया था। श्वेताम्बर जैन आचार्य जिनप्रभसूरी कृत विविधतीर्थकल्प का कहना है कि सुवर्ण-रत्नों से समृद्ध उत्तरवाहनी गंगा से घिरी हुई उस नगरी में बड़े-बड़े अद्भुत लोग रहते थे तथा वरणा और अस्सी नाम की दो नदियों के इस नगरी में प्रवेश करने से ही नैरुक्तों द्वारा इसका नामकरण हुआ। दिल्ली की गद्दी पर तुगलक वंश की स्थापना सन् १३२० ई० में हुई, इस वंश का प्रतापी राजा मुहम्मद तुगलक (१३२५ से १३५१ ई०) तक था, जैन आचार्य जिनप्रभसूरी का प्रभाव तुगलक पर अच्छा था। क्रमशः दिल्ली की गद्दी पर फिरोज तुगलक (१३५१ से १३८८ ई०) का कट्टर मुसलमान हुआ, उसके द्वारा मंदिर तोड़ने और ब्राह्मणों के सताये जाने के अनेक उल्लेख मिलते है। बनारस में फिरोज तुगलक की कट्टरता का संकेत बकरिया कुण्ड की एक मस्जिद से मिलता है, यह मस्जिद हिन्दू मंदिर के अमले से बनी है और इसमें पांच-पांच खम्बों की तीन लड़ें लगी हैं, मस्जिद पर एक लेख से पता चलता है सन् १३७४ ई. में फिरोज के राज्यकाल में तालाब की सीढ़ियां और फखरूद्दीन अलावी की दरगाह की दीवाल बनवाई गयी।

बनारस के मंदिरों पर पुनः विपत्ति के बादल घहराने लगे। जौनपुर को फिरोजशाह

तुगलक ने सन् १३५६-६० में बसाया। सन् १३६३ ई० में ख्वाजा जहां मलिक सुरवर ने फिरोजशाह तुगलक से अपना सम्बन्ध तोड़कर जौनपुर को स्वतंत्र राज्य कायम किया। सन् १४३६ ई० में शाह शर्की इस वंश के चौथे सुल्तान हुये। काशी सन् १४४७ ई० में जौनपुर के शर्की वंश के सुल्तानों के आधीन हुइ। शाहशर्की ने पद्मेश्वर और समीप के विश्वेश्वर मन्दिर के साथ अनेक मंदिरों को तोड़ा और पद्मेश्वर मंदिर के अमले से जौनपुर में लालदरवाजे की मस्जिद का निर्माण सन् १४४७ में ही कराया। यह बात मस्जिद के शिलालेख में विद्यमान है। शाह शर्की बनारस कतुआपुरा की रहने वाली निर्धन और विधवा रजिया से विवाह करके उसे मल्का शर्किया के पद से सुशोभित किया था। रजिया अत्यन्त चतुर स्त्री थी।

सुल्तान महमूदशाह शर्की ने विश्वेश्वर के मन्दिर के सामान का प्रयोग उसी स्थान पर दूसरी मस्जिद के निर्माण में किया। शाह शर्की ने इस मस्जिद का नाम भी अपनी मल्का के नाम पर बीबी रजिया की मस्जिद रक्खा। यही नाम मस्जिद का आज भी प्रचलित है, शर्की ने सन् १४३६ से १४५८ तक शासन किया। दिल्ली में लोदीवंश के पठानों का उदय हुआ। बहलोल लोदी ने शर्कीवंश के अन्तिम सुल्तान हुसैनशाह शर्की को हराकर जौनपुर राज्य को दिल्ली में मिला लिया। बहलोल लोदी के मरने पर उसका उत्तराधिकारी सिकन्दर लोदी हुआ। दिल्ली की गद्दी पर बैठते ही सिकन्दर लोदी ने काशी के हजारो मंदिर नष्ट किये। उसने सहस्त्रों मंदिर के साथ विश्वेश्वर के इस तीसरे मंदिर को सन् १४६४ ई० के करीब तोड़ा। सौवर्ष के करीब काशी विश्वनाथ का मंदिर नहीं था। सन् १५२६ ई० में बाबर ने लोदीवंश को पानीपत में हराकर दिल्ली की गद्दी प्राप्त की।

यन् १५२७ ई० में हूमायू ने गाजीपुर तक अपना कब्जा कर लिया। बीच में यहां का अंतिम राजा बन्नार (यवनारी) गाजीमियाँ (सालार मसउदगाजी) के हाथ यह बनारस खेत के रूप में रखा रहा उसी समय से बनारस पर से हिन्दुओं का अधिकार जाता रहा।

५ मार्च सन् १५२६ ई० को बनारस पुनः बाबर के हाथ में आया सन् १५३० ई० में बाबर की मृत्यु हो गई। हूमायू सन् १५३० ई० में दिल्ली के गद्दी पर बैठा और बनारस का सारनाथ में चौखण्डी स्तूप देखने गया, चौखण्डी स्तूप पर ९९६ हिजरी में राजा टोडरमल के पुत्र गोवर्धन ने यादगार कायम रखने के लिये एक अठपहला गुम्बद बनवाया।

कन्नौज के पास शेरशाह ने हुमायू को हराकर सन् १५३८ ई० से सन् १५४५ ई० तक राज्य किया। हुमायू के बाद उनके पुत्र दिल्ली की गद्दी पर सन् १५४५ से सन् १५५४ ई० तक बनारस के साथ-साथ और भी जिला उनके आधीन था। हुमायू ने अपने बेटे से सन् १५५५ ई० में पुनः दिल्ली की गद्दी वापस ली। हुमायू सन् १५५६ में मारा गया। सन् १५५६ ई० अकबर के बनारस आनेपर उत्तरप्रदेश में शान्ति स्थापित हुई, अकबर ने खानखाना को बनारस, जौनपुर, गाजीपुर सौप दिया। कुछ दिनों बाद अकबर ने प्रबन्ध स्वयं संभाल लिया और मिरजा मीरक रिजवी और शेरशाह साकरीबाल नियुक्त हुए।

सम्राट-अकबर के शासनकालीन अर्थमंत्री
राजाटोडरमल

सन् १५६७ ई० में अकबर भी बनारस से नाराज रहे, बाद में अकबर की धार्मिक उदारता टोडरमल और मानसिंह के प्रयत्नों से बनारस पुनः एक बार चमक उठा। बनारस में ऐसी अनुश्रुति है कि राजा मानसिंह ने अकबर के राज्यकाल में एक हजार मंदिर प्रतिदीन बनवाने का निश्चय किया। बहुत से गढ़े पत्थर पर नक्शे खोद दिये गये, राजा मानसिंह का मानमंदिर घाट के ऊपर किला है जिसे बाद में महाराज जयसिंह ने वेधशाला बनवाई।

सिकन्दर लोदी के मंदिर तोड़ने के बाद सन् १५८० ई० में मुंगेर की विजय के बाद नारायणभट्ट ने टोडरमल को विश्वनाथ मंदिर बनवाने की सलाह दी जो यूंही सन् १४८५ ई० से टूटा पड़ा था। मंदिर निर्माणकार्य में अकबर ने भी पैतालिस हजार दीनार दिये, बनाने वाले कारीगरों ने १५ सदी के विश्वनाथ के मंदिर का नक्शा सामने रक्खा। प्राचीन मंदिर में पांच मंडप थे, इनमें से पूर्व की ओर ज्ञानमंडप पांचवे मण्डप की नाप १२५ X ३५ फुट थी, यह रंग मंडप था। यहां धार्मिक उपदेश होते थे। उत्तर में ऐश्वर्यमण्डप तथा पश्चिम में श्रृंगारमण्डप, टोडरमल ने केवल मण्डप की मरम्मत करा दी। मंदिर की कुर्सी ७ फुट और ऊँची कराकर सड़क के बराबर करवा दी गई। मुगलों के भय से मंदिर में मूर्तियां नहीं खोदी गई। १६ सदी का विश्वनाथ मंदिर चौखटा था और इसकी प्रत्येक भुजा १२४ फुट की थी। मुख्य मंदिर बीच में ३२ फुट की मुरब्बे में जलधरी के अन्दर था गर्भगृह से जुटे हुए १६ X १० फुट के चार अन्तरगृह थे। इनके बाद १२ X ८ के छोटे अन्तरगृह थे जो चार मण्डपों में जाते थे। पूर्वी और पश्चिमी मण्डपों में दण्डपाणी और द्वारपालों के मंदिर थे। इनकी मूर्तियां आलों पर स्थित थी। मंदिर के चारो कोनो पर १२ फुट के उपमंदिर थे। नन्दी मण्डप के बाहर था, मंदिर की ऊँचाई १२८ फुट थी। मण्डपों और मंदिरों पर शिखर थें अनगिनत देवताओं के मंदिर थे। दिवाकरभट्ट ने अपनी दानहावली में कहा हैं –

श्रीरामेश्वरसूरिसूनुरभवन्नारायणाख्यो महान् ।
येनाकार्य्यविमुक्तके सुविधिना विश्वेश्वरस्थापना ।।

पं० श्री रामेश्वरभट्ट के प्रख्यात पुत्र पं० नारायणभट्ट ने अविमुक्त क्षेत्र काशी में विधिपूर्वक विश्वेश्वर की स्थापना की। राजा टोडरमल की सहायता से नारायणभट्ट ने १५८५ ई० के करीब यह कार्य सम्पादित किया। डाक्टर आल्तेकर का अनुमान है कि दक्षिणी विद्वान नारायणभट्ट का समय १५१४ से १५९५ ई० था।

अकबर के राज्यकाल में राजा टोडरमल का बनारस से काफी सम्बन्ध रहा। टोडरमल ने शिवपुर के प्रसिद्ध द्रौपदी कुण्ड का सीढ़ी सहित निर्माण सन् १५८९ ई० में किया। उनके एक लेख से प्रगट होता है। कुछ धार्मिक कार्यो का श्रेय उनके पुत्र गोवर्धन को है। गोवर्धन के इतिहास की सामग्री जंगीरसिंह ने इकट्ठा की है, उसी के आधार पर बनारस से सम्बन्ध जोड़ा जा सकता है। अकबरनामा से पता चलता है। १५७७ ई० में गोवर्धन अपने पिता के साथ मिर्जा-मुजफ्फर हुसैन और मारीअली से वीरतापूर्वक लड़ा पुनः उसका नाम सन् १५८४ ई० में

आया है। बादशाह की आज्ञा से टोडरमल ने उसे अरब बहादुर को दण्ड देने के लिये भेजा था। अकबरनामा से पता चलता है अकबर के चौबीसवें राज्यवर्ष में टोडरमल के पुत्र गोवर्धन जौनपुर में सरकारी पद पर नियुक्त था। सन् १५८९ ई० में टोडरमल की मृत्यु के बाद गोवर्धन जौनपुर से सीधे आगरा चला गया। २८ से ३३ वर्ष तक गोवर्धन जौनपुर सरकार में जागीरदार था। बनारस में टोडरमल के नाम से जो भी मंदिर या बावलियां बनी उसे गोवर्धन ने ही बनवायी। सन् १५८५ और सन् १५८९ के बीच में विश्वेश्वर की पूजा के उपलक्ष्य में शेषकृष्ण द्वारा लिखित कंसबध नाटक का प्रणयन हुआ गोवर्धन इस नाटक में स्वयं उपस्थित थे। नाटक के आरम्भ में एक श्लोक आता है।

तस्यास्ति तंडनकुलामलमण्डनस्य,
श्रीतोड़रक्षितपतेस्तनयो नयज्ञः ।
नानाकलाकुलगृहं सविदब्धगोष्ठी,
एकोऽधितिष्ठति गुरूर्गिरधारिनामा ।।

इस श्लोक से पता चलता है गुरु गिरधारी टण्डन कुल में उत्पन्न टोडरमल के पुत्र थे। उन्हें कलाओं से प्रेम था और विद्वत गोष्ठी उन्हे बड़ी प्रिय थी। सन् १५९० में अब्दुलरहीम खानखाना के साथ मुल्तान गये। सिन्ध में मिर्जाजानीबेग और तरखॉन से लड़ाई में सन् १५९२ ई० में मारे गये। बहुत संक्षेप में वर्णन कर रहा हूँ।

इंडियन एंटिक्वेरी पृ० १२-७-१७ महामहोपाध्याय शास्त्री का कहना है कि नारायणभट्ट के पिता रामेश्वरभट्ट पैठन के रहने वाले थे। यह एक विलक्षण बात है कि नारायणभट्ट के परिवार के लोग तीनसौ वर्षो तक वाराणसी के गण्यमान्य पं० होते आये थे। नारायणभट्ट का जन्म सन् १५१४ ई० में द्वारका में हुआ, कुछ दिनों बाद उनके पिता रामेश्वरभट्ट काशी चले आए और उनको ३ पुत्र हुये। नारायणभट्ट ने सन् १५८० ई० में गया, काशी, प्रयाग पूजाविधि के लिए त्रिस्थलीसेतु ग्रन्थ लिखा। राजा टोडरमल के घर श्राद्ध के समय नवद्वीप के विद्यानन्द के पण्डितों की एक टोली को शास्त्रार्थ में हराया, अपने समय के मधुसूदन सरस्वती, उपेन्द्र शर्मा जैसे भारत प्रसिद्ध विद्वानों को हराया। आउफ्रेंक्ट ने इनके २८ ग्रन्थों का उल्लेख किया है। नारायणभट्ट की मृत्यु वृद्धावस्था के कारण हुई इनके भ्राता अपने-अपने में धुरन्धर सत्रहवीं सदी के नामी विद्वानों में थे। आइने अकबरी से थोड़ा सा रहस्य मिलता है, सन् १५९९ ई० में बनारस का सूबेदार फौजदार मिर्जाचीन कीलीच खां था। जहांगीर के राज्यकाल १६०।२२७ में काशी के कुछ बातों का पता बनारसीदाय के अर्धकथानक से चलता है। जहांगीरकालीन इतिहास में बनारस का नाम केवल एक बार सन् १६१४ ई० में खुर्रम की बगावत में आता है। सन् १६२३ में नारायणदास ने मणिकर्णिका कुण्ड का निर्माण किया जिसकी लम्बाई चौड़ाई ६० फुट और गहराई २८ फुट रक्खी सन् १७३८ में नारायण पुत्र नरेणु ने कुण्ड का जीर्णोद्धार किया।

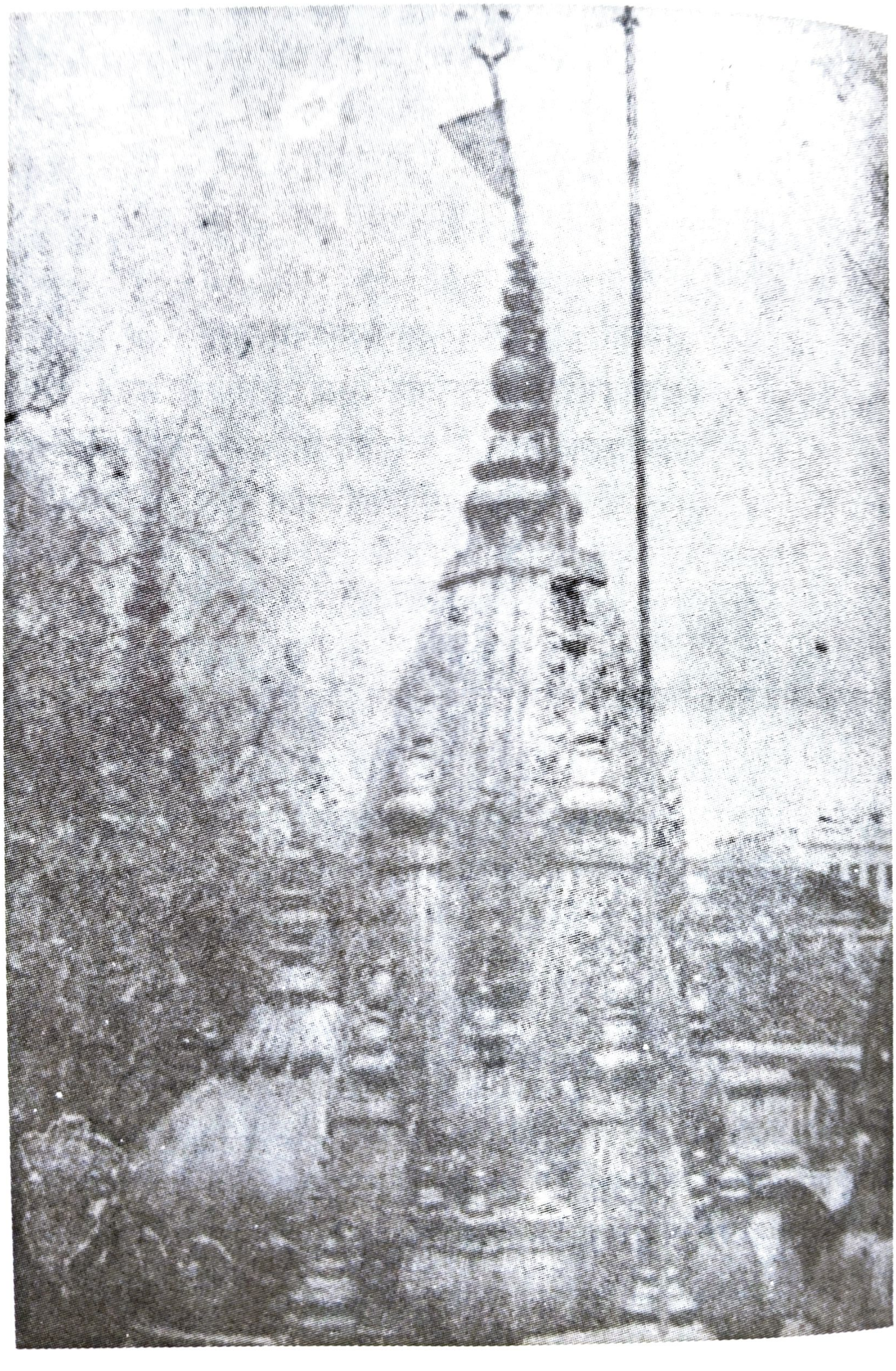

महाराज रणजीत सिंह द्वारा स्वर्ण मंडित काशी विश्वनाथ मंदिर

बनारस और जौनपुर को सन् १६१५ ई० में एक और विपत्ति का सामना कराना पड़ा। जाहंगीर ने आगानूर को सिरोंपांव देकर जौनपुर भेजा। आगानूर ने बनारस और जौनपुर के बीच बहुत अत्याचार किया। शाहजहां सन् १६३२ ई० में दिल्ली की गद्दी पर बैठा शाहजहां कट्टर मुसलमान था। अपने राज्यकाल के कुछ ही दिनों के बाद काशी के नए बने मंदिरों को तोड़ने की आज्ञा दी। बादशाहनामा के अनुसार यह हुक्म सन् १६३२ ई० में दिया, बादशाह के सामने यह बतलाई गई की जहाँगीर के राज्य में बनारस जो बुतपरस्तों का प्रधान अड्डा बना था उसमें बहुत से मंदिर बनने आरम्भ हुए थे पर वह पुरे नहीं हो सके। बुतपरस्त उसको पूरा करने के इच्छुक थे। मगर शाहजहां ने हुक्म जारी किया कि बनारस और उसके आसपास के अधबने मंदिर गिरा दिये जाय। इस हुक्म के बाद केवल बनारस में ही ७६ अधबने मंदिर गिरा दिये गए। इलाहाबाद के सूबेदार हैदरबेग ने अपने चाचा और भाई को भी बनारस के मंदिरों को तोड़ने के लिये भेजा।

पीटर मन्डी ने आखों देखा हाल वर्णन किया है। ३ सितम्बर सन् १६३२ को एक राजपूत रास्ते में छिप कर मंदिर तोड़ने बनारस आये सूबेदार के चचेरे भाई के साथ उन तीन-चार साथियों को अपने कमठी से मौत के घाट उतार दिया। वह राजपूत भी लड़ते हुए अन्त में वीरगति को प्राप्त हुआ। मरने के बाद उसकी लाश मुख्य रास्ते के ऊपर पेड़ में लटका दी गई। कुछ दिनों बाद शाहजहां के बीमार पड़ने पर द्वितीय शाहजहां पुत्र बादशाह हिन्दुस्तान अपने को घोषित किया। यह सुनकर शूजा १४ जनवरी सन् १६५८ ई० को बनारस पर आक्रमण किया। मगर बनारस के करीब बहादुरपुर में दाराशिकोह की फौजों ने २५ जनवरी के दिन आ दबोचा और आठ दिन तक युद्ध करने के बाद ४ फरवरी सन् १६५८ ई० को यहां से शूजा को भगा दिया और बनारस शहर के मध्य दाराशिकोह ने एक नगर बसाया और उस क्षेत्र का नाम दारानगर रखा। दारा वहीं रहकर १२५ पंडितो के साथ हिन्दुग्रन्थों का इन्हीं पंडितो द्वारा उर्दू में उल्था कराया करता था। अक्टूबर सन् १६५८ ई० को शूजा ने पुनः दिल्ली पर चढ़ाई कर दी यह खबर औरंगजेब को मिलते ही २३ दिसम्बर सन् १६५८ ई० को इलाहाबाद से तीन मीलदूर खजवां के निकट शूजा को पूरी तरह से घेरकर औरंगजेब ने युद्धकर हरा दिया और सन् १६५८ ई० को दिल्ली के गद्दी पर जा बैठा, ततपश्चात औरंगजेब के २८ फरवरी सन् १६५९ के एक फरमान द्वारा पता चलता है कि बनारस में नये मंदिरों के निर्माण पर रोक लगा दी गई और सभी पंडितों के साथ दाराशिकोह को खत्म करने का आदेश दिया।

औरंगजेब की फौज के साथ उसके समर्थकों ने बनारस के दारानगर पर चढ़ाई कर दाराशिकोह के साथ सभी १२५ पंडितों को भी मौत के घाट उतार दिया और विश्वेश्वरगंज में कृतिवासेश्वर के मंदिर को तोड़कर आलमगिरी मस्जिद का निर्माण सन् १६५९ ई० में ही कराया। कृतिवासेश्वर मंदिर पर आये विपत्ति को देखकर पुजारी वृद्ध-साधु को तत्काल कुछ न दीख पड़ा धातुनिर्मित पन्ने से जड़ी मूर्ति को लेकर मंदिर के कूएँ में कूद पड़ा। मुगलों ने मंदिर के ही मलबे से कुआँ पाट कर फुहारे के रूप में परिणित कर दिया। आज भी उस फुहारे की धार्मिक

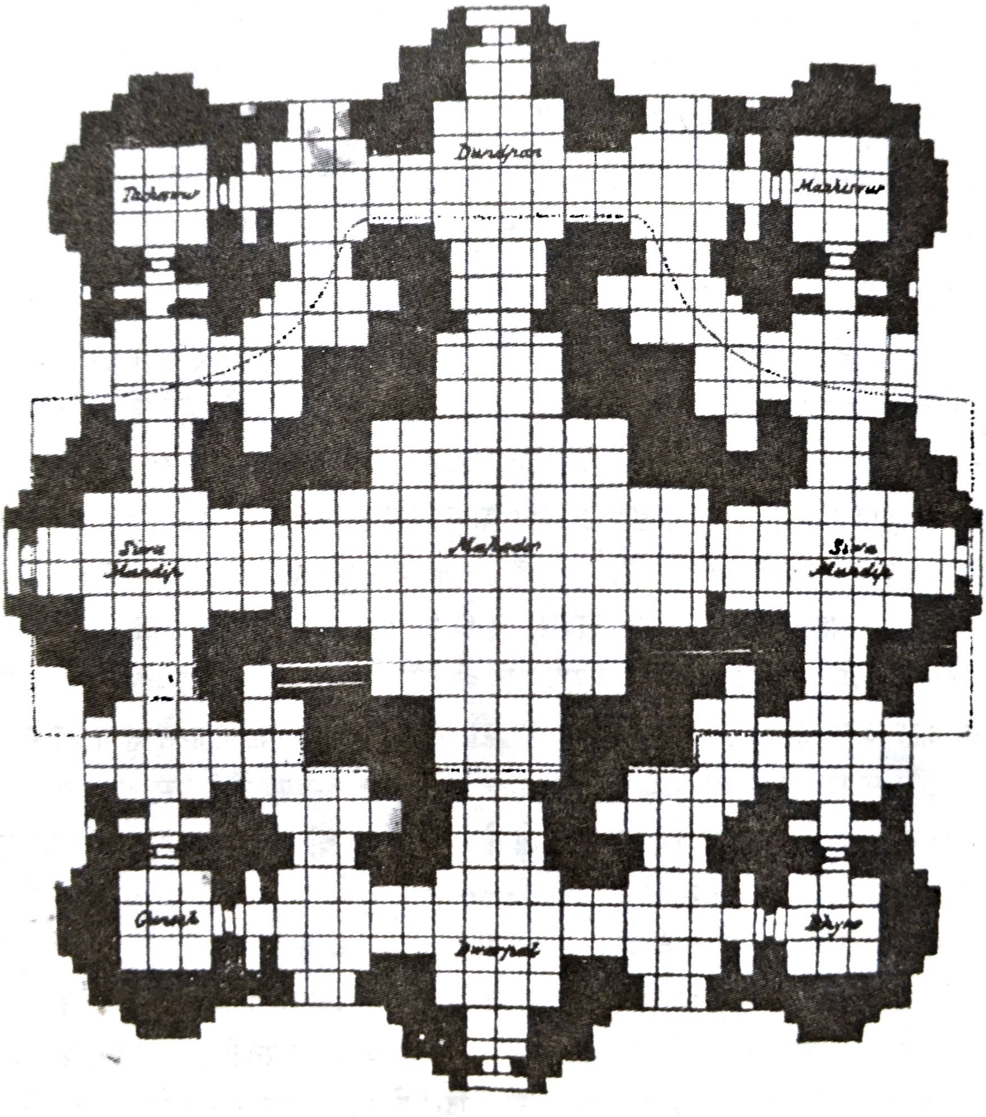

ज्ञानवापी के विश्वेश्वर-मन्दिर के स्थापत्य का स्वरूप

जनता शिवरात्रि के दिन पूजा करती चली आ रही है। शिवरात्रि के दिन पूजा का अधिकार न्यायालय द्वारा हिन्दुओं को प्राप्त है। मासीर-ए आलमगिरी में शाकी मुस्तईद खां ने इसका वर्णन किया है। उन्ही के क्षब्दों में १७ जिलकदोहिजरी १०७८ (१८ अप्रैल) के दिन यह खबर दी। औरंगजेब को कि बनारस में बेवकूफ ब्राह्मण अपनी रद्दी किताबें पाठशालाओं में पढ़ाते और समझाते है। पाठशाला में दूर-दूर से हिन्दु और मुसलमान विद्यार्थी बदमासी भरे ज्ञान को पढ़ने जाते हैं।

औरंगजेब ने यह खबर सुनने के बाद सूबेदारों के नाम यह फरमान जारी किया कि अपनी इच्छा से काफिरों के तमाम पाठशाला और मंदिर गिरा दो। शख्त ताकीद की गई की वें सब प्रकार की मूर्ति पूजा सम्बन्धित शास्त्रों का पठन-पाठन और मूर्तिपूजा भी बन्द कर दें। १५ रवउल आखीर २ सितम्बर सन् १६६९ ई० के दिन बादशाह औरंगजेब को खबर मिली कि उनकी आज्ञा से बनारस में विश्वनाथ मंदिर गिरा दिया गया। मंदिर केवल गिराया ही नहीं गया बल्कि उसी जगह ज्ञानवापी मस्जिद भी उठा दी गई। मस्जिद बनाने वालों ने पुराने मंदिर की पश्चिमी दीवाल गिरा दी और छोटे मंदिरों को जमीदोज कर दिया। पश्चिमी-उत्तरी और दक्षिणी द्वारा भी बन्द कर दिये गए। द्वारों पर उठे शिखर गिरा दिये गये उनकी जगह गुम्बज खड़े कर दिये गये। गर्भगृह मस्जिद के मुख्य दालान में परिणित कर दिया, चारों अन्तर गृह बचा लिये गये उन्हें मण्डपों से मिला कर २४ फुट मुरब्बे में दालान निकाल दी गई। मंदिर का पूर्वी मण्डप जो १२५ X ३५ फुट काला पत्थर का चौका बैठा कर उसे लम्बे चौक में परिणित कर दिया गया। मंदिर गिराये जाने के पूर्व ही लिंग को अर्घे से अलग कर पुजारी लक्ष्मीपति दूबे परिवार के सदस्य अपने निवास लोलार्क भदैनी ले गये और लोगों में ऐसा भ्रम फैलाया कि विश्वनाथ का लिंग कुएँ में डाल दिया गया है और गुप्तरीति से लिंग की पूजा करते रहे कुछ दिनों बाद लिंग का प्रचार होने पर वे अपने सम्बन्धियों के घर गुप्तरीति से मिर्जापुर ले गये। वर्षो बाद चुपचाप लाकर लोलार्क स्थित तीसरी मंजिल पर छुपा कर रक्खा और स्वतः उस लिंग की पूजा करते रहे। कुछ दिनों बाद उनके स्वर्गवासी होने पर उनके परिवार वालों ने लिंग को नीचे की मंजिल में लाकर स्थापित कर दिया। अभी भी वह लिंग म०नं० बी. २/३२ में स्थित है। यह लिंग उपेक्षित क्यो? नारायणभट्ट ने अपने त्रिस्थली सेतु में सन् १५८० पृष्ठ २०८ रचना में किया है कि लिंग हटा दिये जाने पर अर्घे से उस लिंग की पूजा नहीं करनी चाहिए। म्लेच्छों द्वारा मंदिर नष्ट किये जाने पर नये स्थापित लिंग की पूजा करनी चाहिए, नहीं तो स्थान की भी पूजा की जा सकती है। "कलौ स्थानानि पूज्यन्ते" के आधार पर वर्षो स्थान की पूजा होती रही।

बिन्दुमाधव का मंदिर पंचगंगाघाट से रामघाट तक फैला हुआ था इसके हाते में श्रीराम और मंगलागौरी के मंदिर पुजारियों के रहने के लिये बहुत से मकान बने थे। बिन्दुमाधव मंदिर तोड़कर उसी स्थल पर मस्जिद का निर्माण हुआ, मस्जिद की बनावट में खास खूबसूरती नहीं है, लेकिन उसके धरहरे अब गिर चुके हैं, उनकी चौड़ाई जमीन पर ८। फुट और सिर पर ७।। फुट ऊँचाई इनकी १४०७ फुट २ इन्च थी। मस्जिद की कुर्सी गंगा से करीब ८० फुट ऊँचे पर हैं,

पंचगंगा वाली सीढ़ियों पर एक लेख से पता चलता है कि महाराज जयसिंह ने सन् १६४२ में यहां अपनी यात्रा समाप्त की थी, हंस का काशी अंक पृष्ठ १२५। औरंगजेब की मृत्यु सन् १७०७ ई० में हो गई। दिल्ली के सिंहासन पर औरंगजेब का लड़का बहादुरशाह बैठा वह बड़े ही उदार स्वभाव का व्यक्ति था।

काशी में मीरघाट पर जरासन्धराजा ने जरासन्धेश्वर नामक शिवलिंग की स्थापना की थी जिसे मीर रूस्तम नाम के नवाब ने सन् १७३५ ई० में मंदिर ध्वस्तकर उसी स्थलपर अपने किले का निर्माण कराया। इस किले को राजा बलवन्त सिंह ने बनारस की गद्दी पर बैठने के पश्चात् सन् १७४८ ई० में अपने राज्यकाल में तुड़वा डाला और किले के पाषाणों को रामनगर के निर्मित दुर्ग में ले जाकर लगवा दिया।

क्रमशः सन् १७४८ ई० में बलवन्तसिंह काशी के राजा हुये भागीरथी के पूर्व भागपर अवस्थित रामनगर कस्बे में महाराज बलवन्तसिंह ने अपने दुर्ग का निर्माण कराया। कालक्रम से फिर काशी का अधिकार हिन्दुनरपति महाराज बलवन्त सिंह के हाथ में आया, पर उनके पुत्र महाराज चेतसिंह राजभार बहुत दिन नहीं चला पाये। दुर्ग से लगभग एक मील की दूरी पर पूर्व की ओर रामनगर से बाहर रामबाग सुमेरू मंदिर तथा तालाब स्थित है इसका निर्माण चेतसिंह ने करवाया, इ०वी० हैवेल के अनुसार महाराज चेतसिंह के १८ शताब्दी के उत्तरार्ध में इसका निर्माण आरम्भ करवाया और यह लगभग १८५० ई० में उनके राज्यकाल के बाद बनकर तैयार हुआ। उत्कृष्ट शिल्पकला की दृष्टि से विपुल लागत युक्त एक भव्य विष्णुमंदिर का निर्माण करवाया, यह टंकन कला का सर्वोत्कृष्ट उदाहरण माना जाता है। एम.ए. शेरिंग की पुस्तक 'द सेक्रेट सीटी आफ हिन्दू' के अनुसार यह मंदिर पूरा १०० फुट ऊँचा है नीचे से लेकर लगभग ३५ या ४० फुट तक बहुत सी कतारों में मूर्तियां खुदी हुई है कुल मिलाकर संख्या में १२० है, सबसे नीचे की पंक्तियों में देवता दशावतार गंगा आदि नदिंया तथा अन्य वायु, सूर्य, इन्द्रदेव की मूर्तिया अलग अलग खानो में बनी है प्रसिद्ध ऋषिसमूह जैसे नारद आदि भी उत्कृष्ट हैं, गजेन्द्रमोक्ष तथा सहस्त्रार्जुन आदि के भी चित्र कलात्मक शिल्प में है। सबसे ऊपर की पंक्ति में दक्षिण की ओर बीच में दुर्गा तथा इसी पंक्ति में पूर्व की ओर बीच में महाकाली तथा उत्तर की ओर गोवर्धनधारी भगवान श्रीकृष्ण बने हुए है। (दुर्गा पंचायतन) यह दुर्भाग्य की बात रही की महाराज चेतसिंह इस विष्णु मंदिर को सन् १७८१ ई० में काशी परित्याग के कारण पूर्ण नहीं करासकें और यह विघ्न का प्रतिक बनकर उसी तरह अधूरा बहुत समय तक पड़ा रह गया। महाराज ईश्वरीनारायण सिंह ने अपने गुरु श्री काष्ठजिव्हा स्वामी के निर्देशानुसार विघ्नशान्ति करके इस मंदिर को पूर्ण कराया तथा सर्वविघ्ननाशिनी एवं सर्वदात्री भगवती दुर्गा पंचायतन की स्थापना की। बाहर के विष्णु सम्बन्धित प्रतीक ज्यों के त्यों छोड़ दिए गये, देवी की प्रतीक पंखयुक्त सिंहिनी मुख्यद्वार पर लगाई गई तथा पंचायतन के देवो के प्रतीक नन्दी तथा गरुड़ अगल बगल के दरवाजों के सन्मुख लगाए गये। महाराजा चेतसिंह ने तालाब एवं मंदिर इसी स्थान में ही बनवाये ज्ञातब्य है कि यह स्थान उनके बनवाये हुए रामनगर के शहर से दूर है ऐसा

प्रतीत होता है कि जहां पर रामबाग स्थित है वहां कोई गढ़ही थी जिसमें क्षीरसागर की लीला महाराज चेतसिंह के पूर्व होती थी।

ग्रान्ट को हटाकर ५ अक्टूबर सन् १७८७ कोमहादजी सिंधिया ने सन् १७८६ ई० में प्रयास किया कि ज्ञानवापी मस्जिद की जगह पुनः मंदिर हो जाय।

१० अगस्त सन् १६६२ के एकपत्र से ऐसा लगता है कि नाना फडनवीस टीपू और अंग्रेजों की लड़ाई के समय अंग्रेजों की इस शर्त पर सहायता करने का वादा किया उसके बदले में विश्वनाथ का मंदिर पुनः हिन्दुओं को अपने प्राचीन स्थान पर बनाने दें, मगर कोई नतीजा नहीं निकला। इसका पता जानेथन डंकन के नाम कार्नवालिस के एक पत्र से लगता हैं। श्री गोविन्दलाल व्यास बनारस के इतिहाससंग्रह में मई १६०,८ पृ० ७२ मल्हार राव का विचार ज्ञानवापी की मंस्जिद को गिराकर पुनः विश्वेश्वर मंदिर बनवाने का हुआ, पर पंचद्राविड़ ब्राह्मण इसलिए चिन्तित हुये की यह मस्जिद बादशाह के बिना हुक्म गिराई गई तो बादशाह क्रुद्ध होकर ब्राह्मणों को मरवा डालेगा। इस ख्याल से विश्वेश्वर का मंदिर दूसरी जगह बनना ही अच्छा है। काशी के ब्राह्मण ज्ञानवापी मस्जिद गिराकर पुनः मंदिर स्थापना की दुविधा में थे। उनके एक ओर धर्म दूसरी ओर जान, यहां के ब्राह्मणों को डरा हुआ देखकर बालाजी बाजीराव इस विचार को दिल ही में रखकर वापस चले गये।

एक सौ आठ वर्ष बाद महाराज मल्हारराय होल्कर की पुत्रवधू खाण्डेराव होल्कर की पत्नि इन्दौरस्टेट की महारानी अहल्याबाई ने पुनः लखनऊ के नवाब से विश्वनाथ के मंदिर की मंजूरी सन् १७७७ ई० में प्राप्त कर ली, शिलान्यास काशी के ही श्री नारायण दीक्षित के आचार्यत्व में सम्पूर्ण किया और लिंग स्थापना का शुभारम्भ अपने तपोमूर्ति पुरोहित जयरामशर्मा से माघकृष्णष्टमी सोमवार सं० १८३४ विक्रम के दिन सम्पन्न हुआ। वर्तमान विश्वनाथ मंदिर के शिखर पर सन् १८३८ ई० में लाहौर स्टेट के महाराज रणजीतसिंह ने ताम्रपत्र पर सोने का पानी चढ़वा कर मढ़वाया।

क्रमुनसार काशी को सन् १७६४ ई० में लार्ड हेस्टिंग के समय में- अग्रेजीराज्य में मिला लिया गया। सन् १८०६ ई० में मजिस्ट्रेट मिस्टरवर्ड के समय में एक अधवना हनुमान मंदिर जो ज्ञानवापी स्थित प्रांगण में जुलाहों द्वारा गिरा दिया गया फलस्वरूप जबरदस्त हिन्दु-मुस्लिम दंगा हो गया, इन्डियन हि.रे.क.प्रो. १२ (१६२६) पृ. ६७।

काशी का प्रसिद्ध रामहल्ला- भदैनीस्थित लोलार्ककुण्ड के बगल में ८ अप्रैल सन् १८६२ ई० के दिन नगरपालिका के कर्मचारियों ने जलपम्प बैठाने के लिए अन्यभूमि के साथ प्राचीन राममंदिर की भूमि भी नाप ली। पुजारी के अनुरोध पर भी नहीं माने, तो पुजारी बैरागी साधू ने सबको सूचित किया कि राममंदिर तोड़ा जा रहा है। सुनते ही नगरवासियों की अपार भीड़ इकट्ठी हो गयी और सभी ने राममंदिर न तोड़े जाने की प्रार्थना की पर अधिकारियों के ध्यान न देने पर विद्रोह मच गया। १५ अप्रैल की रात में गिराये हुए मंदिर के भाग को पुनः लोगो ने बना

वर्तमान श्री काशी विश्वनाथ मंदिर की प्रतिष्ठापिका

इन्दौर स्टेट की महारानी अहल्या बाई होलकर

दिया और पानीकल की बनी इमारत को रात में ही गिरा दिया, इस विद्रोह को शान्त करने के लिये सेना को बुलाना पड़ा।राममंदिर के निर्माता बाबा गोवर्धनदास, बाबा गोपालदास के साथ अन्य बहुत से लोग बन्दी बनाये गए और कुछ लोगों को अर्थदण्ड देना पड़ा। वर्तमान राममंदिर की पूजा सेवा दशामोड़ गौभुजा वणिकसमाज की देखरेख में हो रही है।

सोलहवीसदी के औरंगजेबकाल में ध्वस्त ज्ञानवापीस्थित विश्वनाथमंदिर की मूर्तियां अन्यमण्डपों और परिक्रमापथ की मूर्तियां खण्डित कर, ज्ञानवापी हाते में हिन्दुओं का प्रवेशनिषध कर दिया। मुगलकालीन कुछ खण्डित मूर्तियां आज भी ज्ञानवापी हाते में रक्खी हुई हैं। ज्ञानवापी प्रांगण में प्रवेशनिषेध कर देने पर व्यासपीठ के अधिकारीयों ने मुगलकालीन न्यायालयों में जाकर व्यासासन से आरम्भ होने वाली पंचक्रोशी आदि अन्य यात्राओं का अधिकार हासिल किया। ज्ञानवापी प्रांगणस्थित मूर्तियों पर हिन्दुओं द्वारा चढ़ायें हुए द्रव्यों को मस्जिद के कर्मचारीगण उठा ले जाया करते थे व्यासपीठ की अधिकारीणी रुक्मणी देवी ने न्याय की मांग को लेकर मुगलकालीनकोर्ट से विभिन्न फैसले हासिल किये। व्यासपीठ के अधिकारियों ने समय समय पर खण्डित मूर्तियों की जगह नई मूर्तियों की प्राणप्रतिष्ठा करा कर बैठाई। पं. रघुनन्दनव्यास कट्टर हिन्दूवादी थे ये व्यासपीठ के ६ वें अधिकारी हुए हैं, इन्होने अपने समयकाल में अनेक महत्वपूर्ण हिन्दुओं के हक में न्यायालय से फैसले कराये जो अत्यन्त सराहनीय है। इनके एकमात्र व्यासपीठ के उत्तराधिकारी पुत्र पं. बैजनाथव्यास ने पिता के अधूरे कार्यो को कृतसंकल्प हो अपने अल्पकाल से ही ज्ञानवापी हाते से मुगलों के कब्जे को समाप्त करने के लिए निरन्तर अनेक विवादों के पश्चात् प्रयास करते रहने पर ज्ञानवापी के पश्चिमी प्रागण से सन् १९३० में जनाजे की नमाज बन्द कराने में सफलता प्राप्त करने में ३० वर्षोतक अथक परिश्रम के बावजूद अंग्रेजी शासनकाल १५ अगस्त सन् १९४७ ई० को ज्ञानवापी प्रांगण से अल्विदाकी नमाज बन्द कराकर अभूतपूर्ण सफलता प्राप्त की, प्राचीन विश्वनाथ मंदिर का भग्नावशेष प्राचीन मूर्तियां पूजा का स्थल, मंदिर का प्राचीन तहखाना, ज्ञानवापी प्रांगण आज भी व्यासपीठ के अधिकारीयों के आधीन हैं अनेक विवादों की फाइलें व्यास परिवार में सुरक्षित रक्खी हुई हैं। स्थिति का नाजायज फायदा उठाते हुए काशी के स्वार्थी पण्डों ने यात्रियों को यह बताना प्रारंभ किया कि विश्वनाथ जी औरंगजेब के डर से बगल के ज्ञानवापी कूएँ में कूद गए और काशीकरवट नाम के कूएँ में प्रगट हो गये। "न भूतो न भविष्यति" न कभी ऐसा हुआ है न कभी होने का। देवताओं के आग्रह पर शक्ति को प्रगट कर आप शक्ति के चरणों में शव के समान सदा सोये रहने वाले सदाशिव प्रलयंकर महाकाल बन कर चराचर विश्व को ग्रास कर जाते हैं, जिसके भाल में ज्वाला ज्योति के रूप में विराजती है, यही ज्योतिर्लिंग द्वारा सारा जगत प्रकाशित हो रहा हैं। ऐसे ज्योतिपुंज को क्या सम्भव है कूएँ में कूदना। काशी करवट नाम का यह स्थान एक अहीर सरदार का मकान था जो बाद में पंडो के अधिकार में आ गया। इस मंदिर में अशिक्षित पंडे और भेंडरों के द्वारा यात्रियों को भरमाकर ले जाया जाता है और भ्रामक किम्बदन्तियों के आधार पर तीर्थयात्रियों को ठगा जाने लगा। इस प्रकार ठगी की चरम सीमा

पर पहुँच जाने और बनारस के अंग्रेजशासकों तक खबर पहुँचने पर कड़े प्रबन्ध के साथ सरकारी ताला काशीकरवट मंदिर के नीचे भाग में लगा दिया गया। सप्ताह में पुलिस के पहरे में मंदिर की सफाई कराकर चाभी थाना चौक में जमा कर दी जाती थी, इस धर्म के पीछे १२ से १६ सदी में भी वाराणसी ठगों की केन्द्र बनी हुई थी। हेमचन्द्र ने अपने कुमारपालरचित (३।५६) में ठग पर टीका करते हुए उस युग की कहावत यथा "वाराणसी ठगानाम् स्थानम्" अर्थात वाराणसी ठगो का घर है ऐसा उल्लेख किया है। पौराणिक मतों के आधार पर विश्वनाथ को काशी आए चौदहवीं चतुर्युगी बीत रही है। इस क्रम से चौदहबार विश्वनाथ का ज्योतिर्लिंग तिरोधान और प्रगट हुआ। इस बार का कारण औरंगजेब बना। अंग्रेजों से भारत स्वतन्त्र होने पर १५ अगस्त १६४७ ई० को भारतीयों को स्वराज्य प्राप्त हुआ। तभी से काशी पर भारतीय शासकों का अधिकार हैं। भारत सरकार द्वारा १५ सितम्बर सन् १६५७ ई० को श्रीकाशी विश्वनाथ मंदिर में अन्त्यज प्रवेश कराया गया। धार्मिक जनों के साथ स्वामी करपात्रीजी ने इस कार्य का जोरदार विरोध किया फलस्वरूप करपात्रीजी के साथ कुछ लोग जेल भेजे गए। शासन द्वारा कोई हल न देखकर स्वामी करपात्रीजी ने धार्मिक जनों के लिये अलग विश्वनाथ मंदिर बनाने का निश्चय किया। ६ फरवरी सन् १६५८ ई० को शिलान्यास करा कर १० फरवरी रात्री ६ बजे बाणलिंग नर्मदा से महाराज मैहर के राजपुरोहित की देख-रेख में काशी लाया गया और प्रमुख मार्गो से शोभायात्रा निकाली गई। स्वामीजी के साथ काशी के शंकराचार्य के सानिध्य में १६ फरवरी सन् १६५८ को विशेष पूजनोपरान्त मीरघाट के गंगातट पर २१ फरवरी को विश्वनाथ जी की स्थापना हो गई।

काशी का तीसरा विश्वनाथ मंदिर काशी के दक्षिण भागपर जान्हवी के कछार पर श्रद्धेय मदनमोहन मालवीय जी द्वारा स्थापित हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रांगण में स्थित है। मालवीयजी के हृदय में यह विचार उत्पन्न हुआ कि विद्यालय के मध्य विशाल श्रीविश्वनाथ का मंदिर हो जिसे सभी सम्प्रदाय के लोग सानिध्य से दर्शन कर सके। यह पुनीतकार्य यहाँ के कुछ धनाढयबन्धुओं पर छोड़ा गया इन लोगों ने कुछ धन-संग्रह किया पर धन पर्याप्त न होने पर बिरलाबन्धुओं से अनुरोध किया गया बिरलाजी ने सम्पूर्ण भारवहन कर २० वर्षो के निरन्तर निर्माणकार्य चलते रहने के पश्चात् विक्रमी सं. २०२३ सन् १६६६ ई को २५० फुट ऊँचे शिखर के साथ मंदिर का निर्माण कराया जो विश्वविद्यालय के प्रागण की शोभा बड़ा रहा है। इसी मार्ग में दुर्गाकुण्ड के विशाल जलसरोवर के तट पर काशी का भव्य दुर्गा मंदिर स्थित हैं।

देवी भागवत के कथाप्रसंग में इसी स्थलपर काशी में राजा को भगवती का साक्षात्कार हुआ था और मंदिर का निर्माण नाटौर राज्य बंगाल की रानी भवानी ने कराया, मंदिर के परिक्रमापथ की पश्चिमीदालान बाजीराव पेशवा द्वारा सन् १८२८ ई० में निर्मित है।

इस विशाल कुण्ड का निर्माण श्रद्धेय इन्दौरस्टेट की महारानी अहिल्याबाई के द्वारा हुआ। ऐतिहासिक कथाप्रसंग के आधार पर मुगलों के आक्रमणकाल में मंदिर तोड़ने की खबर पाकर

मंदिर की दुर्गाप्रतिमा खण्डित होने के भय से अधिकारियों ने उस चलमूर्ति को उठाकर अपने निवास स्थान लोलार्क कुण्ड के सन्निकट ले जाकर रखा जो आजतक वहीं उसी अवस्था में सुरक्षित है। हमारी काशी की हिन्दुप्राणजनता "कलौस्थानानिपूज्यन्ते" के आधार पर दुर्गा मंदिर स्थित दुर्गाकुण्ड के विशाल प्रांगण में भूमि की पूजा करती आ रही है।

दुर्गामंदिर के सन्निकट ठाकुरदास सुरैका चैरिटीफण्ड के धन से फाल्गुन कृष्ण तृतीया सोमवार संवत् २०१६ में भव्य विशाल मारबल का भवन निर्मित कर भगवान विष्णु और लक्ष्मी की मूर्ति की स्थापना के साथ गोस्वामी तुलसीदास की मूर्ति की भी प्रतिष्ठा माघशुक्ल तृतीया शुक्रवार सं० २०२० में कराकर भवन के भीतरी दीवालों पर सम्पूर्ण रामायण के दोहे और चौपाइयों से भवन को मानसमंदिर का रूप दिया। राम और कृष्ण कथा पर आधारित आधुनिक यन्त्रों द्वारा स्वचालित झाँकी देखकर दर्शनार्थी आत्मविभोर हो उठता हैं। सावन में झूलनोत्सव के अवसर पर इनकी विशेष झाकियों को देखने के लिये काशी और बाहर के दर्शनार्थीयों की भीड़ उमड़ पड़ती है।

यहाँ से करीब एक फर्लांग की दूरी पर श्रीसंकटमोचन हनुमानजी का मंदिर चारो ओर एक छोटे वन के मध्य स्थित है। यहां का वातावरण उपासकों के लिए एकान्त शान्त दिव्य उपासनास्थली के रूप में है। मंदिर के प्रांगण में श्री हनुमानजी-श्रीराघवेन्द्र सरकार श्री किशोरीजी एवं लखनलालजी के विग्रह के सन्मुख विराजमान है। वहीं हनुमानजी के निकट भगवान शिव लिंगरूप में उपस्थित है और इसी प्रांगण में भगवान नरसिंह की भी एक प्रतिमा स्थापित है। भगवान के परम भक्त तुलसीदास को कुष्टीवेश में दर्शन देने के पश्चात कर्णघंटा से दोनो रामभक्त इसी स्थल पर पहुँचे, पहुँच कर तुलसीदासजी उनके चरणों पर लेट गए अत्यन्त विनम्रभाव से प्रार्थना करने पर प्रकट होकर बोलें तुम क्या चाहते हो। गोस्वामीजी ने कहा आप इसी रूप में भक्तों के लिए यहीं पर निवास करें। श्री हनुमानजी तथास्तु कहकर वहीं विराजमान हो गये। श्री हनुमानजी दाहिने भुजा से भक्तों को अभय दान कर रहे है और वामभुजा उनके हृदय पर स्थित है। प्रत्येक चैत्रशुक्ल पूर्णिमा को श्रीहनुमानजयन्ती महोत्सव होता है इस अवसर पर श्री हनुमानजी के बैठक की झांकी होती है। यहाँ के महन्त के कथनानुसार यह स्वयम्भूमूर्ति श्रीतुलसीदासजी के तप और पूण्य के प्रभाव से अलौकिक मूर्ति प्रकट हुई हैं।

परिशिष्ट

तारकमंत्र कौन है तथा तारक-शब्द का अर्थ क्या है ?

तारकम् तारकाः = प्रणवः । तारयतीतितारः (स्वार्थेकः प्रत्यय) संसार सागरा-दुत्तारकं = तरकं च तद् ब्रह्म इति तारकं ब्रह्म उच्यते ।

ओंकार तारक है क्योंकि जो डूबते हुए का उद्धार करके उसे तार दे उसी को तारक कहते हैं । (तारक शब्द में 'तार' शब्द में 'तार' शब्द से स्वार्थ में क प्रत्यय हुआ है अर्थात् जो अर्थ तारशब्द का हैं वही अर्थ तारक शब्द का हैं) । अपार संसार सागर से तार देनेवालें तारक ब्रह्म का उपदेश भगवान रुद्र करते हैं । प्रणव अर्थात ओंकार को ही विद्वान लोग तारकब्रह्म कहते है, इसमें अनेक वेद वाक्य प्रमाण हैं । ''ओमितिदं ब्रह्म'' इति श्रुतेः । (तै. उ०- ११।८) ।

ओंकार ही ब्रह्म है अर्थात ओंकार और ब्रह्म में कोई भेद नहीं । ''ओमित्येत-दक्षरमिदं सर्वम्'' इति श्रुतेः । (माण्डूक्योपनिषद् १) ओमित्येतदक्षरमिदं सर्वं तस्योपव्यानभूतं भवद्भविष्यदितिसर्वमोकांर एव । यच्चान्यत् त्रिकालातीतंतदप्योंकांर एव ।। (माण्डूकोपनिषद)

ओम् यही अक्षर सब कुछ है । यही सर्वव्यापक ब्रह्म है ।

ॐ मित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन् मामनुस्मरन् ।
यःप्रयाति त्यजन्देहं स यति परमां गतिम् ।।

(भ. गीता ८।१३।।)

ॐ यह एकाक्षरमन्त्र साक्षात् ब्रह्म है । इस मंत्र को जपता हुआ और मेरा ध्यान करता हुआ जो मनुष्य देह का परित्याग करता है वह परमगति को प्राप्त होता है ।

प्रणवः सर्ववेदादि प्रणवः शिववाचकः ।
मंत्राधिराजराजश्च महाबीजं मनुःपरः ।।६० ।।
शिवोवा प्रणवोह्येष प्रणवोवा शिवःस्मृतः ।
वाच्य-वाचकयोर्भेदो नात्यन्तं विद्यते यतः ।।६१ ।।
एवमेव महामंत्रं जीवानां च तनुत्यजाम् ।
काश्यां संश्राव्य मरणे दत्ते मुक्ति परां शिवः ।।६२ ।।

(शिवपुराण कैलास सं.अ. १३ श्लो. ६०-६२)

कार्तिकेयजी वामदेव ऋषि से कहते हे कि :- प्रणव अर्थात ऊँकार सम्पूर्ण वेदों का आदि है और ऊँकार शिव का वाचक है तथा ऊँकार समस्त मन्त्रों का राजा है एवं महाबीज है और श्रेष्ठ हैं शिव ऊँकार स्वरूप हैं और ऊँकार शिव स्वरूप है । दोनो में कोई भेद नहीं है, अतः इसी ऊँकार को अथवा ऊँकारस्वरूप शिव के ऊँ नमः शिवाय मन्त्र को जीवों को देह त्यागते समय सुनाकर शिवजी श्रेष्ठ मुक्ति देते है ।

तारकं दंडकं चैव कुंडलंचार्द्धचन्द्रकम् ।
पंचमं विंदुसंकाशं पंचब्रह्मसनातनम् ।।१ ।।

तीन के अंक के समान जो आकार सो तारक है और जो दण्डकार रेखा सो दण्डक है और जो कुण्डलाकार है वह कुण्डल है और जो अर्द्धचन्द्राकार हैं सो अर्द्धचन्द्र है और जो अर्धचन्द्र में अनुस्वार है वह बिन्दु है अनादि अनंत पंचब्रह्म हैं ।।१।।

ब्रह्मविष्णुश्च रुद्रश्च ईश्वरश्च सदाशिव ।
पंचदैवतविख्यातं पंचब्रह्मस्वरूपवत् ।।२ ।।
अकारश्च उकारश्च मकारश्चत्रिमात्रिकम् ।
इकारश्चैव ऐकारः पंचकं मातृसंज्ञकम् ।।३ ।।

अकार सूर्य कहाता है उकार चंद्रमा कहाता है। अकार का उकार से मेल सूर्य को चंद्र में ले जाता है। बारह कला सूर्य नाभि स्थान में रहता है। सोलह कला से चंद्र त्रिकूट में रहता है। उस चंद्र का मकाराख्य अग्निज्योति से मेल करता है यह प्रक्रिया-शैवागम स्वच्छन्द के पंचमपटल में प्रसिद्ध है।

अत्र हि जन्तोः प्राणेषूत्क्रममाणेषु रुद्रस्तारकं ब्रह्मव्याचष्टे ।
येनासावमृती भूत्वा मोक्षी भवति । तस्मादविमुक्तमेव निषेवेत् ।
अविमुक्तं न विमुञ्चेदेवमेवैतद् याज्ञवल्क्यः ।।
(जावालोपनिषद् १।१)

इस अविमुक्त क्षेत्र (काशी) में प्राणियों को देह-त्याग करते समय रुद्र (शिव जी) तारकब्रह्म ऊँकार मंत्र का उपदेश करते है। जिस मंत्र को सुनने से वह प्राणि (जीव) अमृतत्व को प्राप्त करके मुक्त हो जाता है। अर्थात मोक्ष को प्राप्त करता है। इसलिए अविमुक्त (नगरी) काशी का ही सेवन करना चाहिये।

प्रश्न :- तारक मंत्र कौन है ?

उत्तर :- यः ऊँकारः स प्रणवः यः प्रणवः स सर्वव्यापी सः सर्वव्यापीसोऽनन्तः योऽनन्तस्तत्तारं। यत्तारं तत्सूक्ष्मं यत्सूक्ष्मं तत् शुक्लं, वैद्युतं, यद्वैद्युतं तत् परब्रह्म यत्परंब्रह्म स एको य एकः स रुद्रः यो रुद्रः स ईशानः य ईशानः स भगवान् महेश्वरः। (अथर्वशिर उपनिषद् मंत्रः ३)

जो ऊँकार है वह प्रणव है, जो प्रणव है वह सर्वव्यापी अनन्त है, जो अनन्त है वह तारक है वह सूक्ष्म, शुक्ल वैद्युत, परंब्रह्म है, जो परंब्रह्म है वही एक (अद्वितीय) रुद्र है, जो रुद्र है वही भगवान ईशान महेश्वर महादेव (शिव) है।

'तरस्वीतारको धीमान्' ।

शिव का एक नाम तारक भी है (शिव पु० वि० सं०)

तारयति इति तारः तारः एव तारकः

अर्थात्- जो भक्तों को संसार सागर से तार देवे वह हुआ तारः। तारः ही तारक कहलाता है।

षडक्षरोष्टाक्षरो वा शैवो मन्त्रो जपनीयः। ओमित्यग्रे व्याहरेत्, नमः इति पश्चात्, ततः शिवायेत्यक्षरत्रयम्। नामस्तारकः परमोमन्त्रः तारकोऽयम् पंचाक्षरः। कोऽयं शैवोमनुः शैवस्तारकोऽयमुपदिश्यते मनुरविमुक्ते (काश्याम्) शैवेभ्यो जीवेभ्यः। शैवोऽयमेवमंत्रस्तारयति। स एव ब्रह्मोपदेशः।

'ऊँ नमःशिवाय' अथवा 'ऊँनमोंमहादेवाय' यह शैवमंत्र है। इसका जप सब को करना चाहिये। ऊँ नमःशिवायः मन्त्र ही श्रेष्ठ तारक मन्त्र है। इसी शैव तारक मन्त्र 'ऊँनमः शिवायः' को अविमुक्तक्षेत्र काशी में जीवों को मृत्यु के समय में उपदेश करता हूं।

यही शैव तारकमन्त्र 'ऊँ नमः शिवायः' जीवों को तार देता है। अतः यही ब्रह्म उपदेश अर्थात आत्मज्ञान का उपदेश भी है। ऐसा उपदेश वेद के भस्म जाबालउपनिषद् अध्याय २ में है। जाबाल और भुशुण्ड ऋषि के प्रति पूछने पर शिवजी ने उनसे कहा था -

अतस्तदेव जानीयात् प्रणवं सर्वकारणम्।
एनमेवहि देवेशि सर्वमंत्र शिरोमणिम्॥
काश्यामहं प्रदास्यामि जीवानां मुक्तिहेतवे॥

(शि०पु० उत्तरार्ध अ० ३।६१।६।१०)

शिवजी कहते हैं हे पार्वती ! ऊँकार समस्त मन्त्र-तन्त्रों का कारण है, अतः समस्त मन्त्रों का शिरोमणि इस ऊँकार का ही काशी में देह त्यागने वालें प्राणियों कों मैं मुक्ति के लिए उपदेश देता हूं।

ऊँकार तारक मंत्र है :-

अथ हैनं भगवन्तं परमेष्ठिनं नारदः पप्रच्छ-संसारतारकं प्रसन्नो ब्रूहीति।

(ना०पा०उ० ८)

तथेति परमेष्ठी वक्तुमुपचक्रमे-ओमिति ब्रह्मेति व्यष्टिसमष्टिप्रकारेण।

(नारदपरिव्राजकोष०)

नारद जी ने ब्रह्मा से पूछा भगवान आप प्रसन्न होकर यह बताइये कि संसार समुद्र से तारने वाला कौन है ? तब ब्रह्मा जी ने नारदजी से कहा ऊँकार ब्रह्म ही तारक मन्त्र है अतः ऊँकार ही संसार समुद्र से तारने वाला है।

शिवनाम ही तारक मंत्र है :-

तारकं ब्रह्मपरमं शिव इत्यक्षरद्वयम् ।
नैतस्मादपरं किंचित तारकं ब्रह्म सर्वथा ।।

(शिवरहस्ये सप्तमांशः अ० २३)

'शिव' यह जो दो अक्षर का नाम है, यही परम तारक ब्रह्म है। दूसरा तारक मन्त्र नहीं है।

अविमुक्ते मुमुक्षोऽस्तु कर्णमूले महेश्वरः ।
दिशति ब्रह्म संज्ञानं बोधोपायं कृपानिधिः ।। (स्कन्दं पु०)

अविमुक्त क्षेत्र अर्थात काशी में मरते समय मुक्ति की इच्छावालें प्राणियों के कान में शिवजी कृपा करके बोध उपायभूत ब्रह्म संज्ञान का अर्थात ऊँकार का उपदेश करते है क्योकि गीता ८।१३ में कृष्ण भगवान् ने कहा है कि -

'ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म इति भगवान् व्याचष्टे' ।

ऊँकार एक अद्वितीय अक्षर अविनाशी ब्रह्म है।

काशी मोक्षभूमि

तस्मातृं = अविमुक्ताद् यत्रकचन गच्छति = यत्रकापि न गच्छेत् मोक्षार्थम् क्षेत्रान्तरम् ("व्यत्ययो बहुलम्" अतिलकार व्यत्ययः ।) अविमुक्तं परित्यज्य क्षेत्रान्तरे मोक्षे न भवतीति भावः।

ऐसे उत्तम अविमुक्तक्षेत्र से मोक्ष की प्राप्ति के लिए किसी भी दूसरे क्षेत्र में नहीं जाना चाहिए।

श्रुति में दिए गए 'गच्छति' शब्द का अर्थ वर्तमानकाल में होने के कारण यद्यपि "जाता है" यह होना चाहिए परन्तु वैदिक मन्त्रों में यह नियम है कि कहीं-कहीं दूसरे काल का प्रयोग हो जाता है इसलिए यहां वर्तमानकाल का अर्थ न करके विधि का अर्थ 'जावे' या 'जाना चाहिए' यह किया गया। इस आधे मंत्र का संक्षेप में अर्थ यही है कि इस परमपावन अविमुक्तक्षेत्र को छोड़कर मोक्ष के लिए कहीं नहीं जाना चाहिए क्योंकि दूसरे क्षेत्र में मोक्ष होता ही नहीं।

साक्षात् मोक्षो न चैतासु पुरीषु प्रियभाषिणि । (का.ख. ८०३)

अगस्त्यजी कहते है कि हे लोपामुद्रे ! अयोध्या, मथुरा, हरिद्वार आदि सातमुक्ति पुरियां हैं पर यहां मरने से साक्षात मोक्ष नहीं होता। दूसरा जन्म लेकर काशी में मृत्यु होने पर ही तब मोक्ष होता है।

तदिदं मन्थे देवानां देवरुम्रदनम् सर्वेषां भूतानां ब्रह्मसदनम् । तत् = तस्माद्देवानां देवयजनमिदमविमुक्तं सर्वेषां भूतानां ब्रह्मसदनं ब्रह्मलोकंमन्ये ।

इस कारण विद्वान लोग इस अविमुक्तक्षेत्र को देवो का पूजा का स्थान एवं स्थावर जंगमभूतो का ब्रह्मलोक समझते है।

अत्र हि जन्तोः प्राणेषूत्क्रममाणेषुरूद्रस्तारकं ब्रह्मं व्याचष्टे। अत्र = अविमुक्ते, हि = प्रसिद्धौ, जन्तोः = चतुर्विधस्य जीव जातस्य, प्राणेषूत्क्रममाणेषु प्राणैरूत्क्रान्ति कुर्वतः ('प्राणेषूत्क्रममाणेषु' इति केचित् पठन्ति)

इस अविमुक्त क्षेत्र में शरीर परित्याग कर प्राणों के द्वारा ऊपर की ओर जाते हुए चारों प्रकार के जीवों को भगवान् रुद्र तारक मंत्र का उपदेश देते है। कुछ लोग ''प्राणेषु उत्क्रममाणेषु'' ऐसापाठ-भेद बताते है उनके मत के अनुसार यह अर्थ होगा कि 'प्राण छूटने के समय' परन्तु इन दोनों पाठों में कुछ विशेष भेद नहीं। रुद्रशब्द की कई प्रकार से व्याख्या की गई है :-

(१) रुद्रतापत्रयात्मकं संसारदुःखं = रुत्, दुःखहेतुर्वा = रुत्। रुतंद्रावयतीति = रुद्रः।

संसार में तीन प्रकार के दुःख होते है- आध्यात्मिक १, आदिभौतिक २, और आधिदैविक ३। इन्हीं सांसारिक दुःखों का नाम रुत् है। कुछ लोगों का कथन है कि रुत् का अर्थ दुःख नहीं किन्तु दुःख का हेतु है। इसी रुत् को जो दूर करते हो उन्हे 'रुद्र' कहते है। इस व्याख्या में स्मृति के दो -

रुद्रः - दुःखं द्रावयतीति रुद्रः रुद्रमित्यप्युच्यते।
तस्माच्छिवःपरमकारणम्।

दुःख को भगादेने वाले का नाम रुद्र है। इसलिये सुखदेने वालों में शिव सर्वश्रेष्ठ है। वचन प्रमाण है।

रुद्रः दुःखं दुःखहेतुर्वा, द्रावयत्येष न प्रभुः।
रुद्र इत्युक्ष्यते सद्भिः शिवः परम कारणम्॥

दुःख अथवा दुःख के कारण को रुत् कहते हैं। हम लोगों के उस रुत् को ये भगवान् शिव को रुद्र कहते है और भी (१) आध्यात्मिक दुःख के दो भेद हैं - (क) शारीरिक और (ख) मानसिक वात, पित्त एवं कफ में विषमता होने के कारण ज्वर, अतिसार आदि का नाम शारीरिक दुःख है। काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, ईर्ष्या, विषाद के कारण मानसिक दुःख होता है। (२) मनुष्य को पशु, पक्षी, सर्प आदि जंगम जीवों से तथा विष-वृक्ष आदि स्थावर वस्तुओं से जो दुःख होता है। उसे आधिभौतिक दुःख कहते है। (३) यक्ष, राक्षस, भूत, प्रेत आदि के आक्रमण से तथा सूर्य, चन्द्र आदि ग्रहों के आवेश से जो दुःख होता है उसे आधिदैविक दुःख कहते है।

अशुभं द्रावयन् रुद्रो यज्जहार पुनर्भवम्।
ततः स्मृताभिधौ रुद्र शब्देनात्राभिधीयते॥

जीवनकाल में प्राणी के सब अशुभो को दूर करते है और शरीर परित्याग करने पर मोक्ष देते हैं। इसीलिए भगवान् शिव का नाम रुद्र है।

(२) रुत्या = वेदरूपया धर्मादीन् बोधयति वा रुद्रः ।

वेद की ध्वनि द्वारा जो धर्मादिकों का बोध करावें वे ही रुद्र हैं ।

(३) रुत्या = प्रणवरूपया स्वात्मानं प्रापयतीति वा रुद्रः ।

प्रणव अर्थात ओंकार के गान के, द्वारा जो अपने समीप तक जीवनको पहुँचा दे वे ही रुद्र हैं ।

(४) रो रुयमाणो द्रवति = प्रविशति मर्त्यानिति वा रुद्रः ।

(ऋ० वे० ३।८।१।१०।३)

जो घोर शब्द करते हुए मनुष्यों में प्रवेश करते हैं उन्ही का नाम रुद्र है ।

(५) रोधिका बंधिका च शक्तिः = रुत् ।
तस्याःद्रावयिष्ता भक्तेभ्य इति वा विग्रहः ।।

रोधिका और बंधिका ये दो प्रकार की शक्तियां होती हैं । रोधिका मोक्ष के मार्ग में आवरण (पर्दा) डाल देती है और इस आवरण के करण मोक्ष का मार्ग ही नहीं दिखाई देता । दूसरी बन्धिका मोक्ष में विक्षेप डाल देती है और इस विक्षेप के कारण मोक्ष मिलना कठिन हो जाता है मोक्ष में बाधा डालने वाली इन दोनों प्रकार की शक्तियों को भक्तों से दूर कर देने वालें को रुद्र कहते है ।

(६) रुत् शब्दं वेदात्मानं कल्पादौ ब्रह्मणे ददातीति वा रुद्रः ।

सृष्टि के आदि में ब्रह्मा को वेदरूपी शब्द देनेवाले को रुद्र कहते है । इसमें श्रुति प्रमाण है -

'यो वै वेदांश्च प्रहिणोंति तस्मै' इति श्रुतेः (श्वेताश्वतरोपनिषद् ६-१८)

जो भगवान् परमात्मा ब्रह्माजी को वेद देते है । भगवान् रुद्र ब्रह्मा की सृष्टि कर उन्हें वेद देते हैं ।

यो ब्रह्माणं विदधाति पूर्व यो वै वेदांश्च प्रहिणोति तस्मै ।
तं ह देवमात्मबुद्धिप्रकाशं मुमुक्षुर्वे शरणमहं प्रपद्ये ।।

(श्वेताश्चतरोपनिषद्)

काश्यां मृतस्तु सालोक्यं साक्षात्प्राप्नोति सत्तमः ।
ततःसरूपतां याति ततः सान्निध्यमश्नुते ।।
ततो ब्रह्मैकतां याति न परावर्ततेपुनः ।। (पद्मपुराण)

अर्थ- काशी में मरे हुए सज्जन साक्षात् सालोक्य को प्राप्त करके सारूप्यमुक्ति पाते है । फिर वे सान्निध्यमुक्ति का भी सुख-भोगते है । तत्पश्चात् ब्रह्मैकता को प्राप्त करके पुनः संसार में नहीं आते ।

एक एव प्रभावोऽस्ति क्षेत्रस्य परमेश्वरी ।
एकेन जन्मना देवि मोक्षं प्राप्नोत्यनुत्तमम् ।। (मत्स्य पु०)

इस (काशी जी) की सबसे बड़ी महिमा यह है कि यहां एक ही जन्म में जीव उत्तम मोक्षपद को प्राप्त कर लेता है ।

सर्वे वर्णा आश्रमाश्च बालयौवनवार्द्धकाः ।
अस्यां पुर्या मृताश्चेत्स्युर्मुक्ता एव न संशयः ।। (शिवपुराण)

सब वर्ण और आश्रमवाले बालक, वृद्ध तथा युवावस्थावाले प्राणी काशी जी में शरीर त्याग करने से मुक्त होते हैं इसमें कोई संशय नहीं है ।

योजनानां शतस्थोऽपि ये विमुक्तं स्मरेद्यदि ।
बहुपातकपूर्णोऽपि स पापैर्न प्रबाध्यते ।। (नारदपुराण)

यदि एक सौ योजन पर स्थित रहकर भी काशी का स्मरण करे तो बहुत पाप कर्म से पूर्ण होने पर भी वह प्राणी पापों से रहित हो जाता है ।

असीवरुणायोर्मध्ये पंचक्रोशं महत्तरम् ।
अमरामृत्युमिच्छन्ति का कथात्वितरेजनाः ।। (स्कन्दपुराण)

असी और वरणा के बीच में पंचक्रोश (काशीक्षेत्र) अतिशय श्रेष्ठ है, क्योंकि उसमें देवता लोग भी जन्म लेकर मृत्यु चाहते है । तब इतर मनुष्यों की कथा ही क्या है ।

काशी धन्यतमा विमुक्तनगरी सालंकृता गंगया ।
अत्रेयं मणिकर्णिका सुखकरी मुक्तिर्हि तत्किंकरी ।। (शंकराचार्य)

काशी अत्यन्त पुण्यरूप उत्तम नगरी जहाँ गंगाजी शोभायमान हैं उसमें भी मणिकर्णिका उत्तम सुखदेनेवाली है क्योंकि मुक्ति को उसकी दासी कहा है ।

यत्र कुत्रापि वा काश्यां मरणे स महेश्वरः ।
जन्तोर्दक्षिणकर्णे तु मत्तारं समुपादिशत् ।।
काश्यां तु ब्रह्मनालेस्मिन्मृतो मत्तारमाप्नुयात् ।
पुनरावृत्तिरहितां मुक्तिं प्राप्नोति मानवः ।। (मुक्तिकोपानिषद्)

काशी में विशेष करके ब्रह्मनाल के बीच में जो मरता है, वह मनुष्य जन्म मरण से रहित होकर मुक्त हो जाता हैं । आगे कहा गया है, विष्णु, राम, शिव के शक्ति उपासकों को भी काशी में शरीर त्यागने वाले को भगवान् शिव उनके उपासक इष्ट के अनुकूल तारकमंत्र का उपदेश करके अपना स्वरूप प्रदान करते है ।

अस्यत्येसिवरियति प्रवेशे कर्माणि जन्तोर्वरणा वरेण्या ।
वाराणसी मध्यगता तथोश्च निश्चेषयत्यूषरताप्रभावात् ।।

वाराणसी के दक्षिण में असि नाम की नदी है और उत्तर में वरणा नाम की नदी है । इन दोनों नदियों के बीच में वाराणसी है । असी का काम है कि जन्तुओं के शुभ-अशुभ कर्मो को बाहर निकाल कर फेंक दे और वरणा का काम है कि जीव के कर्मो को जीव के साथ रहने से रोक दे । अर्थात वरणा के प्रभाव से जो जीव के कर्मो का फल जीव के पास आने नहीं पाता और असि के प्रभाव से यदि कोई फल किसी प्रकार जीव तक पहुँच जाय तो हटाकर दूर कर दिया जाता है । इन दोनों नदियों के बीच में बसी हुई वाराणसी अपनी ऊषरता के प्रभाव से जीव के सब कर्मनिश्शेष कर देती है, इसी से उसकी मुक्ति हो जाती है ।

तीर्थानि सर्वाण्यपि मोक्षदानि श्रुतानि सर्वेष्वखिलेषु राजन् ।
वाराणसीप्राप्तिफलानि शीघ्रं कालेन चातो व्यवधानवन्ति ।।

हे राजन् ! सब शास्त्रों में जितने मोक्ष देनेवाले तीर्थ कहे गए है वे सब साक्षात् मोक्ष नही देते किन्तु उसे दूसरे जन्म में काशी पहुँचा देते है और यहाँ पहुँच कर जीव शरीर का परित्याग करता और मुक्त हो जाता है । अयोध्या, मथुरा आदि तीर्थो में मरने से मोक्ष मिलने में एक जन्म का व्यवधान पड़ता है परन्तु काशी में मरते ही मुक्ति मिल जाती है ।

अयोध्या मथुरा माया काशी काञ्ची अवन्तिका ।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैता मोक्षदायिकाः ।।

अयोध्या, मथुरा, हरद्वार, काशी, कांची, अवन्तिका और द्वारका ये सात मोक्ष देने वाली पुरियां है ।

यत्राचार्यत्रिपुरविजयी साधनानां चतुर्णा,
संपद्वासः सुलभमशनं स्वैरचारस्तपांसि ।
श्रोतत्यस्य श्रुतिरपि तपः श्रूयते जन्मभाजां
काले काश्यां सुकृतधनिकास्तत्रवासं लभन्ते ।। (सनत्कुमार संहिता)

काशीपुरी में त्रिपुर को जीतनेवाले साक्षात् शंकर भगवान् ही तारकमंत्र के उपदेश देनेवाले आचार्य हैं, मोक्ष के चारों साधन इस पुरी में सदा उपस्थित रहते हैं । जैसे (१) शिवपूजन (२) रुद्रजाप (३) उपवास और (४) काशी में शरीरत्याग । भगवती अन्नपूर्णा की कृपा से भोजन आदि का मिलना यहां एकदम सुलभ हैं ।प्रतिदिन का चलना, फिरना, उठना, बैठना ही यहां तपस्या के समान हैं । साधारण जीव यहां जो कुछ सुनते है वही वेद के श्रवण के समान फल देता है । ऐसी उत्तम पुरी काशी में जो बहुत ही पुण्यवान होते हैं वही निवास करने का सौभाग्य पा सकते हैं ।

चतुर्धा वितते क्षेत्रे सर्वत्र भगवाञ्छिवः ।
व्याचष्टे तारकं वाक्यं ब्रह्मात्मैकप्रबोधकम् ।। (ब्रह्मपुराण)

इस क्षेत्र में चारों ओर फैले हुए भगवान् शिवजी ब्रह्मैकत्व को बताने वाले 'तारक' मन्त्र का उपदेश करते है।

काश्यां विदेह कैवल्यं भवतीति सुनिश्चितम् ।। ७ ।।
काश्यां विदेह कैवल्यं प्राप्तेरुत्तरकर्मणाम् ।
असंभवान्न विश्लेषो वेदितव्यो विचक्षणैः ।। ८ ।।

(छान्दोग्यउपनिषद् ५,२४,३०)

काशीपुरी में शरीर का परित्याग करने से तारक मन्त्र के बल से विदेह कैवल्य अवश्य ही हो जाता है इसमें कोई सन्देह नहीं। काशी में मरने पर जब विदेह कैवल्य की प्राप्ति हो जाती है तब क्रियमाण और करिष्यमाण कर्मो का असर ब्रह्मीभूत जीव के ऊपर नहीं पड़ता। उन कर्मो से यह असंग ही रहता है। इसमें प्रमाण क्या हैं।

श्रूयते हि यथेषीका तूलमग्नौप्रोतं, प्रदूयेत एवं हास्य सर्वेपाप्मानः प्रदूयन्ते ।

।। छा० उ० ।।

जिस प्रकार मूंजके फूल की रूई आग के स्पर्शमात्र से भस्म हो जाती है। इसी प्रकार ज्ञानरूपी अग्नि के उत्पन्न होते ही जीव के सभी संचित पाप कर्म क्षणभर में जल कर भस्म हो जाते हैं।

तर्हि पापकर्मणामेव विलयः श्रूयते न पुण्यकर्मणामिति चेत् न इत्याहः -

छान्दोग्य उपनिषद् की इस श्रुति में पाप्मानः शब्द के प्रयोग से जान पड़ता है कि ज्ञानरूपी अग्नि से पापकर्मो का ही क्षय होता है पुण्यकर्मो का नहीं होता यह आशंका उचित नहीं है क्योंकि-

ब्रह्मादीनां शरीराणि श्वशूकरशरीरवत् ।
यतो जिहासितान्येवतस्मात् धर्मेऽपि पाप्मभिः ।।

ब्रह्मादि के शरीर उसी प्रकार परित्याग करने के योग्य होते है जिस प्रकार कि कुत्ते और सूअर के शरीर।

इसी तरह पाप कर्मो के कथन से पुण्यकर्मो का भी बोध होता हैं अर्थात ज्ञानरूपी अग्नि पापकर्म और पुण्यकर्म सबों को जला डालती है।

इति वचनात् पुण्यकर्मारब्धानां ब्रह्मेन्द्रशरीराणां पापकर्मारब्धश सूकर शरीरादि वज्जिहासितत्वाविशेषात् पुण्यस्यापि कर्मणः पाप्मत्वेन कीर्तनं युक्तम्। तथा च भगवता स्मर्यते-

इस पूर्वोक्त वचन से जिस प्रकार पुण्यकर्मो के द्वारा प्राप्त किए गए ब्रह्मा, इन्द्र आदि देवताओं के शरीर पापकर्मो के द्वारा पाए गए कूकर-सूकर के निन्दनीय शरीर के बराबर ही

त्याज्या हैं उसी प्रकार पुण्यकर्म भी फल देने वाले होने के कारण बन्धन में डालने वाले हैं और पापकर्मों के समान ही कहे गए हैं । इसी सिद्धान्त का प्रतिपादन भगवान् श्रीकृष्णजी ने श्रीमद्भगवद् गीता में किया है –

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात् कुरुते तथा ।। ४,३० ।।

हे अर्जुन ! धग् धग् जलती हुई आग जिस प्रकार ईधन को जला कर राख कर डालती है, उसी प्रकार ज्ञानरूपी अग्नि सभी पाप-पुण्यकर्मों को जला डालती है और जीव को उन कर्मों के बन्धन से मुक्त कर देती है ।

यच्चोक्तं जीवन्मुक्तस्य ज्ञानोत्तरकालिक कर्मणां विश्लेषो न भवतीति तत्रेदं प्रमाणम् –

पहले कह चुके है कि जीवन्मुक्त अवस्था में ज्ञान प्राप्त होने के पीछे किए गए कर्मो का असर नहीं होता इस कथन में नीचे दी गई श्रुति प्रमाण है –

यथा पुष्करपलाश आपो न श्लिष्यन्ते ।
एवं हैवं विसिपापं कर्म न श्लिष्यते इति ।। (छा० उ० ४।१४३)

जिस प्रकार कमल के पत्ते में जल का संसर्ग नहीं होता उसी प्रकार तत्वज्ञानी को पापकर्मो का फल नहीं होता । पाप-कर्म अथवा पुण्यकर्म करने के कारण उसे बन्धन में नहीं पड़ना पड़ता।

प्रारब्धस्य च कर्मणः कर्मत्वाविशेषात् ज्ञानेनबाध्यत्वमुत्पद्यते इति चेत् न इत्याह-

अब यह प्रश्न उठता है कि संचितकर्म और प्रारब्धकर्म ये दोनों प्रकार के कर्म-कर्म ही के नाम से प्रसिद्ध हैं अर्थात् कर्म कहने से प्रारब्ध एवं संचित इन दोनों प्रकार के कर्मो का ज्ञान होता है तो ज्ञानरूपी अग्नि से जिस प्रकार संचितकर्म क्षीण हो जाते हैं उसी तरह प्रारब्धकर्मो का नाश भी क्यों नहीं हो जाता श्रुति में तो केवल कर्म शब्द कहा गया है ।

इस शंका का समाधान नीचे दिए गए वचन से किया गया है –

प्रारब्धस्योपजीव्यत्वात् तत्वज्ञानेन कर्मणः ।
अशक्यत्वाच्च मुक्तेषोरिव बाधो न विद्यते ।।

जीव को मोक्ष तभी मिलता है जब कि उसके प्रारब्धकर्म उसमें सहायक होते है अर्थात् प्रारब्धकर्मों ही के अनुसार जीव का आवागमन संसार में होता है । जब प्रारब्धकर्म अपना फल देना प्रारम्भ कर देते है तो जब तक वे समाप्त नहीं हो जाते अपना फल देते रहते हैं । जिस प्रकार तीर जब धनुष से छूट जाता है तब वह अपना काम करके ही रुकता है, बीच में नहीं ।

इसी प्रकार प्रारब्धकर्म भी अपना काम करके ही समाप्त होते हैं, बीच में उनको कोई नहीं रोक सकता ।

अथेदानीं परमप्रकृतेः प्रमाणं प्रतिपद्यते ।

अब परम प्रकृति परमात्मा ही सबका आदि कारण है और वही सबमें प्रधान है । प्रमाण -

यमो वैवस्वतो राजा यस्तवैष हृदिस्थितः ।। (मनुस्मृति ८,९८)

तुम्हारे हृदय में बैठे हुए वैवस्वत राजा यम के साथ यदि तुम्हारा ऐक्य है तो तुम न तो गंगा नहाने जाओ और न कुरुक्षेत्र की यात्रा करने जाओ ।

इति गंगा कुरुक्षेत्रयोः निषेधमुखतो मुमुक्षुप्राप्यत्वमाह स्म भगवान् आचार्यो मनुः।

इस प्रकार भगवान् आचार्य मनु ने गंगा और कुरुक्षेत्र के सेवन का निषेध कहते हुए मोक्ष चाहने वाले परब्रह्म के साथ तादात्म्य प्राप्त हो सकता है यह सिद्ध किया है ।

यमः = यमयति = नियमयति तथा च, श्रुतिः -

उस ईश्वर का नाम यम इसलिए पड़ा कि वह समस्त संसार का नियमन करता है । उसी के बनाये हुए नियमों से समस्त संसार का संचालन होता है । प्रमाण -

य आत्मनितिष्ठन्नात्मनोऽन्तरोयमात्मा न वेद यस्य आत्मा शरीरं य आत्मानमन्तरो यमयति एष त आत्मा अन्तर्याम्यमृतः ।। ३.७ ।। (बृहदारण्यकोपनिषद्)

महर्षि याज्ञवल्क्य अरुण के पुत्र उद्दालक से कहते है कि जो आत्मा में वर्तमान है, जो आत्मा के भीतर निवास करता है, जिसे आत्मा अपने में स्थित नहीं जानता, जिसका शरीर आत्मा है, जो आत्मा के भीतर रहकर उसे अपने व्यापार में लगाता है और उसके ऊपर शासन करता है वही संसार के सब धर्मो से रहित अन्तर्यामी जगन्नियन्ता परमेश्वर ही तुम्हारी आत्मा है।

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुनतिष्ठति ।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारूढ़ानि मायया ।। (१८।६१ भ० गी०)

क्योंकि हे अर्जुन ! शरीररूप यन्त्र में आरूढ़ हुए सम्पूर्ण प्राणियों को अन्तर्यामी परमेश्वर अपनी माया से उनके कर्मो के अनुसार भ्रमाता हुआ सब भूत प्राणियों के हृदय में स्थित है ।। ६१ ।।

"मायां तु प्रकृतिं विद्यान्मायिनं तु महेश्वरम्"

"प्रकृतिको माया कहते हैं और उस प्रकृति के अधिष्ठाता महेश्वर को मायावान् अथवा मायावी कहते है" (इति सूतसंहिता)

वैवस्वतः - विवस्वान् पिता अस्येति-विवेस्वन्तमधितिष्ठतीत्यर्थः ।

विवस्वान अर्थात सूर्य के पुत्र । इसका तात्पर्य यह कि सूर्य में व्याप्त होकर रहने वाले ।

राजा = राजते, दीप्यते = स्वयं प्रकाशते ।

राजा उसे कहते है जो स्वयं प्रकाशमान् हो जिसे प्रकाशित करने के लिए दूसरे प्रकाश की आवश्यकता न पड़े । ईश्वर स्वयं प्रकाशमान् है । जैसे -

ज्योतिर्ब्राह्मणवाक्योक्तं ज्योतिष्टवं प्रत्यगात्मनः ।
औपचारिकमन्यत्र भास्यत्वाद् भास्वदादिवत् ।।

ज्योतिर्ब्राह्मण में कहा गया है कि यथार्थ ज्योति अर्थात् स्वाभाविक प्रकाश तो केवल आत्मा में ही है । आत्मा के अतिरिक्त और कोई भी पदार्थ संसार में स्वयं प्रकाशमान् नहीं है । अग्नि-सूर्य-चन्द्र आदि में जो तेज दिखाई देता है, वह स्वाभाविक नहीं, किन्तु उसी परमप्रकाशमान् परमात्मा के सम्पर्क से प्राप्त होता है ।

"यस्तवैषहृदि स्थितः" इति स्वानुभवप्रत्ययत्वं दर्शयति ।

"जो ईश्वर तुम्हारे हृदय में बैठा हुआ है" इस वचन से भगवान मनु यह दिखलाते है कि इस विषय में गुरु, वेदान्त आदि के वाक्यों की आवश्यकता ही नहीं, इसका अनुभव तो स्वयं किया जा सकता है ।

"हृदि स्थितः" इति सर्वेषां भूतानां हृद्देशे सदा सन्निहितः ।

हृदय में स्थित का अर्थ यह है कि वह अन्तर्यामी भगवान् प्राणिमात्र के हृदय में सर्वदा वर्तमान रहता है । ऐसा कोई भी प्राणी नहीं जिसके हृदय में ईश्वर न बैठा हो । इसमें श्रुति और स्मृति दोनों प्रमाण है -

"अन्तःप्रविष्टः शास्ता जनानाम्" इति श्रुतेः । (वै.आ. ३-११-१-२)

श्रुति का वचन है कि ईश्वर सब जीवों के हृदय में बैठा हुआ शासन करता है ।

"शास्ताविष्णुरशेषस्य जगतो यो हृदिस्थितः - (इतिस्मृतेः)

स्मृति का वचन है कि भगवान् विष्णु अर्थात् ईश्वर जो कि सम्पूर्ण जगत् के हृदय में विराजमान हैं संसारभर के नियामक है ।

ते = तव यो हृदिस्थितस्तेन परमात्मना अविवादः = ऐकात्म्यं यदास्ति तदा गङ्गाकुरुक्षेत्रं च मा गाः ।

संसार भर के नियामक स्वयं प्रकाशमान् और तुम्हारे हृदय में बैठे हुए ईश्वर के साथ यदि तुम्हारा एकात्म्य है तो तुम्हे गंगा और कुरुक्षेत्र जाने की आवश्यकता नहीं ।

गङ्गाया मरणं चैव दृढाभक्तिश्च केशवे ।
ब्रह्मविद्या प्रबोधश्च नाल्पस्य तपसःफलम् ।।

परम पावनी गंगाजी के तट पर शरीर का छूटना, भगवान विष्णु में अचल भक्ति का होना और ब्रह्मविद्या का जान लेना यह साधारण तप का फल नहीं, बहुत कठिन तप करने पर इनकी प्राप्ति होती है ।

इति समप्रधानभावेन श्री व्यासेनोक्तम् ।

इस प्रकार भगवान् व्यास ने गंगा के तट पर शरीर परित्याग, विष्णु में अटल भक्ति एवं ब्रह्मविद्या ज्ञान को समान महत्व दिया है और संसार के बन्धनों से मुक्त करने वाले सब सुकर्मों में इन्हें प्रधानस्थान दिया है और भी कहा गया है कि -

मरणे स्मरणं विष्णोः कथ्यतेऽत्यन्तदुर्लभम् ।
तदल्पेनैव कालेन गङ्गां संसेव्य लभ्यते ।।

मरने के समय विष्णु का स्मरण, जिससे कि मनुष्य भवबाधा से छूट जाता है, परम दुर्लभ बताया गया है । परन्तु थोड़े काल तक भी गंगा का सेवन कर लेने से मरणकाल में भगवान् का स्मरण हो जाता है और उसके द्वारा मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है ।

यस्य तत्वज्ञानं नास्ति तस्य गङ्गायां कुरुक्षेत्रे वा यावद्देहावसानं तावत् स्थितौ सत्यां तत्वज्ञानावाप्तौ मोक्षे भवतीति भावः ।

तात्पर्य यह है कि जिसे तत्वज्ञान की प्राप्ति हो चुकी उसे तो गंगा, कुरुक्षेत्र आदि के सेवन की आवश्यकता नहीं, परन्तु जिसे तत्वज्ञान की प्राप्ति नहीं हुई उसे मरणपर्यन्त गंगा के तट पर या कुरुक्षेत्र में निवास करने से अन्त में तत्वज्ञान की प्राप्ति हो जाती है और उसका मोक्ष हो जाता है ।

पार्वत्युवाचः - मृत्युकाले जगन्नाथ काशीपुर्यां हि प्राणिनाम् ।
उपदेशः कथं तेषा तन्मे ब्रूहि पितामह ।। १ ।।

पार्वतीने प्राणियों के उद्धार के लिए जो सभी विद्या के आचार्य महादेवजी है उनसे प्रार्थना करती है । हे जगन्नाथ ! काशीपुरी में आप प्राणियों के मृत्यु समय में कौन सा उपदेश करते है वह मुझे बताइये ।।१।।

ईश्वरोवाचः - ऊँकारं बिंदुसंयुक्तं नित्यं ध्यायंति योगिनः ।
अस्मिन्मध्ये स्थितं तत्वं दर्शयंति जगद्गुरुम् ।। २ ।।

ईश्वर जो ब्रह्मविद्याचार्य है वह उपदेश करते है, हे पार्वती ! बिन्दु संयुक्त जो प्रणव है जिसका योगिजन सर्वदा ध्यान करते है उस प्रणव के मध्यस्थित जो तत्व जगद्गुरुस्वरूप योगिजन अपने भक्त को दिखाते है ।। २ ।।

ओमित्येव परंब्रह्म सर्वतत्वानुग्राहकम् ।
आब्रह्मस्तंबपर्यंतं सर्वानुग्रहकारणम् ।। ३ ।।

ॐ इत्याकारक जो परब्रह्म है वही २४ तत्वों का अनुग्राहक है ।। ३ ।।

प्रथमं तारकं ब्रह्म द्वितीयं दण्डब्रह्मकम् ।
तृतीयं कुण्डलं ब्रह्म चतुर्थं ब्रह्मचन्द्रकम् ।। ४ ।।
पंचमं बिन्दुब्रह्माथ प्रणवे ब्रह्मपंचकम् ।
वेदगर्भसमुद्भूतं तदेव यन्निरंजनम् ।। ५ ।।

प्रथम तारकब्रह्म - द्वितीय दंडब्रह्म - तुतीय कुण्डलब्रह्म - चतुर्थ चंद्रब्रह्म - पंचम बिंदुब्रह्म ऐसे प्रणव में वेद प्रतिपाद्य वही निरंजन स्वरूप है ।। ४-५ ।।

तारकं च भवेद् ब्रह्मा दंडकं विष्णुरुच्यते ।
कुंडलं हि तथा रुद्रो अर्द्धचन्द्रः स ईश्वरः ।। ६ ।।
बिंदुः सदाशिवः साक्षात्प्रणवे पंचदेवताः ।
निरंजनस्तदातीत उत्पत्तिस्थितिकारणम् ।। ७ ।।

प्रणव में जो तारक है वही ब्रह्मा है दण्डक विष्णु है कुण्डल रुद्र है अर्धचंन्द्र ईश्वर है बिंदु सदाशिव है ये पंचदेवता प्रणव में योगी प्रत्यक्ष है तद्विलक्षण निरंजन उत्पत्तिस्थिति का कारण है ।। ६-७ ।।

ब्रह्मात्रिकूटस्थानस्थो अकाराक्षरसंज्ञितः ।
वाग्वैखरीह्यवस्थातु जागृतिः स्थूलदेहकम् ।। ८ ।।
ह्रस्वमात्रा हि ऋग्वेदो रजोगुणः प्रकीर्तितः ।
एतत्तारक विज्ञेयं रक्तपंकजमध्यगम् ।। ९ ।।

त्रिकूटस्थाननिवासी ब्रह्मा अकार अक्षर है, संज्ञा वाक् है, वैखरी अवस्था है, जाग्रत देह है, स्थूलह्रस्वमात्रा ऋग्वेद रजोगुण ये जो तारक है चक्षु में रक्तपंकज मध्य है ।। ८-९ ।।

विष्णुना श्रीहटस्थानमुकाराक्षरसंज्ञितम् ।
दीर्घमात्रामध्यमा च लिंगदेहस्तथैव च ।। १० ।।
स्वप्नावस्थायजुर्वेदो गुणः सत्वं प्रकीर्तितः ।
हेमद्दंडकविज्ञेयं श्वेतपंकज मध्यमम् ।। ११ ।।

विष्णु श्रीहटस्थान निवासी उकार अक्षर है संज्ञादीर्घमात्रा है मध्यमा वाक् है लिंग देह है स्वप्नावस्था है यजुर्वेद सत्व गुण है। ये जो चक्षु में श्वेत पंकज मध्य है ।। १०-११ ।।

रुद्रस्यस्थानं गोल्हाटं मकराक्षरसंज्ञितम् ।
प्लुतमात्रा हि बक्तव्या तमोगुणः प्रकीर्तितः ।। १२ ।।
कारणं देहकं प्रोक्तं पश्यंती वा तत्प्रतिष्ठिता ।
सुषुप्त्यवस्थयायुक्तः सामवेदः तथैवच ।। १३ ।।
एतत्कुंडलविज्ञेयं श्यामपंकजमध्यमम् ।
सोमेश्वरस्य स्थानस्य औठपीठेति निर्णितम् ।। १४ ।।

रुद्र गोल्हाट निवासी मकार अक्षर सज्ञा प्लुत मात्रा तमोगुण कारण देह पश्यंती वाक् सुषुप्ति अवस्था सामवेद ये कुंडल चक्षुके कालेपंकज में जाने सोमेश्वर औठपीठ निवासी पुण्यादि अर्धमात्रा ।। १२-१३-१४ ।।

पुण्यगिर्यर्द्धमात्रा च परावाचा सदैव हि ।
तुर्यावस्था तथा देहं महाकारणमुच्यते ।। १५ ।।
अथर्वणवेदसंयुक्तं दैवतं चेश्वरो महत् ।
अर्धचंद्रमिदं प्रोक्तं नीलं सुनीलपंकजम् ।।१६ ।।

परावाक्य तुरीयावस्था महाकारण देह अथर्वणवेद महानीश्वर देवता अर्धचन्द्र चक्षुगतनील सुनीलपंकज में ।। १५-१६ ।।

सदाशिवस्य स्थानस्य भ्रमरीगुंफकाभिधा ।
परात्परः सूक्ष्मवेदः कैवल्यं ज्ञानदेहकम् ।। १७ ।।
एतद्विंदुरिति प्रोक्तं पीतपंकजमध्यगम् ।

सदाशिव भ्रमरी गुफानिवासी परात्पर वाक् सूक्ष्मवेद अर्थात् अंतर्गत ध्वनि ज्ञानस्वरूप कैवल्य देह ये जो विंदु है चक्षुगत पंकज में जाने ।। १७ ।।

तारकं च भवेद्भूमिर्दण्डकं जलमुच्यते ।
कुंडलं च तथा तेजोह्यर्धचन्द्रं च मारुतम् ।। १८ ।।
बिंदुश्चैव तथाकाशः प्रणवः पंचभूतभृत् ।। १९ ।।

तारक भूमि कहलाते हे दण्डक जल कहलाते है कुंडल तेज कहलाते है अर्धचन्द्र वायु कहलाते है बिंदु आकाश कहलाते है और प्रणव में पांच भूत ।। १८-१९ ।।

उत्पत्तिस्थितिप्रसर्गित्वं सूर्यचन्द्रात्मतेजसा ।
तारकं च भवेत्पूर्वं दंडकं पश्चिमे तथा ।। २० ।।
कुंडलं दक्षिणभागे ह्यर्धचन्द्रं तथोत्तरम् ।
बिंदुरूर्ध्वदिशि प्रोक्तः प्रणवपंचवैदिशः ।। २१ ।।

तारक उत्पत्ति क्रिया दंड स्थिति, कुंडल प्रलय, अर्धचन्द्र सूर्य क्रिया, बिंदु चन्द्र क्रिया। तारक पूर्वादिक्, दण्डक पश्चिमादिक्, कुण्डल्यदक्षिणादिक, अर्धचन्द्र, उत्तरादिक्, बिंदु, ऊर्ध्व दिशा इस प्रकार प्रणव में पंच दिशा है ।। २०-२१ ।।

एवं देवं हि चात्मानं विज्ञाता सविचक्षणः ।
नैऋत्यं तारकाकारमीशान्यं दण्डकोच्यते ।। २२ ।।
कुण्डल्यमग्निदिक् चैव वायव्यमर्धचन्द्रकम् ।
बिंदुश्चोर्ध्वदिशा प्रोक्ता प्रणवे पंच वै दिशः ।। २३ ।।

इस प्रकार का जो देव है उसको जानने वाले योगी विचक्षण कहलाते है नैऋत्य तारक कहलाते हैं ईशान दण्डक कहलाते हैं कुण्डल्य अग्निदिक् कहलाते हैं अर्धचन्द्र वायव्य कहलाते हैं बिंदु ऊर्ध्व दिशा कहलाते हैं इस प्रकार प्रणव में पांचो दिशाएँ है ।। २२-२३ ।।

सर्वाकारमिहोच्येत सर्वगं सर्वतोमुखम् ।
तारकं सद्योजाताय वामदेवायदण्डकम् ।। २४ ।।
कुण्डल्यं तत्पुरुषाय ईशानोह्यर्धचन्द्रकम् ।
अघोरेभ्यो बिंदुरिति प्रणवे मुखपंचकम् ।। २५ ।।

सर्वाकार सर्वव्यापी अनंतमुख प्रणव कहलाते है तारक सद्योजात मुख कहलाते है। दंडक वामदेवमुख कहलाते हैं, कुण्डल तत्पुरुषमुख कहलाते है, अर्धचन्द्र ईशानमुख कहलाते हैं बिंदु अघोरमुख कहलाते हैं इस प्रकार प्रणव के पांच मुख है ।। २४-२५ ।।

विश्वावस्थां समाहृत्यं विश्वभोगपरायणः ।
तारकं चैव ऋग्वेदो यजुर्वेदो हि दण्डकम् ।। २६ ।।
कुण्डल्यं सामवेदोयमर्धचन्द्रोह्यथर्वणः ।
बिंदुश्चसूक्ष्मवेदोयप्रणवोवेद बीजकम् ।। २७ ।।

अखिलजगत को व्याप्त करके अखिलजगत को भोगता है तारक ऋग्वेद कहलाता है, दंडक यजुर्वेद कहलाता है, कुण्डल्य सामवेद कहलाता है, अर्धचन्द्र अथर्ववेद कहलाता है, बिंदु अंतर्ध्वनिरूप सूक्ष्मवेद कहलाता है, प्रणव वेदों का बीज है ।। २६-२७ ।।

क्षरं च अक्षरो देवःकूटस्थात्मा च क्षेत्रवित् ।
अधःशून्यंतारकं च ऊर्ध्वशून्यं च दण्डकम् ।। २८ ।।

क्षरदेहादि अक्षरदेहाभिमानी जीवक्षेत्रवित् जो साक्षी वही कूटस्थ आत्मा कहलाते है।

कुण्डल्यं मध्यशून्यं च सर्वशून्यार्धचन्द्रकम् ।
बिंदुश्चैवमहाशून्यं प्रणवो विश्वतोमुखः ।। २९ ।।

हराकाश का जो अधश्छिद्र है वह तारक कहलाता है, ऊर्ध्वछिद्र दंडक कहलाता है, मध्यछिद्र कुण्डल कहलाता है, सर्वशून्य अर्धचंद्र कहलाता है, महाशून्य अर्थात् हृदयाकाश बिन्दु कहलाते है इस प्रकार प्रणव सर्वतोमुख है ।। २८-२६ ।।

शून्यातीतःपरात्परो ह्यक्षरं ब्रह्म उच्यते ।
प्रणवःपररूपोयं कारणंब्रह्मधारणम् ।। ३० ।।

शून्यातीत जो है परात्पर जो वाक् है वही अक्षरब्रह्म कहलाता है प्रणव पररूप है जगत्कारण जो ब्रह्म उसका वाचक है ।। ३० ।।

एवं ब्रह्मात्मसंकाशं वर्धयंज्जगदुद्भवम् ।

इस प्रकार ब्रह्म से जगत की उत्पत्ति होती है ।

प्रथमं तारकं ब्रह्म द्वितीयं दण्डरूपकम् ।। ३१ ।।
तृतीयं कुण्डलाकारं चतुर्थ अर्धचन्द्रकम् ।
पंचमं बिंदुसंकाशं प्रणवः शून्यरूपकः ।। ३२ ।।

प्रथम तारक ब्रह्म, द्वितीय दंडकरूप ब्रह्म, तृतीय कुण्डलाकार ब्रह्म, चतुर्थ अर्धचंद्र ब्रह्म, पंचम बिंदुतुल्य ब्रह्म इस प्रकार प्रणव शून्यरूप है ।। ३१-३२ ।।

अव्ययं चाद्भुतं ब्रह्म सहजाव्यक्तरूपकम् ।

अव्यय जिसका विनाश नहीं है अद्भुत महाआश्चर्य जो ब्रह्म सो स्वाभाविक हैं अव्यक्त रूप जिसका ऐसा हैं ।

अव्यक्तोद्भवमाकाशमाकाशान्मारुतस्तथा ।। ३३ ।।
मारुताज्जायते तेजोतेजसाऽऽपस्तथैव च ।
अद्भ्यश्च जायते पृथ्वी पृथ्व्या विश्वं च जायते ।। ३४ ।।
विश्वगं ब्रह्म ज्ञातव्यं क्षराक्षरमनामयम् ।
एवं ब्रह्म जगद् व्याप्तं न ज्ञातं पशुमानवैः ।। ३५ ।।
सुज्ञातं सर्वमाचार्यैः सबाह्याभ्यंतरोदितम् ।
दृश्येनाशेपरंब्रह्मचाखंडमव्ययं स्थितम् ।। ३६ ।।

अव्यक्त से आकाश, आकाश से वायु, वायु से तेज, तेज से जल, जल से पृथ्वी, पृथ्वी से चतुर्दशभुवन उत्पन्न होता है । विश्वव्यापक जो ब्रह्म है सो क्षर, अक्षर से परे और अनामय है ऐसे जगद् व्यापक ब्रह्म को पशुसमान पुरुष नहीं जानते है और जो गुरुभक्त है सो बाह्याभ्यंतर व्यापकब्रह्म को जानते है और दृश्य नाश में नाशका अवधिभूत अखंड अविनाशी ब्रह्म स्थित रहता है ।। ३३-३४-३५-३६ ।।

एवं ते दीक्षिता लोकाः सर्वसंदेहवर्जिताः ।
दीक्षया ब्रह्मरूपाश्च तत्वज्ञास्तेव्यवस्थिताः ।। ३७ ।।

ऐसा उपदेश प्राप्त जो मनुष्य सर्वसंदेहवर्जित उपदेश से ब्रह्मस्वरूप हो के तत्वज्ञानी कहाते है ।। ३७ ।।

पार्वत्युवाचः - कथं मात्राः कथं देवः कथं वर्णा वद प्रभो ।
पृथक्पृथङ् मातृकायां के के वर्णाःप्रतिष्ठिताः ।। ३८ ।।

ब्रह्मविद्यास्वरूपिणी पार्वती ईश्वर जो महादेव जी हैं उनसे पूछती हैं कि महाराज अकारादि मात्रा में कौन-कौन वर्ण प्रतिष्ठित हैं ।। ३८ ।।

ईश्वरोवाचः - तारकं मूल भूतस्य अकाराख्या च मातृका ।
ब्रह्माणं दैवतं ज्ञात्वा रक्तवर्णं विराजितं ।। ३९ ।।

महादेवजी पार्वती से कहते है तारक जो मूलभूत है उसकी अकाराख्य मातृका ब्रह्म देवता है रक्तवर्ण है ।। ३९ ।।

पृथग्वर्णं तथा देवि रक्तपीतंसुशोभितम् ।
त्रयं सार्द्धं स्वहस्तानां प्रमाणं देहलक्षणम् ।। ४० ।।

हे देवि ! पृथग्वर्ण रक्तपीत शोभायमान और अपने हाथ से साढ़े तीन हाथ प्रमाण देह है ।। ४० ।।

द्वितीयं दंडकं ज्ञेयं उकाराख्या च मातृका ।
विष्णुर्दैवं तमाख्यातं श्वेतवर्णं विराजितम् ।। ४१ ।।
पृथग्वर्णन्तथा देवी श्वेतकर्बुरराजितम् ।
अंगुष्ठपर्वहस्तं च प्रमाणं देहलक्षणम् ।। ४२ ।।

द्वितीय जो दंडक है उकार मातृका है विष्णुदेवता है श्वेतवर्ण है देवी ! पृथग्वर्ण श्वेतचित्र है अंगुष्ठ परिमाण देह है ।। ४१-४२ ।।

तृतीयं चैव कुण्डल्यं मकाराख्या च मातृका ।
रुद्रो दैवतमाख्यातं श्यामवर्णविराजितम् ।। ४३ ।।
पृथग्वर्णपञ्चकञ्चरजत्येषांच भौतिकम् ।
तेवर्णाःश्यामगर्भस्था ज्ञातव्याश्च मनीषिभिः ।। ४४ ।।
पर्वार्द्धञ्चेस्वहस्तश्च प्रमाणं देहलक्षणम् ।

तृतीय कुण्डल मकार मातृका है रुद्रदेवता है श्यामवर्ण विराजित है पृथग्वर्ण भौतिक पांच प्रकार का है वह वर्णश्याम वर्ण के मध्य में है बुद्धिमानों के जानने योग्य है स्वहस्त के अर्द्धअंगुष्ठ परिमाण देह है ।। ४३-४४ ।।

चतुर्थमर्द्धचंद्रं च ईकाराख्या च मातृका ।
ईश्वरं दैवतं ज्ञात्वा नीलवर्णविराजितम् ।। ४५ ।।
पृथग्वर्णत्रयं चैव नीलं सुनीलकं तथा ।
पीतं तृतीयोवर्णस्तु शुद्धश्वेतश्चतुर्थकः ।। ४६ ।।
नीलगर्भस्य मध्यस्थं वर्णत्रयमुदाहृतम् ।
मसूरमात्रप्रमाणं शोभितं देहलक्षणम् ।। ४७ ।।

चतुर्थ अर्द्धचंन्द्र है इकारमातृका है ईश्वरदेवता है नीलवर्ण विराजित है पृथक वर्ण तीन है नील, सुनील, पीत-तीसरा है शुद्धश्वेत चौथा है नीलगर्भ के मध्य में तीनवर्ण कहा है मसूरमात्र परिमाण शोभायमान देह है ।। ४५-४६-४७ ।।

पंचमं बिंदुसंकाशं एकाराख्या च मातृका ।
देवः सदाशिवो ज्ञेयःपीतवर्णो ह्यनुक्रमात् ।। ४८ ।।
पृथगवर्णस्तु नैवात्र शुद्धस्फटिकदीपवत् ।
प्रमाणं नभवत्येव कैवल्ये ज्ञानदेहके ।। ४६ ।।
इदं सर्वशिरःपीत शिखं केवल राजितम् ।
पीतःशिखाबिंदुरत्र ब्रह्मसायुज्यकारकः ।। ५० ।।
बिंदुगर्भस्थमध्यस्थं शुद्धश्वेतं सुलक्षणम् ।। ५१ ।।
सोऽहं मात्रा मुख्यबीजं सर्वान्तर्गर्भचारि यत् ।। ५२ ।।

पंचमबिंदुतुल्य हैं, उस बिंदु की एकार मातृका है, सदाशिव देव हैं, क्रम से पीत वर्ण है, पृथग्वर्ण इसमें नहीं है, शुद्धस्फटिक दीप के तुल्य कैवल्यज्ञानदेह में कोई परिमाण नहीं है अवसान में पीतवर्ण है ब्रह्म का सायुज्य देनेवाला है बिंदु के मध्य में शुद्धश्वेत वर्ण है सोऽहंमात्रा मुख्य बीज है सब चक्रों में है संचार जिसका ।। ४८-४६'५०-५१-५२ ।।

सोऽहंबीजस्य मध्यस्थः श्रीरामःपरमो महान् ।
सोऽहं राम इदं ज्ञात्वा अतऊर्ध्वं न किंचन ।। ५३ ।।

हकार सकार की जो संधि है वह परमोत्कृष्ट श्रीराम कहलाते है जिसको जानकर और जानना कुछ अवशिष्ट नहीं रहता है ।। ५३ ।।

पार्वत्युवाचः - सोऽहं तारकब्रह्मैव राममंत्र वद प्रभो ।
एतच्छ्रवणमात्रेण कृतकृत्योऽस्मिसर्वदा ।। ५४ ।।

पार्वती महादेवजी से पूछती है कि हे महाराज ! सोऽहंतारक ब्रह्म जो राममंत्र है उसे कहिये जिसके श्रवणमात्र से मै सर्वदा कृतकृत्या हूँ ।। ५४ ।।

ईश्वर उवाचः – न देयं यस्य कस्यापि प्राणाः कंठगता यदि ।
देयं सद्भक्तियुक्ताय शांताय समचेतसे ।। ५५ ।।
गुरुभक्तिपरो नित्यं विरक्तायः समाहितः ।
भक्तिर्ज्ञानं विरक्तिश्च हृदि तिष्ठेत्सनातनी ।। ५६ ।।
तस्मै देयं च देवेशि अन्यथा न प्रकाशयेत् ।
प्रकाशितं च दुष्टेऽपि निष्फलं जायते ध्रुवम् ।। ५७

महादेव जी कहते है यह जो राममंत्र हैं सो देय नहीं है किसी को भी कंठगत प्राण होने पर भी सद्भक्तियुक्त शांत समचित गुरुभक्तियुक्त विरक्त नित्य समाहित चित्त जो होता है और जिसके हृदय में भक्ति-ज्ञान-वैराग्य सदा रहता है, उसको देय है । हे देवेशि ! ऐसा जो न हो उसे न दे दुष्ट के प्रति प्रकाशित भी हो तो निष्फल होता है ।। ५५-५६-५७ ।।

अथ मंत्रं प्रवक्ष्यामि मोक्षदं सर्वदेहिनाम् ।
ऊँ हंसः सोऽहं तथा देवी इत्यादौ पाठयेत्सुधीः ।। ५८ ।।
पश्चाच्छ्रीरामरामाय नमश्चैवाभिनिश्चितम् ।
एवं च तारकं ब्रह्म राममंत्रमिति स्मृतम् ।। ५९ ।।

अब सब जीवों को मोक्षदेने वाला तारक मंत्र पार्वती जी से महादेव जी कहते है ऊँ हंसः सोऽहं श्रीरामरामायनमः यही तारक राम मंत्र कहलाता है । हे देवी –

अथ मंत्राधिकारस्तु सर्वस्यात्र न संशयः ।
ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्य शूद्रोबाह्यंत्यजोपि वा ।। ६० ।।

ब्राह्मण – क्षत्रिय – वैश्य – शूद्र – अंत्यज सबका अधिकार इस मंत्र में है इसमें संशय नहीं है ।। ६० ।।

षड्दर्शनादिमार्गेषु ब्रह्मदर्शि तथैव च ।
वर्णेषु वर्णहीनेषु चांडालादिषु निश्चितम् ।। ६१ ।।
यस्यदेहे वसेच्छ्राद्धा तस्य देहं शुभानने ।
मन्त्रो देयः प्रथमतः क्षेत्रशुद्ध्यै सुनिश्चिमत् ।। ६२ ।।

(श्रीमद्भागवत तृतीयस्कंधान्तर्गतकपिलगीता)

षड्दर्शनादिमार्गी हो ब्रह्मदर्शी हो वर्णी हो या वर्णहीन हो चांडालादि जिसके शरीर में श्रद्धा हो उसे देते है हें शुभानने ! प्रथमतः जिसका अंतःकरण शुद्ध हो उसको मंत्र सुनिश्चित करके देता हूँ ।। ६१-६२ ।।

इस सम्बन्ध में रामोत्तरतापिन्युपनिषद् का भी एक मत है अतः उसका भी अवलोकन करना चाहिये ।

चौरासीकोशी महापंचक्रोशी यात्रा विधि

यह चौरासीकोशी महायात्रा १६८ मील की है जिसे सविधि १५ दिन में किया जाता है काशी की पंचक्रोशी यात्रा ५० मील दोनों की परधी २१८ मील की हुई जिसे आराम से सविधि २१ दिन में यात्रि करते है।

यात्रा में सवारी का नीयम :

राजा, बालक, वृद्ध, असमर्थ ये सवारी से भी यात्रा कर सकते है ये दोष से परे है।

यात्रा में पूजन की सामग्री :

मार्ग स्थित देवि देवताओं के उपर चढ़ाने के लिए गंगाजल, रोली, चन्दन, माला-पुष्प, बिल्वपत्र, धूप-दीप, नैवेद्य, पान-सुपारी, दक्षिणा पश्चात् कपूर की आरती।

यात्रा में भोजन का विचार :

मूंग की दाल या अरहर की चावल, गेंहूँ के आटे की रोटी, आलू के अलावा फलाहार भी ले सकते है।

यात्रारम्भकम् :

प्रथम दिन गंगास्नान कर विश्वनाथ, अन्नपूर्णा, ढुण्ढिराज, दण्डपाणि, मोदविनायक, प्रमोदविनायक, सुर्मुखविनायक, दुर्मुखविनायक, गणनाथविनायको की पुजन पश्चात ्ज्ञानवापी कूप, वही नन्दीकेश्वर, तारकेश्वर, महाकालेश्वर, महेश्वस्मोक्षेश्वर, विरभद्रेश्वर, गंगेश्वर का दर्शन कर कालभैरव की पूजा करें फिर ज्ञानवापी स्थित व्यासासन से यात्रा का संकल्प लेकर मौनधारण के साथ मणिकर्णिका जाकर गंगाजी के जल से आचमन करें, मौन विसरजन के पश्चात् यात्रारम्भ करना चाहिये।

१-	मणिकर्णिकायै नमः	मणिकर्णिका देवी की पूजा करे, सिंधियाघाट के ऊपर, म०नं० सी.के. ७/१३० में।
२-	मणिकर्णिकेश्वराय नमः	गोमठ अभयसन्यासाश्रम म०नं० सी.के. ८/१२ में।
३-	सिद्धविनायकाय नमः	मणिकर्णिकाकुण्ड के बगल वाली गली में मार्ग पर, म०नं० सी.के. ८/१ में।
४-	गंगाकेशवाय नमः	ललिताघाट के ऊपर म०नं० सी.के. १/६८ में।
५-	ललितादेव्यै नमः	ललिताघाट मढ़ी में, म०नं० डी. १/६७ में।
६-	जरासंधेश्वराय नमः	लुप्त, स्थान की पूजाकर ऊपर त्रिपुराभैरवी घाट डी. ५/१० में प्रचलित मूर्ति की पूजा करे।
७-	सोमेश्वराय नमः	मानमंदिर घाट के ऊपर, म०नं० डी. १६/३४ में।

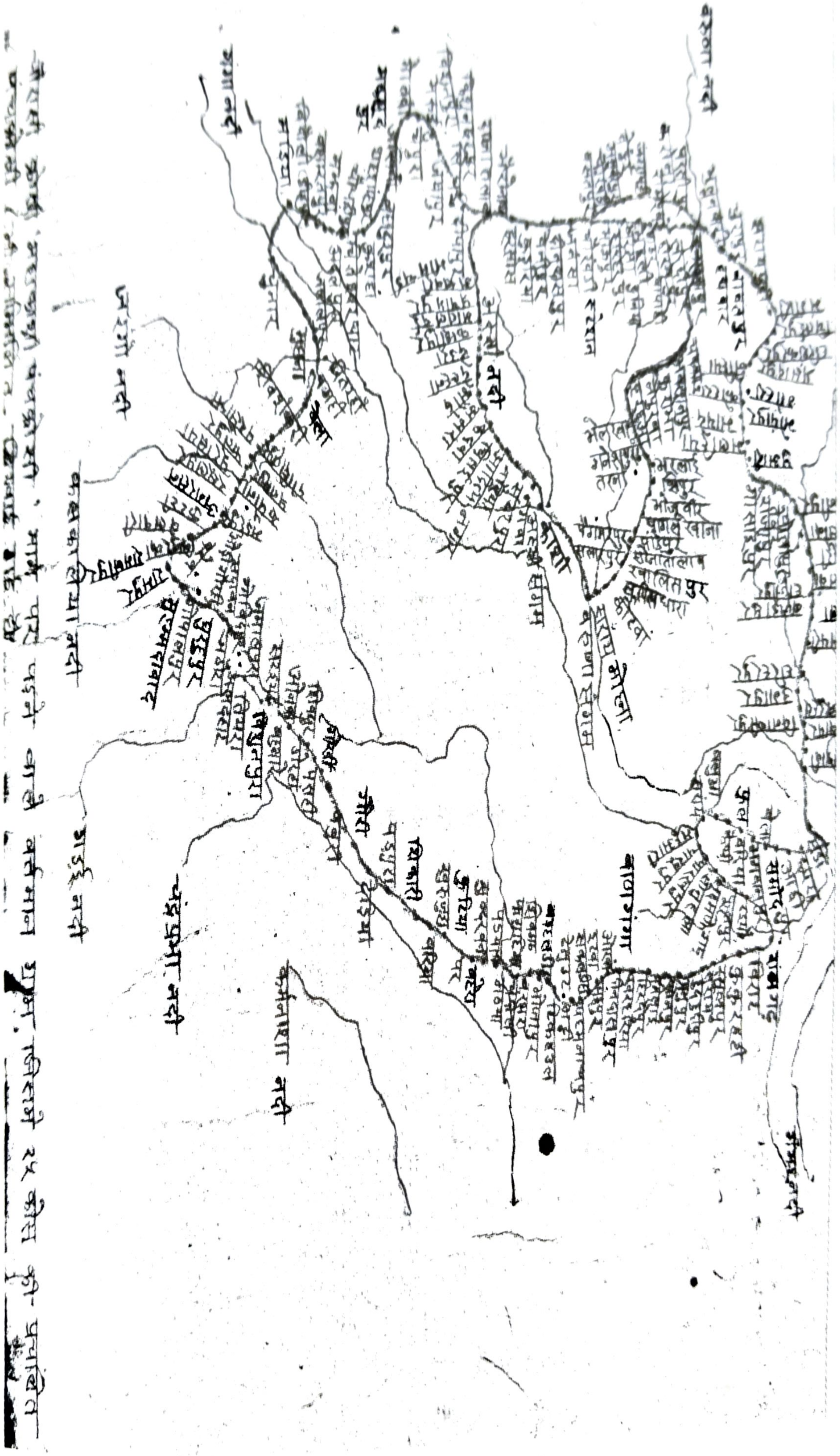

चौरासी कोस यात्रा में पड़ने वाले देवता व उनका स्थान

८- दालभेश्वराय नमः मानमंदिरघाट के ऊपर, म०नं० डी. १६/३२ में।

९- शूलटंकेश्वराय नमः प्रयागघाट के ऊपर बड़ा लिंग।

१०- वाराहेश्वराय नमः प्रयागघाट के ऊपर राममंदिर, म०नं० डी. १७/१११ में।

११- दशाश्वमेधेश्वराय नमः दशाश्वमेध शीतला मंदिर में, म०नं० डी. १८/१६ में।

१२- बंदिदेव्यै नमः दशाश्वमेध घाट के ऊपर, विश्वनाथपंडा का घर, म०नं० डी. १७/१०० में।

१३- सर्वेश्वराय नमः पाण्डेघाट के ऊपर, म०नं० डी. २५/३२ में।

१४- केदारेश्वराय नमः केदारघाट के ऊपर प्रसिद्ध, म०नं० बी. ६/१०२ में।

१५- हनुमदिश्वराय नमः हनुमानघाट के ऊपर।

१६- लोलार्काय नमः पूरानी मूर्ति गुप्त, भदैनी दूसरी कुण्ड के ऊपर।

१७- अर्कविनायकाय नमः भदैनी जलसंस्थान के बगल में, म०नं० बी. २/१७ के सामने गंगातट की ओर।

१८- संगमेश्वराय नमः असीघाट के ऊपर हरिहर आश्रम के बाहर।

१९- दुर्गाकुण्डाय नमः प्रसिद्ध कुण्ड।

२०- दुर्गविनायकाय नमः कुण्ड के ऊपर पश्चिम कोनेपर, म०नं० बी. २७/१ में।

२१- दुर्गादिव्यै नमः कुण्ड के ऊपर प्रसिद्ध, म०नं० बी. २७/२ में। यहां लड्डू, चुनरी, नारियल से पूजा करे। क्षेत्र की प्रधान देवी है।

२२- विश्वकसेनेश्वराय नमः विश्वविद्यालय से आगे करमेतापुर गाँव में।

२३- कर्दमतीर्थाय नमः कंदवा गांव में।

२४- कर्दमेश्वराय नमः कंदवा गांव में प्रसिद्ध।

२५- कर्दमकूपाय नमः कंदवा गांव में।

२६- सोमनाथाय नमः अमरा गांव में।

२७- विरुपाक्षाय नमः अमरा गांव में।

२८- नीलकंठेश्वराय नमः अमरा गांव में।

२९- नागनाथाय नमः अमरा गांव में।

३०- चामुण्डाय नमः अवड़े गांव में।

३१- मोक्षेश्वराय नमः अवड़े गांव में।

३२- करुणेश्वराय नमः देल्हना गांव में।

३३- वीरभद्रेश्वराय नमः देल्हना गांव में।

३४-	वीकटाक्ष दुर्गाय नमः	देल्हना गांव में।
३५-	उन्मत्तभैरवाय नमः	देउरा गांव में।
३६-	नीलगणाय नमः	देउरा गांव में।
३७-	कालकूट गणाय नमः	देउरा गांव में।
३८-	विमल दुर्गाय नमः	देउरा गांव में।
३९-	महादेवेश्वराय नमः	देउरा गांव में।
४०-	नन्दीकेश्वराय नमः	देउरा गांव में।
४१-	भृंगीरीटगणाय नमः	देउरा गांव में।
४२-	गणप्रियाय नमः	गौरा गांव में।
४३-	विरुपाक्षाय नमः	मातलदेमी चक में।
४४-	यक्षेश्वराय नमः	मातलदेमी चक में।
४५-	विमलेश्वराय नमः	प्रयागपुर गांव में
४६-	मोक्षदेश्वराय नमः	असवारी गांव में।
४७-	ज्ञानदेश्वराय नमः	असवारी गांव में।
४८-	अमृतेश्वराय नमः	असवारी गांव में।
४९-	गंधर्वसागरतीर्थाय नमः	भीमचण्डी गांव में।
५०-	रविरक्ताक्षगन्धर्वाय नमः	जखनी तालुका में।
५१-	नरकार्णवतारणाय नमः	जखनी तालुका में।
५२-	भीमचण्ड विनायकाय नमः	भीमचण्डी गांव में।
५३-	भीमचण्डी देव्यै नमः	भीमचण्डी गांव में।
५४-	एकपादगणाय नमः	कचनार गांव में।
५५-	महाभीमाय नमः	हरिपुर गांव, हरि का तालाब।
५६-	भैरवीयाय नमः	हरसोत गांव में।
५७-	भूतनाथाय नमः	दीनदासपुर गांव में।
५८-	सोमनाथाय नमः	लंगोटिया हनुमान के पहले पोखरे पर।
५९-	सिन्धुसागर तीर्थाय नमः	सिन्धु सागर का पोखरा।
६०-	लंगोटिया हनुमानाय नमः	सिन्धु सागर के तट पर।
६१-	कालनाथाय नमः	जनसा गांव में।
६२-	कपर्दीश्वराय नमः	जनसा गांव में।

६३-	कामेश्वराय नमः	चौखण्डी गांव में।
६४-	गणेश्वराय नमः	चौखण्डी गांव में।
६५-	वीरभद्रगणाय नमः	चौखण्डी गांव में।
६६-	चारमुखगणाय नमः	चौखण्डी गांव में।
६७-	गणनाथेश्वराय नमः	भटौली गांव में।
६८-	देहली विनायकाय नमः	प्रसिद्ध, इनकी पंचोपचार पूजा कर लड्डू, धान का लावा, ऊख, सत्तू, चूड़ा चढ़ाये।
६९-	षोड़स विनायकाय नमः	देहली विनायक के पीछे दिवाल में।
७०-	उद्दड विनायकाय नमः	भुइली गांव में।
७१-	उत्कलेश्वराय नमः	हीरमपुर गांव में।
७२-	रूद्राणीदेव्यै नमः	आगे मार्ग में।
७३-	तपोभूर्मायै नमः	यह रूद्राणी की तपोभूमि है।
७४-	वरुणा तीर्था नमः	करौना गांव में।
७५-	रामेश्वराय नमः	करौना गांव में।
७६-	सोमेश्वराय नमः	करौना गांव में।
७७-	भरतेश्वराय नमः	करौना गांव में।
७८-	लक्ष्मणेश्वराय नमः	करौना गांव में।
७९-	शत्रुघ्नेश्वराय नमः	करौना गांव में।
८०-	घावाभूमिश्वराय नमः	करौना गांव में।
८१-	नहुषेश्वराय नमः	करौना गांव में।
८२-	असंख्यातलिंगेभ्यो नमः	भूइली गांव वरणातट, प्रसिद्ध।
८३-	भैरवजीभवरामहादेवाय नमः	नेहियापुर में।
८४-	शिवाय नमः	तेवर में।
८५-	शिवेश्वराय नमः	भवानीपुर में।
८६-	नारायणाय नमः	धरहरा में।
८७-	मारकण्डेश्वराय नमः	कैथी गांव में।
८८-	टाडेश्वराय नमः	टांडा में।
८९-	जलेश्वराय नमः	टांडा में।
९०-	वाल्मिकेश्वराय नमः	बलुआघाट पर।
९१-	गौरीशंकराय नमः	वीराट में।

९२- कालेश्वराय नमः	भट्टी में।
९३- जामेश्वराय नमः	भट्टी में।
९४- शिवाकाल्यै नमः	चन्दौली में।
९५- दैत्यराजाय नमः	सुन्दरवन में।
९६- चामुन्डाय नमः	सुन्दरवन में।
९७- शिवेश्वराय नमः	बबुरी में।
९८- जागेश्वराय नमः	हेतिमपुर में।
९९- रामसागरतीर्थाय नमः	शेरवाँ में।
१००- शंकराय नमः	कोलना में।
१०१- लाटेश्वराय नमः	शिकारपुर में।
१०२- शिवशंकरीदेव्यै नमः	कैलहट में।
१०३- गंगेश्वराय नमः	चुनार में।
१०४- चितेश्वराय नमः	जखनी में।
१०५- दक्षिणादेव्यै नमः	जखनी में।
१०६- दुर्गादेव्यै नमः	मरूई, यहां से पुनः भीमचण्डी वाले रास्ते होकर रामेश्वर वाले मार्ग होय।
१०७- देवसंघेश्वराय नमः	करीमा गांव में।
१०८- पाचोपाण्डवेश्वराय नमः	शिवपुर बाजार में।
१०९- पृथ्वीश्वराय नमः	खजुरी गांव, सुधाकरमार्ग।
११०- स्वर्गभूम्यै नमः	सारंगतालाब।
१११- यूपसरोवरतीर्थाय नमः	सोनातालाब दीनदयालपुर।
११२- वृषभध्वजेश्वराय नमः	कपिलधारा प्रसिद्ध।
११३- वृषभध्वजतीर्थाय नमः	कपिलधारा प्रसिद्ध।
११४- ज्वालानृसिंहाय नमः	कोटवां गांव में।
११५- यक्षविनायकाय नमः	वरुणा पर।
११६- वरुणासंगमाय नमः	वरुणा पर।
११७- आदिकेशवाय नमः	राजघाटकिला के अन्दर घाट पर, म०नं० ए.३७/५१ में।
११८- संगमेश्वराय नमः	राजघाटकिला के अन्दर घाट पर, म०नं०ए.३७/५१ में।
११९- खर्वविनायकाय नमः	राजघाट मार्ग पर जहां से जौ चढ़ाना आरम्भ करें।
१२०- प्रह्लादेश्वराय नमः	प्रह्लादघाट, म०नं० ए. १०/८० में।

१२१- त्रिलोचनेश्वराय नमः	त्रिलोचन घाट के ऊपर म०नं० ए. २/८० में।
१२२- पंचगंगायै नमः	पंचगंगा घाट पर तीर्थ की पूजा।
१२३- बिन्दूमाधवाय नमः	पंचगंगा घाट के ऊपर म०नं० के. २२/३७ में।
१२४- गभस्तीश्वराय नमः	पंचगंगा घाट मंगलागौरी म०नं० के. २४/३४ में।
१२५- मंगलागौर्यै नमः	पंचगंगा घाट म०नं० के २४/३४ में।
१२६- वशिष्ठेश्वराय नमः	संकटाघाट के ऊपर म०नं० के. ७/१६१ में।
१२७- वामदेवाय नमः	संकटाघाट के ऊपर इसी मंदिर में।
१२८- पर्वतेश्वराय नमः	सिंधियाघाट के ऊपर म०नं० के. ७/१५६ में।
१२९- महेश्वराय नमः	मणिकर्णिका घाट पर चरण पादुका के नीचे।
१३०- सिद्धविनायकाय नमः	मणिकर्णिका कुण्ड के बगल वाली गली के मार्ग पर बायें।
१३१- मणिकर्णिकायै नमः	गंगा की पूजा।
१३२- सप्तावर्णविनायकाय नमः	जौविनायक के नाम से प्रसिद्ध म०नं० सी.के. ३६/३६ में यहाँ से जौ छोड़कर मणिकर्णिका में स्नान करें।
१३३- श्री काशीविश्वेश्वराय नमः	प्रसिद्ध, म०नं० सी.के. ३५/१९ में।
१३४- श्री विष्णवे नमः	विश्वेश्वर मंदिर में, दण्डपाणी के अन्दर वैकुण्ठेश्वर के दक्षिण।
१३५- श्री अन्नपूर्णायै नमः	प्रसिद्ध, म०नं० डी. ९/१ में।
१३६- श्री ढुंढिराजाय नमः	अन्नपूर्णा मार्ग पर, प्रसिद्ध।
१३७- श्री दण्डपाणीभैरवाय नमः	विश्वनाथ गलि म०नं० सी.के. ३६/१० में।
१३८- मोदविनायकाय नमः	काशीकरवट म०नं० सी.के. ३१/१२ में।
१३९- प्रमोदविनायकाय नमः	वहीं बगल में म०नं० सी.के. ३१/१९ में।
१४०- सुमुखविनायकाय नमः	वहीं मार्ग में म०नं० सी.के. ३४/६० में।
१४१- दुर्मुखविनायकाय नमः	वहीं थोड़ा आगे पतली गली में म०नं० सी.के. ३५/७ में।
१४२- गणनाथविनायकाय नमः	ज्ञानवापी मस्जिद के पीछे बाजार म०नं० सी.के. ३७/१ में।
१४३- ज्ञानवाप्यै नमः	कूप प्रसिद्ध।
१४४- नन्दिकेश्वराय नमः	ज्ञानवापी कूप से पूर्व बड़ा नन्दि।
१४५- तारकेश्वराय नमः	नन्दिकेश्वर के बगल गौरी शंकर के नीचे मढ़ी में शिला।
१४६- महाकालेश्वराय नमः	ज्ञानवापी कूप से पूर्व दक्षिण कोण पर।
१४७- महेश्वराय नमः	ज्ञानवापी कूप से पश्चिम पीपल के नीचे।

१४८-	मोक्षेश्वराय नमः	मस्जिद के पीछे स्थान की पूजा।
१४९-	वीरभद्रेश्वराय नमः	मस्जिद के पीछे उत्तर कोण पर स्थान की पूजा।
१५०-	अविमुक्तेश्वराय नमः	मस्जिद के उत्तर चौतरे पर स्थान की पूजा, दूसरे धर्मशाला में म०नं० सी.के. ३०/१ में।
१५१-	गंगेश्वराय नमः	मस्जिद के पूर्व पीपल के नीचे स्थान की पूजा।
१५२-	कालभैरवाय नमः	कालभेरव मुहाल म०नं० के. ३२/२२ में।

महापंचक्रोशी यात्रा से लौट कर मुक्ति मंडप में व्यासासन के संमुख बैठ कर आचार्य से समस्त यात्रान्तरगत सभी देवताओं के नाम से पूजन करे जो छूटे हो सभी का आवाहन में आजाये और संकल्प पूर्ण करे -

इतिनत्वा यथा शक्तिदत्वा दानं द्विजन्मनाम् ।।७२।।

अपने शक्ति के अनुसार आचार्य को विविध वस्तुओ का दान कर आशीर्वाद लें। मार्गकृत दोषों के सान्त्यर्थ घर जाकर हवन, ब्राह्मण भोजन कराकर सकुटुम्ब स्वयम भोजन करें।

इस क्रम से चौरासीक्रोसी त्रेलोक्यपावनी महापंचक्रोशी यात्रा करने वाला प्राणी निष्पाप होकर अथवा पुण्यवान होकर लक्ष चौरासी योनी से मुक्त होकर शिवसायुज्य अथवा सामीप्य पाकर शिवरूप होकर शिवतत्व में लीन हो जाता है।

प्रदक्षिणत्रयकृत्वा पापजंमशतार्जितम् ।
विलयं याति चैवाऽत्रन कार्या वै विचारणा ।।७२।।
यावज्जीवम्वसेत्काश्यां प्रत्यब्दं सुप्रदक्षिणम् ।
जीवन्मुत्तास्तुते क्षेयानिष्पाः काशिवासिनः ।।७३।।

(का. रहस्ये अ. ८)

आद्य महर्षि व्यास

लोलार्कदिग्दक्षिणे कोणे व्यासो नारायणः स्वयम् ।
स्थितो ह्यद्यापि पश्येत काशीप्रासादराजिकाम् ।। (स्क०पु०)

लोलार्क से दक्षिण दिशा के कोने सामने स्थित होकर नारायण के अवतार स्वयं वेदव्यास भगवान् आज भी काशी के प्रासाद पंक्ति को निहारते रहते हैं। शिव के शापद्वारा वेदव्यास को जब काशी छोड़नी पड़ी तब व्यासजी ने निश्चय किया कि गंगा के उसपार व्यास-काशी बसाऊँगा। तब शिव को चिन्ता हुई कि व्यासजी की काशी के सामने हमारी काशी का महत्व कम हो जायगा। तब उन्होने गणेश को बुलाकर समझाया और कहा व्यासजी को अपनी कुशाग्र बुद्धि के द्वारा जाकर ऐसा न करने के लिए समझाओं। गणेशजी ने ऐसा ही किया। तत्पश्चात् व्यासजी ने कहा कि काशी में मेरे अंशभूत व्यास होंगे। व्यासजी के द्वारा स्थापित व्यासपीठ मुक्तिमंडप में स्थित है। व्यास अंश से उत्पन्न वंशपरम्परानुगत समस्त काशी यात्राचार्य पराशर गोत्रीय हमारे पूर्वज ही होते चले आ रहे हैं। अपान्तरतमा नामक वेदाचार्य का विष्णु के नियोग से व्यास होना पुराणान्तर में पाया जाता है यथा अपान्तरतमा नाम वेदाचार्य्यः पुराणर्षिर्विष्णु नियोगात्कलिद्वापरयोः सन्धौ कृष्णद्वैपायनः सम्बभूवेति स्मरन्ति। शो.भा.। इससे यह अनुमित होता है कि अपान्तरतमा वेदाचार्य विष्णु के नियोग से कृष्णद्वैपायन रूप में पहिले से वर्तमान थे, और नियोग रूप से विष्णु का आवेश भी उनमें था। भगवती का शापानुग्रह यह हुआ कि उसी आवेशावतार में क्षेम कवि से उनका अपमान होकर शापचरितार्थ हो जाय, दूसरा शरीर व्यास होने के लिए न धारण करना पड़े। २८ चतुर्युगी के २८ व्यास हुए है। वर्तमान में वैवस्वत मन्वन्तर के २८ वें चतुर्युगी के कृष्णद्वैपायन व्यास हुए है।

वर्तमान में श्वेतवाराह कल्प चल रहा है। व्यास- (विXअस्Xधञ्) विस्तार अर्थात् जो संक्षिप्त विषयों को विस्तृत कर प्रतिपादन करें वह व्यास है। यहां व्यासपीठ के वंशपरंपरानुगत उत्तराधिकाकरयों का उल्लेख कर रहा हूं जो क्रमशः इस प्रकार है।

श्री विश्वनाथ व्यास, श्री शम्भूनाथ व्यास, श्रीमती रुकमणी देवी, श्री महादेव व्यास, श्री मातादयाल व्यास, श्री कालिका व्यास, श्री लक्ष्मीनारायण व्यास, श्री रामनारायण व्यास, श्री रघुनन्दन व्यास, श्री बैजनाथ व्यास, श्री सोमनाथ व्यास, श्री चन्द्रनाथ व्यास, श्री केदारनाथ व्यास, श्री राजानाथ व्यास वर्तमान १९६८ से यही चार उत्तराधिकारी कथा-पुराणादि वार्षिकयात्रा, पंचक्रोशी, अन्तर्गृही, नगर प्रदक्षिणा, अन्य अनेक यात्राओं का संकल्प और यज्ञ-अनुष्ठान धार्मिक आयोजन इन्ही लोगों के सहयोग से आज भी परंपरानुगत संपन्न होते चले आ रहे है।

इधर कुछ दिनों से भोली-भाली जनता को ठगने के लिए पंडा अपने को व्यास कहने लगा है ऐसे ठगो से जनमानस को सावधान रहना चाहिए।

व्यास सूत्र

ब्रह्मसूत्रों के रचयिता का नाम व्यास, बादूरायण तथा कृष्णद्वैपायन है। यह एक ही व्यक्ति के तीन नाम है। एक वेद के चार भाग करने पर उनका नाम हुआ 'व्यास'। बदरी वन में निवास के कारण उनका नाम 'बादरायण' हुआ। (बदूरीणां समूहो यत्र प्रदेशे स बादरः प्रदेशः, बादरः अयनं यस्य स बादरायणः) अर्थात् वह बद्रिकाश्रम में रहते थे।

उनका जन्म यमुना के किसी द्वीप में हुआ और उनका वर्ण कृष्ण था इसलिये वह कृष्णद्वैपायन कहलाये। पुराणों में उनके बारे में एक श्लोक प्रसिद्ध है- अचतुर्वदनो ब्रह्मा द्विबाहुरपरो हरिः। अभाललोचनः शम्भुर्भगवान् बादरायणः ।। इनके चार प्रधान शिष्य थे- पैल, वैशम्पायन, जैमिनी और सुमन्तु। इन के सूत्रों को पाराशर्य-भिक्षुसूत्र तथा ब्रह्मसूत्र कहते हैं। शुकदेव इनके पुत्र थे। इतिहास इस बात को सिद्ध करता है कि इन्होने अरब, मिश्र, यूनानादि देशों में खूब भ्रमण किया। व्यास के पिता का नाम पराशर, दादा का नाम शक्ति था। इनका एक ही पुत्र शुकदेव नैष्टिक ब्रह्मचारी रहता हुआ वेदव्यास के जीवित रहते ही पंचत्व को प्राप्त हो गया। इन्हें अष्टादशपुराणों का रचयिता भी मानते हैं ब्रह्मसूत्रों के अभी तक ज्ञात व्याख्याकारों में सबसे प्राचिन 'बोधायन' है। रामानुज ने अपने श्रीभाष्य के आरम्भ में इस बात को स्वीकार किया है।

दिवोदास की नगरी वाराणसी में शिवजी का प्रवेश

दिवोदासस्तु विज्ञाय वीर्यं तेषां यतात्मनाम् ।
वाराणसीं महातेजः निर्ममे शक्रशासनात् ।।

महातेजस्वी दिवोदास ने मनसहित इन्द्रियों के वश में करनेवाले, महापुरूषों के वीर्य को जानकर इन्द्र की आज्ञा से वाराणसी नगरी को बसाया था।

पार्वती की प्रसन्नता के लिए शंकर जी ने हिमालय छोड़कर किसी सिद्ध क्षेत्र में रहने का निश्चय कर भ्रमण किया। महाराज हर्यश्व के पुत्र सुदेव के पुत्र सम्राट दिवोदास की वाराणसी नगरी गंगा के तटपर देख कर यहीं रहने का निश्चय किया। अपने निकुम्भ नामक गण को आदेश दिया कि जाकर वाराणसी को निर्जन करो। निकुम्भ ने आदेश का पालन किया। नगर निर्जन हो जाने पर भगवान् शंकर अपने गणों के साथ यहां आकर निवास करने लगे। भगवान् शंकर के सान्निध्य में रहने की इच्छा से यहां देवता तथा नाग लोग भी काशी आये। प्रतापी सम्राट दिवोदास अपनी राजधानी छिन जाने पर दुखी थे। अन्य कोई उपाय न देखकर दिवोदास

अन्न-जल का त्यागकर तपस्या करने लगे। ऐसी कठिन तपस्या देखकर ब्रह्मा जी स्वतः आकर दिवोदास से मिले ओर पूछा कि तुझें क्या चाहिए ? राजा ने तब यह वर मांगा कि देवता लोग अपने दिव्य लोक में चले जांय और नाग पाताल लोक में। पृथ्वी मनुष्यों के लिए रहे। ब्रह्माजी ने "एव मस्तु" कह दिया। फल यह हुआ कि शंकर जी तथा सब देवताओं को वाराणसी छोड़ देनी पड़ी। किन्तु शंकर जी ने यहां विश्वेश्वर रूप में निवास किया तथा दूसरे देवता भी विग्रह रूप में स्थित हुए। भगवान् शंकर काशी छोड़कर चले तो गये, किन्तु उन्हें अपनी यह नित्यपुरी बहुत प्रिय थी। वे यही रहना चाहते थे। उन्होने राजा दिवोदास को यहां से निकालने के लिए चौंसठ योगिनीयों को भेजा, किन्तु राजा ने एक घाट पर उन्हे स्थापित कर दिया। शंकर जी ने बारह सूर्य को भेजा, किन्तु इस पुरी का वैभव देखकर वे लोग (चंचल) बनगये और अपने १२ रूपों से यही बस गये। शंकर जी ने समझाने के लिए अपनी तरफ से ब्रह्मा जी को भेजा, ब्रह्मा जी ने यहां आकर राजा दिवोदास के आग्रह पर रुद्र सरोवर तीर्थ पर दस अश्वमेध यज्ञ किये। यज्ञ में दिवोदास ने अपने कोष से सहायता दी।

राजोवाच- अहं यियक्षमाणस्य तव साहाय्यकर्मणि ।
दासोऽस्मि यज्ञसंभारानहं मे कोशतोऽखिलान् ।।
यदस्ति मेऽखिलं तत्र सप्ताङ्गेऽपि भवान् प्रभुः ।
यजस्वैकमना ब्रह्मन् सिद्धंमन्यस्य वांछितम् ।।

(अ.५२ श्लो. ५५, ५६ का. खण्ड)

दिवोदास ने कहा यदि आप यज्ञ करना चाहते है तो आपकी सहायता के लिए मेरा कोष प्रस्तुत है समस्त यज्ञ-सामग्री आप मेरे यहां से लेकर यज्ञ करें।

आप निश्चिन्त होकर यज्ञ में लगें और मनोरथ सिद्ध करें। इस प्रकार ब्रह्मा भी रह गये। अन्त में शंकर जी की इच्छापूर्ण करने भगवान् विष्णु काशी ब्राह्मण के रूप में पधारे। उन्होनें दिवोदास को ज्ञानोपदेश किया। इससे वह पुण्यात्मा नरेश विरक्त हो गया। नरेश ने स्वयम् एक शिवलिंग दिवोदासेश्वर नाम से स्थापित किया।ततूपश्चात् राजा दिवोदास विमान में बैठकर शंकर जी के धाम गये। तब भगवान् शंकर मंदराचल से आकर काशी में स्थित हुए। भगवान् शिव की यह क्रीड़ास्थली अविमुक्तक्षेत्र आनन्दवन नाम से विख्यात है। काशी में समस्त तीर्थ एवं सभी देवता निवास करते है और भगवान शंकर काशी को कभी नहीं छोड़ते। इस कारण से इसे "अविमुक्त" कहा गया है।

(का० खं० अ० ५८, ७८)

औरंगजेब का फरमान

अबुल हसन को यह जानकारी हो..................

हमारे धार्मिक कानून द्वारा यह निर्णय किया गया है कि पुराने मंदिर न तोड़े जाय एवं नए मंदिर भी न बने। इन दिनों हमारे अत्यन्त आदर्श एवं पवित्र दरबार में यह खबर पहुँची है कि कुछ लोग द्वेष एवं वैमनस्यता के कारण बनारस और उसके आसपास के क्षेत्रों में कुछ ब्राह्मणों को परेशान कर रहे हैं।

साथ ही मंदिरों के देखभाल करने वाले ब्राह्मणों को उनके पदों से हटाना चाहते हैं जिससे उस सम्प्रदाय में असन्तोष पैदा हो सकता है। इसलिए हमारा यह शाही आदेश है कि इस फरमान के पहुँचते ही तुम्हे यह चेतावनी दी जाती है कि भविष्य में ब्राह्मणों व अन्य हिन्दूओं को किसी प्रकार के अन्याय का सामना न करना पड़े। इस प्रकार वो सभी शान्तिपूर्वक अपने व्यवसायों में लगे रहे एवं हमारे अल्लाह द्वारा दिए गए साम्राज्य (जो हमेशा बरकरार रहेगा) में पूजापाठ करते रहें। इस पर शीघ्रातिशीघ्र विचार होना चाहिए।

तारिख १५ जुम्द-स-सनिया हिजरी १०६६ (१६५८-५९ ई०)

कालापहाड़ का इतिहास

काशी के ये पंडे बंगाल के तीर्थयात्रियों को ये बताते है कि ज्ञानवापी विश्वनाथ मंदिर को औरंगजेब ने नहीं तोड़ा, इस को कालापहाड़ ने तोड़ा है।

काशी में कालापहाड़ आया ही नहीं था, यहां उध्रीत है उसका इतिहास :

कालापहाड़ बंगाल के सूबेदार सुलेमान सूर का सेनापति था। यह एक ब्राह्मण का पुत्र था और इसका नाम निरंजनदेव था। इसके छोटे भाई का नाम प्रभात था। निरंजनदेव हरदेव विद्यारत्न के पास संस्कृत अध्ययन करता था। इन्हीं विद्यारत्न जी की यथार्थ सुन्दर सुंदरी नामक एक कन्या थी। एक दिन उसी गांव में देवीजी के मंदिर के पास एक काजी गोवध करना चाहता था, निरंजनदेव भी उस समय वहां उपस्थित था। उसने काजी को उसके इस कर्म के लिए मारापीटा। इस कारण वह पकड़ा गया और राजधानी में लाकर कैद कर लिया गया।

निरंजनदेव उच्च्कुल संभूत था और रूपवान था। वह कारागार में यवनस्पर्स भोजन नहीं करता था, इसी कारण वह बीमार पड़ गया। उसी कारागार के समीप सुलेमान के भाई ताजखाँ का महल था। ताजखाँ की पुत्री का नाम नजीरन था, वह ब्राह्मण का बनाया भोजन छिपाकर निरंजनदेव को भिजवाती थी और छिप कर स्वयं भी जाकर उनकी सेवाशुश्रूषा करती थी। वह निरंजन के गुणों पर मोहित हो गई और उसको यवन होने के लिए उसने बाध्य किया। निरंजन ने भी अपने छुटकारे का उपाय न देखकर मुसलमान हो गया। नजीरन के प्रभाव से कालापहाड़ सेनापति हो गया, सेनापति होकर हिन्दू और हिन्दू धर्म का नाश करना ही उसने अपना कर्तव्य स्थिर किया।

कामाक्षी देवी का मंदिर उसने तोड़ दिया था। उड़ीसा पर उसने चढ़ाई की और वहाँ के राजा को उसने बन्दी कर लिया। अब जगन्नाथजी की बारी आई। कालापहाड़ ने जगन्नाथ पर चढ़ाई की। वहां के राजा का सेनापति प्रभात उससे लड़ने लगा। प्रभात बंदी हुआ। तब हलायुध मिश्र जो हरदेव विद्यारत्न के संबंधी थे लड़ने लगे, उन्होने कालापहाड़ को तलवार से आहत किया। उसदिन रात्रि होने के कारण युद्ध बंद हुआ। प्रभात कैदी था, एक सुंदरी नाम की स्त्री भी उसी के साथ कारागार में बन्दी थी। यह सुंदरी उन्ही हरदेव न्यायरत्न की कन्या थी जिन्होने कालापहाड़ को पढ़ाया था, यह जानकर प्रातःकाल सेनापति कालापहाड़ के सामने प्रभात को उपस्थित किया गया।सेनापति उसको वध किए जाने की आज्ञा देने वाले ही थे कि उन्होने पहले उसका परिचय पूछा। परिचय पूछने पर कालापहाड़ को मालूम हुआ कि यह तो मेरा भाई ही है। उसने प्रभात को छोड़ दिया। कालापहाड़ तलवार के आघात से व्याकुल था वह मरने के पहले अपना धन अपने भाई को दे गया।

कालापहाड़ के वंश, कृतित्व तथा जीवनावधि के संबंध में मतसामान्य नहीं है, किन्तु प्रतीत होता है वस्तुतः इतिहास प्रसिद्ध कालापहाड़ उपनाम धारी दो अलग व्यक्ति थे, जिनके जीवन काल और कार्यक्षेत्र विभिन्न थे। कालापहाड़ प्रथम (वास्तविक नाम मोहम्मद खाँ फार्मुली),

सुल्तान बहलोल लोदी का भगिनेय था।

संभवतः हुसैनशाह शर्की के विरूद्ध युद्ध में सहायक होने के उपलक्ष्य में सुल्तान द्वारा पुरस्कार स्वरूप उसे अवध का प्रदेश तथा कुछ अन्य परगनें प्राप्त हुए थे। पहले वह बारबकशाह का सेनापति था, किन्तु उत्तराधिकार युद्ध में उसके पराजित होने पर कालापहाड़ विजयी भ्राता सिकन्दर लोदी का सामन्त बन गया। इब्राहिम लोदी के शासनकाल के अंतिमकाल में उसकी मृत्यु हुई। ख्यातिप्राप्त सेनानी होते हुए भी कृपण स्वभाव के कारण उसने अमित धन संचित किया था।

कालापहाड़ द्वितीय (उपनाम राजू) यद्यपि अफगान इतिहास कारों द्वारा अफगान जाति का ही बताया गया है, तथापि संभवतः वह जन्म से ब्राह्मण था। प्रेमवश धर्मपरिवर्तन कर लेने के बाद जह इतिहास में धर्मान्ध मूर्तिभंजक के रूप में प्रसिद्ध हुआ। तात्कालिक जनश्रुति के अनुसार वह अत्यन्त भयावह और निर्दय व्यक्ति था तथा उसके आगमन पर देवप्रतिमाएँ स्वतः काँप उठती थी, वह बंगाल नरेश सुलेमान कर्रानी का सेनापति था। मात्र लूटमार और जिहाद की भावना से प्रेरित हो प्रथमतः उसने विहार पर आक्रमण किया। जाजपुर से अफगान सेना प्रसिद्ध जगन्नाथ मंदिर पहुँची तब पहले तो सर्वसाधरण को उसके आगमन का विश्वास ही न हुआ, फिर अंधविश्वासवश देव प्रतिमा के प्रभाव से सुरक्षित समझने के कारण बचाव की विशेष सैनिक तैयारियाँ भी नहीं की गई। मंदिर का विध्वंसकर आक्रमणकारियों ने इतना धन लूटा कि प्रत्येक सैनिक को एक या दो स्वर्णमूर्तियां हाथ लगी। तत्पश्चातः सेनाने असम की ओर अभियान किया। कूचविहार नरेश नरनारायण के सेनापति शुक्लध्वज (चीलाराय) को परास्त कर कामाख्या तथा हाजो के सुप्रसिद्ध अनेक मंदिरों तथा अन्यमंदिरों को ध्वस्त करता हुआ कालापहाड़ बंगाल लौट गया। मुगल सम्राट अकबर द्वारा बंगाल पर आक्रमण होने पर अन्य सामंतो के साथ कालापहाड़ ने घोड़ाघाट पर मुगल सेना को पीछे खदेड़ दिया। किन्तु तृतिय आक्रमण पर राजमहल में खानेआजम अजीजकोका के विरूद्ध युद्ध करते हुए उसकी मृत्यु हो गई।

संग्रह- नियामतुल्लाह हिस्ट्री ऑफ दि अफगान (डार्न द्वारा संपादित), रियाजुस्सलातिन (मौलवी अब्दुसूसलाम द्वारा संपादित) इलियट ऐंड डाउसन, दि हिस्ट्री ऑफ इंडिया (खंड ४,५,६) रमेशचन्द्र मजुमदार, हिस्ट्री ऑफ बंगाल सुधीन्द्रनााथ भट्टाचार्य, ए हिस्ट्री ऑफ दि मुगलनार्थ-ईस्ट फ्रंटियर पालिसी, अवधविहारी पाण्डे, दि फर्स्ट अफगान एम्पायर इन इंडिया सैयद अतहर अब्बास रिजवी, उत्तर तैमूर कालीन भारत (प्रथम भाग) दरंगराज बंशावली, पुरानी असम बुरंजी (पुरानी असम बुरंजी) रा०ना०

(चरित्रकोष)

चतुर्वेदी द्वारका प्रसाद शर्मा

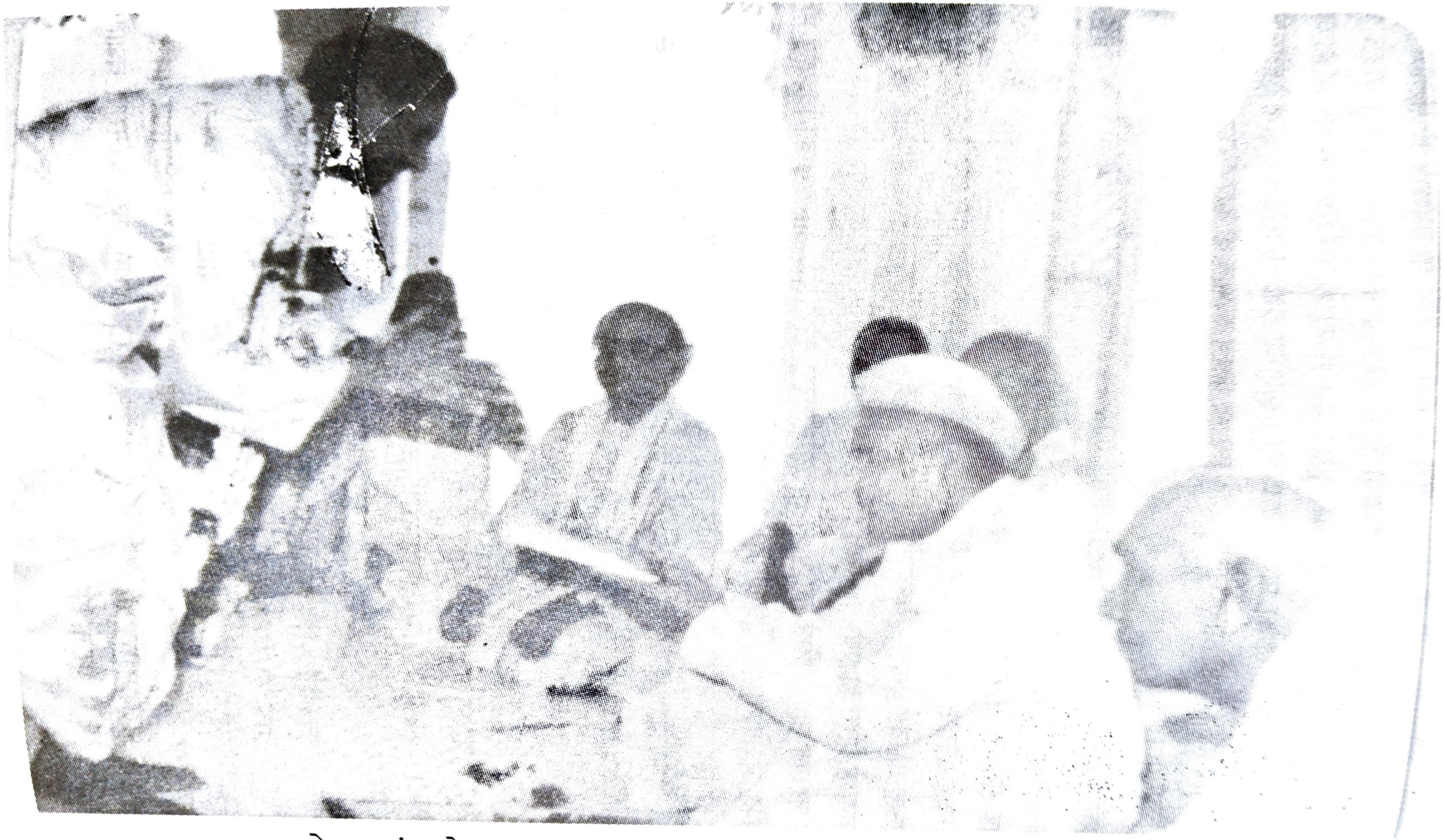

लेखक पं० केदारनाथ व्यास, काशी नरेश को पुस्तक प्रदान करते हुये

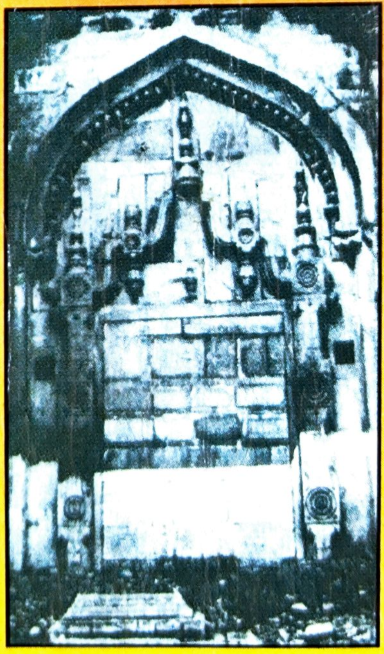

काशी विश्वनाथ ज्ञानवापी मंदिर के अवशेष भाग का सूक्ष्मावलोकन

(अमेरिकन इन्स्टीच्यूट ऑफ इंडियन स्टडीज द्वारा साभार)

मुद्रक :

खण्डेलवाल प्रेस ऐण्ड पब्लिकेशन्स

मानमंदिर, वाराणसी